सुलभ साहित्य माला

बीसवाँ इक्कीसवाँ पुष्प

शरत्-साहित्य

शेष प्रश्न

अनुवादकर्ता

धन्यकुमार जैन

हिन्दी-ग्रन्थ-रत्नाकर (प्राइवेट) लिमिटेड,
हीराबाग बम्बई-४

मूल्य तीन रुपये
पहली बार, दिसम्बर १९६३

प्रकाशक—यशोधर मोदी, मैनेजिंग डायरेक्टर,
हिन्दी ग्रन्थ-रत्नाकर (प्राइवेट) लिमिटेड, हीराबाग, गिरगाँव, बम्बई-४
मुद्रक—ओमप्रकाश कपूर, ज्ञानमण्डल लिमिटेड, वाराणसी (बनारस) ६०६३-१९

विभिन्न समयोंमें विभिन्न कार्योंसे बहुतसे बंगाली परिवार युक्तप्रान्त (उत्तरप्रदेश) के प्रसिद्ध शहर आगरेमें आकर बस गये हैं। कई तो पीढ़ियोंसे रहते आ रहे हैं और कई हालमें ही आये हैं। चेचक और प्लेग जैसी महामारियोंके समयकी भगदड़के सिवा इनका जीवन अत्यन्त निर्विघ्न है। बादशाही जमानेके किले और इमारतें ये देख चुके हैं। अमीर-उमराओंकी कोठी, कब्रें, मकबरे, टूटी और अधटूटी जहाँ जितनी भी कब्रें हैं उनकी पूरी सूची इन्हें कण्ठस्थ हो चुकी है। यहाँतक कि संसार प्रसिद्ध ताजमहलमें भी अब इनके लिए कोई नवीनता नहीं रह गयी है। संध्याके समय उदास और सजल नेत्रोंको खोलकर, चाँदनी रातमें अर्ध निमीलित नेत्रोंसे देखकर, अँधेरी रातमें आँखें फाड़-फाड़कर जमुनाके इस पार और उस पारसे ताजमहलका सौंदर्य उपलब्ध करनेके जितने प्रकारके प्रचलित प्रवाद और तरकीबें हैं, उन सबको इन लोगोंने निचोड़कर खतम कर दिया है। ताजमहल देखकर किस नई आदमीने कब क्या कहा है, किस किसने कविताएँ लिखी हैं, भावुकताके उच्छ्वासमें सामने गद्गद होकर किस किसने गलेमें फाँसी डालकर मर जानेकी कोशिश की है, इन्हें सब मालूम है। इतिहासकी जानकारीकी तरफसे भी इनमें रत्तीमात्र त्रुटि नहीं पाई जाती। इनके छोटे-छोटे बच्चे-बच्चियाँतकने सीख लिया है कि किस बेगमकी कहाँ कोठी थी, कौन-सा जाट-सरदार कहाँ रोटी बनाकर खाता था और वहाँ लगा हुआ कालिख कितनी प्राचीन है, किस डाकूने कितने हीरे माणिक लूटे थे और उनकी अनुमानसे कितनी कीमतें थीं,—इनमेंसे कोई भी बात उनसे छिपी नहीं है। इस ज्ञान और परम निश्चिन्तताके बीच सहसा एक दिन बंगाली-समाजमें चांचल्य दिखाई दिया। प्रतिदिन मुसाफिरोंका झुण्ड आता-जाता रहता है,—अमेरिकन टूरिस्टों (भ्रमण करनेवालों) से लेकर वृन्दावनसे लौटे हुए वैष्णवोंकी भीड़ लगी ही रहती है,—किसीका किसी

लगी। दूसरे ही क्षण अपनी कन्याके साथ आशु बाबूने भीतर प्रवेश करते ही सबने सम्मानके साथ उनका स्वागत किया। सद्युक्त इन्टिमेशन पानी हो गया और गहीरा नतरजस रोर फिलहाल स्थगित कर दिया गया। अविनाशने हाथ जोड़कर कहा, "मेरा परम सौभाग्य है कि आप लोगोंके पाँवोंकी धूल इस घरमें पड़ी।—हाँ, अचानक असमय कैसे आना हुआ?" इतना कहकर मनोरमाके लिए उसने एक कुरसी आगे रख दी।

आशु बाबू पासकी आराम कुरसीपर अपने शरीरका विपुल भार रखते हुए अकारण उच्च हास्यसे कमरेको गुञ्जायमान करते बोले, "आशु वैद्यके[1] लिए असमय? मेरी ऐसी बदनामी तो मेरे छोटे चाचा भी नहीं कर सके अविनाश बाबू!"

मनोरमा हँसते चेहरेसे सिर झुकाकर बोली, "यह क्या कहते हो बाबूजी!"

आशु बाबूने कहा, "तो जाने दो छोटे चाचाकी बात। कन्याको आपत्ति है, लेकिन इससे बढ़कर कोई अच्छा उदाहरण निदियाके बापको भी शायद नहीं कि दे सके।" इतना कहकर उन्होंने अपनी रसिकताके आनन्दोच्छ्वासके द्वारा फिर घर फाड़ डालनेकी तैयारी की। हँसी रुकनेपर बोले, "मगर क्या कहूँ साहब, गठियासे पंगु हूँ। नहीं तो, जिन चरणोंकी धूलका आपने इतना गौरव बढ़ा दिया है, आशु गुप्तके उन्हीं पाँवोंकी धूल बुहारनेके लिए आपको एक नौकर रखना पड़ता अविनाश बाबू! लेकिन आज बैठनेका वक्त नहीं, अभी जाना होगा।"

इस अकस्माद्भावके कारणके लिए सभी उनके मुँहकी ओर देखने लगे। आशु बाबूने कहा, "एक निवेदन है। मञ्जूर करानेके लिए लिखियातकको घसीट लाया हूँ। कल भी छुट्टीका दिन है। शामके बाद घरपर जरा गाने बजानेका आयोजन किया है। सपरिवार पधारना होगा। उसके बाद जरा मीठा मुँह—"

हरेन्द्रसे बोले, "मणि, भीतर जाकर जरा आज्ञा ले आओ बेटी। देर करनेसे काम न चलेगा। एक बात और है भाइ, यंग फ्रेण्ड्स, स्त्रियोंके लिए न सही, हम मरदोंके लिए दोनों तरहके खाने पीनेकी व्यवस्था की गई है,—यानी समझिए,—प्रेजुडिस् अगर न हो तो,—समझ गये न?

[1] वैद्य = बंगालियोंकी एक जाति विशेष।

समझ सभी गये, और एक स्वरसे सभीने प्रकट कर दिया कि उन लोगोंको कोई प्रेजुडिस् नहीं है।

आशु बाबूने खुश होकर कहा, "नहीं ही होना चाहिए।" लड़कीसे कहा, "मणि, खानेके सम्बन्धमें मॉसियाओंकी भी राय ले आनी है, यह न भूल जाना। हर एकके घर जाकर उन लोगोंकी अभिरुचि जानने और आज्ञा लेकर घर लौटनेतक शायद आज हम लोगोंको शाम हो जायगी। जरा जल्दी काम खतम कर आओ बेटी।"

मनोरमा भीतर जानेके लिए उठना ही चाहती थी कि अविनाश बह उठे, "हमारा घर तो, बहुत दिन हुए, सूना हो गया है। मेरी साली है, पर वे विधवा हैं, गाना सुननेका शौक काफी है, इसलिए जायँगी जरूर। लेकिन खाना—"

आशु बाबू झटसे बोल उठे, "उसकी भी कमी न होगी अविनाश बाबू, हमारी मणि जो है। मास मछली, प्याज लहसुन तो यह छूतीतक नहीं।"

अविनाशने आश्चर्यके साथ पूछा, "ये मास मछली नहीं खाती?"

आशु बाबूने कहा, "खाती सब कुछ थी लेकिन दामाद साहबकी इच्छा नहीं,—वे जरा कुछ सन्यासी ढगके आदमी हैं—"

क्षणभरमें मनोरमाका सारा चेहरा सुर्ख हो उठा, वह पिताकी असमाप्त बातमें बाधा देकर बोली, "तुम यह सब क्या कहे जा रहे हो बाबूजी!"

पिता अप्रतिभ से हो गये, पर कन्याके कण्ठ स्वरकी स्वाभाविक मृदुता उसके भीतरकी तिक्तताको छिपा न सकी।

इसके बाद फिर बातचीत जमी नहीं, और भी दो चार मिनट जो ये लोग बैठे रहे, उस बीच आशु बाबू वा बात करते रहे पर मनोरमा कुछ अन्यमनस्क रही, और मेहमानोंके चले जानेपर कुछ देरके लिए सबके मनके ऊपर जैसे एक अप्रिय विषादका भार लदा रहा।

मित्रोंमेंसे किसीसे किसीने भी स्पष्ट कुछ नहीं कहा, मगर सभी सोचने लगे कि सहसा एक दामाद साहब कहाँसे आ धमके? आशु बाबूके कोई लड़का नहीं, मनोरमा ही एक मात्र सन्तान है इस बातको सभी जानते थे। मनोरमा आज तक कुँआरी है,—विवाहिता या सधवाका कोई चिह्न उसमें मौजूद नहीं है। खास तौरसे पूछकर किसीने जानी नहीं थी, परन्तु, इस विषयमें सन्देहकी

१ बंगालमें यह स्त्रियोंके प्रति सम्मान और स्नेहसूचक शब्द समझा जाता है।

मूल्य तीन रुपये

छठी बार, दिसम्बर १९६२

प्रकाशक—यशोधर मोदी, मैनेजिंग डायरेक्टर,
हिन्दी ग्रन्थ-रत्नाकर (प्राइवेट) लिमिटेड, हीराबाग, गिरगाँव, बम्बई-४
मुद्रक—ओमप्रकाश कपूर, ज्ञानमण्डल लिमिटेड, वाराणसी (बनारस) ६०६३-११

बातकी उत्सुकता नहीं, दिनके काम धन्धाम दिन खतम हो जाता है। इतनेमें एक प्रौढ़ अवस्थाके बंगाली-साहब अपनी शिक्षिता, सुरूपा और पूर्ण यौवना कन्याके साथ यहाँ आये, और स्वास्थ्य उद्धारके निमित्त शहरके एक किनारे बड़ा भारी मकान किरायेपर लेकर रहने लगे। उनके साथ नौकर, बावरची, दरबान आये, नौकर नौकरानी, ब्राह्मण-रसोइया, गाड़ी घोड़े, मोटर, शोफर, साईस, कोचवान वगैरह सभी आये, और इतने दिनोंसे खाली पड़ा हुआ इतना बड़ा मकान देखते देखते जैसे जादू कर दिया गया हो इस तरह, रातों रात आबाद हो गया। उन महाशयका नाम आशुतोष गुप्त था और कन्याका मनोरमा। बहुत ही आसानीसे समझमें आ गया कि ये लोग बड़े आदमी हैं। परन्तु, ऊपर जिस चाचल्यका उल्लेख किया है, वह इनकी धन-सम्पत्तिके परिणामकी कल्पना करके या मनोरमाकी शिक्षा और रूपकी ख्यातिके कारण इतना नहीं हुआ, जितना कि आशु बाबूके निरभिमान, सरल और शिष्ट आचरणसे। वे खुद लड़की को साथ लेकर शहर आये और तलाश कर-करके सबके घर मुलाकात करने गये। बोले, "हम बीमार आदमी हैं, आप लोगोंके अतिथि हैं, इसलिए, आप लोग अपनी उदारतासे अगर कृपा करके हम प्रवासियोंको अपने दलमें शामिल नहीं कर लेंगे, तो हमारे लिए यह निवासनकाल काटना एक तरहसे असम्भव हो जायगा।" मनोरमा घरोंके भीतर जा जाकर स्त्रियोंसे परिचय कर आई। उसने भी अस्वस्थ पिताकी तरफसे निवेदन किया कि आप लोग हमें गैर न समझें। तथा इस तरहकी और भी बहुत सी रुचिकर मीठी बातें कहीं।

सुनकर सब ही खुश हुए। तबसे आशु बाबूकी गाड़ी और मोटर जब-तब और जिस किसके घर जाने आने लगी, और वह औरतोंको घरसे लाने और घर पहुँचाने लगी। बातचीत, हँसी मजाक, गाना-बजाना और देखने लायक चीजें बार-बार देखनेकी दिलचस्पी ऐसी जमने लगी कि इस बातको भूलनेमें किसीको भी एक सप्ताहसे ज्यादा समय नहीं लगा कि ये लोग परदेशी या बहुत बड़े आदमी हैं। मगर एक बात, शायद कुछ संकोचवश और कुछ व्यर्थ सी समझकर किसीने स्पष्ट तौरसे नहीं पूछी कि आप लोग सनातनी हैं या ब्रह्मसमाजी। और, परदेशमें, इसकी ऐसी कोई बड़ी जरूरत भी नहीं होती। फिर भी आचार व्यवहार
। समझा जा सकता है, सबने एक तरहसे समझ लिया था कि ये हो
ी भी समाजके, पर अधिकांश उच्च शिक्षित, उच्च बंगाली परिवारोंके

समान कमसे कम खाने पीनेके विषयमें इनके कोई बचाव विचार नहीं है। यह बात सबको मालूम न होनेपर भी कि घरमें मुसलमान बावर्ची है, इतना सब समझ गये कि इतनी उमरतक जिन्होंने लड़कीको कुँआरी रखकर कालेजमें पढ़ाया है, वे असलमें किसी भी समाजके क्यों न हों, अनेक तरहकी संकीर्णताओंसे छुटकारा पा चुके हैं।

अविनाश मुकर्जी कालेजका प्रोफेसर है। बहुत दिन हुए उसकी स्त्रीका देहान्त हो गया है,—फिर उसने ब्याह नहीं किया। घरमें दस सालका एक लड़का है। वह कालेजमें पढ़ाता है और मित्र दोस्तोंके साथ आनन्द करता फिरता है। आर्थिक स्थिति अच्छी है,—निश्चिन्त और निरुपद्रव जीवन है। दो साल पहले विधवा साली मलेरिया बुखारसे पीड़ित होकर आब हवा बदलने बहनोईके घर आई थी। बुखारने छोड़ दिया, पर बहनोईने नहीं छोड़ा। फिलहाल वही घरकी मालिकिन है। लड़केकी देख भाल करती है, घर गृहस्थी सँभालती है। मित्र लोग सभ्य भद्दी आलोचना करके मजाक उड़ाते हैं। अविनाश हँस देता है, कहता है, "भाई व्यर्थमें शर्मिन्दा करके अब न जलाओ। तकदीर है तकदीर! नहीं तो, कोशिश करनेमें तो कोई कसर रखी नहीं। अब सोचता हूँ, धनकी बदनामीसे डकैत मार डालें, सो भी मेरे लिए अच्छा है।"

अविनाश अपनी स्त्रीको बहुत ज्यादा चाहता था। मकान भरमें सर्वत्र नाना आकार और नाना भंगिमाओंके उसके फोटोग्राफ टँगे हुए हैं। सोनेके कमरेमें एक बड़ी तसवीर टँगी हुई है। ऑइल पेंटिंग है, कीमती फ्रेममें मढ़ी हुई। अविनाश हर बुधवारको सबेरे उसपर माला लटका देता है। इस दिन उसकी मृत्यु हुई थी।

अविनाश खूब आनन्दित रहनेवाला आदमी है। ताश चौपड़में उसकी अत्यधिक आसक्ति है। इसीसे, छुट्टीके दिन उसके घर लोगोंका खूब समागम होता है। आज किसी त्योहारकी वजहसे कालेज-कचहरी बन्द हैं। खाने-पीनेके बाद प्रोफेसर मण्डल आ धमका है। दो जन नीचेकी गद्दीपर शतरंज बिछाये बैठे हैं, और दो जने आँखें लेकर उसे देख रहे हैं, बाकीके सब लोग डिप्टी और मुन्सिफकी विद्या-बुद्धिकी स्वल्पताके अनुपातमें मोटी तनख्वाहकी नाप-तौल करके उच्च कोलाहलके साथ गवर्नमेण्टके प्रति 'राइचुअस इण्डिग्नेशन' और अश्रद्धा प्रकट करनेमें लगे हुए हैं। इतनेमें एक भारी भरकम मोटरकार दरवाजेपर आ

लगी। दूसरे ही क्षण अपनी कन्याके साथ आशु बाबूके भीतर प्रवेश करते ही सबने सम्मानके साथ उनका स्वागत किया। यदुत्तम दृष्टिक्षेपसे पानी हो गया और गद्दीका शतरंजका खेल फिलहाल स्थगित कर दिया गया। अविनाशने हाथ जोड़कर कहा, "मेरा परम सौभाग्य है कि आप लोगोंके पाँवोंकी धूल इस घरमें पड़ी!—हाँ, *अचानक असमय कैसे आना हुआ?*" इतना कहकर मनोरमाके लिए उसने एक कुरसी आगे बढ़ा दी।

आशु बाबू पासकी आराम कुरसीपर अपने शरीरका विपुल भार रखते हुए अकारण उच्च हास्यसे कमरेको गुञ्जायमान करके बोले, "आशु बैद्य[1] लिए असमय? मेरी ऐसी बदनामी तो मेरे छोटे चाचा भी नहीं कर सके अविनाश बाबू!"

मनोरमा हँसते चेहरेसे सिर झुकाकर बोली, "यह क्या रहे हो बापूजी?" आशु बाबूने कहा, "तो जाने दो छोटे चाचाकी बात। कन्याको आपत्ति है, लेकिन इससे बढ़कर कोई अच्छा उदाहरण बिटियाके बापको भी ताकत नहीं कि दे सके।" इतना कहकर उन्होंने अपनी रसिकताके आनन्दोच्छ्वासके द्वारा फिर घर फाड़ डालनेकी तैयारी की। हँसी रुकनेपर बोले, "मगर क्या कहूँ साहब, गठियासे पशु हूँ। नहीं तो, जिन चरणोंकी धूलका आपने इतना गौरव प्रदान किया है, आशु गुप्तने उन्हीं पाँवोंकी धूल बुहारनेके लिए आपको एक नौकर रखना पड़ता अविनाश बाबू! लेकिन आज बैठनेका वक्त नहीं, अभी *जाना होगा।*"

इस अवकाशाभावके कारणके लिए सभी उनके मुँहकी ओर देखने लगे। आशु बाबूने कहा, "एक निवेदन है। मंजूर करानेके लिए बिटियाको घसीट लाया हूँ। *कल भी छुट्टीका दिन है।* शामके बाद घरपर जरा गाने बजानेका आयोजन किया है। सपरिवार पधारना होगा। उसके बाद जरा मीठा मुँह—"

लड़कोसे बोले, "मणि, भीतर जाकर जरा *आज्ञा ले आओ बेटी।* देर करनेसे काम न चलेगा। एक बात और है याद, यंग फ्रेण्ड्स, स्त्रियोंके लिए न सही, हम मरदोंके लिए दोनों तरहके खाने पीनेकी व्यवस्था की गई है,—यानी समझिए,—*प्रेजुडिस् अगर न हो तो,—समझ गये न?*

[1] बैद्य = बंगालियोंकी एक जाति विशेष।

समझ सभी गये, और एक स्वरसे सभीने प्रकट कर दिया कि उन लोगोंको कोई प्रेजुडिस् नहीं है।

आशु बाबूने खुश होकर कहा, "ऐसा ही होना चाहिए।" लड़कीसे कहा, "मणि, खानेके सम्बन्धमें लक्ष्मियोंकी[1] भी राय ले आना है, यह न भूल जाना। हर एकके घर जाकर उन लोगोंकी अभिरुचि जानने और आना लेकर घर लौटनेतक शायद आज हम लोगोंका शाम हो जायगा। जरा जल्दी काम खतम कर आओ बेटी।"

मनोरमा भीतर जानेके लिए उठना ही चाहती थी कि अविनाश कह उठे, "हमारा घर तो, बहुत दिन हुए, सूना हो गया है। मेरा साला है, पर वे विधवा है, गाना सुननेका शौक भारी है, इसलिए जायँगी जरूर। लेकिन खाना—"

आशु बाबू सहसे बोल उठे, "उसका भी कमी न होगी अविनाश बाबू, हमारी मणि जो है। मांस मछली, प्याज-लहसुन तो यह दूरतक नहीं।"

अविनाशने आश्चर्यके साथ पूछा, "ये मांस मछली नहीं खाता?"

आशु बाबूने कहा, "खाती सब-कुछ था लेकिन दामाद साहबकी इच्छा नहीं,—वे जरा कुछ सन्यासी ढंगके आदमी हैं—"

क्षणभरमें मनोरमाका सारा चेहरा सुर्ख हो उठा, वह पिताकी असमाप्त बातमें बाधा देकर बोली, "तुम यह सब क्या कहे जा रहे हो बाबूजी!"

पिता अप्रतिभ-से हो गये, पर कन्याके कण्ठ-स्वरकी स्वाभाविक मृदुता उसके भीतरकी तिक्तताको छिपा न सकी।

इसके बाद फिर बातचीत जमा नहीं, और भी दो चार मित्र जो ये लोग बैठे रहे, उस बीच आशु बाबू तो बात करते रहे पर मनोरमा कुछ अन्यमनस्क रहा, और लौटनेके चले जानेपर कुछ देरके लिए सबोंके मनके ऊपर जैसे एक अप्रिय विषादका भार लदा रहा।

मित्रोंमेंसे किसीने किसीसे भी स्पष्ट कुछ नहीं कहा, मगर सभी सोचने लगे कि सहसा एक दामाद साहब कहाँसे आ धमके? आशु बाबूके कोई लड़का नहीं, मनोरमा ही एक मात्र सन्तान है, इस बातको सभी जानते थे। मनोरमा आज तक कुँआरी है,—विवाहिता या सधवाका कोई चिह्न उसमें मौजूद नहीं है। बात स्पष्ट तौरसे पूछकर किसीने जानी नहीं थी, परन्तु, इस विषयमें सभीकी

[1] बंगालमें यह स्त्रियोंके प्रति सम्मान और स्नेहसूचक शब्द समझा जाता है।

हवा भी तो किसीके मनतक नहीं पहुँची थी। तो फिर?

मगर फिर भी, ये संन्यासी ढंगके दामाद साहब चाहे जो हों और चाहे जहाँ हों, मामूली आदमी नहीं हैं। कारण, उनकी मनाही नहीं, सिर्फ अनिच्छाके जोरसे ही इतने बड़े विलासी और ऐश्वर्यशाली व्यक्तिकी एकमात्र शिक्षिता कन्याका मांस मछली और प्याज ल्हसुन खाना एकबारगी बन्द हो गया है।

और, शरमाने और छिपानेकी इसमें कौन-सी बात है? पिता मारे संकोचके जड़ हो गये, कन्या चेहरा सुर्ख करके स्तब्ध हो रही,—सारा मामला सबके मनमें मानों एक अवाञ्छित और अप्रिय रहस्यकी तरह चुभकर रह गया, और आगन्तुक परिवारके साथ मिलने जुलनेकी जो सहज और स्वच्छन्द धारा बह रही थी मानो उसमें अकस्मात् एक बाधा-सी आ पड़ी।

२

मालूम तो ऐसा हुआ था कि शायद आशु बाबू शहरके किसीको भी याद नहीं देंगे, लेकिन देखा गया कि बंगालियोंमें जो विशिष्ट लोग हैं, वे ही निमन्त्रित हुए हैं। प्रोफेसरोंका दल गिरोह बाँधकर आ पहुँचा और उनके घरकी स्त्रियोंको पहलेसे ही मोटर भेजकर बुला लिया गया है।

एक बड़े कमरेके फर्शपर लम्बा चौड़ा कीमती कार्पेट बिछाकर लोगोंके बैठनेके लिए जगह की गई है। उधर दो तीन देशी उस्ताद बैठे साजका स्वर बाँध रहे हैं। बहुत से बच्चे उन्हें घेरे बैठे हैं। घरके मालिक साहब जो यहाँ कहीं थे, खबर पाते ही दौड़े-दौड़े आये, और दोनों हाथ उठाकर थियट्रिकल ढंगसे बोले, "स्वागत सज्जनगण! मोस्ट वेलकम्!"

फिर उस्तादोंको इशारेसे दिखलाकर और आँख मिचकाकर धीमे स्वरसे बोले, "डरनेकी कोई बात नहीं। सिर्फ इन लोगोंकी म्याँऊँ म्याँऊँ सुननेके लिए ही आप लोगोंको निमन्त्रण देकर नहीं बुलाया है। सुनायेंगे, ऐसा गाना सुनायेंगे कि मुझे आप लोग आशीर्वाद देते हुए घर लौटेंगे।"

सुनकर सभी खुश हुए। सदा प्रसन्न अविनाश बाबूका चेहरा आनन्दसे चमक उठा, बोले, "कहते क्या हैं आशु बाबू? इस अभागे देशके तो सभी लोगोंको मैं जानता हूँ, अकस्मात् यह रत्न पा कहाँसे गये?"

"आविष्कार किया है साहब, आविष्कार किया है। आप लोग भी बिल्कुल

ही न पहचानते हों, सो बात नहीं है,—अब शायद भूल गये होंगे। चलिए, दिखाता हूँ।" अपनी बैठकका परदा हटाकर सबको वे एक तरहसे ढकेलते हुए ही भीतर ले गये।

आदमी तो कुछ सोचकर रखता है, पर रूपका अन्त नहीं। जैसा लम्बा छरहरा शरीर, वैसा ही सारे अवयवोंका निर्दोष गठन। नाक, आँख, भौंहें, ललाट, अधरकी तिरछी रेखातक सारी विशेषताएँ एक ही मानव शरीरमें सुविन्यस्त हो जुटनेपर वह कैसी विस्मयकी वस्तु हो जाती है, यह बात उस आदमीको बगैर देखे ख्यालमें नहीं आ सकती। देखते ही सहसा दंग रह जाना पड़ता है। उमर शायद बत्तीसके आस-पास पहुँची होगी, मगर पहले यह और भी कम मालूम होती है। सामनेके सोफेपर बैठे वे मनोरमासे बात कर रहे थे, अब सीधे होकर बैठ गये और मुसकराकर बोले, "आइए।"

मनोरमाने उठकर आगन्तुक अतिथियोंको नमस्कार किया। परन्तु अकस्मात् सब ऐसे विचलित हो उठे कि प्रति नमस्कारकी बात भी किसीके मनमें न आई।

अविनाश बाबू उमरमें भी बड़े थे और शायद लिहाजसे पद-गौरवमें भी सबसे श्रेष्ठ थे। सबसे पहले उन्होंने बात की। बोले, "आगरे कब लौटे शिवनाथ बाबू? खूब रहे साहब, हम लोगोंको तो खबर भी नहीं लगी।"

शिवनाथने कहा, "नहीं मिली? आश्चर्य है!" और फिर मुसकराकर बोले, "मैं नहीं समझता था अविनाश बाबू कि मेरे आनेकी बाट देखते हुए आप लोग इतने उद्विग्न हो रहे थे।"

उत्तर सुनकर अविनाश बाबूने यद्यपि हँसनेकी कोशिश की, किन्तु उनके सहयोगियोंके चेहरे क्रोधसे भीषण हो उठे। किसी भी कारणसे हो, ये लोग पहलेसे ही इस प्रियदर्शन गुणी व्यक्तिसे प्रसन्न नहीं हैं। यह बात आभाससे मालूम होनेपर भी इसकी इस उक्तिके भीतरसे और इसकी कठिन मुखच्छविकी व्यंजनासे इतनी कटु, अप्रिय और स्पष्ट हो उठी कि सिर्फ मनोरमा और उसके पिता ही नहीं बल्कि सदानन्द प्रकृतिके अविनाशतक लज्जित हो गये।

परन्तु मामला आगे नहीं बढ़ पाया, यहीं रुक गया।

बगलके कमरेसे उस्तादजीकी आवाज सुनाई दी और दूसरे ही क्षण घरके गुमाश्तेने आकर विनयके साथ कहा, "सब तैयार है, सिर्फ आप लोगोंके पहुँचने भरकी देर है।"

पेशेवर उस्तादोंका संगीत साधारणतः जैसा हुआ करता है, यहाँ भी वैसा ही हुआ, विशेषताहीन मामूली। मगर कुछ देर बाद इस छोटी-सी संगीत-सभामें थोड़े-से श्रोताओंके बीच शिवनाथका गाना सचमुच ही अपूर्व सुनाई दिया। सिर्फ उसका कण्ठ ही अतुलनीय और अनिन्दनीय हो सो बात नहीं, वास्तवमें वह इस विषयमें असाधारण सुशिक्षित और पारदर्शी है। उसके गानेका आडम्बर शून्य संयत ढंग, स्वरकी स्वच्छन्द सरल गति, चेहरेपर अदृष्टपूर्व भावोंकी छाया, आँखोंकी अभिभूत उदासीन दृष्टि इन बातोंने एक ही समयमें केन्द्रीभूत होकर सर्वांगीण लय और तालको परिशुद्ध कर जब वह संगीत समाप्त किया तब मालूम हुआ कि श्वेतभुजाने (सरस्वतीने) अपने दोनों हाथ खाली करके सारा का सारा आशीर्वाद इस साधकके माथेपर उडेल दिया है।

कुछ देरतक सभी लोग वाक्यहीन स्तब्ध हो रहे, फिर वृद्ध अमीर खाँने धीरेसे कहा, "ऐसा कभी नहीं सुना!"

मनोरमाने बचपनसे ही गाने-बजानेका अभ्यास किया है। संगीतमें वह अपटु नहीं थी। अपने छोटेसे जीवनमें उसने बहुत-कुछ सुना है, लेकिन यह बात उसे नहीं मालूम थी कि संसारमें ऐसी चीज भी मौजूद है और संगीतके छन्द छन्द या कदम-कदमपर हृदयके भीतर इस तरह कसक भी उठ सकती है। उसकी दोनों आँखें आँसुओंसे भर आईं और उसे छिपानेके लिए मुँह फेरकर वह चुपचाप उठके चली गई।

अविनाशने कहा, "शिवनाथ गानेमें जल्दी तैयार नहीं होता, उसका गाना हम लोगोंने पहले भी सुना है,—लेकिन उसकी इससे कोई तुलना ही नहीं हो सकती। इस साल भरके अन्दर तो उसने 'इनफिनिट्ली इम्प्रूव' (हद दरजेका सुधार) किया है।"

हरेन्द्रने कहा, "हाँ।"

अक्षय इतिहासके अध्यापक हैं। कठोर सच्चे आदमीके तौरपर मित्र मण्डलमें उनकी ख्याति है। गाना-बजाना अच्छा लगना उनके मतसे मनकी कमजोरी है। वे निष्कपट साधु आदमी हैं। इसीसे सिर्फ अपनी ही नहीं, दूसरोंकी चरित्र-सम्बन्धी पवित्रताके प्रति भी उनकी अत्यन्त सजग तीक्ष्ण दृष्टि है। शिवनाथके अकस्मात् वापस लौट आनेके कारण शहरकी आबहवा फिरसे कलुषित न हो जाय, इस आशंकासे उनकी गंभीर शांति क्षुब्ध हो गई है।

सामकर इस बातकी सम्भावनासे उनका मन बहुत उद्विग्न हो उठा कि घरमें औरतें आ गई हैं, वे भी परदेकी ओटसे गाना सुनेंगी, चेहरा देखेंगी, और वह उन्हें भी प्रीतिकर लगेगा। वे बोले, "गाना तो सुना था मधु बाबूका! यह गाना आप लोगोंको चाहे जितना भी मीठा लगा हो, पर इसमें प्राण नहीं हैं!"

सब चुप हो रहे। कारण, एक तो अज्ञात मधु बाबूका गाना किसीने सुना नहीं था और दूसरे गानेमें प्राण रहने न रहनेकी सुनिर्दिष्ट धारणा अक्षयकी तरह और किसीने निकट स्पष्ट नहीं थी। गुण मुग्ध आशु बाबू उत्तेजनावश तर्क करनेको तैयार थे, पर अविनाशने आँखोंके इशारेसे उन्हें रोक दिया।

संगीतहीके विषयमें आलोचना होने लगी। कब, किसने, कहाँ, कैसा गाना सुना था, उसकी व्याख्या और वर्णन किया जाने लगा। बातों ही बातोंमें रात बढ़ने लगी। भीतरसे खबर आई कि औरतें सब जीम चुकीं, और उन्हें घर भेजा जा रहा है। वृद्ध सब जज साहब रात हो जानेकी वजहसे घर चल दिये और अजीर्ण रोगग्रस्त मुन्सिफ साहब भी जल और पान मात्र मुँहमें देकर उनके साथी हुए। रह गया सिर्फ प्रोफेसर-दल। क्रमशः उसकी भी जीमनेकी बुलाहट हुई। ऊपरके खुले बरामदेमें आसन बिछाकर पत्तलें लगाई गई हैं, सबके साथ आशु बाबू भी बैठ गये। मनोरमा औरतोंकी तरफसे छुट्टी पाकर देख-रेखके लिए आ पहुँची।

शिवनाथको भूख भले ही हो, पर खानेमें रुचि नहीं थी, वह बिना खाये ही घर लौटनेको तैयार था, मगर मनोरमाने किसी भी तरह उसे छोड़ा नहीं, वह सुनकर सबके साथ बिठा दिया। आयोजन बड़े आदमियों जैसा ही था, इस बातका विस्तारके साथ वर्णन करके कि रेलमें आते वक्त ट्रूण्डलामें शिवनाथके साथ कैसे आशु बाबूका परिचय हुआ और मात्र दो दिनकी बातचीतसे कैसे वह परिचय घनिष्ठ आत्मीयतामें परिणत हो गया, आशु बाबूने अपना कृतित्व प्रमाणित करनेके लिए कहा, "और, सबसे बढ़कर खूबी है मेरे कानोंकी। इनके गलेकी अस्फुट मामूली-सी गुंजन ध्वनिसे ही मैं निश्चित समझ गया कि कोई गुनी पुरुष, असाधारण व्यक्ति है।" इतना कहकर उन्होंने कन्याको साक्षीके तौरपर बुलाकर कहा, "क्यों बेटी, कहा नहीं था तुमसे, शिवनाथ बाबू भारी गुणी आदमी हैं? कहा नहीं था मणि, इनके साथ जान पहचान होना जीवनमें एक

सौभाग्यकी बात है ?"

लज्जासे मुखड़ा मारे आनन्दके दीप्त हो उठा, बोली, "हाँ बाबूजी, तुमने कहा था। तुमने गाड़ीसे उतरते ही मुझे बताया था कि—"

"मगर देखिए आशु बाबू—"

वक्ता थे अक्षय। सब चकित हो गये। अविनाशने व्यग्र होकर रोकनेकी कोशिश की, "जा हो, रहने दो अक्षय। रहने दो आज यह सब चर्चा—"

अक्षयने आँखें मींचकर ओंठोंके लिहाजको बला टालकर कई बार सिर हिलाया और कहा, "नहीं अविनाश बाबू, दबानेसे काम नहीं चलेगा। शिव नाथ बाबूकी सारी बात प्रकट कर देना मैं अपना कर्तव्य समझता हूँ। आप—"

"जा हा हा,—करते क्या हो अक्षय, कर्तव्यका ज्ञान तो हम लोगोंको भी है, साहब,—और किसी दिन देखा जायगा—" इतना कहकर अविनाशने उन्हें एक धक्का देकर रोकनेकी कोशिश की, पर सफलता नहीं मिली। धक्केसे अक्षय का शरीर हिल गया, पर कर्तव्यनिष्ठा नहीं हिली। बोले, "आप लोग जानते हैं कि न्यायका संकोच मेरे नहीं है। अनातिको प्रश्रय मैं दे ही नहीं सकता।"

असहिष्णु हरेन्द्र बोल उठा, "अरे, तो क्या हम भी प्रश्रय देना चाहते हैं? लेकिन उसके लिए क्या कोई स्थान-काल नहीं ?"

अक्षयने कहा, "नहीं। वे अगर इस शहरमें फिरसे न आते, अगर उस परिवारसे घनिष्ठता बढ़ानेकी कोशिश न करते, खासकर कुमारी मनोरमाका अगर कोई सम्बन्ध न होता—"

उद्वेगके कारण आशु बाबू व्याकुल हो उठे और अज्ञात आशंकासे मनोरमा का चेहरा फीका पड़ गया।

हरेन्द्रने कहा, "इट इज ट्रू मच !" (बहुत ज्यादती है।)

अक्षयने जोरके साथ प्रतिवाद किया, "ना, इट इज नॉट !" (नहीं, नहीं है।)

अविनाश बोल उठे, "जो हो—कर क्या रहे हो तुम लोग !"

अक्षयने किसी बातपर ध्यान ही नहीं दिया, बोले, "आगरेमें ये भी किसी दिन प्रोफेसर थे। इनको आशु बाबूको बतलाना चाहिए था कि कैसे वह नौकरी छूटी।"

हरेन्द्रने कहा, "अपनी इच्छासे छोड़ दी। पत्थरका कारोबार करने

के लिए।"

अक्षयने खण्डन किया, "झूठी बात है।"

शिवनाथ चुपचाप भोजन कर रहा था, मानो इस सब वितण्डा-वादसे उसका कोई सम्बन्ध ही न हो। अब उसने मुँह उठाकर देखा और अत्यन्त स्वाभाविक भावसे कहा, "बात तो झूठी ही है। कारण, प्रोफेसरी अपनी इच्छासे नहीं छोड़ता तो दूसरोंकी यानी आप लोगोंकी इच्छासे छोड़नी पड़ती। और वो ही हुआ।"

आशु बाबूने आश्चर्यके साथ पूछा, "क्या?"

शिवनाथने कहा, "शराब पीनेकी वजहसे।"

अक्षयने इस बातका प्रतिवाद किया, "नहीं, शराब पीनेके कसूरपर नहीं, मतवाले होनेके कसूरसे।"

शिवनाथने कहा, "जो शराब पीता है वही तो कभी न कभी मतवाला होता है। जो नहीं होता, वह या तो झूठ बोलता है, या शराबके बदले पानी पीता है।" कहकर वह हँसने लगा।

अक्षय मारे क्रोधके कठोर हो उठा, बोला, "निर्लज्जकी तरह आप हँसना चाहें तो हँस सकते हैं, मगर इस कसूरको हम लोग माफ नहीं कर सकते।"

शिवनाथने कहा, "ऐसी बदनामी तो मैं आपकी करता नहीं कि आप माफ कर सकते हैं। इस सत्यको मैं स्वीकार करता हूँ कि स्वेच्छासे मुझसे नौकरी छुड़ानेके लिए आप लोगोंने स्वेच्छासे काफी परिश्रम किया था।"

अक्षयने कहा, "तो आशा है कि और भी एक सत्य आप इसी तरह स्वीकार कर लेंगे। आपको शायद मालूम नहीं कि हम लोग आपकी बहुत-सी बातें जानते हैं।"

शिवनाथने गरदन हिलाकर कहा, "नहीं, मुझे नहीं मालूम। फिर भी इतना अवश्य जानता हूँ कि औरोंके विषयमें आपका कुतूहल जैसा अपरिसीम है, दूसरोंकी बात जाननेका अध्यवसाय भी वैसा ही विपुल है। क्या स्वीकार करना होगा, फरमाइए?"

अक्षयने कहा, "आपकी स्त्री मौजूद है। उसे छोड़कर आपने फिर ब्याह किया है। सच है या नहीं?"

आशु बाबू सहसा गुस्सा हो पड़े, "आप यह सब क्या कह रहे हैं अक्षय

सौभाग्यकी बात है ?"

लड़कीका मुखड़ा मारे आनन्दके दीप्त हो उठा, बोली, "हाँ बाबूजी, तुमने कहा था। तुमने गाडीसे उतरते ही मुझे बताया था कि—"

"मगर देखिए आशु बाबू—"

वक्ता थे अक्षय। सब चकित हो गये। अविनाशने व्यग्र होकर रोकनेकी कोशिश की, "जो हो, रहने दो अक्षय। रहने दो आज यह सब चर्चा—"

अक्षयने आँखें मींचकर ऑखोंके लिहाजकी बला टालकर एक बार सिर हिलाया और कहा, "नहीं अविनाश बाबू, दबानेसे काम नहीं चलेगा। शिव नाथ बाबूकी सारी बात प्रकट कर देना मैं अपना कर्तव्य समझता हूँ। आप—"

"ओ हो हो,—करते क्या हो अक्षय, कर्तव्यका ज्ञान तो हम लोगोंको भी है, साहब,—और किसी दिन देखा जायगा—" इतना कहकर अविनाशने उसे एक धक्का देकर रोकनेकी कोशिश की, पर सफलता नहीं मिली। धक्केसे अक्षय का शरीर हिल गया, पर कर्तव्यनिष्ठा नहीं हिली। बोले, "आप लोग जानते हैं कि व्यथका संकोच मेरे नहीं है। अनीतिको प्रश्रय मैं दे ही नहीं सकता।"

असहिष्णु हरेन्द्र बोल उठा, "अरे, तो क्या हम भी प्रश्रय देना चाहते हैं! लेकिन उसके लिए क्या कोई स्थान-काल नहीं?"

अक्षयने कहा, "नहीं। ये अगर इस शहरमें फिरसे न आते, अगर उच्च परिवारसे घनिष्ठता बढ़ानेकी कोशिश न करते, खासकर कुमारी मनोरमाका अगर कोई सम्बन्ध न होता—"

उद्वेगके कारण आशु बाबू व्याकुल हो उठे और अज्ञात आशंकासे मनोरमा का चेहरा फीका पड़ गया।

हरेन्द्रने कहा, "इट इज टू मच !" (बहुत ज्यादती है।)

अक्षयने जोरके साथ प्रतिवाद किया, "नो, इट इज नॉट !" (नहीं, नहीं है।)

अविनाश बोल उठे, "ओ हो—कर क्या रहे हो तुम लोग !"

अक्षयने किसी बातपर ध्यान ही नहीं दिया, बोले, "आगरेमें ये भी किसी दिन प्रोफेसर थे। इनको आशु बाबूको बतलाना चाहिए था कि कैसे वह नौकरी छूटी।"

हरेन्द्रने कहा, "अपनी इच्छासे छोड़ दी। पत्थरका कारोबार करने

के लिए।"

अक्षयने खण्डन किया, "झूठी बात है।"

शिवनाथ चुपचाप भोजन कर रहा था, मानो इस सब वितण्डा वादसे उसका कोई सम्बन्ध ही न हो। अब उसने मुँह उठाकर देखा और अत्यन्त स्वाभाविक भावसे कहा, "बात तो झूठा ही है। कारण, प्रोफेसरी अपनी इच्छासे नहीं छोड़ता तो दूसरोंकी यानी आप लोगोंकी इच्छासे छोड़नी पड़ती। और सो ही हुआ।"

आशु बाबूने आश्चर्यके साथ पूछा, "क्या?"

शिवनाथने कहा, "शराब पीनेकी वजहसे।"

अक्षयने इस बातका प्रतिवाद किया, "नहीं, शराब पीनेके कसूरपर नहीं, मतवाले होनेके कसूरसे।"

शिवनाथने कहा, 'जो शराब पीता है वही तो कभी न कभी मतवाला होता है। जो नहीं होता, वह या तो झूठ बोलता है, या शराबके बदले पानी पीता है।" कहकर वह हँसने लगा।

अक्षय मारे क्रोधके कठोर हो उठा, बोला, "निर्लज्जकी तरह आप हँसना चाहे तो हँस सकते हैं, मगर इस कसूरको हम लोग माफ नहीं कर सकते।"

शिवनाथने कहा, "ऐसी बदनामी तो मैं आपकी करता नहीं कि आप माफ कर सकते हैं। इस सत्यको मैं स्वीकार करता हूँ कि स्वेच्छासे मुझसे नौकरी छुड़ानेके लिए आप लोगोंने स्वेच्छासे काफी परिश्रम किया था।"

अक्षयने कहा, "तो आशा है कि और भी एक सत्य आप इसी तरह स्वीकार कर लेंगे। आपको शायद मालूम नहीं कि हम लोग आपकी बहुत सी बात जानते हैं।"

शिवनाथने गरदन हिलाकर कहा, "नहीं, मुझे नहीं मालूम। फिर भी इतना अवश्य जानता हूँ कि औरोंके विषयमें आपका कुतूहल जैसा अपरिसीम है, दूसरोंकी बात जाननेका अध्यवसाय भी वैसा ही विपुल है। क्या स्वीकार करना होगा, फरमाइए?"

अक्षयने कहा, "आपकी स्त्री मौजूद है। उसे छोड़कर आपने फिर ब्याह किया है। सच है या नहीं?"

आशु बाबू सहसा गुस्सा हो पड़े, "आप यह सब क्या कह रहे हैं अक्षय

बाबू ? ऐसा भी कहीं हुआ है, या हो सकता है ?"

शिवनाथ खुद ही बाचमें टोककर बोले, "पर ऐसा ही हुआ है आशु बाबू। उसे छोड़कर, मैंने फिरसे ब्याह किया है।"

"कहते क्या हैं ! क्या हुआ था ?"

शिवनाथने कहा, "विशेष बात नहीं। वे हमेशा बीमार रहती हैं, उमर भी तीस हो चली। औरतोंके लिए इतना ही काफी है। उसपर लगातार बीमारी भुगतनेके कारण दाँत गिर गये, बाल पक गये, बिल्कुल बूढ़ी हो गई हैं। इसी लिए उसे छोड़कर दूसरा ब्याह करना पड़ा।"

आशु बाबू विह्वल दृष्टिसे उसके चेहरेकी तरफ देखते रह गये, "हैं! सिर्फ इसीलिए ! उनका और कोई अपराध नहीं ?"

शिवनाथने कहा, "नहीं। कोई झूठा दोष लगानेसे लाभ ही क्या है आशु बाबू ?" उसकी इस निर्मल सत्यवादिताके अतिनाशसे अविनाश मानो पागल हो उठा, "लाभ ही क्या है आशु बाबू ! पाखण्डी कहींके ! तुम्हारा लाभ नुकसान चूल्हेमें जाय, एक बार झूठ ही बोल जाते कि उसने गम्भीर अपराध किया था, इसीसे उसे छोड़ दिया है। एक झूठसे तुम्हारा पाप नहीं बढ़ जाता !"

शिवनाथ गुस्सा नहीं हुआ, सिर्फ इतना ही बोला, "मगर इतनी बेजा बात मैं नहीं कह सकता।" हरेन्द्र सहसा जल भुन गया, बोला, "विवेक जैसी चीज क्या आपके अन्दर है ही नहीं शिवनाथ बाबू ?"

शिवनाथको इतनेपर भी गुस्सा न आया, उसने शान्त भावसे ही कहा, "ऐसा विवेक कोई मानी नहीं रखता। झूठे विवेककी जंजीर पैरोंमें डालकर अपनेको पंगु बना डालनेका हिमायती मैं नहीं हूँ। हमेशा दुःख भोगते चलना ही तो जीवन धारणका उद्देश्य नहीं है ?"

आशु बाबू इस गम्भीर यथार्थसे आहत होकर बोले, "मगर आप अपनी स्त्रीका दुःख तो जरा सोच देखिए। उनका रोगी रहना परितापका विषय हो सकता है, लेकिन सिर्फ इसी वजहसे,—बीमार रहना तो कोई कसूर नहीं शिवनाथ बाबू ! बिना किसी अपराध—"

"बिना किसी अपराधके मैं ही मना दुःख क्यों सहता रहूँ ? ऐसा विश्वास मेरा नहीं है कि एकका दुःख और किसीके सरपर लाद देनेसे न्याय होता है।"

आशु बाबूने आगे बहस नहीं की। वे सिर्फ एक गहरा साँस लेकर चुप हो रहे।

हरेन्द्रने पूछा, 'यह ब्याह हुआ कहाँ ?"

"गाँवहामें ।"

"सौतक होते हुए लड़की दे दी ! शायद इसके माँ-बाप नहीं हैं ?"

शिवनाथने कहा, "नहीं । हमारे यहाँकी पहलीकी विधवा लड़की

"घरकी नौकरानीकी लड़की है ? गूद ! सच ! जात क्या है ?"

"ठीक नहीं मालूम । शायद जुलाहिन-उलाहिन होगी ।"

अजय बहुत देरसे बोल नहीं था, अब पूछ उठा, "उसको अक्षर-बोध भी नहीं होगा शायद ?"

शिवनाथने कहा, "अक्षर बोधके लोभसे तो ब्याह किया नहीं, किया है रूपके लिए । और इस चीजका शायद उसमें अभाव नहीं है ।"

इस उक्तिके बाद मनोरमाने फिर एक बार उठनेकी कोशिश की, परन्तु इस बार भी उसके पाँव पत्थरकी तरह भारी हो रहे । कुतूहल और उत्तेजनावश किसीने उसकी तरफ देखा नहीं । देखते तो शायद डर जाते ।

हरेन्द्रने कहा, "तो, यह शायद सिविल ब्याह ही हुआ ?"

शिवनाथने गरदन हिलाकर जवाब दिया, "नहीं, ब्याह हुआ शैवमतसे ।"

अविनाशने कहा, "यानी धोखा देनेका रास्ता दसों दिशाओंसे खुला रक्खा, क्यों न शिवनाथ ?"

शिवनाथने हँसकर कहा, "यह तो सोचनेकी बात है अविनाश बाबू ! नहीं तो, पिताजी खुद अपनी मौजूदगीमें मेरा जो ब्याह कर गये हैं, उसमें तो धोखेबाजीकी गुञ्जाइश नहीं थी, मगर फिर भी धोखा तो रह ही गया था । उसे ढूँढ़ निकालनेकी आँख होनी चाहिए ।"

अविनाशसे कोई उत्तर देते न बन पड़ा, सिर्फ उसका चेहरा मारे क्रोधके सुर्ख हो गया ।

आशु बाबू चुपचाप सिर झुकाये बैठे हुए सोचने लगे—यह क्या हुआ ! यह क्या हुआ !

दो-तीन मिनट किसीके भी मुँहसे कोई बात नहीं निकली, निरानन्द और कलहकी घुटनी हुई हवासे घर भर गया । बाहरसे एक जोरका हवाका झोंका आये बिना बेचैनी दूर नहीं हो सकती, ऐसा ही कुछ मनोभाव लिये हुए अविनाश बाबू अकस्मात् बोल उठे, "जाने दो, जाने दो ये सब बात । हाँ, तो

बोली, "कैसी कहानी है बापूजी ? खतम हो गई ? किसने लिखी है ?"

मगर बात मुँहसे निकलनेके बाद ही वह चौंक पड़ी, देखा कि कमरेमें पिता अकेले नहीं हैं, सामने शिवनाथ बैठा है।

शिवनाथने उठकर नमस्कार किया, और कहा, "कहाँतक घूम आईं ?"

मनोरमाने जवाब नहीं दिया, सिर्फ नमस्कारके बदलेमें जरा-सा सिर हिलाकर उसकी तरफ पूरी तरहसे पीठ करके पितासे कहा, "पूरी पढ़ चुके बापूजी ? कैसी लगी ?"

आशु बाबूने इतना ही कहा, "नहीं।"

कन्याने कहा, "तो मैं ले जाऊँ, पढ़के अभी तुम्हें वापस दे जाऊँगी।" इतना कहकर वह पत्रिका हाथमें लेकर चल दी। परन्तु अपने सोनेके कमरेमें जाकर वह चुपचाप बैठी रही। कपड़े बदलना, हाथ मुँह धोना वगैरह सब काम पड़ा रहा, पत्रिका एक बार खोलकर देखीतक नहीं कि कौन-सी कहानी है, किसने लिखी है अथवा कैसी लिखी है।

इस तरह बैठी-बैठी वह क्या सोचने लगी, कोई *ठिकाना नहीं। कुछ* देर बाद, नौकरको सामनेसे जाते देख उसने पूछा, "अरे, बापूजीके कमरेसे वह आदमी चला गया ?"

बहराने कहा, "जी हाँ।"

"*कब गया ?*"

"पानी पड़नेसे पहले ही।"

मनोरमाने खिड़कीका परदा हटाकर देखा, बात ठीक है। फिर वर्षा शुरू हो गई है, पर ज्यादा नहीं। ऊपरकी ओर देखा, पश्चिमके आकाशमें बादल घनघोर होते आ रहे हैं और इस बातकी सूचना दे रहे हैं कि रातको मूसलधार पानी पड़ेगा। पत्रिका हाथमें लिये पिताकी बैठकमें जाकर देखा कि वे चुपचाप बैठे हैं। पत्रिका उनकी आरामकुरसीके हाथेपर धीरेसे रखकर बोली, "बापूजी, तुम तो जानते हो, यह सब मुझे अच्छा नहीं लगता।"

इतना कहकर वह पासकी चौकीपर बैठ गई।

आशु बाबूने मुँह उठाकर कहा, "*क्या सब बेटी ?*"

मनोरमाने कहा, "तुम ठीक समझते हो कि मैं क्या कह रही हूँ। गुणीका आदर करना मैं भी कम नहीं जानती बापूजी, लेकिन शिवनाथ बाबू जैसे एक

दुष्ट, दुश्चरित्र शराबीको क्या समझकर प्रश्रय दे रहे हो ?"

आशु बाबू मारे शरम और संकोचके एकबारगी फक पड़ गये। कमरेके एक कोनेमें टेबिलपर बहुत-सी पुस्तकोंका ढेर पड़ा था, मनोरमा समयके अभावसे उन्हें यथास्थान सजाकर अबतक रख नहीं सकी थी। उस तरफ आँखका इशारा करके वे सिर्फ इतना कह सके, 'वे हैं न अभी—"

मनोरमाने भयके साथ उधर मुँह फेरकर देखा, शिवनाथ टेबिलके पास खड़ा हुआ कोई किताब ढूँढ़ रहा है। नौकरने उसे गलत खबर दी थी। मनोरमा मारे शरमके मानो जमीनमें धँसने लगी। शिवनाथके पास आकर खड़े होनेपर वह ऊपर मुँह उठाकर देख न सकी। शिवनाथने कहा, "किताब मुझे मिली नहीं आशु बाबू। तो अब चला।"

आशु बाबूसे और कुछ कहा नहीं गया, सिर्फ इतना ही कहा, "बाहर मेह जो बरस रहा है।"

शिवनाथने कहा, "बरसने दीजिए। ज्यादा नहीं है।"

इतना कहकर वह जा ही रहा था कि अकस्मात् ठिठककर खड़ा हो गया। मनोरमाको लक्ष्य करके बोला, "मैंने दैवात् जो सुन लिया है वह मेरा दुर्भाग्य भी है और सौभाग्य भी। इसके लिए आप लज्जित न हों। ऐसी बात अक्सर सुननी पड़ती है। फिर भी, यह मैं निश्चित् जानता हूँ कि बात मेरे सम्बन्धमें कही जानेपर भी मुझे सुनाकर नहीं कही गई। इतनी निर्दय आप हरगिज नहीं हैं।"

फिर जरा ठहरकर कहा, "मगर मेरी और एक शिकायत है। उस दिन अक्षय बाबू वगैरह प्रोफेसरोंके गुटने मेरे विरुद्ध इशारा किया था कि मानो मैं किसी खास मतलबको लेकर इस घरसे घनिष्ठता बढ़ानेकी कोशिश कर रहा हूँ। पर एक तो सब लोगोंमें औचित्यकी धारणा एक-सी नहीं होती,—दूसरे बाहरसे कोई एक घटना जैसी दिखाई देती है वह उसका पूर्ण रूप नहीं होता। पर बात जो भी हो, आप लोगोंमें प्रवेश करनेकी कोई गूढ़ दुरभिसंधि उस दिन भी मेरे अन्दर नहीं थी और आज भी नहीं है।" फिर सहसा आशु बाबूको लक्ष्य करके कहा, "मेरा गाना सुनना आपको अच्छा लगता है,—घर मेरा ज्यादा दूर नहीं, अगर किसी दिन सुननेकी तबीयत हो जाय, तो वहाँ चरण रज दीजिएगा, मुझे खुशी ही होगी।" इतना कहकर फिरसे नमस्कार करके शिव

नाथ बाहर चला गया। पिता या कन्या दोनोंमेंसे कोई एक भी बातका जवाब न दे सका। आशु बाबूके हृदयमेंसे बहुत-सी बातें एक साथ निकलनेको धक्कम धक्का करने लगीं, किन्तु निकल न सका। बाहर तब वर्षा जोरसे हो रही थी, यह बात भी उनके मुँहसे न निकली कि शिवनाथ बाबू, जरा ठहरकर जाइएगा।

नौकर चायका सामान लेकर हाजिर हुआ। मनोरमाने पूछा, "तुम्हारी चाय क्या यहीं बना दूँ बापूजी?"

आशु बाबूने कहा, "नहीं, मेरे लिए नहीं, शिवनाथ बाबूने जरा चाय पीने को कहा था।"

मनोरमाने नौकरको चाय वापस ले जानेके लिए इशारा किया। मनकी चंचलताके कारण आशु बाबू कमरमें दर्द होते हुए भी चौकीसे उठकर कमरेमें चहलकदमी कर रहे थे, इतनेमें सहसा खिड़कीके पास टिठककर खड़े हो गये और क्षण भर गौरसे देखकर बोले, "उस पेड़के नीचे जो खड़ा है सो शिवनाथ ही है न? जा नहा सका है, भीग रहा है।" फिर दूसरे ही क्षण बोल उठे, "साथमें कोई स्त्री भी खड़ी है। बंगालियों जैसे कपड़े पहने,—वह बेचारी और भी भीगी जा रही है!"

इसके बाद तुरत उन्होंने नौकरको बुलाया और कहा, "जदू, देख तो आ, गेटके पास पेड़के नीचे खड़े भीग कौन रहे हैं! जो बाबू अभी अभी यहाँसे गये हैं, वही हैं क्या?—लेकिन, ठहर ठहर—"

बात उनकी बीचमें ही रुक गई, अकस्मात् मनमें भयानक सन्देह जाग उठा,—वह औरत शिवनाथकी वही स्त्री तो नहीं है?

मनोरमाने कहा, "ठहरे क्यों बापूजी, जाकर शिवनाथ बाबूको बुला ही लावे न।" और वह उठके खुली खिड़कीके किनारे पिताके पास जा खड़ी हुई। बोली, "वह चाय पीना चाहता था, ऐसा जानती तो मैं हरगिज उसे जाने नहीं देती।"

लड़कीकी बातके जवाबमें आशु बाबू धीरेसे बोले, "सो तो ठीक है मणि मगर, मुझे डर है कि वह स्त्री जो साथ खड़ी है, शायद उसकी वही स्त्री हो। बाहर खड़ी-खड़ी बाट देख रही थी।"

बात सुनकर मनोरमाको निश्चित मालूम हुआ कि वह वही स्त्री है। एक बार उनके मनमें दुविधा आई कि इस घरमें उसे किसी बहानेसे बुलाया जा

सकता है या नहीं, पर पिताके मुँहकी तरफ देखकर उसने वह संकोच दूर कर दिया। नौकरसे कहा, "जदू, जाकर उन दोनोंको ही बुला लाओ। शिवनाथ बाबू अगर पूछें कि किसने बुलाया है, तो मेरा नाम बता देना।"

नौकर चला गया। आशु बाबूका जी उत्कण्ठासे भर उठा, बोले, "मणि, यह काम शायद ठीक नहीं हुआ।"

"क्यों बाबूजी?"

आशु बाबूने कहा, "शिवनाथ या चाहे जैसा हो, पर आखिर एक उच्च शिक्षित और शरीफ आदमी है,—उसकी बात और है। पर उसके सिलसिलेमें इस औरतसे भी परिचय करना क्या ठीक हो सकता है? जातिकी ऊँचता-नीचता हम लोग भले ही उतनी न मानते हों, पर भेद तो है ही। नौकर नौकरानियोंके साथ तो बन्धुत्व नहीं किया जा सकता बेटी।"

मनोरमाने कहा, "बन्धुत्व करनेकी जरूरत नहीं बाबूजी। विपत्तिके समय रास्तेके राहगीरको भी कुछ घण्टोंके लिए आश्रय दिया जाता है। हम लोग सिर्फ उतना ही करेंगे।"

आशु बाबूके मनकी दुविधा नहीं मिटी। कई बार सिर हिलाकर बोले, "बात ठीक इतना ही नहीं है। मेरी समझमें यह भी तो नहीं आ रहा है कि उस औरतके आ जानेपर तुम उसके साथ कैसा व्यवहार करोगी।"

मनोरमाने कहा, "मेरे ऊपर क्या तुम्हारा विश्वास नहीं है बाबूजी!"

आशु बाबू जरा सूखी हँसी हँसकर बोले, "सो तो है। फिर भी बात जरा ठीकसे समझमें नहीं आ रही है। तुम जानती हो जो तुम्हारी बराबरकी श्रेणीके हैं उनके साथ कैसा व्यवहार किया जाता है, और इतना बहुत कम लड़कियाँ ही जानती होंगी। नौकर नौकरानियोंके प्रति व्यवहार भी तुम्हारा निर्दोष है, मगर यह जरा और बात है।—समझी बेटी, शिवनाथपर मैं स्नेह करता हूँ, मैं उसके गुणोंका अनुरागी हूँ,—दैवकी विडम्बनासे आज जिस कारण वह बहुत कुछ लाञ्छन सह गया है, अब फिर घरमें बुलाकर मैं उसे और सताना नहीं चाहता।"

मनोरमाने समझा कि यह उसीके प्रति शिकायत है, उसने कहा, "अच्छा बाबूजी, वैसा ही होगा।"

आशु बाबूने हँसकर कहा, "होना क्या आसान है बेटी? कारण, मेरे

नाथ बाहर चला गया। पिता या कन्या दोनोंमेंसे कोई एक भी बातका जवाब न दे सका। आशु बाबूके हृदयमेंसे बहुत-सी बातें एक साथ निकलनेको धक्कम धक्का करने लगीं, किन्तु निकल न सकीं। बाहर तब वर्षा जोरसे हो रही थी यह बात भी उनके मुँहसे न निकली कि शिवनाथ बाबू, जरा ठहरकर जाइएगा।

नौकर चायका सामान लेकर हाजिर हुआ। मनोरमाने पूछा, "तुम्हारी चाय क्या यहीं बना दूँ बापूजी?"

आशु बाबूने कहा, "नहीं, मेरे लिए नहीं, शिवनाथ बाबूने जरा चाय पीने को कहा था।"

मनोरमाने नौकरको चाय वापस ले जानेके लिए इशारा किया। मनकी चंचलताके कारण आशु बाबू कमरमें दर्द होते हुए भी चौकीसे उठकर कमरेमें चहलकदमी कर रहे थे, इतनेमें सहसा खिड़कीके पास ठिठककर खड़े हो गये और क्षण भर गौरसे देखकर बोले, "उस पेड़के नीचे जो खड़ा है सो शिवनाथ ही है न? जा नहीं सका है, भीग रहा है।" फिर दूसरे ही क्षण बोल उठे, "साथमें कोई स्त्री भी खड़ी है। बंगालियोंके जैसे कपड़े पहने,—वह बेचारी और भी भीगी जा रही है?"

इसके बाद तुरन्त उन्होंने नौकरको बुलाया और कहा, "जदू, देख तो जा, गेटके पास पेड़के नीचे खड़े लोग कौन रहे हैं? जो बाबू अभी अभी यहाँ से गये हैं, वही हैं क्या?—लेकिन, ठहर ठहर—"

बात उनकी बीचमें ही रुक गई, अकस्मात् मनमें भयानक सन्देह जाग उठा,—यह औरत शिवनाथकी वही स्त्री तो नहीं है?

मनोरमाने कहा, "ठहरे क्यों बापूजी, जाकर शिवनाथ बाबूको बुला ही लाये न।" और वह उठके खुली खिड़कीके किनारे पिताके पास जा खड़ी हुई। बोली, "वह चाय पीना चाहता था, ऐसा जानती तो मैं हरगिज उसे जाने नहीं देती।"

लड़कीकी बातके जवाबमें आशु बाबू धीरेसे बोले, "सो तो ठीक है मणि मगर, मुझे डर है कि वह स्त्री जो साथ खड़ी है, शायद उसकी वही स्त्री हो। बाहर खड़ी-खड़ी बाट देख रही थी।"

बात सुनकर मनोरमाको निश्चित मालूम हुआ कि वह वही स्त्री है। एक बार उनके मनमें दुविधा आई कि इस घरमें उसे किसी बहानेसे बुलाया जा

सकता है या नहीं, पर पिताके मुँहकी तरफ देखकर उसने वह संकोच दूर कर दिया। नौकरसे कहा, "जदू, जाकर उन दोनोंको ही बुला लाओ। शिवनाथ बाबू अगर पूछें कि किसने बुलाया है, तो मेरा नाम बता देना।"

नौकर चला गया। आशु बाबूका जी उत्कण्ठासे भर उठा, बोले, "मणि, यह काम शायद ठीक नहीं हुआ।"

"क्या बाबूजी?"

आशु बाबूने कहा, "शिवनाथ या चाहे जैसा हो, पर आखिर एक उच्च शिक्षित और शरीफ आदमी है,—उसकी बात और है। पर उसके सिलसिलेमें इस औरतसे भी परिचय करना क्या ठीक हो सकता है? जातिकी ऊँचता नीचता हम लोग भले ही उतनी न मानते हों, पर भेद तो है ही। नौकर-नौकरानियोंके साथ तो बन्धुत्व नहीं किया जा सकता बेटी!"

मनोरमाने कहा, "बन्धुत्व करनेकी जरूरत नहीं बाबूजी। विपत्तिके समय रास्तेके राहगीरको भी कुछ घण्टेके लिए आश्रय दिया जाता है। हम लोग सिर्फ उतना ही करेंगे।"

आशु बाबूके मनकी दुविधा नहीं मिटी। कई बार सिर हिलाकर बोले, "बात ठीक इतनी ही नहीं है। मेरी समझमें यह भी तो नहीं आ रहा है कि उस स्त्रीके आ जानेपर तुम उसके साथ कैसा व्यवहार करोगी।"

मनोरमाने कहा, "मेरे ऊपर क्या तुम्हारा विश्वास नहीं है बाबूजी?"

आशु बाबू जरा रूखी हँसी हँसकर बोले, "सो तो है। फिर भी बात जरा ठीकसे समझमें नहीं आ रही है। तुम जानती हो जो तुम्हारी बराबरकी श्रेणीके हैं उनके साथ कैसा व्यवहार किया जाता है, और इतना बहुत कम लड़कियाँ ही जानती होंगी। नौकर-नौकरानियोंके प्रति व्यवहार भी तुम्हारा निर्दोष है, मगर यह जरा और बात है।—समझी बेटी, शिवनाथको मैं स्नेह करता हूँ, मैं उसके गुणोंका अनुरागी हूँ,—दैवकी विडम्बनासे आज बिना कारण वह बहुत कुछ लाञ्छन सह गया है, अब फिर घरमें बुलाकर मैं उसे और सताना नहीं चाहता।"

मनोरमाने समझा कि यह उसीके प्रति शिकायत है, उसने कहा, "अच्छा बाबूजी, वैसा ही होगा।"

आशु बाबूने हँसकर कहा, "होना क्या आसान है बेटी? कारण, मेरे

नाथ बाहर चला गया। पिता या कन्या दोनोंमेंसे कोई एक भी बातका उत्तर न दे सका। आशु बाबूके हृदयसे बहुत-सी बातें एक साथ निकलनेको धक्कम धक्का करने लगीं, किन्तु निकल न सकीं। बाहर तब वर्षा जोरसे हो रही थी, यह बात भी उनके मुँहसे न निकली कि शिवनाथ बाबू, जरा ठहरकर जाइएगा।

नौकर चायका सामान लेकर हाजिर हुआ। मनोरमाने पूछा, "तुम्हारी चाय क्या यहीं बना दूँ बापूजी?"

आशु बाबूने कहा, "नहीं, मेरे लिए नहीं, शिवनाथ बाबूने जरा चाय पीने को कहा था।"

मनोरमाने नौकरको चाय वापस ले जानेके लिए इशारा किया। मनकी चंचलताके कारण आशु बाबू कमरेमें दर्द होते हुए भी चौकीसे उठकर कमरेमें चहलकदमी कर रहे थे, इतनेमें सहसा खिड़कीके पास ठिठककर खड़े हो गये और क्षण भर गौरसे देखकर बोले, "उस पेड़के नीचे जो खड़ा है सो शिवनाथ ही है न? जा नहीं सका है, भीग रहा है।" फिर दूसरे ही क्षण बोल उठे, "साथमें कोई स्त्री भी खड़ी है। बंगालियों जैसे कपड़े पहने,—यह बेचारी और भी भीगी जा रही है!"

इसके बाद तुरन्त उन्होंने नौकरको बुलाया और कहा, "जदू, देख तो आ, गेटके पास पेड़के नीचे खड़े भीग कौन रहे हैं! जो बाबू अभी अभी यहाँ से गये हैं, वही हैं क्या?—लेकिन, ठहर ठहर—"

बात उनकी बीचमें ही रुक गई, अकस्मात् मनमें भयानक सन्देह जाग उठा,—यह औरत शिवनाथकी वही स्त्री तो नहीं है?

मनोरमाने कहा, "ठहरे क्यों बापूजी, जाकर शिवनाथ बाबूको बुला ही लावे न!" और वह उठके खुली खिड़कीके किनारे पिताके पास जा खड़ी हुई। बोली, "वह चाय पीना चाहता था, ऐसा जानती तो मैं हरगिज उसे जाने नहीं देती।"

लड़कीकी बातके जवाबमें आशु बाबू धीरेसे बोले, "सो तो ठीक है मणि मगर, मुझे डर है कि वह स्त्री जो साथ खड़ी है, शायद उसकी वही स्त्री हो। बाहर खड़ी-खड़ी बाट देख रही थी।"

बात सुनकर मनोरमाको निश्चित मालूम हुआ कि वह वही स्त्री है। एक बार उनके मनमें दुविधा आई कि इस घरमें उसे किसी बहानेसे बुलाया जा

सकता है या नहीं, पर पिताके मुँहकी तरफ देखकर उसने वह संकोच दूर कर दिया। नौकरसे कहा, "जदू, जाकर उन लोगोंको ही बुला लाओ। शिवनाथ बाबू अगर पूछें कि किसने बुलाया है, तो मेरा नाम बता देना।"

नौकर चला गया। आशु बाबूका जी उत्कण्ठासे भर उठा, बोले, "मणि, यह काम शायद ठीक नहीं हुआ।"

"क्यों बापूजी?"

आशु बाबूने कहा, "शिवनाथ या चाहे जैसा हो, पर आखिर एक उच्च शिक्षित और शरीफ आदमी है,—उसकी बात और है। पर उसके सिलसिलेमें इस औरतसे भी परिचय करना क्या ठीक हो सकता है? जातिकी ऊँचता नीचता हम लोग भले ही उतनी न मानते हों, पर भेद तो है ही। नौकर नौकरानियोंके साथ तो तुल्य नहीं किया जा सकता बेटी!"

मनोरमाने कहा, "यथुल्य करनेकी जरूरत नहीं बापूजी। विपत्तिके समय रास्तेके राहगीरको भी कुछ घण्टोंके लिए आश्रय दिया जाता है। हम लोग सिर्फ उतना ही करेंगे।"

आशु बाबूर मनकी दुविधा नहीं मिटी। वह बार सिर हिलाकर बोले, "बात ठीक इतनी ही नहीं है। मेरी समझमें यह भी तो नहीं आ रहा है कि उस औरत आ जानेपर तुम उसके साथ कैसा व्यवहार करोगी।"

मनोरमाने कहा, "मेरे ऊपर क्या तुम्हारा विश्वास नहीं है बापूजी?"

आशु बाबू जरा सूखी हँसी हँसकर बोले, "सो तो है। फिर भी बात जरा ठीकसे समझमें नहीं आ रही है। तुम जानती हो जो तुम्हारी बराबरकी श्रेणीके हैं उनके साथ कैसा व्यवहार किया जाता है, और इतना बहुत कम लड़कियाँ ही जानती होंगी। नौकर नौकरानियोंके प्रति व्यवहार भी तुम्हारा निर्दोष है, मगर यह जरा और बात है।—समझी बेटी, शिवनाथपर मैं स्नेह करता हूँ, मैं उसके गुणोंका अनुरागी हूँ,—दैवकी विडम्बनासे आज बिना कारण यह बहुत कुछ लाञ्छन सह गया है, अब फिर घरमें बुलाकर मैं उसे और सताना नहीं चाहता।"

मनोरमाने समझा कि यह उसीके प्रति शिकायत है, उसने कहा, "अच्छा बापूजी, वैसा ही होगा।"

आशु बाबूने हँसकर कहा, "होना क्या आसान है बेटी? कारण, मेरे

मनपर भी इसकी कुछ स्पष्ट धारणा नहीं रही है, कि उसके साथ क्या व्यवहार होना उचित है। सिर्फ यही खयाल आ रहा है कि शिवनाथको अब हमारे घर और कष्ट न मिले।"

मनोरमा कुछ कहना ही चाहती थी कि अचानक चौंककर बोली, "हाँ, लो, ये आ ही तो गये।"

आशु बाबू व्यस्त-से होकर बाहर आ गये, बोले, "खूब शिवनाथ बाबू,—भीगकर तो बिल्कुल—"

शिवनाथने कहा, "हाँ, अचानक पानी जोरका पड़ने लगा,—सो मुझसे भी बहुत ज्यादा ये भीगी हैं।" कहते हुए साथकी स्त्रीको दिखा दिया। मगर वह कौन है, यह परिचय न तो उन्होंने ही साफ दिया और न इन्हीं लोगोंने साफ पूछा।

वस्तुत उस स्त्रीका देहपर सूखा कहने लायक कहीं भी कुछ नहीं बचा था। सबके सब कपड़े भीगकर भारी हो गये हैं, माथेके घने काले बालोंसे पानीकी धारा गालपरसे बह रही है,—पिता और पुत्री इस नवागता रमणीके चेहरेकी तरफ देखकर असीम विस्मयसे निर्वाक् हो रहे। आशु बाबू खुद कवि नहीं हैं, किन्तु उन्हें देखते ही लगा कि ऐसे ही नारी रूपकी शायद प्राचीन कालके कवि "शिशिर धौत पद्म"के साथ तुलना कर गये हैं, और जगत्में इतनी अधिक सच्ची तुलना भी शायद और नहीं है। उस दिन जब अक्षयके नाना तरहके प्रश्नोंके उत्तरमें शिवनाथने अस्थिर होकर यह जवाब दिया था कि उन्होंने शिक्षिता होनेकी वजहसे नहीं, रूपके लिए ब्याह किया है, तब किसीने नहीं सोचा था कि यह बात कितनी ज्यादा सच है। पर अब स्तब्ध होकर आशु बाबू शिवनाथ की उस बातको बार-बार याद करने लगे। उन्हें सचमुच ही ऐसा जान पड़ा कि इनकी जीवन यात्राकी प्रणाली शिष्ट और नीति-सम्मत भले ही न हो, पति पत्नी सम्बन्धकी पवित्रता भी इनके बीच भले ही न हो, मगर इस नश्वर जगत्में नर नारीके नश्वर शरीरोंका ही आश्रय लेकर सृष्टिका यह कैसा अविनश्वर सत्य प्रस्फुटित हुआ है! और परम आश्चर्यकी बात है कि जिस देशमें चुन चुन लेनेका कोई निर्दिष्ट मार्ग नहीं, जिस देशमें अपनी आँखोंको बन्द करके औरोंकी आँखों पर ही निर्भर रहना पड़ता है, ऐसे अन्धकारमें इन दोनोंको परस्पर एक-दूसरेकी खबर लग कैसे गई! परन्तु इस मोहाच्छन्न भावको काट फेंकनेमें उन्हें एक क्षणसे

ज्यादा समय नहीं लगा। व्यस्त होकर बोले, "शिवनाथ बाबू, भीगे कपड़े तो बदल लीजिए। जदू, बाबूको हमारे साथ कमरेमें ले जा।"

बेहराके साथ शिवनाथ चला गया। मुश्किल आई अब मनोरमाकी। युवतीकी उमर लगभग मनोरमाके बराबर होगी, और भीगे कपड़े बदल डालनेकी उसे भी सख्त जरूरत थी। परन्तु उसके नाम और जातका जो परिचय उस दिन शिवनाथके मुँहसे सुना है, उससे मनोरमाकी कुछ समझमें न आया कि वह क्या कहकर इसको सम्बोधन करे। रूप इसमें चाहे कितना ही क्यों न हो, शिक्षा संस्कारहीन नीच जातीय इस दासी-कन्याको 'आओ' कहकर बुलानेमें भी पिताके सामने उसे संकोच मालूम हुआ, और 'आइए' कहकर सम्मानके साथ अपने कमरेमें ले जानेमें तो उसे और भी घृणा मालूम होने लगी। किन्तु सहसा इस समस्याकी मीमांसा कर दी स्वयं उस युवतीने। मनोरमाकी तरफ देखकर उसने कहा, "मेरा भी सब कुछ भीग गया है, मेरे लिए भी एक धोती मँगा देनी पड़ेगी।"

"देती हूँ।" कहकर मनोरमा उसे भीतर ले गई, और महरीको बुलाकर बोली कि इन्हें नहानघरमें ले जाकर जो कुछ चाहिए सो सब दे दे।"

उस स्त्रीने मनोरमाको ऊपरसे नीचेतक बार-बार देखकर कहा, "मुझे एक साफ धोबीकी धुली धोती देनेके लिए कह दीजिए।"

मनोरमाने कहा, "सो ही देगी।"

स्त्रीने महरीसे पूछा, "उस घरमें साबुन है न?"

महरीने कहा, "है।"

"लेकिन मैं किसीका लगाया हुआ साबुन नहीं लगाती।"

इस अपरिचित स्त्रीका मन्तव्य सुनकर पहले तो महरीको आश्चर्य हुआ, फिर वह बोली, "वहाँ नये साबुनोंका बॉक्स पड़ा हुआ है। लेकिन, यह जीजीबाईका अपना नहानघर है। उनका साबुन लगानेमें क्या बुराई है?"

स्त्रीने ओठ सिकोड़कर कहा, "नहीं, यह मुझसे नहीं होता, मुझे बड़ी नफरत मालूम होती है। इसके सिवा हर एकका साबुन लगानेसे बीमारी हो जाती है।"

मनोरमाका चेहरा क्रोधसे सुर्ख हो उठा, पर एक क्षणके लिए ही। दूसरे ही क्षण निगूढ़ हँसीकी छटासे उसकी दोनों आँखें चमकने लगीं। उसके मनपरसे मानो एक मेघ दूर हो गया। हँसकर पूछा, "यह बात तुमने सीखी किससे?"

उन्होंने कहा, "सीखूँगी किससे? मैं खुद ही सब जानता हूँ।"

मनोरमाने कहा, "सच? तो जरा हमारी इस महरीको भी कुछ अच्छी बात सिखा देना। यह बिल्कुल ही मूरख है।" कहते-कहते उसे फिर हँसी आ गई।

महरी भी हँस दी, बोली, "चलो पण्डितानीजी, साबुन आबुन लगाकर पहले तैयार हो लो, फिर तुम्हारे पास बैठकर बहुत-सी अच्छी अच्छी बातें सीख लूँगी।—जीजीबाई, कौन हैं ये?"

मनोरमा हँसी दबानेके लिए अगर दूसरी तरफ मुँह न फेर लेती तो सम्भव है कि वह इस अपरिचिता अशिक्षिता स्त्रीके मुँहपर कौतुक और प्रच्छन्न उपहासका भाव ताड़ जाती।

४

मनोरमा आशु बाबूकी सिर्फ लड़की ही हो, सो बात नहीं, वह उनकी सखा, सगा, मंत्री, मित्र, एक साथ सब कुछ थी। इसीसे, पिताके सम्मानरक्षार्थ, भारतीय समाजमें जो सकोचमर्यादित दूरत्व सन्तानके लिए अवश्य पालनीय माना जाता है, अधिकांश मौकोंपर उसकी रक्षा न हो पाती थी। बीच-बीचमें ऐसी आलोचनाएँ बदनाम होने लगती थीं जो बहुत-से पिताओंको खटकतीं, पर इनके कानोंमें नहीं खटकती थीं। लड़कीको आशु बाबू इतना प्यार करते हैं कि उसकी सीमा नहीं। वे स्त्री वियोगके बाद फिरसे ब्याह करनेकी बातमें कल्पना भी नहीं कर सके, इसका भी एकमात्र कारण यह लड़की ही है। मगर मित्र मण्डलीमें बात छिड़नेपर खेदके साथ वे कहते हैं कि, "एक तो साढ़े तीन मनका यह भारी शरीर और सो भी वात-रोगके कारण पंगु। अब और क्या इसके लिए एक लड़कीका सर्वनाश किया जाय भाई! जो दुःख सरपर लेकर मणिकी माँ स्वर्ग सिधार गई है, सो मुझे मालूम है। इस आशुके लिए वही काफी है।"

मनोरमा यह बात सुनती तो घोर आपत्ति करती, कहती, "बापूजी, तुम्हारी यह बात मुझे नहीं सुहाती। यहाँ ताजमहल देखकर कितने आदमियोंको न जाने क्या क्या याद आता है, पर मुझे याद आती है तुम्हारी और माँकी। मेरी माँ स्वर्गमें क्या दुःख सहकर गई है?"

आशु बाबू कहते, "तू तो तब कुल दस-बारह सालकी बच्ची थी, तू तो सब

जानती है। एकके गलेमें दूसरेकी माला गिरनेका जो किस्सा है सो सिर्फ मैं ही जानता हूँ बिटिया।" कहते-कहते उनकी आँखें डबडबा आतीं।

आगरेमें आकर वे बिना किसी संकोचके सबके साथ हिल मिल गये हैं, पर सबसे बढ़कर उनकी हार्दिक मैत्री हुई है अविनाश बाबूके साथ। अविनाश सहिष्णु और संयत प्रकृतिका आदमी है। उसके चित्तमें ऐसी एक स्वाभाविक शान्ति और प्रसन्नता थी कि वह सहज ही सबकी श्रद्धा आकर्षित कर लेता। मगर आशु बाबू मुग्ध हुए थे कुछ और ही कारणसे। उनकी तरह उसने भी दूसरी बार ब्याह नहीं किया था और पत्नी-प्रेमके निदर्शनके लिए घरमें सबत्र अपनी स्त्रीके चित्र लगा रखे थे। आशु बाबू उससे कहते, "अविनाश बाबू, लोग हमारी प्रशंसा करते हैं। सोचते हैं हम लोगोंका कैसा आत्म संयम है, मानो हम लोगोंने कोई बहुत बड़ा कठिन काम कर डाला हो! पर, मैं सोचता हूँ कि यह प्रश्न उठता ही कैसे है? जो लोग दूसरी बार ब्याह करते हैं, वे कर सकते हैं इसीलिए करते हैं। उन्हें मैं दोष भी नहीं देता और न छोटा ही समझता हूँ। मैं सोचता हूँ कि मैं कर नहीं सकता। सिर्फ इतना ही जानता हूँ कि मणिकी माँकी जगह और किसीको स्त्री रूपमें ग्रहण करना मेरे लिए सिर्फ कठिन ही नहीं, असम्भव भी है। पर इसकी वजह क्या खबर? बात ऐसी ही है न अविनाश बाबू? अपने मनसे पूछ देखिए जरा, ठीक बात कहता हूँ या नहीं।"

अविनाश हँस देता, कहता, "लेकिन मैं तो बुरा नहीं रहा हूँ आशु बाबू। मास्टरी करके गुजर करता हूँ, वक्त भी नहीं मिलता और उमर भी हो चुकी है,—लड़की देगा कौन?"

आशु बाबू खुश होकर कहते, "ठीक यही बात है अविनाश बाबू, यही बात है। मैं भी सबसे कहता फिरा हूँ कि देहका वजन साढ़े तीन मन है, बात का पशु हूँ, कब कहाँ चलते फिरते हार्ट फेल हो जाय कोई ठिकाना नहीं, लड़की देगा कौन? लेकिन जानता हूँ कि लड़की देनेवालोंकी कमी नहीं है, सिर्फ लेनेवाला मनुष्य ही मर गया है! हः हः हः हः,—अविनाश भी मर चुका और आशु भी,—हः हः हः हः!—" कहकर ठहाका मारकर ऐसे जोरसे हँसते कि घरकी खिड़कियाँ और उनके शीशेतक काँप उठते।

रोज शामको आशु बाबू अपनी कन्याके साथ घूमने निकलते, पर अविनाश

के मकानके सामने आकर उतर पड़ते, कहते, "अब शामके वक्त ठंडी हवा लगना मेरे लिए ठीक नहीं बेटी, बल्कि तुम लौटते वक्त मुझे अपने साथ ले जाना।"

मनोरमा हँसकर कहती, "ठंडी कहाँ है बापूजी, आज तो काफी गरमी है।"

बापूजी कहते, "सो भी तो अच्छा नहीं बेटी, बूढ़ोंके स्वास्थ्यके लिए गरम हवा भी तो हानिकारक है। तुम जरा घूम फिर आओ, हम दोनों बूढ़े मिलकर तबतक दो चार बात ही करें।"

मनोरमा हँसकर कहती, "बातें तुम लोग दो चार छोड़ दो चार सौ करते रहो, मुझे उसमें कोई एतराज नहीं, लेकिन तुम दोनोंमेंसे कोई अभी बूढ़ा नहीं हुआ, सो मैं याद दिलाये जाती हूँ।" इतना कहकर वह चली जाती।

बातकी वजहसे जिस दिन आशु बाबूसे किसी भी तरह आया नहीं जाता, उस दिन अविनाशको जाना पड़ता। गाड़ी भेजकर, आदमी भेजकर, चायका निमन्त्रण देकर,—कैसे भी बनता आशु बाबूका अनिवार्य अनुरोध उनके पास पहुँचता और उसे वे किसी भी तरह टाल नहीं सकते। दोनोंके इकट्ठे होनेपर और और बातोंके साथ शिवनाथका भी अक्सर जिक्र छिड़ जाता। इसकी वेदना आशु बाबूके मनसे दूर नहीं होती थी कि उस दिन उसे निमन्त्रण देकर घर बुलाया और सबने मिलकर अपमानित करके उसे विदा कर दिया। शिवनाथ विद्वान् आदमी है, गुणी है, उसका सारा शरीर यौवन, स्वास्थ्य और सौ दर्यसे भरा हुआ है,—यह सब क्या कुछ भी नहीं? तो फिर किस वास्ते इतनी सम्पदा भगवान्ने उसे दोनों हाथोंसे उठाकर दे दी है? क्या इसीलिए कि मनुष्य समाजसे उसे उठाकर दूर फेंक दिया जाय? शराबी हो गया है, तो इससे क्या? शराब पीकर मतवाले तो बहुतेरे हो जाया करते हैं। यौवनमें यह कसूर तो उनसे भी बन पड़ा है, इसके लिए किसने उन्हें त्याग दिया है?

आदमीकी त्रुटियों, आदमीके अपराधोंपर गौर करनेकी अपेक्षा उसे क्षमा करनेकी तरफ उनके हृदयका झुकाव बहुत ज्यादा होता जाता था, और इसीलिए वे अविनाशके साथ अक्सर इस विषयकी बहस किया करते थे। प्रकट रूपसे शिवनाथको निमन्त्रण देनेका अब उन्हें साहस नहीं होता, किन्तु मन उनका हमेशा उसकी संगतके लिए तड़पा करता। अविनाशकी सिर्फ एक बात का उससे कोई जवाब देते नहीं बनता, कि 'वह जो एक बीमार स्त्रीको छोड़कर

दूसरी स्त्री घरमें ले आया है, सो यह क्या है?"

आशु बाबू लज्जित होकर कहते, "यही तो सोचता हूँ कि शिवनाथ जैसा आदमी यह काम कर कैसे सका? लेकिन क्या जानें अविनाश बाबू, शायद, भीतर कोई रहस्य हो,—हो सकता है,—और—सभी बातें क्या सबके आगे कही जा सकती हैं, या कहना उचित है?"

अविनाश कहता, "मगर उसकी स्त्री निर्दोष थी, यह तो उसने अपनी ही जबानसे कबूल किया था?"

आशु बाबू परास्त होकर गरदन हिलाते कहते, "सो तो किया ही था।"

अविनाशने कहा, "और यह जो मरे हुए मित्रकी विधवाको धोखा देना, सारे रोजगारको अपना बताकर उसपर दखल कर लेना,—यह क्या था?"

आशु बाबू मारे शरमके जमीनमें गड़ जाते, जैसे खुद उन्होंने यह दुष्कार्य कर डाला हो। फिर अपराधीकी तरह धीरेसे कहते, "लेकिन बात यह है न अविनाश बाबू, शायद भीतर कोई रहस्य हो,—अच्छा फिर अदालतने क्या समझकर उन्हें डिग्री दे दी? उसने क्या कुछ भी विचार नहीं किया होगा?"

अविनाश कहता, "अंग्रेजी अदालतकी बात छोड़ दीजिए आशु बाबू। आप खुद भी जमादार हैं, वहाँ रुपयेके आगे दुर्बल कब विजयी हो सका है, बता सकते हैं मुझे?"

आशु बाबू कहते, "नहीं नहीं, यह ठीक बात नहीं। यह बात ठीक नहीं। मगर हाँ, यह भी नहीं कह सकता कि आपकी बात झूठ है। लेकिन बात यह है न—"

अचानक मनोरमा आ जाती तो हँसकर कहती, "बात जो है सो सभी जानते हैं। बापूजी, तुम खुद भी मन ही मन जानते हो कि अविनाश बाबू मिथ्या तर्क नहीं करते।"

इसके बाद, आशु बाबूके मुँहसे फिर कोई बात नहीं निकलती।

शिवनाथके विषयमें मनोरमाकी ही विमुखता मानो सबसे ज्यादा थी। मुँहसे वह ज्यादा कुछ नहीं कहती थी, पर पिता सबसे ज्यादा डरते थे उसीसे।

जिस दिन शामको शिवनाथ और उसकी स्त्री पानीमें भीगकर इस घरमें आश्रय लेनेको बाध्य हुए थे उसके बाद दो दिनतक आशु बाबू वातके प्रकोपसे एकदम खाटपर पड़े रहे। न तो वे खुद ही कहीं जा सके और न अविनाश ही

कामकी झंझटकी वजहसे उनके पास आ सके। परन्तु उनके आते ही आशु बाबू यातना असह्य दर्दको भूलकर आरामकुरसीपर सीधे होकर बैठ गये और बोले, "अजी अविनाश बाबू, शिवनाथकी स्त्रीके साथ तो हम लोगोंका परिचय हो गया। सुन्दरी है बिल्कुल लक्ष्मीकी मूर्ति। ऐसा रूप कभी नहीं देखा भाई! मालूम हुआ, जैसे उन दोनोंको भगवान्‌ने किसी उद्देश्यसे ही मिलाया है।"

"कहते क्या हैं!"

"हाँ, हाँ। दोनोंको अगल-बगल खड़ा कर दो, तो देखते ही रह जाना पड़ता है! आप आँखें हटा ही नहीं सकते, इतना मैं कहे देता हूँ अविनाश बाबू।"

अविनाशने हँसते हुए कहा, "हो सकता है। लेकिन आप प्रशंसा करने लगते हैं तो उसकी सीमा नहीं रखते।"

आशु बाबू क्षण भर उनके मुँहकी ओर देखते रहे, फिर बोले, "यह दोष मुझमें है। सीमासे बाहर जा सकता होता तो इस मामलेमें भी जरूर जाता, मगर शक्ति नहीं है। इन दोनोंके बारेमें कितना ही क्यों न कहा जाय, सब सीमाकी बाईं तरफ ही रहेगा, दाहिनी तरफ नहीं पहुँचनेका।"

अविनाशने इसपर पूरा विश्वास कर लिया हो सो बात नहीं, परन्तु पहलेका परिहासका ढंग भी अब न रहा। बोले, "तो फिर उस दिन शिवनाथने अकारण दम्भ नहीं किया, क्यों? मगर परिचय हुआ किस तरह?"

आशु बाबूने कहा, बिल्कुल दैवी घटना हुई। शिवनाथको काम था मुझसे। स्त्री साथ थी, पर मकानके अन्दर लानेकी हिम्मत नहीं हुई, बाहर ही एक पेड़के नीचे उसे खड़ा कर आया। लेकिन दैव टेढ़ा हो तो आदमीकी चतुराई काम नहीं देती, असम्भव बात भी सम्भव हो जाती है। हुआ वही।" यह कहकर उन्होंने उस दिनकी आँधी मेहकी सारीकी सारी घटना विस्तारके साथ कह सुनाई, फिर कहा, "हमारी मणि लेकिन खुश नहीं हो सकी। उसकी कम उम्र ही थी, शायद कुछ बड़ी भी हो—मगर मणिका कहना है कि उस दिन शिवनाथ बाबूने सच्ची बात ही कही थी,—लड़की वास्तवमें अशिक्षित, किसी दासीकी लड़की है। कमसे कम हमारे शिष्ट समाजकी तो नहीं है, इसमें कोई सन्देह नहीं।"

अविनाशको हुआ, "सो कैसे जाना?"

आशु बाबूने कहा, 'उसने शायद भीगी धोतीके बदले साफ धुली धोती माँगी थी, और कहा था कि मैं किसीका इस्तेमाल किया हुआ साबुन नहीं लगा सकती,—मुझे नफरत मालूम होती है।"

अविनाश समझ नहीं सके कि इसमें शिष्ट-समाजके नियमोंके बाहरकी कौन सी बात है।

आशु बाबूने भी ठीक यही बात कही, "इसमें अशुभ कौन-सी बात हुई, मैं अबतक नहीं समझ सका। मगर मणि कहती है, बातमें नहीं बापूजी, कहनेके ढंगमें एक ऐसी बात थी जो बिना सुने नहीं जानी जा सकती। इसके सिवा, स्त्रियोंकी आँखों और कानोंको धोखा नहीं दिया जा सकता। हमारे यहाँकी नौकरानीतक भी समझ गई कि यह उसीकी जातकी है, उसके मालिकोंकी कोई नहीं। बिल्कुल नीचेसे अचानक एकदम ऊपर चढ़ा देनेसे जैसा होता है, इसके भी ठीक वैसा हुआ है।"

अविनाशने कुछ देर चुप रहकर कहा, 'दुःखकी बात है। मगर आपके साथ परिचय हुआ किस तरह? आपसे बोली थी क्या?"

आशु बाबूने कहा, "जरूर। भीगी धोती बदलकर सीधी मेरे कमरेमें आकर बैठ गई। झिझककी बला थी ही नहीं,—मेरी तबीयत कैसी है, क्या खाता हूँ, क्या इलाज चल रहा है, जगह यह अच्छी लग रही है या नहीं,—पूछनेका क्या ही सहज स्वच्छन्द भाव था! बल्कि शिवनाथ तो कुछ संकुचित भी हो रहे, मगर उसमें जड़ताका चिह्नतक देखनेमें नहीं आया। न बातचीतमें, न आचरणमें।"

अविनाशने पूछा, "मालूम होता है, मनोरमा तब न होगी?"

"नहीं। उसे न जाने कैसी अश्रद्धा-सी हो गई है, रहा नहीं जाता। उन लोगोंके चले जानेपर मैंने कहा, 'मणि, उन्हें विदा करने भी एक बार बाहर नहीं आई?' मणिने कहा, 'और जो कुछ कहो कर सकती हूँ बापूजी, लेकिन घरके नौकर-चाकर या दास-दासियोंको 'बैठिए' कहकर अभ्यर्थना नहीं कर सकती और फिर 'आइएगा' कहकर विदा भी नहीं दे सकती। अपने घर जानेपर भी नहीं।' इसके बाद कहनेको और क्या रह जाता है?"

कहनेको और क्या रह जाता है, सो अविनाशको खुद भी ढूँढे न मिला, फिर मृदु-कंठसे इतना कहा, "बताना मुश्किल है आशु बाबू। पर मालूम

होता है कि मनोरमाने ठीक ही कहा था। इस तरहकी आरतोंसे हम जैसा घरकी स्त्रियोंकी जान-पहचान न होना ही अच्छा है।"

आशु बाबू चुप रहे।

अविनाश कहने लगे, "शिवनाथके समाजका कारण भी शायद यही है उसे तो सभी बात मालूम है,—उसे डर था कि कहीं कोई भद्दी, न निकाल लायक बात उसकी स्त्रीके मुँहसे न निकल जाय।"

आशु बाबू हँस दिये, बोले, "हाँ, हो भी सकता है।"

अविनाशने कहा, "जरूर यही बात है।"

आशु बाबूने प्रतिवाद नहीं किया, फिर कहा, "लड़की लेकिन लक्ष्मीकी सी प्रतिमा थी।" कहकर उन्होंने एक लम्बी-सी साँस छोड़ी और वे आराम कुरसीमें पीठ लगाकर लेट रहे।

कुछ देर चुप रहकर अविनाशने कहा, "मेरी बातसे क्या आपको क्षोभ हुआ?"

आशु बाबू उठके बैठे नहीं, उसी तरह अधलेटी हालतमें पड़े हुए धीरे धीरे बोले, "क्षोभ नहीं अविनाश बाबू, पर न जाने कैसी एक व्यथा सी मालूम हुई इसीसे तो आपसे मिलनेके लिए इस तरह छटपटा रहा था। बात भी कैसी मीठी थी उसकी,—सिर्फ रूप ही नहीं।"

अविनाशने हँसते हुए उत्तर दिया, "मगर मैंने तो उसका रूप भी नहीं देखा और बातें भी नहीं सुनीं, आशु बाबू।"

आशु बाबूने कहा, "पर वैसा मौका अगर कभी हाथ आयगा तो आप समझ जायँगे कि उन्हें त्याग देनेमें कितना अन्याय हुआ है। और कोई भले ही न समझे, पर मैं निश्चित जानता हूँ कि आप जरूर समझेंगे। जाते वक्त उस लड़कीने मुझसे कहा, "जब आप मेरे पतिका गाना सुनना पसन्द करते हैं, तब क्यों उन्हें कभी-कभी बुलवा नहीं लेते? इस बातका ख्याल ही आप न करें कि मैं कौन हूँ, मैं तो आप लोगोंके बीच आनेका दावा करती नहीं।"

अविनाशको कुछ आश्चर्य हुआ, बोले, "यह तो बिल्कुल अशिक्षिता जैसी बात नहीं आशु बाबू। सुननेसे मालूम होता है, इसके निजके सम्बन्धमें हम चाहे कैसी भी व्यवस्था क्यों न करें पर पतिको वह शिक्षित-समाजमें चलता देखना चाहती है।"

आशु बाबूने कहा, "वास्तवमें उसकी बात सुनकर मालूम हुआ कि उस

सब मालूम है। हम लोगोंने जो उस दिन उनके पतिको अपमानित करके विदा किया था, इस बातको शिवनाथने उससे छिपाया नहीं है। शिवनाथ ज्यादा छिपा छिपाकर चलनेवाला शख्स भी नहीं है।"

अविनाशने मंजूर करते हुए कहा, "स्वभावसे वह ऐसा ही है। लेकिन एक चीज उसने जरूर छिपाई है। यह लड़की चाहे जो हो, इससे उसने वास्तव में ब्याह नहीं किया है।"

आशु बाबूने कहा, "शिवनाथने तो कहा है वह उसकी स्त्री है, और उसने भी ऐसा ही परिचय दिया कि वह उसका पति है।'

अविनाशने कहा, "परिचय दिया करे। मगर वह सच नहीं है। इसके अन्दर जो गम्भीर रहस्य है, अक्षय बाबू उसका भेद किसी न किसी दिन खोले बिना न रहेंगे।"

आशु बाबूने कहा, "इसमें तो मुझे भी शक नहीं। कारण, अक्षय बाबू शक्तिशाली पुरुष हैं। मगर इनका परसनली स्कैण्डलोंमें सत्य नहीं, सत्य केवल छिपे हुए रहस्यको दुनियाके सामने उघाड़ देनेमें ही है? अविनाश बाबू, आप तो अक्षय नहीं हैं। आपसे तो मैं ऐसी प्रत्याशा नहीं करता।"

अविनाश लज्जित होकर बोले, "मगर समाज भी तो है। उसकी भलाईके लिए भी तो—"

परन्तु वक्तव्य उनका खतम नहीं हो पाया था कि पासके दरवाजेको खोलकर मनोरमाने प्रवेश किया। अविनाशको नमस्कार करके उसने कहा, "बाबूजी, मैं घूमने जा रही हूँ, तुम शायद आज बाहर निकल नहीं सकोगे?"

"नहीं बिटिया, तुम जाओ।"

अविनाश उठकर खड़े हुए, बोले, "मुझे भी आज काम है। बाजारके पास जरा नहीं उतार दे सकती मनोरमा?"

"जरूर,—चलिए।"

जाते समय अविनाश कह गये कि बहुत ही जरूरी काममें उन्हें कल ही दिल्ली जाना पड़ेगा और शायद एक सप्ताहके पहले वहाँसे लौटना नहीं होगा।

५

दसेक दिन बाद अविनाश दिल्लीसे लौट आये। उनके नौ-दस सालके पुत्र

जगतने आकर हाथमें एक छोटी-सी चिट्ठी दी। उसमें सिर्फ एक वाक्य लिखा था—"शामको ज़रूर आइएगा।—आशु।"

जगतकी विधवा मौसीने दरवाजेके परदेको हटाकर खिले हुए गुलाब जैसा मुँह निकालकर कहा, "आशु बाबूके घरके क्या आँखें बिछाये ही बैठे थे जो घरमें आते-न-आते तलब कर लिये गये।—अभी ही जाना होगा?"

अविनाशने कहा, "शायद कोई खास काम है।"

"काम खाक है! वे लोग तो जैसे मुखर्जी साहबको निगल ही जाना चाहते हैं।"

अविनाश अपनी छोटी सालीको लाडसे कभी 'छोटी बहू' कहते हैं और कभी उसका नाम 'नीलिमा' लेकर पुकारते हैं। हँसकर बोले, "छोटी बहू, अमृत फल अनादरके साथ पेड़ तले पड़ा हुआ हो तो उसे देखकर बाहरके लोगोंको लोभ जरा हो ही जाता है!"

नीलिमा हँस दी, बोली, "तब तो यह बात उन लोगोंको बता देना जरूरी हो जाती है कि वह इन्द्रायण फल है, अमृत फल नहीं।"

अविनाशने कहा, "अच्छा, बता देना। पर वे विश्वास नहीं करेंगे, लोभ और भी बढ़ जायगा, हाथ बढ़ानेमें भी कसर न रक्खेंगे।"

नीलिमाने कहा, "उससे लाभ न होगा मुखर्जी महाशय, सब लोगोंकी पहुँचके बाहर अबकी बार मजबूत सा बाड़ा बनवा रक्खूँगी।" इतना कहकर वह हँसी दबाकर परदेकी ओटमें चली गई।

अविनाश जब आशु बाबूके घर जाकर पहुँचे, तब थोड़ा-सा दिन बाकी था। गृहस्वामीने अत्यन्त आदरके साथ उनका स्वागत किया और कृत्रिम क्रोधके साथ कहा, "आप धार्मिक हैं। परदेशमें मित्रको अकेला छोड़कर कल दिनभर गैरहाजिर रहे, इस बीचमें तो इस अनुचरकी दस दशाएँ उपस्थित हो गईं।"

अविनाश चौंककर बोले, "एक साथ दस दस दशाएँ! पहले पहली तो बताइए!"

"बताता हूँ। पहली दशा तो यह हुई कि दोनों टाँगें सिर्फ ताना ही नहीं हुईं बल्कि उन्होंने अत्यन्त तेज चालसे ऊपरसे नीचे और नीचेसे ऊपर आना जाना शुरू कर दिया।"

"बेहद भयकी बात है। दूसरीका बखान कीजिए।"

"दूसरी यह कि आज किसी पर्वके उपलक्षमें हिन्दुस्तानी नारी कुल यमुनाके कूलपर इकट्ठा हुआ है और हरेंद्र, अक्षय आदि पण्डित-समाजने निर्लिप्त निर्विकार चित्तसे वहाँ अभी अभी अभियान किया है।"

"अच्छा, ठीक है। तीसरी दशाका हाल सुनाइए।"

"दर्शनेच्छु आशुतोष अत्यन्त उत्कण्ठित हृदयसे अविनाशकी प्रतीक्षा कर रहा है, प्रार्थना है कि वे अस्वीकार न करें।"

अविनाशने हँसते हुए कहा, "उन्होंने प्रार्थना मंजूर कर ली। अब चौथी दशाका वर्णन कीजिए।"

आशु बाबूने कहा, "यह जरा कुछ भारी है। चिरंजीव महोदयने विलायतसे भारतमें पदार्पण किया है और वे काशी होते हुए परसों इसी आगरा नगरमें पधारे हैं। सम्प्रति मोटरकी मशीन बिगड़ गई है और चिरंजीव स्वयं मरम्मतके काममें लगे हुए हैं। मरम्मत समाप्तप्राय है और वे अब आते ही होंगे। अभिलाषा है, पहली चाँदनी रातमें सब एक साथ आज ताजमहलका निरीक्षण करें।"

अविनाशका हँसता हुआ चेहरा गम्भीर हो उठा, पूछा, "ये चिरंजीवी साहब कौन हैं आशु बाबू? क्या इन्हींकी बात उस रोज कहते-कहते अचानक रुक गये थे?"

आशु बाबूने कहा, "हाँ। मगर आज कहनेमें, कमसे कम आपसे कहनेमें कोई रुकावट नहीं। अजितकुमार मेरे भावी जमाई हैं, इन दोनोंका प्रेम संसार-की एक अपूर्व वस्तु है। लड़का क्या है रत्न है।"

अविनाश स्थिर होकर सुनने लगे और आशु बाबू कहने लगे, "हम ब्रह्म समाजी नहीं हैं। सब क्रिया-कर्म सनातनी मतानुसार करते हैं। यथासमय अर्थात् चार साल पहले ही इन दोनोंके ब्याह हो जानेकी बात थी। होता भी यही, मगर नहीं हुआ। जिस तरह इन दोनोंका परिचय हुआ वह भी एक विचित्र घटना है,—विधि लिपि कहा जाय तो अत्युक्ति नहीं होगी। पर उस बातको अभी जाने दीजिए।"

अविनाश धुववत् स्तब्ध बैठे रहे। आशु बाबू बोले, "मणिकी तेल-हल्दी हो गई थी कि इतनेमें रातकी गाड़ीसे काशीसे छोटे काका आ पहुँचे। पिताकी मृत्युके बाद वे ही घरके बड़े थे, बाल-बच्चा कोई था नहीं, काशीको लेकर बहुत दिनोंसे काशीवास कर रहे थे। ज्योतिषपर उनका अखण्ड विश्वास

जगतने आकर हाथमें एक छोटी-सी चिट्ठी दी। उसमें सिर्फ एक वाक्य लिखा था—"शामको जरूर आइएगा।—आशु।"

जगतकी विधवा मौसीने दरवाजेके परदेको हटाकर खिले हुए गुलाब जैसा मुँह निकालकर कहा, "आशु बाबूके घरके क्या आँख बिछाये ही बैठे थे जो घरमें आते न आते तलब कर लिये गये।—अभी ही जाना होगा?"

अविनाशने कहा, "शायद कोई खास काम है।"

"काम खाक है! वे लोग तो जैसे मुखर्जी साहबको निगल ही जाना चाहते हैं।"

अविनाश अपनी छोटी सालीको लाडसे कभी 'छोटी बहू' कहते हैं और कभी उसका नाम 'नीलिमा' लेकर पुकारते हैं। हँसकर बोले, "छोटी बहू, अमृत फल अनादरके साथ पेड तले पड़ा हुआ हो तो उसे देखकर बाहरके लोगोंको लोभ जरा हो ही जाता है!"

नीलिमा हँस दी, बोली, "तब तो यह बात उन लोगोंको जता देना जरूरी हो जाती है कि यह इन्द्रायण फल है, अमृत फल नहीं।"

अविनाशने कहा, "अच्छा, जता देना। पर वे विश्वास नहीं करेंगे, लोभ और भी बढ़ जायगा, हाथ बढ़ानेमें भी कसर न रक्खेंगे।"

नीलिमाने कहा, "उससे लाभ न होगा मुखर्जी महाशय, सब लोगोंकी पहुँचके बाहर उसकी बाग मजबूत सा बड़ा बना रखूँगी।" इतना कहकर वह हँसी दबाके परदेकी ओटमें चली गई।

अविनाश जब आशु बाबूके घर जाकर पहुँचे, तब थोडा-सा दिन बाकी था। गृहस्वामीने अत्यन्त आदरके साथ उनका स्वागत किया और कृत्रिम क्रोधके साथ कहा, "आप धार्मिक हैं। परदेशमें मित्रको अकेला छोडकर दस दिनसे गैरहाजिर रहे, इस बीचमें तो दस अनुचरकी दस दशाएँ उपस्थित हो गई।"

अविनाश चौंककर बोले, "एक साथ दस दस दशाएँ! पहले पहली तो बताइए।"

"बताता हूँ। पहली दशा तो यह हुई कि दोनों टाँग सिर्फ ताजा ही नहीं हुई बल्कि उन्होंने अत्यन्त तेज चालसे ऊपरसे नीचे और नीचेसे ऊपर आना जाना शुरू कर दिया।"

"बेहद भयकी बात है। दूसरीका वर्णन कीजिए।"

"दूसरी यह कि आज किसी पर्वके उपलक्ष्यमें हिन्दुस्तानी नारी कुल यमुनाके कूलपर इकट्ठा हुआ है और हरेन्द्र, अक्षय आदि पण्डित-समाजने निर्लिप्त निर्विकार चित्तसे वहाँ अभी अभी अभियान किया है।"

"अच्छा, ठीक है। तीसरी दशाका हाल सुनाइए।"

"दर्शनेच्छु आशुतोष अत्यन्त उत्कण्ठित हृदयसे अविनाशकी प्रतीक्षा कर रहा है, प्रार्थना है कि वे अस्वीकार न करें।"

अविनाशने हँसते हुए कहा, "उन्होंने प्रार्थना मंजूर कर ली। अब चौथी दशाका वर्णन कीजिए।"

आशु बाबूने कहा, "यह जरा कुछ भारी है। चिरंजीव महोदयने विलायतसे भारतमें पदार्पण किया है और वे काशी होते हुए परसों इसी आगरा नगरमें पधारे हैं। सम्प्रति मोटरकी मशीन बिगड़ गई है और चिरंजीव स्वयं मरम्मतके काममें लगे हुए हैं। मरम्मत समाप्तप्राय है और वे अब आते ही होंगे। अभिप्राय है, पहली चाँदनी रातमें सब एक साथ आज ताजमहलका निरीक्षण करें।"

अविनाशका हँसता हुआ चेहरा गम्भीर हो उठा, पूछा, "ये चिरंजीवी साहब कौन हैं आशु बाबू? क्या इन्हींकी बात उस रोज कहते-कहते अचानक रुक गये थे?"

आशु बाबूने कहा, "हाँ। मगर आज कहनेमें, कमसे कम आपसे कहनेमें कोई रुकावट नहीं। अजितकुमार मेरे भावी जमाई हैं, इन दोनोंका प्रेम संसार की एक अपूर्व वस्तु है। लड़का क्या है रत्न है।"

अविनाश स्थिर होकर सुनने लगे और आशु बाबू कहने लगे, "हम ब्रह्म समाजी नहीं हैं। सब क्रिया-कर्म सनातनी मतानुसार करते हैं। यथासमय अर्थात् चार साल पहले ही इन दोनोंके ब्याह हो जानेकी बात थी। होता भी यही, मगर नहीं हुआ। जिस तरह इन दोनोंका परिचय हुआ यह भी एक विचित्र घटना है,—विधि लिपि कहा जाय तो अत्युक्ति नहीं होगी। पर उस बातको अभी जाने दीजिए।"

अविनाश चुपचाप सुनते बैठे रहे। आशु बाबू बोले, "मणिकी तैयारी हो गई थी कि इतनेमें रातकी गाड़ीसे काशीसे छोटे काका आ पहुँचे। पिताकी मृत्युके बाद वे ही घरके बड़े थे, बाल-बच्चा कोई था नहीं, काशीको लेकर बहुत दिनोंसे काशीवास कर रहे थे। ज्योतिषपर उनका अखण्ड विश्वास था, आकर

बोले, यह ब्याह अभी हो ही नहीं सकता। उन्होंने खुद तथा और पण्डितोंसे निर्भूल गणना करा देखी है कि इस ब्याहके होनेसे तीन साल तीन महीनेके अन्दर ही *मणि विधवा हो जायगी।*

"घरमें एक ऊधम-सा मच गया, सारी तैयारियाँ गुदामें पड गईं, मगर मैं काकाको जानता था, समझ गया कि इसमें जरा भी इधर उधर नहीं होनेका। अजित खुद भी एक बहुत बड़े घरका लड़का है, उसके एक विधवा काकीके सिवा संसारमें और कोई न था, वे भी बहुत गुस्सा हुईं, अजित मारे दुःख और अभिमानके इंजीनियरिंग पढ़नेके बहाने विलायत चला गया और सबने जान लिया कि यह सम्बन्ध हमेशाके लिए टूट गया।"

अविनाशने रुकी हुई साँस छोड़कर पूछा, "इसके बाद, फिर?"

आशु बाबूने कहा, "फिर हम सब हताश हो गये, हुईं नहीं एक मणि खुद। मुझसे आकर बोली, 'बापूजी, ऐसी क्या बड़ी बात हो गई है जिसके लिए तुमने खाना पीना-सोना छोड़ दिया है? तीन साल ऐसा क्या बड़ा समय है?' उसके मनको कितनी जबरदस्त ठेस पहुँची थी, सो मैं जानता था। मैंने कहा, 'बेटी तेरी बात ही सार्थक हो, पर इन सब बातोंमें तीन साल तो दरकिनार, तीन दिनकी रोक भी बुरी होती है।' मणिने हँसकर कहा, 'तुम्ह डरनेकी जरूरत नहीं बापूजी, मैं उन्हें पहचानती हूँ।' अजित हमेशासे जरा कुछ धार्मिक प्रकृतिका आदमी है, भगवान्पर उसका अचल विश्वास है। जाते समय मणिको एक छोटी चिट्ठी लिखकर चला गया। इन चार सालोंमें फिर उसने दूसरी चिट्ठी ही नहीं लिखी। न लिखे, पर मन ही मन मणि सब जानती थी, और तबसे उसने ब्रह्मचारिणीका जीवन ग्रहण कर लिया। देखने तो बाहरसे कोई कुछ समझ ही नहीं सकता। समझे अविनाश बाबू?"

अविनाश श्रद्धासे विगलित चित्त होकर बोले, "हाँ, वास्तवमें नहीं समझ सकता, मैं आशीर्वाद देता हूँ कि वे लोग जीवनभर सुखी हों।"

आशु बाबूने कन्याकी तरफसे ही मानो सिर झुकाकर उसे ग्रहण किया और कहा, "*ब्राह्मणका आशीर्वाद निष्फल नहीं होगा। अजित सबसे पहले काका साहबके पास गया था। उन्होंने अनुमति दे दी है। नहीं तो, यहाँ शायद वह आता ही नहीं।*"

इसके बाद, दोनों कुछ देर चुप रहे, फिर आशु बाबू कहने लगे, "अजितने

विलायत चले जानेपर जब दो सालतक उसका कोई समाचार नहीं आया तब मैंने भीतर ही भीतर वरकी खोज न की हो सो बात नहीं। पर मणिको अकस्मात् मालूम हो गया और उसने मना कर दिया। कहा, 'बापूजी, इसकी कोशिश तुम मत करो। मेरा तुमने प्रकट रूपसे सम्प्रदान भले ही न किया हो, पर मनसे तो कर ही दिया था।' मैंने कहा, 'ऐसा तो कितने ही विवाहोंमें हुआ करता है, बेटी।' लेकिन लड़कीकी आँखोंमें मानो पानी भर आया। बोली, 'नहीं होता बापूजी। सिर्फ बातचीत ही होती है, उससे ज्यादा कुछ नहीं,—नहीं बापूजी, मेरे भाग्यमें भगवान्‌ने जो लिखा है उसे मैं सह सकूँ, यही काफी है, मुझे और कोई आदेश तुम मत देना।' दोनोंकी ही आँखोंसे आँसू गिरने लगे, पोंछकर मैंने कहा, कसूर बन गया बेटी, अपने नासमझ बापूको तू क्षमा कर।"

अकस्मात् पूर्व-स्मृतिके आवेगसे उनका कण्ठ रुद्ध हो गया। अविनाश खुद भी कुछ देरतक बात नहीं कर सके, उसके बाद धीरे धीरे बोले, "आशु बाबू, संसारमें हम लोग न जाने कितनी गलतियाँ किया करते हैं और न जाने कितनी अनुचित धारणाएँ मनमें पालते रहते हैं।"

आशु बाबू ठीक समझ न सके, "कैसी?"

"यही, जैसे, हममेंसे बहुत-से ऐसा समझा करते हैं कि लड़कियाँ उच्च शिक्षा पाकर मेम-साहबा बन जाती हैं, हिन्दुओंके प्राचीन मधुर संस्कारके लिए उनके हृदयमें जैसे स्थान ही नहीं रहता। यह कितना बड़ा भ्रम है, भला?"

आशु बाबूने गरदन हिलाकर कहा, "भ्रम बहुतेरी जगह होता जरूर है। मगर आप जानते हैं अविनाश बाबू, क्या शिक्षा और क्या अशिक्षा, असल चीज है प्राप्त करना। इस प्राप्त करने न करनेके ऊपर ही सब बातें निर्भर हैं। नहीं तो, एकका अपराध दूसरेपर आरोप करनेसे ही गुटाला होता है।—आ गये अजित, मणि कहाँ है?"

दोसेक साल का एक सुन्दर बलिष्ठ युवक कमरेके भीतर दाखिल हुआ। उसके कपड़ोंपर कालिखके दाग लग गये थे। उसने कहा, "मणि अबतक मेरी मदद कर रही थीं, उनके कपड़ोंमें भी कालिख लग गई है, कपड़े बदलने गई हैं। मोटर ठीक हो गई है, शोफरसे सामने लाकर खड़ी करनेको कह दिया है।"

आशु बाबूने कहा, "अजित, ये मेरे परम मित्र हैं, श्रीयुत अविनाश मुखो

पाध्याय। यहाँके कॉलेजके प्रोफेसर हैं, ब्राह्मण हैं, इन्हें प्रणाम करो।"

आगन्तुक युवकने अविनाशको पाँव छूकर प्रणाम किया। फिर खड़े होकर आशु बाबूको लक्ष्य करके कहा, "मणिके आनेमें पाँचेक मिनटसे ज्यादा देर न लगेगी। मगर आप जरा जल्दीसे तैयार हो लीजिए। देर होनेपर सब कुछ देखनेका समय नहीं मिलेगा। लोग कहते हैं ताजमहल देखते देखते जी ही नहीं भरता।"

आशु बाबूने कहा, "जी न भरनेकी ही चीज है, तुम्हींको अभी कपड़े बदलना बाकी है।"

युवकने हँसकर कहा, "सो रहने दीजिए। यह तो हमारा पेशा है। कपड़ों पर कालिख लगनेसे हम लोगोंका कोइ अगौरव नहीं होता।"

बात सुनकर आशु बाबू मन ही मन अत्यन्त प्रसन्न हुए, और अविनाश भी युवककी विनम्र सरलतापर मुग्ध हो गये।

इतनेमें मणि आ पहुँची। सहसा उसकी तरफ देखकर अविनाश चौंक उठे। कइ दिनोंसे उन्होंने उसे देखा नहीं था, और इस बीचमें ही यह अप्रत्याशित आनन्दकी घटना हुइ थी। खासकर, उसके पिताके मुँहसे अभी-अभी जो बातें सुनी थीं उससे उन्होंने समझ लिया था कि मनोरमाके चेहरेपर आज शायद ऐसी कोइ बात देखेंगे जो अनिर्वचनीय होगी और जीवनमें कभी देखी न होगी। मगर वहाँ कुछ भी नहीं था, बिल्कुल सीधी-सादी पोशाक। छिपे हुए आनन्दका छिपा आडम्बर कहींसे आत्म प्रकाश करता हुआ नहीं दिखाइ दिया। सुगभीर प्रसन्नताकी शान्त दीप्ति चेहरेपर कहीं भी विकसित होती नहीं दिखाइ दी, बल्कि, न जाने कैसी एक क्लान्तिकी छायाने ही आँखोंकी दृष्टिको म्लान कर रखा था। अविनाशको ऐसा जान पड़ा कि पितृ-स्नेहवश शायद आशु बाबूने अपनी कन्याको गलत समझा है, या फिर किसी दिन जो सत्य था वह आज झूठ हो गया है।

थोड़ी देर बाद एक बड़ी भारी मोटरमें बैठकर सब चल दिये। जमुनाके घाट घाटपर पुण्य-लुब्ध नारियों और रूप लुब्ध पुरुषोंकी भीड़ तबतक लगभग कम हो चुकी थी। सुन्दर और सुदीर्घ मार्गमें सर्वत्र ही उनकी सज-धज और विचित्र रंग बिरंगी पोशाक अस्तमान रवि-करोंसे विशेष सुन्दर हो उठी थीं, और उस दृश्यको देखते हुए जब वे विश्वविख्यात अनन्तसौन्दर्यमय ताजमहलके

सिंहद्वारके सामने आ पहुँचे, तब हेमन्त ऋतुका छोटा-सा दिन अवसानकी ओर बढ़ा जा रहा था।

यमुना किनारे जो कुछ देखनेका था सो सब देख भालकर अक्षयका दल पहलेसे ही वहाँ हाजिर हो गया था। ताज उन लोगोंने बहुत बार देखा है, देखते देखते अरुचि हो गई है इसीसे वे ऊपर न जाकर नीचेके बागमें एक किनारे बैठ गये थे। इन लोगोंको आते देख उन सबने उच्च कोलाहलके साथ स्वागत किया। बातव्याधि-पीड़ित आशु बाबू अपनी भारी भरकम देहको घासपर रखते हुए गहरी उसास छोड़कर बोले, "ओफ्, अब जीमें जी आया। अब जिसकी जितनी तबीयत हो, मुमताज बेगमकी कब्र देखकर आनन्द प्राप्त करते रहो बाबा। आशु वैद्य यहींसे बेगम साहबाको कोर्निश बजा लाता है। इससे ज्यादा और उससे कुछ नहीं हो सकता।"

मनोरमाने क्षुब्ध कण्ठसे कहा, "सो नहीं होगा बाबूजी, तुम्हें अकेला छोड़ कर हममेंसे कोई भी नहीं जा सकता।"

आशु बाबू हँसकर बोले, "डरकी कोई बात नहीं बेटी, तुम्हारे बूढ़े बापको कोई चुरा नहीं ले जायगा।"

अविनाशने कहा, "नहीं, इसकी आशंका नहीं। बदस्तूर क्रेन और लोहेकी जंजीर लाये बगैर वह उठा ही कैसे सकेगा!"

मनोरमाने कहा, "मेरे बाबूजीको कोई नजर न लगाए। आप लोगोंकी ही नजरसे बाबूजी यहाँ आकर बहुत कुछ दुबले हो गये हैं।"

अविनाशने कहा, "ऐसा अगर हुआ हो तो हम लोगोंसे अन्याय हुआ है, यह बात माननी ही पड़ेगी। कारण, देखनेके लिहाजसे इस चीजकी इज्जत ताज महलसे किसी कदर कम नहीं है।"

सब कोई हँस दिये। मनोरमाने कहा, "सो नहीं होगा बाबूजी, तुम्हें साथ साथ चलना होगा। तुम्हारी आँखोंसे देखे बिना इस चीजका आधा सौंदर्य ढँका ही रह जायगा। कोई कितनी ही बात क्या न बतावे पर तुमसे ज्यादा असली बातें और कोई नहीं जानता।"

अविनाशके सिवा इस बातका मर्म और कोई नहीं जानता कि इसके मानी क्या हैं। वे भी यही अनुरोध करने जा रहे थे। इतनेमें सहसा सबकी दृष्टि पड़ी एक अप्रत्याशित चीजपर। ताजके पूर्वकी ओरसे घूम कर अकस्मात् **शिवनाथ**

और उसकी स्त्री सामने आ पड़े। शिवनाथ अनदेखी करके दूसरी तरफ जाना ही चाहता था कि स्त्री उसकी दृष्टि आकर्षित करके खुश हो उठी और बोली, "आशु बाबू और उनकी लड़की भी आई हैं, देखो तो सही।"

आशु बाबूने जोरकी आवाज लगाकर उन्हें पुकारा, "आप लोग कब आये शिवनाथ बाबू ? इधर आइए।"

स्त्रीके साथ शिवनाथ पास आ खड़ा हुआ। आशु बाबूने उनका परिचय देकर कहा, "ये हैं शिवनाथकी स्त्री। आपका नाम लेकिन नहीं मालूम।"

"मेरा नाम है कमल। मगर मुझसे 'आप' न कहा करें आशु बाबू।"

आशु बाबू बोले, "कहना उचित भी नहीं है कमल, ये लोग मेरे मित्र हैं, तुम्हारे पतिके भी परिचित हैं। बैठो।"

कमलने अजितकी तरफ इशारा करके कहा, "मगर इनका परिचय तो दिया ही नहीं।"

आशु बाबूने कहा, "क्रमशः दूँगा। ये मेरे,—ये मेरे परम आत्मीय हैं। नाम अजितकुमार राय। कुछ ही दिन हुए, विलायतसे वापस आकर हम लोगोंसे मिलने आये हैं। कमल, तुमने क्या आज पहले पहल ताजमहल देखा है ?"

कमलने सिर हिलाकर कहा, "हाँ।"

आशु बाबूने कहा, "तब तो तुम भाग्यवती हो। अजित तुमसे भी भाग्यवान् है क्योंकि यह परम आश्चर्यकी चीज उसने अभीतक देखी नहीं, अब देखेगा। लेकिन उजाला घटता जाता है, ज्यादा देर करना तो अब ठीक नहीं, अजित।"

मनोरमाने कहा, "देर तो सिर्फ तुम्हारे लिए ही हो रही है बापूजी उठो।"

"उठना तो आसान काम नहीं है बेटी, उसके लिए तो आयोजन करना पड़ेगा।"

"तो फिर वही आयोजन करो न, बापूजी।"

"करता हूँ। अच्छा कमल, देखकर कैसा मालूम हुआ ?"

"आश्चर्यकी चीज ही मालूम हुआ ?"

मनोरमा उसके साथ बोली नहीं, यहाँतक कि उससे परिचय है, इस बात का आभास भी उसके आचरणसे प्रकट नहीं हुआ। पिताको तागीद करते हुए उसने कहा, "शाम हुई जा रही है बापूजी, उठो अब ?"

"उठता हूँ बेटी।" कहकर आशु बाबू उठनेका जरा भी उद्योग न करके बैठे ही रहे। कमल जरा हँसी, मनोरमाकी तरफ देखकर बोली, "इनकी तबीयत भी अच्छी नहीं है, और चढना-उतरना भी आसान नहीं। इससे बल्कि हम लोग बैठे-बैठे बातें करें, आप लोग देख आइए।"

मनोरमाने इस प्रस्तावका जवाब नहीं दिया, सिर पिताने ही जिदके साथ कहा, "नहीं बापूजी, सो नहीं होनेका। उठो अब तुम।"

मगर, देखा गया कि उठनेकी कोशिश लगभग किसीने भी नहीं की। जो जनित आश्चर्य इस अपरिचित रमणीके सर्वांगमें व्याप्त होकर अकस्मात् मूर्तिमान् हो उठा, उसके सामने वह निकट ही खडा हुआ संगमरमरका अव्यक्त आश्चर्य मानो एक क्षणमें धुँधला-सा पड गया।

अविनाशकी अन्यमनस्कता दूर हो गई। बोले, "इनके बिना गये काम न चलेगा। मनोरमाकी धारणा है कि पिताकी आँखोंसे देखे बगैर ताजका आधा सौन्दर्य भी हृदयगम नहीं किया जा सकता।"

कमलने अपनी सरल आँखें उठाकर पूछा, "क्यों?" फिर आशु बाबूसे कहा, "आप शायद इस विषयके विशेषज्ञ हैं? और शायद सब बातें जानते हैं?"

मनोरमा मन ही मन विस्मित हुई, बातें ठीक अशिक्षित दासी-कन्या जैसी तो नहीं मालूम होतीं!

आशु बाबू पुलकित होकर बोले, "मैं कुछ भी नहीं जानता। विशेषज्ञ तो हूँ ही नहीं, और सौन्दर्य तत्त्वका सिर-पैरतक नहीं जानता। उस तरफसे तो मैंने इसे देखा तक नहीं कमल। मैं देखता हूँ बादशाह शाहजहाँको। मैं देखता हूँ उनकी असीम व्यथाको जो मानो इसके हर पत्थरके अंग-अंगमें समाई हुई है। मैं देखता हूँ उनके एकनिष्ठ पत्नी-प्रेमको, जो इस ममरकाव्यकी सृष्टि करके चिरकालके लिए अपनी प्रियतमाको दिनके सामने अमर कर गया है।"

कमलने अत्यन्त स्वाभाविक कण्ठसे उनके चेहरेकी तरफ देखकर कहा, "मगर उनकी तो, सुना है, और भी बहुत-सी बेगमें थीं। बादशाहको मुमताज पर जैसा प्रेम था वैसा औरोंपर भी था। हो सकता है कि उससे कुछ ज्यादा हो, पर एकनिष्ठ प्रेम तो उसे नहीं कहा जा सकता आशु बाबू। उनमें वह बात नहीं थी।"

इस अप्रचलित मतानुकूल मन्तव्यसे सब चौंक उठे। आशु बाबू और कोई

इसका जवाब खोजकर भी न पा सका।

कमलने कहा, "बादशाह कवि थे वे अपनी शक्ति, सम्पदा और धैयस इतनी बड़ी विराट् सौन्दयकी वस्तु प्रतिष्ठित कर गये हैं। मुमताज तो एक आकस्मिक उपलक्ष्य मात्र थी। वह न होती तो भी ऐसा सौन्दय-सौध वे किसी भी घटनाको लेकर रच जा सकते थे। धमके नामपर होता तो भी कोई नुकसान नहीं था और हजारों लाखों आदमियोंका हत्या करके दिग्विजय प्राप्तिकी स्मृतिके रूपम होता तो भी इसी तरह चला जाता। यह एकनिष्ठ प्रेमका दान नहीं है, यह तो बादशाहका निजी आनन्द-लोकका अक्षय दान है। बस, इतना ही हमारे लिए काफी है।"

आशु बाबूके दिलपर चोट-सी लगी। बार-बार सिर हिलाकर कहने लगे, "काफी नहा कमल, हरगिज ऐसा नहा था। तुम्हारी बात ही अगर सच हो, बादशाहके मनम एकनिष्ठ प्रेम अगर न था तो इस विलास स्मृति मन्दिरका कोइ मानी ही नहीं रह जाता। फिर वे चाहे जितनी बड़ी सौन्दयकी सृष्टि क्या न कर जाते, मनुष्यके हृदयम वैसी श्रद्धाका आसन उनके लिए नहीं रह जाता।"

कमलने कहा, "अगर न रहे तो वह मनुष्यकी मूढ़ता है। मैं नहीं कहती कि निष्ठाका कोइ मूल्य ही नहा, पर जो मूल्य युग युगसे लोग उसे देते आये हैं वह उसका प्राप्य मूल्य नहा है। एक दिन जिससे प्रेम किया है, फिर किसी दिन किसी भी कारणसे उसमें किसी परिवतनका अवकाश नहीं हो सकता मनका यह अचल अडिग जड धम न तो स्वस्थ है और न सुन्दर ही।"

सुनकर मनोरमाके विस्मयकी सीमा न रही। मूरत दासी-कन्या कहकर इसकी उपेक्षा करना कठिन है, मगर इतने पुरुषोंके सामने उसी जैसी एक नारीके मुँहसे निकली हुइ इस तरहकी लज्जाहीन बातने उसे जबरदस्त चोट पहुँचाई। अब तक वह कुछ बोली नहा थी, पर अब वह अपनेको रोक न सकी कठोर किन्तु दबी जबानसे बोली, "मैं मानती हूँ, ऐसी मनोवृत्ति और स्त्रीके न सही, पर आपके लिए स्वाभाविक है। मगर औरोंकी दृष्टिमें न तो यह सुन्दर है और न शोभन।"

आशु बाबू मन ही मन अत्यन्त क्षुण्ण होकर बोले, "छि, बेटी।"

कमल गुस्सा नहीं हुइ, बल्कि जरा हँस दी। बोली, "बहुत दिनोंके बद्ध-मूल सस्कारपर आघात लगनेसे आदमी सहसा सह नहीं सकता। आपने सच ही कहा

है, हमारे निकट यह बात बहुत ही स्वाभाविक है, क्योंकि हमारे शरीर और मनमें यौवन परिपूर्ण है, हमारे मनमें प्राण है। जिस दिन जानूँगी कि आवश्यकता होनेपर भी उसमें परिवर्तनकी कोई शक्ति बाकी नहीं रही उस दिन समझ लूँगी कि उसका खातमा हो चुका है,—वह मर चुका है।" कहकर ज्यों ही उसने आँख उठाई त्यों ही देखा कि अजितकी आँखोंसे जैसे चिनगारियाँ निकल रही हैं। मालूम नहीं वह दृष्टि मनोरमाने देखी या नहीं, किन्तु वह बातके बीचमें अकस्मात् बोल उठी, "बाबूजी, अब दिन नहीं है, मुझसे जितना बनेगा मैं अजित बाबूको तबतक कुछ थोड़ा दिखा लाती हूँ।"

अजितकी अन्यमनस्कता दूर हो गई। उसने कहा, "चलो, हम लोग देख आएँ।"

आशु बाबू खुश होकर बोले, "अच्छी बात है, जाओ बेटी, हम लोग यहीं बैठे हैं। लेकिन जरा जल्दी ही लौट आना, न होगा, तो कल फिर जरा जल्दी आ जायँगे।"

६

अजित और मनोरमा जब 'ताज' देखकर लौटे तब सूर्य अस्त हो चुका था, पर उजाला खतम नहीं हुआ था। सब एक गिरोह बाँधकर जमे थे, और तर्क घोरतर हो उठा। ताजमहलकी बात, घर लौटनेकी बात, यहाँतक कि अजित मनोरमाकी बातका भी उन्हें खयाल नहीं था। अक्षय चुप बैठा उफन रहा था। देखकर मालूम होता था कि इसके पहले वह काफी शोर मचा चुका है और अब दम ले रहा है। आशु बाबू देहके अधोभागको चबूतरेके बाहरकी ओर पसार कर और ऊर्ध्व भागको दोनों हाथोंपर रखकर, गुरु भार वहन करनेका एक तरीका निकालकर अत्यन्त दिलचस्पीके साथ सुन रहे हैं। अविनाश सामनेकी ओर झुककर तीव्र दृष्टिसे कमलके चेहरेकी तरफ देख रहे हैं। समझमें आया कि फिलहाल सवाल-जवाब इन्हीं दोनोंके दरम्यान चालू है। सबने आगन्तुकोंकी ओर मुँह उठाकर देखा। किसीने जरा गरदन हिलाई और किसी को उतनी भी फुरसत नहीं मिली। कमल और शिवनाथ,—इन दोनोंने भी मुँह उठाकर देखा। किन्तु आश्चर्य यह है कि एककी आँखोंकी दृष्टि जैसे शिखाकी तरह जल रही है, दूसरेकी दृष्टि वैसे ही शान्त और मलिन हो रही है। मानो वह

कुछ देख ही नहीं रहा है, न कुछ सुन ही रहा है। इस दलमें बैठा हुआ भी शिवनाथ जैसे न जाने कहाँ कितनी दूर चला गया है।

आशु बाबूने कहा, "बैठो।" पर वे कहाँ बैठे, और बैठे या नहीं, यह देखनेकी भी उन्हें फुरसत नहीं मिली।

अविनाशने शायद अजयकी युक्ति मालाका छिन्न सूत्र हाथमें ले लिया और कहा, "बादशाह शाहजहाँका प्रसङ्ग अभी रहने दो। मैं मानता हूँ कि उनके सम्बन्धमें विचार करनेकी जरूरत है और प्रश्न जरा जटिल है। मगर प्रश्न जहाँ उस सामनेके संगमरमरके समान सफेद, पानीकी तरह साफ, सूर्यके प्रकाशकी तरह स्वच्छ और सीधा है,—ले लीजिए हमारे आशु बाबूका जीवन, किसी भी दिशामें भी कोई कमी नहीं थी, वन्धु बान्धवकी कोशिशमें भी कोई त्रुटि नहीं थी, मालूम तो है ही सब,—लेकिन यह बात ये सोच ही न सके कि अपनी मृत स्त्रीकी जगह और किसीको लाकर किसी तरह बिठाया जा सकता है। यह बात इनकी कल्पनासे भी बाहर है। बताइए, नर नारीके प्रेमका यह कितना बड़ा आदर्श है? कितना ऊँचा स्थान है इसका?"

कमल कुछ कहना ही चाहती थी कि पीछेसे एक मृदु स्पर्शका अनुभव करके उधर देखने लगी। शिवनाथने कहा, "अब यह आलोचना बन्द करो।"

कमलने पूछा, "क्यों?"

शिवनाथने उत्तरमें सिर्फ इतना कहा, "ऐसे ही कह रहा हूँ।" और वे चुप हो गये। उनकी बातपर किसीने विशेष ध्यान नहीं दिया,—उन उदास अन्य मनस्क आँखोंके अन्तरालमें कौन सी बात दबी रह गई, किसीको मालूम भी न हुई, और न किसीने जाननेकी कोशिश ही की।

कमलने कहा, "अच्छा, ऐसे ही। तुम्हें घर चलनेकी जल्दी पड़ी है शायद? पर घर तो साथ मौजूद है।" और हँस दी।

आशु बाबू सहम गये, हरेन्द्र और अजय ओठों ही ओठोंमें मुसकराये, मनोरमाने दूसरी तरफ आँखें फेर लीं किन्तु जिसको लक्ष्य करके यह बात कही गई थी, उस शिवनाथके आश्चर्यजनक सुन्दर चेहरेपर एक रेखा की भी परिवर्तन नहीं हुआ,—मानो वह बिल्कुल पत्थरका बना हो,—न तो उसे कुछ दिखाई देता है और न सुनाई।

अविनाशसे देर नहीं सही जा रही थी। उन्होंने कहा, "मेरे सवालका

जवाब दो।'

कमलने कहा, "पर पतिकी मनाही है जो। उनकी मर्जीके खिलाफ चलना क्या उचित है?" यह कहकर वह हँसने लगी। अविनाशसे स्वयं भी बिना हँसे न रहा गया। बोले, "इस मामलेमें अपराध न माना जायगा। हम इतने आदमी मिलकर तुमसे अनुरोध कर रहे हैं, जवाब दो।"

कमलने कहा, "आशु बाबूको आज मिलाकर दो दिन देखा है सिर्फ, पर इसी बीचमें मन ही मन मैं उन्हें चाहने लगी हूँ।" फिर शिवनाथकी तरफ इशारा करके कहा, "अब समझमें आया न, कि क्यों ये मुझे बोलनेके लिए मना कर रहे थे?"

आशु बाबूने खुद इसमें रुकावट डाली, बोले, "पर मेरी तरफसे तुम्हें संकोच या दुविधा करनेका कोई कारण नहीं। बूढ़ा आशु वैद्य बड़ा निरीह आदमी है कमल। सिर्फ दो ही दिन देखकर तुमने उसे बहुत कुछ समझ लिया होगा, और दो दिन और भी देखोगी तो समझ जाओगी कि उससे डरने जैसी भूल संसारमें शायद ही कोई हो। तुम स्वच्छन्दतासे कहो,—ये सब बातें सुननेमें वास्तवमें मुझे बहुत आनन्द आता है।"

कमलने कहा, "मगर ठीक इसीलिए तो ये मना कर रहे थे, और इसीलिए अविनाश बाबूकी बातका जवाब देनेमें अक्सर मेरी जबान रुकती थी कि नर नारीके प्रेमके व्यापारमें न तो मैं इसे बड़ी चीज समझती हूँ और न आदर्श ही मानती हूँ।"

अब अक्षयका मुँह खुला। उसके प्रश्नके ढंगमें व्यंग था, "सम्भव यही है कि आप लोग नहीं मानते, मगर क्या मानते हैं, जरा बताएँगी क्या?"

कमलने उसकी तरफ देखा जरूर, पर ठीक उसीको उत्तर दिया हो, सो बात नहीं। वह बोली, "एक दिन आशु बाबू अपनी स्त्रीसे प्रेम करते थे, जो इस समय जीवित नहीं हैं। पर अब उन्हें न तो कुछ दिया ही जा सकता है और न उनसे कुछ पाया ही जा सकता है। उन्हें अब न तो सुखी किया जा सकता है और न दुःख दिया जा सकता है। वे हैं ही नहीं,—प्रेम-पात्रका निशानतक पुँछ गया है। उन्होंने किसी दिन प्रेम किया था, मनमें सिर्फ यह घटना मात्र रह गई है। मनुष्य नहीं है, उसकी केवल स्मृति है। उसीको अहोरात्र मनमें पालते रहकर वर्तमानकी अपेक्षा अतीतको ही मुख्य मानकर जीवन बितानेमें कौन-सा

बड़ा भारी आदर्श है, मेरी तो कुछ समझमें नहीं आता ?"

कमलके मुँहसे ऐसी बात सुनकर आशु बाबूको फिर चोट पहुँची। वे बोले, "मगर, हमारे देशकी विधवाओंके हाथमें सिर्फ यही एक चरम पूँजी रहती है। पति चल बसता है, पर उसकी स्मृतिको लेकर ही तो विधवा जीवनकी पवित्रता बनी रहती है। इसे क्या तुम नहीं मानती ?"

कमलने कहा, "नहीं। एक बड़ा नाम दे देनेसे ही तो कोई चीज संसारमें सचमुच बड़ी नहीं हो जाती। बल्कि यों कहिए कि इस देशमें इसी तरह वैधव्य जीवन बितानेका रिवाज है, इसे मैं अस्वीकार नहीं करूँगी।"

अविनाशने कहा, "अगर ऐसा ही हो, लोग अगर उसे ठगते ही आ रहे हों, विधवाके ब्रह्मचर्यमें,—खैर जाने दो, ब्रह्मचर्यका नाम अब न लूँगा,—लेकिन उसके आमरण संयत जीवनको क्या इस विराट् पवित्रताका भी सम्मान न दोगे ?"

कमल हँस दी, बोली, "अविनाश बाबू, यह भी एक उसी शब्दका मोह है। 'संयम' शब्द बहुत दिनोंसे बहुत ज्यादा इज्जत पा पाकर ऐसा फूल उठा है कि उसके लिए अब स्थान-काल कारण-अकारण नहीं रह गया है। उसके उच्चारण मात्रसे सम्मानके बोझसे आदमीका सिर झुक जाता है। परन्तु, अवस्था विशेषमें यह भी एक थोथी आवाजसे ज्यादा कुछ नहीं है। यह शब्द मुँहसे निकालते ही साधारण लोगोंको भले ही डर लगे, पर मुझे नहीं लगता। मैं उस दलकी नहीं हूँ। सिर्फ इसीलिए कि बहुत से लोग बहुत दिनोंसे कोई एक बात कहते आ रहे हैं, मैं उसे मान नहीं लेती। पतिकी स्मृतिको छातीसे चिपटाये रहकर विधवाओंको दिन काटने चाहिए, इसके समान स्वतःसिद्ध पवित्रताकी धारणाको स्वीकार करनेमें मुझे तबतक हिचकिचाहट रहेगी जबतक कि उसे कोई प्रमाणित नहीं कर देगा।"

अविनाशको जवाब ढूँढ़े न मिला और वे क्षण भर विमूढ़की भाँति देखते रह गये, फिर बोले, "तुम कहती क्या हो ?"

अक्षयने कहा, "दो और दो चार होते हैं, इसे भी शायद प्रमाणित किये बगैर आप नहीं मानेंगी ?"

कमलने न तो जवाब दिया और न गुस्सा ही हुई, सिर्फ हँस दी।

और भी एक सज्जन जो गुस्सा नहीं हुए, वे थे आशु बाबू। किन्तु कमलकी

बातसे सबसे ज्यादा व्यथित भी वे ही हुए।

अक्षय फिर बोला, "आपकी ये सब गन्दी धारणाएँ हमारे शिष्ट-समाजमें नहीं हैं, यहाँ ये चल नहीं सकतीं।"

कमलने पूर्ववत् हँसते चेहरेसे ही उत्तर दिया, "शिष्ट समाजमें चलती नहीं हैं, यह मैं जानती हूँ।"

इसके बाद कुछ देरतक सबके सब मौन रहे। आशु बाबू धीरे धीरे बोले, "और एक बात तुमसे पूछता हूँ कमल। पवित्रता-अपवित्रताके लिए नहीं कह रहा, किन्तु स्वभावतः जो और कुछ कर नहीं सकता, जैसे मुझको ही ले लो, मणिकी स्वर्गीय माँकी जगह और किसीको ला बिठानेकी तो मैं कभी कल्पना ही नहीं कर सकता।"

कमलने कहा, "आप बूढ़े जो हो गये हैं आशु बाबू।"

आशु बाबूने कहा, "मानता हूँ, आज बूढ़ा हो गया हूँ, किन्तु उस दिन तो बूढ़ा नहीं था। पर तब भी तो यह बात नहीं सोच सकता था।"

कमलने कहा, "उस दिन भी ऐसे ही बूढ़े थे। देहसे नहीं, मनसे। कोई कोई आदमी होते हैं जो बूढ़ा मन लिये ही पैदा होते हैं। उस बूढ़ेके शासनके नीचे उनका क्षीण दीन विह्वल यौवन हमेशा लज्जासे सिर नीचा किये रहता है। बूढ़ा मन खुश होकर कहता है, अहा! यही तो अच्छा है, कोई हंगामा नहीं, उन्माद नहीं,—यही तो शान्ति है, यही तो मनुष्यके लिए चरम तत्वकी बात है। उसके लिए कितने तरहके अच्छे-अच्छे विशेषण हैं, कितनी वाहवाहीका आडम्बर है। ऊँचे स्वरसे उसकी ख्यातिका बाजा बजता है, पर इस बातको वह जान भी नहीं पाता कि यह उसके जीवनका जय बाद्य नहीं, आनन्दलोकके विसर्जनका बाजा है।"

सभीको मन ही मन लगा कि इसका एक कड़ा जवाब देना जरूरी है। एक स्त्रीके मुँहसे यौवनके उन्मादकी इस निर्लज्ज स्तुतिसे सभीके कान जलने लगे, पर जवाब देने लायक बात किसीको ढूँढ़े नहीं मिली।

तब आशु बाबूने मृदु कण्ठसे पूछा, "कमल, बूढ़ा मन तुम किसे कहती हो? देखूँ, अपने साथ जरा मिलाकर। यह सचमुच ही वही है या नहीं।"

कमलने कहा, "मनकी बुढ़ापा मैं उसीको कहती हूँ आशु बाबू, जो अपने सामनेको आर नहीं देख सकता, जिसका हारा थका जराग्रस्त मन भविष्यकी

समस्त आशाओंको जलाञ्जलि देकर सिर्फ अतीतके अन्दर ही जिन्दा रहना चाहता है। और मानों उसे कुछ करनेकी, कुछ पानेकी चाह ही नहीं है,—वर्तमान उसकी दृष्टिमें तुच्छ है, अनावश्यक है, और भविष्य अर्थहीन। अतीत ही उसके लिए सब कुछ है। वही उसका आनन्द, वही उसकी वेदना और वही है उसका मूल धन। उसीको भुना भुनाकर गुजर करके जीवनके बाकी दिन बिता देना चाहता है। देखिए तो आशु बाबू, अपने साथ जरा तुलना करके।"

आशु बाबू हँसे, बोले, "यथासमय एक बार जरूर देखूँगा।"

अजितकुमारने अबतककी इतनी बातचीतके बीचमें एक भी बात नहीं कही थी, वह सिर्फ निष्पलक दृष्टिसे कमलके मुँहकी तरफ देख रहा था सहसा न जाने उसे क्या हो गया, अपनेको वह संभाल न सका, बोल उठा, "मेरा एक प्रश्न है, दोखिए मिसेज—"

कमलने सीधे उसकी तरफ देखकर कहा, "मिसेज किसलिए? मुझे आप कमल ही कहिए न।"

अजित मारे शरमके सुर्ख हो उठा—"नहा नहीं, सो कैसे,—ऐसा कैसे—"

कमलने कहा, "ऐसा वैसा कुछ भी नहीं। माँ-बापने मेरा यह नाम रखा था पुकारनेके लिए ही तो! इससे मैं नाराज नहीं होती।" अकस्मात् मनोरमाके मुँहकी ओर देखकर बोली, "आपका नाम मनोरमा है,—मनोरमा कहकर बुलानेसे आप नाराज होती हैं क्या?"

मनोरमाने सिर हिलाकर कहा, "हाँ, मैं नाराज होती हूँ।"

ऐसे जवाबकी उससे किसीने भी उम्मीद नहा की थी, आशु बाबू तो मारे सकोचके म्लान हो गये।

सिर्फ सकुचित नहीं हुई कमल स्वयं। बोली, "नाम तो और कुछ नहीं, एक शब्द है, जिससे समझा जाता है कि एक आदमी बहुतोंमेंसे किसी एक आदमीको बुला रहा है। पर हाँ, यह सच है कि बहुतोंके अभ्यासमें यह खटकती है। वे इस शब्दको नाना रूपसे अलंकृत करके सुनना चाहते हैं। देखते नहीं, राजा लोग अपने नामके आगे न जाने कितने निरर्थक शब्द जोड़ कर, कितने 'श्री' जोड़कर, तब कहीं उसे दूसरेको उच्चारण करने देते हैं। नहीं तो उनकी मर्यादा नष्ट होती है।" इतना कहकर वह सहसा हँस पड़ी, और शिवनाथकी तरफ इशारा करके बोली, "जैसे ये। कभी इनसे कमल कहते नहीं

बनता, कहते हैं शिवानी। अजित बाबू, आप बल्कि मुझे मिसेज शिवनाथ न कहकर शिवानी कहिए। शब्द भी ठीक है, और सब समझ भी लेंगे। कमसे कम मैं तो समझ ही जाऊँगी।"

परन्तु न जाने क्या हुआ कि ऐसा सुस्पष्ट आदेश पाकर भी अजितसे कुछ बोला नहीं गया, प्रश्न उसके मुँहमें ही अटक रहा।

तब सन्ध्या खतम हो चुकी थी और कार्तिक पूर्णोके आच्छन्न आकाशमें स्वच्छ चाँदनी छिटक रही थी। उस तरफ देखकर पिताकी दृष्टि आकर्षित करते हुए मनोरमाने कहा, "बापूजी, ओस पड़नी शुरू हो गई है, बस, उठिए अब।"

आशु बाबू बोले, "यह लो, उठता हूँ बिटिया।"

अविनाशने कहा, "शिवानी नाम बहुत अच्छा है। शिवनाथ गुणी पुरुष है, इसीसे नाम भी मीठा दिया है, अपने नामके साथ मेल भी खूब मिलाया है।"

आशु बाबू खिल उठे, बोले, "अभी वे शिवनाथ नहीं अविनाश, ऊपरके वे।" और एक बार आकाशकी ओर देखकर बोले, "आदि-कालके उस बूढ़े घटकने इन दोनोंका सब तरफसे मेल करानेके लिए आहार निद्रातक छोड़ दी थी। जीते रहो।"

अकस्मात् अक्षय सीधा होकर बैठ गया और दो-तीन बार सिर हिलाकर अपनी छोटी-छोटी आँखोंको यथाशक्ति फाड़कर बोला, "अच्छा, आपसे एक प्रश्न कर सकता हूँ क्या?"

कमलने कहा, "क्या प्रश्न?"

अक्षयने कहा, "आपके लिए सकोच नामकी तो कोई बला है नहीं, इसीसे पूछता हूँ—शिवानी नाम तो अच्छा है, मगर, शिवनाथ बाबूके साथ क्या आपका वास्तवमें ब्याह हुआ है?"

आशु बाबूका चेहरा स्याह पड़ गया, बोले, "यह क्या कह रहे हो अक्षय बाबू!"

अविनाशने कहा, "तुम पागल हो गये हो?"

हरेन्द्रने कहा, "ब्रूट" (जंगली)।

अक्षयने कहा, "आप तो जानते हैं, मेरे आँखोंका झूठा लिहाज नहीं।"

हरेन्द्रने कहा, "झूठा सच्चा किसी तरहका भी नहीं। पर हम लोगोंका तो है।"

कमल लेकिन हँसने लगी। जैसे यह कोई बड़े विनोदकी बात हो। उस कहा, इसमें नाराज होनेकी कौन सी बात है हरेंद्र बाबू? मैं बताती हूँ अक्ष बाबू। बिल्कुल कुछ हुआ ही न हो, सो बात नहीं। ब्याह जैसी कोई बात हु जरूर थी। जो लोग देखने आये थे, वे लगे हँसने। बोले, यह ब्याह है नहीं,—धोखा है। इनसे पूछनेपर इन्होंने कहा, शैव मतसे ब्याह हुआ तो इसमें चिन्ताकी कौन-सी बात है?"

अविनाश सुनकर दुःखित हुए, उन्होंने कहा, "लेकिन शैव विवाह तो अ हमारे समाजमें होता नहीं न, इसलिए अगर ये किसी दिन 'नहीं हुआ' कहक उसे उड़ा देना चाहें, तो प्रमाणित करने लायक तुम्हारे पास कुछ रह नहीं जाता कमल!"

कमलने शिवनाथकी तरफ देखकर कहा, "क्यों जी, करोगे क्या तुम ऐसा किसी दिन?"

शिवनाथने कुछ जवाब नहीं दिया, वह पहलेकी तरह उदास और गम्भीर चेहरा लिये बैठा रहा। तब कमलने हँसीके बहाने माथेपर हाथ मारकर कहा—"हाय रे भाग्य! ये जायँगे 'नहीं हुआ' कहकर अस्वीकार करने और मैं जाऊँगी उसीको 'हुआ है' कहकर दूसरेके पास न्याय कराने? उसके पहले गलेमें फाँसी डालने लायक एक रस्सी भी न जुटेगी क्या?"

अविनाशने कहा, "जुट सकती है, मगर आत्म हत्या तो पाप है?"

कमलने कहा, "पाप नहीं खाक है। मगर ऐसा होगा नहीं। मैं आत्म हत्या करने जाऊँगी, यह मेरे विधाता भी नहीं सोच सकते।"

आशु बाबू कह उठे, "यह तो मनुष्यकी-सी बात है कमल।"

कमलने उनकी तरफ देखकर शिकायत करनेके ढंगसे कहा, "देखिए तो अविनाश बाबूका अन्याय।" फिर शिवनाथकी तरफ इशारा करके कहा, "ये करेंगे मुझे अस्वीकार, और फिर मैं जाऊँगी गरदन पकड़के इनसे स्वीकार कराने? सत्य तो डूब जायगा, और जिस अनुष्ठानको मानती नहीं, उसीकी रस्सी लेकर इन्हें बाँधना चाहूँगी मैं? मैं करूँगी ऐसा काम?" कहते कहते उसकी दोनों आँखें चमक उठीं।

आशु बाबूने आहिस्तेसे कहा, "शिवानी, संसारमें सत्य ही बड़ा है, इस बातको हम सभी मानते हैं, पर अनुष्ठान भी तो मिथ्या नहीं है?"

कमलने कहा, "मिथ्या तो कह नहीं रही मैं। जैसे कि प्राण भी सत्य है और देह भी है,—लेकिन प्राण जब निकल जाते हैं तब ?"

मनोरमाने पिताका हाथ खींचते हुए कहा, "बापूजी, बहुत ज्यादा ओस पड़ने लगेगी, अब बिना उठे काम नहीं चलेगा।"

"अभी उठा, बिटिया।"

शिवनाथ सहसा खड़ा होकर बोला, "शिवानी, अब और देर मत करो।"

कमल इसी वक्त उठकर खड़ी हो गई और सबको नमस्कार करके बोली, "आप लोगोंसे परिचय हुआ मानो सिर्फ कहक करनेके ही लिए। कुछ खयाल न करें।"

शिवनाथको इतनी देर बाद अब जरा हँसी आई, कहा, "कहक ही सिर्फ की शिवानी, सीखा कुछ भी नहीं ?"

कमलने विस्मयके स्वरमें कहा, "नहीं। मगर सीखनेको था ही क्या, मुझे तो कुछ खयाल नहीं पड़ता।"

शिवनाथने कहा, "खयाल पड़नेकी बात भी नहीं थी, वह ओटका ओटमें ही रह गया। हो सके तो आशु बाबूके जराग्रस्त बूढ़े मनके प्रति जरा श्रद्धा रखना सीखना। उससे बढ़कर सीखनेको और कुछ नहीं है।"

कमलने विस्मयके साथ कहा, "यह तुम कह क्या रहे हो आज ?"

शिवनाथने जवाब नहीं दिया, फिरसे सबको नमस्कार करके कहा, "चलो।"

आशु बाबूने एक गहरी साँस लेकर कहा, "आश्चर्य है !"

७

आश्चर्य तो है ही। इसके सिवा मनकी बात व्यक्त करनेके लिए और था ही कौन-सा था ? वास्तवमें, वे दोनों चले क्या गये एक अति आश्चर्य जनक नाटकके बीचमें ही अकस्मात् यवनिका डाल गये,—परदेके उस पार निरुपायकी न जाने कितनी बातें अज्ञात रह गईं। सभीके मनमें यही एक बात उथल पुथल मचाने लगी और सभीको ऐसा मालूम हुआ मानो इसीलिए वे यहाँ आये थे। आकाशमें चन्द्रमा उदित हुआ है, हेमन्त ऋतुकी ओससे भीगी हुई चाँदनीमें पत्थर राजमहलका सफेद संगमरमर मायापुरीकी भाँति उद्भासित हो उठा है, पर उधर किसीकी दृष्टि भी नहीं है।

मनोरमाने कहा, "अब नहीं उठोगे तो सचमुच तुम्हारी तबीयत खराब हो जायगी बापूजी।"

अविनाशने कहा, "ओस पड रही है, उठिए।"

सबके सब उठके खडे हो गये। फाटकके बाहर आशु बाबूकी बडी मोटर खडी थी, पर अक्षय हरेंद्रके तॉगेवालेका पता नहीं था? शायद इस बीचमें वह ज्यादा किरायेकी सवारी पाकर चम्पत हो गया था। लिहाजा, किसी तरह सट-सटाकर सबको मोटरमें ही बैठना पडा। कुछ देरतक सब चुप रहे, अन्तमें बात की सबसे पहले अविनाशने। वे बोले, "शिवनाथने झूठ कहा था। कमल हरगिज किसी दासीकी लडकी नहीं है। असम्भव है।" कहकर वे मनोरमाके मुँहकी ओर देखने लगे।

मनोरमाके मनमें भी ठीक यही प्रश्न उठ रहा था, पर वह मौन रही। अक्षयने कहा, "झूठ बोलनेका कारण? स्त्रीका यह परिचय तो गौरवका नहीं है अविनाश बाबू!"

अविनाशने कहा, "यही तो सोच रहा हूँ।"

अक्षयने कहा, "आप लोग अचम्भेमें आ गये, पर मैं नहीं आया। यह सब शिवनाथकी प्रतिध्वनि है। इसीसे उसकी बातोंमें 'ब्रैवाडो' (बहादुरीका ढोल) बहुत ज्यादा था, चीज कुछ नहीं थी। असल और नकल जान लेता हूँ। इतना आसान नहीं है मुझे धोखा देना।"

हरेंद्र बोल उठा, "बाप रे! आपको धोखा देना? एकदम मानोपॉली (एकाधिपत्य) पर हस्तक्षेप?"

अक्षयने उसपर एक तीव्र क्रुद्ध दृष्टि डालकर कहा, "मैं दावेके साथ कह सकता हूँ कि उसमें उच्च घरानेका 'कल्चर' (संस्कृति) पाव भर नहीं है। औरतोंके मुँहसे ये सब बातें 'इमॉरल' (अनैतिक) ही नहीं, अश्लील भी हैं।"

अविनाशने प्रतिवादके तौरपर कहा, "यह दूसरी बात है। उसकी सब बातें औरतोंके मुँहसे ठीक शोभन न लगें पर उन्हें अश्लील नहीं कह सकते अक्षय।"

अक्षयने कठोर होकर कहा, "वे दोनों ही एकसे हैं अविनाश बाबू। देखा नहीं, ब्याह इन लोगोंके लिए तमाशेकी चीज बन गई है। जब सबने आकर कहा कि यह ब्याह नहीं है, धोखेबाजी है, तब उन्होंने सिर्फ हँसके कहा, ऐसी बात है क्या? उनका एब्सोल्यूट इण्डिफरेन्स (सम्पूर्ण उपेक्षा भाव) आप लोगोंने

क्या नोटिस नहीं किया? यह क्या कभी कुलीन कन्याके लिए शोभा दे सकता है, या कभी सम्भव हो सकता है?"

बात उसकी सच थी, इसीसे सब चुप रहे। आशु बाबू अबतक कुछ बोले नहीं थे। सब कुछ वे सुन रहे थे, किन्तु थे, अपनी ही उधेड़ बुनमें। सहसा इस स्तब्धतासे उनका ध्यान भंग हुआ। धीरे धीरे बोले, "विवाहके प्रति नहीं बल्कि उसके 'फार्म' (तरीके) पर शायद कमलकी उतनी आस्था नहीं है। अनुष्ठान कुछ भी हो, जो हो गया सो उसके लिए ठीक है। पतिसे कहा, "ये लोग कहते हैं, यह, ब्याह धोखेबाजी है।" पतिने कहा, "विवाह हुआ है हम लोगोंका शैव मतसे।" कमल खुश होकर बोली, "शिवके साथ ब्याह अगर शैव मतसे हुआ हो तो वही अच्छा है।" बात मुझे ऐसी मीठी लगी अविनाश बाबू कि पूछिए नहीं।"

भीतर ही भीतर अविनाशका मन भी इसी स्वरमें बँधा था, वे बोले, "और उसी शिवनाथके मुँहकी तरफ देखकर हँसते हँसते पूछना, 'क्योंजी, करोगे क्या तुम ऐसा? दोगे क्या मुझे धोखा?' उसके बाद तो कितनी ही बातें हो गईं आशु बाबू, लेकिन उसकी गूँज अभीतक मेरे कानोंमें गूँज रही है।"

प्रत्युत्तरमें आशु बाबूने हँसकर सिर हिला दिया।

अविनाशने कहा, "और उसका वह शिवानी नाम? यह क्या कम मीठा है?"

अक्षयसे मानो सहा नहीं गया, वह बोला, "आप लोगोंने तो मुझे दंग कर दिया अविनाश बाबू! उनका जो कुछ है सब मधुर है। यहाँतक कि शिवनाथके नामके साथ एक 'नी' जोड़ देनेसे भी मधु झरने लगा।"

हरेन्द्रने कहा, "सिर्फ 'नी' जोड़ देनेसे ही नहीं होता अक्षय बाबू, आपकी स्त्रीको 'अक्षयनी' कहकर पुकारनेसे ही क्या मधु झरने लगेगा?"

उसकी बात सुनकर सभी हँस पड़े, यहाँतक कि मनोरमाने भी रास्तेकी तरफ मुँह फेरकर हँसी छिपाई।

अक्षय मारे क्रोधके पागल-सा हो उठा। गरजकर बोला "हरेन्द्र बाबू, 'डोण्ट यू गो टू फार' (बहुत ज्यादा मत बनो।) किसी उच्च शीय महिलाके साथ ऐसी स्त्रियोंकी तुलना इशारेमें करनेको भी मैं अत्यन्त अपमानजनक समझता हूँ, सो आपसे स्पष्ट कहे देता हूँ।"

हरेंद्र चुप रहा। बहस करनेका उसका स्वभाव न था और न अपनी युक्तियोंसे प्रमाणित करनेकी ही उसकी आदत थी। बीचमें अचानक कुछ कहकर वह ऐसा नीरव हो जाता कि हजार खोंचनेपर भी कोई उसके मुँहसे एक शब्द भी नहीं निकलवा सकता। हुआ भी ऐसा ही। अजय बचे हुए रास्तेमें शिवानीको छोड़कर हरेंद्रके पीछे पड गया। वह कहता रहा कि उसने शिष्ट महिलाका शिष्टाहीन गन्दा मजाक उडाया है। शिवनाथकी शैवमतसे विवाहिता स्त्रीकी बातमें और व्यवहारमें आभिजात्यकी बू तक नहीं, बल्कि उसकी शिक्षा और संस्कारसे जघन्य हीनताका ही परिचय मिलता है,—आदि बातोंको वह अत्यन्त अप्रिय तरीकेसे बार-बार प्रमाणित करने लगा। इतनेमें गाडी आशु बाबूके दरवाजेपर आकर खडी हो गई, फिर अविनाश तथा और सबोंको उतारकर हरेंद्र अजय आदिको पहुँचाने चली गई।

आशु बाबू उद्विग्न होकर बोले, "गाडीमें दोनोंके दोनों कहीं मार-पीट न कर बैठें।"

अविनाशने कहा, "इसका कोई डर नहीं। यह तो रोजमराकी बात है, और इससे उनकी मित्रतामें कोई फर्क नहीं आता।"

भीतर जाकर चाय पीने बैठे तो आशु बाबूने धीरेसे कहा, "अजय बाबूकी प्रकृति बडी कठोर है। इससे बढकर कठोर बात उनकी जबानपर और क्या आती?" सहसा लडकीकी ओर देखकर बोले, "अच्छा मणि, कमलके सम्बन्धमें तुम्हारी पहलेकी धारणा क्या आज भी नहीं बदली?"

"कैसी धारणा बापूजी?"

"यही, जैसे,—जैसे—"

"मगर मेरी धारणासे तुम लोगोंको क्या काम बापूजी?"

पिताने फिर कुछ नहीं कहा। वे जानते थे कि इस स्त्रीके सम्बन्धमें मनोरमाका चित्त अत्यन्त विमुख है। यह बात उन्हें पीडा पहुचाती है, पर इस बातको लेकर नई तरहसे आलोचना करने बैठना उनके लिए जिस तरह अप्रिय है, वैसे ही निष्फल भी है।

अकस्मात् अविनाश बोल उठे, "मगर एक विषयपर आप लोगोंने शायद ध्यान नहीं दिया। वह है शिवनाथके अन्तिम शब्द। कमलका सब कुछ ही अगर दूसरेकी प्रतिध्वनि मात्र होता तो यह बात शिवनाथको कहनेकी जरूरत

नहीं पड़ती कि वह आपपर श्रद्धा रखना सीखे।" इतना कहकर उसने खुद भी गम्भीर श्रद्धाके साथ आशु बाबूके मुँहकी तरफ देखकर कहा, "कहनेम क्या हर्ज है, वास्तवमें आप जैसे भक्तिके पात्र संसारमें हैं कितने? सिर्फ इसीके लिए मैं उसके अनेक अपराध क्षमा कर सकता हूँ आशु बाबू, कि इतने-से मामूली परिचयमें शिवनाथने इतने बड़े सत्यको हृदयंगम कर लिया।"

सुनकर आशु बाबू चंचल हो उठे। उनका विपुल कलेवर लज्जासे मानो संकुचित हो गया। मनोरमाने कृतज्ञतासे दोनों आँखें भरकर कमलके मुँहकी तरफ मुँह उठाकर देखा और कहा, "अविनाश बाबू, यहींपर उनके साथ उनकी स्त्रीका सचमुच भेद है। आज मैं जान गई कि उस दिन धोती और साबुन माँगनेके बहाने वह मेरा सिर्फ उपहास ही कर गई थी। उस दिनका उसका अभिनय मैं समझ नहीं सकी थी।—पर उसका यह सब छल-छन्द, सब व्यर्थ व्यर्थ है बापूजी, अगर तुम्हें वह आज सबसे बड़ा आकर न पहचान सकी हो।"

आशु बाबू व्याकुल हो उठे, "तू यह सब क्या कह रही है बेटी!"

अविनाशने कहा, "अतिशयोक्ति तो इसमें कहीं भी नहीं आशु बाबू। जाते वक्त शिवनाथने यही बात अपनी स्त्रीसे कहनेकी कोशिश की थी। आज उसने बात नहीं की, पर उसकी इस एक ही बातसे मुझे मालूम हो गया है कि उन दोनोंमें परस्पर यहीं सबसे बड़ा मतभेद है।"

आशु बाबूने कहा, "ऐसा अगर हो तो शिवनाथका ही दोष है, कमलका नहीं।"

मनोरमा सहसा बोल उठी, "यह तो तुम्हीं जानो बापूजी, कि तुमने किन आँखोंसे उसे देखा है, मगर तुम जैसे मनुष्यकी जो श्रद्धा नहीं कर सकती उसे क्या कभी क्षमा किया जा सकता है!"

आशु बाबूने लड़कीके चेहरेकी तरफ देखकर कहा, "क्यों बेटी! मुझपर अश्रद्धा करनेका भाव तो उसके एक भी आचरणसे जाहिर नहीं हुआ।"

"पर श्रद्धा तो नहीं दिखाई दी!"

आशु बाबूने कहा, "दिखाई देनेकी कोई बात भी नहीं थी बेटी। बल्कि दिखाई देती तो उसका वह मिथ्याचार होता। मेरे अन्दर जिस चीजको तुम लोग शक्तिकी प्रबलता समझकर मुग्ध होते हो, उसकी नजरमें वह खालिस शक्तिकी कमी है। यही बात उसने मुझसे कही है कि कमजोर आदमीको स्नेहके

सहारे प्यार किया जा सकता है,—परन्तु मेरा जो मूल्य उसकी दृष्टिमें नहीं है, जबरदस्ती उसे देकर उसने मुझे भी नीचे नहीं गिराया और न अपना ही अपमान किया। यही तो ठीक है, इसमें व्यथित होनेकी तो कोई बात ही नहीं मणि।"

अबतक अजित अन्यमनस्क-सा था, इस बातपर उसने इधर देखा। वह कुछ भी जानता नहीं था और जान लेनेकी फुरसत भी उसे नहीं मिली थी। सारी बातें उसके लिए धुँधली-सी थीं,—अब आशु बाबूने जो कुछ कहा, उससे भी कुछ स्पष्ट नहीं हुआ, फिर भी उसका मन मानो जाग उठा।

मनोरमा चुप रही, किन्तु अविनाश बाबू उत्तेजनाके साथ पूछ उठे, "तो क्या फिर स्वार्थत्यागका कोई मूल्य ही नहीं!"

आशु बाबू हँस दिये, बोले, "प्रश्न ठीक प्रोफेसरों जैसा नहीं हुआ। जो भी हो,—उसके लिए उसका मूल्य नहीं है।"

"तो फिर आत्म संयमकी भी कोई कीमत नहीं!"

"उसकी दृष्टिमें नहीं है। संयम जहाँ अर्थहीन है वहाँ सिर्फ निष्फल आत्म पीड़न है। और उसीको लेकर अपनेको बड़ा मानना सिर्फ अपनको ठगना नहीं, बल्कि दुनियाको ठगना है। कमलके मुँहसे जो कुछ सुना उससे मुझे लगा कि वह इसी बातको बार बार कहना चाहती है।" इतना कहकर वे क्षण भर मौन रहे, फिर बोले, "मालूम नहीं उसे कहाँसे यह धारणा मिली पर सहसा सुननेसे बड़ा आश्चर्य होता है।"

मनोरमा बोल उठी, "केवल आश्चर्य होता है! सारे शरीरमें जलन नहीं होने लगती? बापूजी, क्या कभी कोई भी बात तुम जोरके साथ नहीं कह सकोगे? जो जिधर मनमें आयेगा, कहेगा और तुम उसपर हाँ कह दोगे?"

आशु बाबूने कहा, "हाँ तो नहीं कहा बेटी। लेकिन मनमें राग द्वेष भरकर विचार करनेसे सिर्फ एक ही नहीं ठगाया जाता, दूसरा पक्ष भी ठगाया जाता है। जो बातें हम कमलके मुँहमें ठूँस देना चाहते है, ठीक वे ही बातें उसने नहीं कहीं। उसने जो कुछ कहा उसका निष्कर्ष शायद यही है कि इन लम्बे संस्कारोंमें सत्य समझकर जिस तत्त्वको हमने अपने खूनके अन्दर प्राप्त किया है, वह प्रश्नका सिर्फ एक ही पहलू है। मगर उसका दूसरा पहलू भी है। आँख मीचकर सिर्फ सिर हिला देनेसे ही कैसे चल सकता है मणि?"

मनोरमाने कहा. "बापूजी, इतना काल बीत गया, भारतवर्षमें क्या उस

पहचाननेवाला दूसरा कोई हुआ ही नहीं ?"

उनके पिता जरा हँसकर बोले, "यह अत्यन्त मामूली बात है बेटी। नहीं तो तुम खुद भी अच्छी तरह जानती हो कि सिर्फ एक हमारे देशने ही नहीं, दुनियाके किसी भी देशने पुरखा, 'शेष प्रश्न' का जवाब नहीं दे गये हैं। दे गये हों ऐसा हो भी नहीं सकता क्योंकि तब तो फिर सृष्टि ही रुक जाती। इसके चलनेका कोई अर्थ ही नहीं रह जाता।"

सहसा उन्होंने देखा, अजित एकटक देख रहा है। बोले, तुम शायद कुछ भी समझ नहीं रहे हो,—क्यों ?"

अजितके गरदन हिलानेपर आशु बाबूने घटनाका पूर्वापर समझाकर कहा, "अक्षयने न जाने कैसी एक होमकुण्डकी-सी पवित्र आग जला दी कि लोग उसकी तरफ देखना तो दूर रहा धुएँके मारे आँखतक नहीं खोल सके। और मजा यह कि हम लोगोंका मामला है शिवनाथके विरुद्ध, और दण्ड दिया गया है कमलको। वे थे यहाँके एक प्रोफेसर, शराब पीनेके अपराधमें उनकी नौकरी गई, रुग्ण स्त्रीको त्यागकर घर ले आये कमलको। बोले 'विवाह हुआ है शैव मतसे।' अक्षय बाबूने भीतर ही भीतर पता लगाकर जाना कि सब धोखा है। पूछा गया, 'लड़की क्या कुलीन घरानेकी है ?' शिवनाथने कहा, 'यह उनके घरकी दासीकी कन्या है।' पूछा गया, 'लड़की क्या शिक्षित है ?' शिवनाथने जवाब दिया, 'शिक्षाके लिए विवाह नहीं किया, किया है रूपके लिए।' बात सुनी। कमलका अपराध मुझे कहीं ढूँढ़े नहीं मिला अजित, और फिर उसीको हम लोगोंने सब संसर्गोंसे दूर कर दिया। हम लोगोंकी घृणा जाकर पड़ी सबसे बढ़कर उसीपर। और यही हुआ समाजका न्याय।"

मनोरमाने कहा, "उसे क्या समाजके अन्दर बुला लेना चाहते हो बापूजी ?"

आशु बाबूने कहा, "मेरे ही चाहनेसे आ जायगी क्या बेटी ? समाजमें अक्षय बाबू भी तो मौजूद हैं,—उनका पक्ष तो प्रबल है।"

लड़कीने पूछा, 'तुम अकेले होते तो बुला लेते शायद ?"

पिताने इसका स्पष्ट जवाब नहीं दिया, बोले, "बुलानेसे ही क्या सब आ जाया करते हैं बेटी !"

अजितने कहा, "आश्चर्य तो यह है कि आपके साथ ही उनका सबसे ज्यादा विरोध है, और मजा यह कि आपका स्नेह उन्हें सबसे ज्यादा मिला है।"

अविनाशने कहा, "इसका कारण है अजित बाबू। कमलके बारेमें हम लोग कुछ जानते नहीं, जानते हैं तो सिर्फ उसके विद्रोही मतको! और जानते हैं उसके अस्पष्ट बुरादेके पहलूको। इसीसे उसकी बात सुननेसे हम डर भी लगता है और गुस्सा भी आता है कि अब गया शायद सब-कुछ!"

फिर आशु बाबूको उद्देश करके कहने लगे, "इनका शरीर निष्पाप है, मन निष्कलुष है, सन्देहकी छायातक इसपर नहीं पडती, न भयका दाग ही लगता है। महादेवके लिए चाहे विष हो चाहे अमृत, एक ही बात है,—गलेमें ही हिलगा रहेगा, पेटमें नहीं जायगा। चाहे देवताओंका दल आ जाय और चाहे दैत्य दानव आकर घेर लें, ये निर्लिप्त निर्विकार चित्त रहेंगे,—सिर्फ गठियाके पजेसे बचे रहें तो ये खुश हैं। मगर हम लोगोंको तो—"

बात पूरी न हो पाई कि अचानक आशु बाबूने दोनों हाथ उठाकर उन्हें रोक दिया, बोले, "आगे अब और कुछ न कहिएगा, आपके पैरों पडता हूँ। लगातार एक युगका युग विलायतमें बिता आया हूँ, वहाँ क्या किया है क्या नहीं, सो खुद मुझे भी याद नहीं,—पर यह बात अक्षयके कानोंतक पहुँच गई तो खैर नहीं। एकदम नाडी-नक्षत्रतक ढूँढकर निकाल लायेगा। तब क्या होगा?"

अविनाशने आश्चर्यके साथ कहा, "आप क्या विलायत भी गये थे?"

आशु बाबूने कहा, "हाँ, यह कुकर्म भी मुझसे हो चुका है।"

मनोरमाने कहा, "बचपनसे ही बापूजीका सारा एजुकेशन योरोपमें हुआ है। बापूजी बैरिस्टर हैं, बापूजी डॉक्टर हैं।"

अविनाशने कहा, "कहती क्या हो?"

आशु बाबू उसी तरह कह उठे, "डरनेकी कोई बात नहीं, डरनेकी कोई बात नहीं प्रोफेसर, लिखा पढा सब भूल गया हूँ। दीर्घकालसे यायावर वृत्ति[१] अवलम्बन करके लडकीके साथ जहाँ तहाँ लोटा डोर लिये घूमा किया है, और जैसा कि आपने कहा, सारा चित्त-पट बिल्कुल धुल पुछकर निष्पाप निष्कलुष हो गया है, धब्बा-अब्बा कहीं कुछ भी बाकी नहीं है। खैर, जो भी हो, इस बातको अक्षय बाबूके कर्णगोचर न कीजिएगा।"

---

१ वह भ्रमणवृत्ति जिसमें घर बार साथ रहता है Nomad = बनजारा या तद्रूप भ्रमणकारी।

अविनाशने हँसते हुए कहा, "अ इससे आपको बड़ा डर है ?"

आशु बाबूने उसी वक्त स्वीकार किया, "हॉ। एक तो गठियाके मारे यों ही जीना कठिन है, उसपर उनका कहीं कुतूहल जाग्रत हो गया तो बिल्कुल ही मारा जाऊँगा।"

मनोरमा गुस्सेमें भी हँस दी, बोली, "बापूजी, यह तुम्हारा अन्याय है।"

बापूजीने कहा, "अन्याय भले ही हो बेटी, पर आत्म रक्षाका सभीको अधिकार है।"

सुनकर सबके सब हँस पड़े। मनोरमाने पूछा, "अच्छा बापूजी, मनुष्य समाजमें क्या अजय बाबू जैसे आदमीकी तुम जरूरत ही नहीं समझते ?"

आशु बाबूने कहा, "तुम्हारा यह 'जरूरत' शब्द तो बेटी संसारमें सबसे ज्यादा गुलझेकी चीज है। पहले इसकी मीमांसा हो जाय, तब तुम्हारे प्रश्नका यथार्थ उत्तर दिया जाय। मगर यह तो कभी होनेका नहीं। हमेशासे इसको लेकर तक चलता आ रहा है, मीमांसा अबतक हुई ही नहीं।"

मनोरमा क्षुण्ण होकर बोली, "तुम सब बातोंके जवाबमें ऐसे ही बचकर निकल जाते हो बापूजी, कभी साफ-साफ कुछ कहते ही नहीं। यह तुम्हारा बड़ा अन्याय है।"

आशु बाबू हँसते हँसते बोले, "साफ कहने लायक विद्या बुद्धि तेरे बापूमें नहीं है, मणि,—यह तेरी तकदीर है। अब सामका मेरे ऊपर गुस्सा करनेसे क्या लाभ है, बता ?"

अजित अचानक उठ खड़ा हुआ, बोला, "सिरमें दर्द हो रहा है, जरा बाहर घूम आऊँ।"

आशु बाबू चंचल होकर बोल उठे, "सिरका इसमें कोई अपराध नहीं बेटा,—मगर इतनी ओसमें ? ऐसे अँधेरेमें ?"

दक्षिणकी एक खुली खिड़कीसे बहुत सी स्निग्ध ज्योत्स्ना आकर कार्पेटपर बिखर रही थी, अजितने उसकी ओर उनका ध्यान आकर्षित करते हुए कहा, "ओस शायद थोड़ी बहुत पड़ती होगी, पर अँधेरा नहीं है। जाऊँ, जरा घूम आऊँ।"

"पर पैदल मत घूमना।"

"नहीं। गाड़ीमें ही जाऊँगा।"

"गाड़ीका ढकना चढ़ा देना अजित, कहीं ओस न लग जाय।"

अजित उधर राजी हो गया। आशु बाबूने कहा, "तो फिर अविनाश बाबूको भी उधरके उधर पहुँचाते जाना। लेकिन लौटनेमें देर न हो।"

"अच्छा", कहकर अजित अविनाश बाबूको साथ लेकर बाहर चला गया। उसके चले जानेपर आशु बाबूने मुसकराते हुए कहा, "देखता हूँ, इस लड़केकी मोटरमें घूमनेकी सनक अभी गई नहीं है। ऐसी ठण्डमें चल दिया घूमनेको।"



पन्द्रेह दिन बादकी बात है। शाम होनेमें देर नहीं है, आशु बाबू और मनोरमाको अविनाश बाबूके घर उतारकर अजित अकेला घूमने निकला है। ऐसा वह अक्सर किया करता है। जो सड़क शहरके उत्तरसे आकर कॉलेजके सामनेसे कुछ दूर जाके सीधी पश्चिमकी ओर चली गई है, उसीपर एक निराली जगहमें सहसा उच्च नारी कण्ठसे अपना नाम सुनकर अजित चौंक पड़ा। गाड़ी रोक दी। देखा, शिवनाथकी स्त्री है। सड़कके किनारे टूटा फूटा पुराने जमानेका एक दुमंजिला मकान है, सामने उसके वैसा ही श्रीहीन फूलोंका बगीचा है और उसीके एक किनारे खड़ी कमल हाथ उठाकर उसे पुकार रही है। मोटर ठहरने पर वह उसके पास आ गई, बोली, "एक दिन और भी आप ऐसे ही अकेले जा रहे थे, मैंने कितना पुकारा, पर आप सुन ही नहीं पाये। पायेंगे कैसे ? बाप रे बाप ! इतने जोरसे जाते हैं,—देखनेसे मालूम होता है जैसे दम रुक जायगा। आपको डर नहीं लगता ?"

अजित गाड़ीसे नीचे उतर आया, बोला, "आप अकेली कैसे ? शिवनाथ बाबू कहाँ हैं ?"

कमलने कहा, "वे घरपर नहीं हैं। पर आप भी अकेले कैसे निकले ? उस दिन भी देखा था, साथमें कोई नहीं था।"

अजितने कहा, "नहीं। इधर कई दिनोंसे आशु बाबूकी तबीयत ठीक नहीं थी, इसीसे वे कोई निकले नहीं। आज उन लोगोंको अविनाश बाबूके यहाँ उतारकर मैं घूमने निकला हूँ। शामको तो मुझे घरमें रहना अच्छा नहीं लगता।"

कमलने कहा, "मेरा भी यही हाल है। मगर 'अच्छा नहीं लगता,' कहनेसे ही तो नहीं चलता,—गरीबोंको तो बहुत कुछ 'अच्छा लगाना' पड़ता है।" कहकर वह अजितके मुँहकी तरफ देखने लगी, फिर सहसा बोल उठी, "ले

चलिएगा मुझे साथमें ? जरा घूम आऊँगी।"

अजित मुसीबतमें पड़ गया। साथम आज दोपहरतक नहीं था और यह वह पहले ही सुन चुका था कि शिवनाथ बाबू भी घरपर नहीं हैं, मगर 'ना' भी कहते नहीं बनता। जरा कुछ दुविधाके साथ बोला, "यहाँ आपका साथी सगी भी शायद कोई नहीं है?"

कमलने कहा, "सुनो इनकी बात! साथी-सगी कहाँ पाऊँ? देख नहीं रहे हैं मुहल्लेकी दशा। यह स्थान शहरसे बिल्कुल बाहर ही समझिए। पास ही शाहगजर्म, या कुछ ऐसा ही नाम है, वहीं चमड़ेका कारखाना है,—हमारे पड़ोसी सब मोची ही मोची हैं। कारखाने जाते हैं, आते हैं, शराब पीते हैं और सारी रात हल्ला मचाते हैं,—यही मेरा मुहल्ला है।"

अजितने पूछा, "इधर शरीफ लोग हैं ही नहीं क्या?"

कमलने कहा, "शायद नहीं हैं। और हों तो क्या,—मुझे वे अपने घर क्यों जाने आने देंगे? तब तो कभी कभी जब बहुत सूना सूना-सा मालूम होता था आप लोगोंके यहाँ भी चली जा सकती थी।"—कहते-कहते वह गाड़ीके खुले दरवाजेसे खुद ही भीतर जाकर बैठ गई और बोली, "आइए, मैं बहुत दिनोंसे मोटरपर नहीं चढ़ी। लेकिन आज मुझे बहुत दूरतक घुमा लाना होगा।"

अजितको कुछ सूझा नहीं कि क्या करना चाहिए। सकोचके साथ बोला, "ज्यादा दूर जानेसे रात बहुत हो जायगी। शिवनाथ बाबू घर लौटकर आपको न देखेंगे तो शायद कुछ खयाल करेंगे।"

कमलने कहा, "नहीं, खयाल करनेकी कोई बात ही नहीं।"

अजितने कहा, "ड्राइवरके पास न बैठकर पीछे बैठिए न?"

कमलने कहा, "ड्राइवर तो आप खुद ही हैं। पास बिना बैठे बात कैसे करूँगी? इतनी दूर पीछे बैठकर मुँह बन्द करके कहीं जाया जाता है? आप बैठिए, अब देर न कीजिए।"

अजित बैठ गया और गाड़ी चलाने लगा। रास्ता सुन्दर और निर्जन है, कदाचित् एक आध आदमी दिखाई दे जाता है,—बस। गाड़ीकी तेज चाल क्रमशः और तेज होने लगी। कमलने कहा, "आप तेज चलाना पसन्द करते हैं, न?"

अजितने कहा, "हाँ।"

अजितने कहा, "तब फिर ?"

कमलने कहा, "तब भी उससे यह साबित नहीं होता कि जो आनन्द आज मिला है वह नहीं मिला।"

अबकी बार अजित हँस दिया। बोला, "साबित नहीं होता, मगर यह साबित जरूर होता है कि आप कम तार्किक नहीं हैं। आपके साथ बातोंमें जीतना मुश्किल है।"

"अर्थात् जिसको कि कुट-तार्किक कहते हैं, मैं वही हूँ ?"

अजितने कहा, "नहीं, सो बात नहीं, किन्तु यह तो आप जरूर ही मानती होंगी कि अन्तिम फल जिसका दुःखमें ही समाप्त होता है, उसके आरम्भमें चाहे जितना ही आनन्द क्यों न हो, उसे सचमुचका आनन्द भाग नहीं कहा जा सकता ?"

कमलने कहा, "नहीं, मैं नहीं मानती। मैं मानना चाहती हूँ कि जब जितना पाऊँ उसीको सच्चा समझकर मान सकूँ। दुःखका दाह मेरे बीते हुए सुखकी ओसकी बूँदोंको सुखा न डाले। वह चाहे कितना भी क्यों न हो और परिणाम उसका संसारकी दृष्टिमें चाहे कितना ही तुच्छ क्यों न गिना जाय, फिर भी मैं उसे अस्वीकार न करूँ। एक दिनका आनन्द दूसरे दिनके निरानन्दके सामने हार माने नहीं।" इतना कहकर वह क्षण भर स्तब्ध रही, फिर कहने लगी, "इस जीवनमें सुख दुःख दोनोंमेंसे कोई भी सत्य नहीं अजित बाबू, सत्य है सिर्फ उनके चंचल क्षण, सत्य है सिर्फ उनके चले जानेका छन्द मात्र। बुद्धि और हृदयसे उनको पाना ही तो यथार्थका पाना है। क्या यही ठीक नहीं है ?"

इस प्रश्नका उत्तर अजित न दे सका, किन्तु उसे लगा कि अन्धकारमें भी दूसरेकी दोनों आँखें अत्यन्त आग्रहके साथ उसकी तरफ देख रही हैं। मानो वह निश्चित कोई बात सुनना चाहती है।

"क्यों, जवाब नहीं दिया ?"

"आपकी बातें खूब साफ समझमें नहीं आई।"

"नहीं आई ?"

"नहीं।"

उसने एक दबी साँस ली, और फिर धीरे धीरे कहा, "इसके मानी यह कि साफ-साफ समझनेका अभी आपका समय नहीं आया। अगर कभी आये तो

उस समय मेरी याद कर लीजिएगा। करेंगे?"

अजितने कहा, "करूँगा।"

गाड़ी आकर टूटे फूटे फुल-बागके सामने खड़ी हो गई। अजित दरवाजा खोलकर खुद सड़कपर खड़ा हो गया। घरकी तरफ देखकर बोला, "कहीं भी जरा उजाला नहीं मालूम होता। मालूम होता है, सब सो गये।"

कमलने उतरते हुए कहा, "शायद।"

अजितने कहा, "देखिए, आपकी ज्यादती है न! किसीको बता भी नहीं आई,—शिवनाथ बाबू न जाने कितनी दुश्चिन्तामें पड़े होंगे।

कमलने कहा, "हाँ, वे दुश्चिन्ताके बोझसे सो गये हैं।"

अजितने कहा, "ऐसे अँधेरेमें जायँगी कैसे? गाड़ीमें एक हाथ लालटेन है, उसे जलाकर साथ चलूँ?"

कमलने अत्यन्त खुश होकर कहा, "तब तो फिर कहना ही क्या है अजित बाबू। आइए-आइए। आपको जरा चाय पिला दूँ।"

अजितने अनुनयके स्वरमें कहा, "और जो भी हुक्म करेंगी, तामील करूँगा, मगर इतनी रातमें चाय पीनेकी आज्ञा न कीजिए। चलिए, आपको पहुँचाए आता हूँ।"

बाहरका दरवाजा हाथ लगाते ही खुल गया। भीतरके बरामदेमें वहाँकी एक दासी सो रही थी, वह आहट पा जागकर बैठ गई। दोमंजिला मकान है। ऊपर छोटे-छोटे दो कमरे हैं। अत्यन्त संकीर्ण जीना है, उसके नीचे हरीकेन लालटेन टिमटिमा रही है। उसे हाथमें उठाकर कमलने अजितको ऊपर बुलाया। वह मारे सकोचके व्याकुल होकर बोला, "नहीं नहीं, अब जाता हूँ। बहुत रात हो गई है।"

कमल जिद करने लगी, "सो नहीं होनेका, आइए।"

अजित फिर भी दुविधा कर रहा है, देखकर कमलने कहा, "आप सोच रहे हैं, आनेसे शिवनाथ बाबूके सामने बड़ी शरमकी बात होगी। मगर यह क्यों नहीं सोचते कि नहीं आनेसे मेरे लिए तो और भी ज्यादा लज्जाकी बात होगी? आइए। नीचेसे ही इस तरह अनादरके साथ आपको जाने देनेसे रातको मुझे नींद न आयेगी।"

अजितने ऊपर आकर देखा कि घरमें चीज वस्त नहींके बराबर है। एक कम

कीमतकी आराम कुरसी, एक छोटी-सी टेबिल, एक स्टूल, कई ट्रक, एक किनारे पुरानी लोहेकी खाट और उसपर बिस्तर तकियोंका ढेर पड़ा हुआ है। ये ऐसे बेढंगे तौरपर रखे हैं, जैसे साधारणतः उन सबकी कोई जरूरत ही नहीं पड़ती। घर सूना है, शिवनाथ बाबू नहीं हैं।

अजितको आश्चर्य हुआ, किन्तु मन ही मन उसने सन्तोषकी साँस ली, बोला, "कहाँ, वे तो अभीतक आये नहीं हैं।"

कमलने कहा, "नहीं।"

अजितने कहा, "आज शायद हम लोगोंके यहाँ उनका गाना-बजाना खूब जोरमें चल रहा होगा।"

"कैसे जाना?"

"कल परसों दो दिन गये नहीं हैं। आज उन्हें पाकर आशु बाबू शायद सारी क्षति पूर्ति कराये ले रहे हैं।"

कमलने पूछा, "रोज जाते हैं, इधर दो दिनसे क्यों नहीं?"

अजितने कहा, "इसकी खबर हम लोगोंसे आपको ही ज्यादा होगी। सम्भवतः आपको छोड़ा नहीं होगा, इसीसे नहीं जा पाये होंगे। नहीं तो उन्हें देखनेसे ऐसा तो नहीं मालूम होता कि अपनी इच्छासे गैरहाजिर हुए हों।"

कमल कुछ क्षण उसके चेहरेकी तरफ देखकर अकस्मात् हँस दी। बोली, "यह किसे मालूम कि वे वहाँ जाते हैं गानेके लिए। वास्तवमें किसी आदमीको पकड़कर रखना बड़ा अन्याय है। है न?"

अजितने कहा, "जरूर।"

कमलने कहा, "वे भले आदमी हैं, इसीसे। अच्छा, आपको अगर कोई पकड़के रखता, तो आप रहते?"

अजितने कहा, "नहीं। इसके सिवा मुझे पकड़के रखनेवाला भी तो नहीं है?"

कमल हँसती हुई दो तीन बार सिर हिलाकर बोली, "यही तो मुश्किल है। पकड़के रखनेवाला कौन कहाँ छिपा रहता है, जाननेका उपाय ही नहीं। यही देखिए न, मैंने जो शामसे आपको पकड़ रक्खा है, इसकी आपको खबर ही नहीं। खैर रहने दीजिए, सभी बातोंपर तर्क करनेमें लाभ क्या होगा? मगर बातों ही-बातोंमें देर हुई जा रही है। जाऊँ मैं, उस कमरेमेंसे आपके लिए चाय

बना लाऊँ ?"

"और यहाँ मैं अकेला चुप मार बैठा रहूँ ? सो नहीं होनेका।"

"होनेकी जरूरत भी क्या है ?" इतना कहकर कमल उसे अपने साथ दूसरे कमरेमें ले गई और उसके बैठनेके लिए नया आसन बिछाकर बोली, 'बैठिए। पर विचित्र है इस दुनियाकी बात, अजित बाबू। उस दिन इस आसनको अपनी पसन्दसे खरीदते वक्त सोचा था कि इसे बिछाकर किसीसे बैठनेके लिए कहूँगी— लेकिन वह बात तो और किसीसे कही नहीं जा सकी अजित बाबू, फिर भी आपको बैठनेके लिए बिछा ही दिया। भला बतलाइए, कितने से समयका अन्तर है यह !"

इसके मानी क्या हुए, सोचना बड़ा मुश्किल है। हो सकता है कि बहुत ही आसान हो, और यह भी सम्भव है कि उससे भी ज्यादा दुरूह हो। फिर भी, अजित मारे शरमके सुर्ख हो उठा। कहनेमें हिचकिचाया, मगर फिर भी बोला, "उन्हें बैठनेको दिया क्यों नहीं ?"

कमलने कहा, "यही तो आदमीकी जबरदस्त भूल है। सोचता है, सब कुछ उसीके अपने हाथमें है, लेकिन कहाँ बैठा हुआ कौन सारा हिसाब किताब उलट-पलट देता है, कोई पता ही नहीं। आपकी चायमें क्या चीनी ज्यादा डालूँ ?"

अजितने कहा, "डाल दीजिए। चीनी और दूधके लोभसे ही तो मैं चाय पीता हूँ, वरना तो उसमें मुझे कोई दिलचस्पी नहीं।"

कमलने कहा, "मैं भी ऐसी ही हूँ। क्यों लोग यह पिया करते हैं, मेरी तो कुछ समझमें ही नहीं आता। और मजा यह कि इसीके देशमें मेरा जन्म है।"

"आपकी जन्म-भूमि क्या आसाममें है ?"

"सिर्फ आसाममें ही नहीं, एकदम चायके बागीचेमें।"

"तो भी चायसे रुचि नहीं ?"

"बिल्कुल नहीं। लोग दे देते हैं तो पी लेती हूँ, सिर्फ शराफतके खातिर।"

अजित चायका प्याला हाथमें ले चारों तरफ देखकर बोला, "यह शायद आपका ड्राइंगरूम है ?"

कमलने कहा "हाँ।"

अजितने पूछा, "आप खुद ही बनाती होंगी ? मगर कहाँ, आज तो बनाने

खा कर नहीं मिला ?"

कमलने कहा, "नहीं।"

अजित जरा झाँकने लगा। कमल उसके मुँहकी ओर देखकर हँसता हुई बोली, "अब पूछिए कि तब आप खायेंगी क्या ? उसके जवाबमें मैं कहूँगी, रातको मैं खाती ही नहीं। दिनमें सिर्फ एक ही बार खाती हूँ।"

"सिर्फ एक ही बार ?"

कमलने कहा, "हाँ। मगर इसके बाद ही आपको खयाल होना चाहिए कि 'तो फिर शिवनाथ बाबू घर आकर क्या खायेंगे ? उनका तो बाद एक आध बार खानेसे काम नहीं ! तब फिर ?' इसके उत्तरमें कहूँगी कि 'वे तो आप ही लोगोंके यहाँ खा पी आते हैं,—उन्हें क्या फिकर है ?' आप कहेंगे, 'सो तो ठीक है, मगर रोज तो ऐसा नहीं होता ?' सुनकर मैं सोचूँगी, 'इस बातका जवाब दूसरोंको देनेसे लाभ ही क्या ?' पर इससे आपको सन्तुष्ट नहीं किया जा सकता। तब मजबूर होकर कहना ही पड़ेगा, अजित बाबू, आप लोगोंके लिए डरनेकी कोई बात नहीं। वे यहाँ अब नहीं आते। शैव विवाहकी गिरानीका मोह शायद अब दूर हो चुका है।"

अजित बालककी तरह इस बातका मानी नहीं समझ सका। गम्भीर विस्मयके साथ उसके मुँहकी तरफ देखकर पूछने लगा, 'इसके मानी ? आप क्या गुस्सेमें कह रही हैं ?"

कमलने कहा, "नहीं, गुस्सेमें नहीं। गुस्सा करने लायक शायद अब मुझमें जोर भी नहीं रहा। मैं समझती थी, पत्थर खरीदनेके लिए वे जयपुर गये हैं, आपसे ही पहले पहल यह खबर मिली कि वे आगरा छोड़कर अबतक कहीं नहीं गये हैं। चलिए, उस कमरेमें चलकर बैठें।"

उस कमरेमें आकर कमलने कहा, "यही हम लोगोंका सोनेका कमरा है। तब भी इससे ज्यादा एक भी चीज यहाँ नहीं थी,—आज भी नहीं है। किन्तु उस दिन इन सब चीजोंका चेहरा देखते तो आज मुझे कहना भी नहीं पड़ता कि मैं गुस्सा नहीं हुई। लेकिन आपको तो बहुत ज्यादा रात हो रही है अजित बाबू, अब तो देर करनेसे काम नहीं चलेगा।"

अजित उठकर खड़ा हो गया, बोला, "हाँ, तो फिर आज चलता हूँ मैं।"

कमल साथ-साथ उठ खड़ी हुई।

अजितने कहा, "अगर आज्ञा हो तो कल आऊँ ?"

"हाँ, आइएगा।" कहती हुई वह पीछे पीछे नीचे उतर आई।

अजित कुछ देरतक बगलें झाँककर बोला, "अगर कुछ कसूर न समझें तो एक बात पूछूँ, शिवनाथ बाबू कितने दिन हुए यहाँ आये ?"

"हो गये बहुत दिन।" कहती हुई वह हँस दी। अजितको लालटेनके उजालेमें स्पष्ट दिखाई दिया कि इस हँसीकी जात ही न्यारी है। उसके पहलेकी हँसीसे इसका कहीं भी कोई सादृश्य नहीं।

९

अजित जब घर लौटा तब रात गहरी हो गई थी। सड़क सुनसान थी, सन्नाटा छाया हुआ था, दुकानें सब बन्द हो चुकी थीं,—आदमियोंका कहीं नाम निशानतक न था। घड़ी खोलकर देखा तो मालूम हुआ कि वह चाबीके अभावमें आठ ही बजे बन्द हो चुकी है। अभी शायद एक बजा होगा, या दो बजे होंगे,—ठीक कितने बजे हैं, कुछ अन्दाज नहीं कर सका। यह निश्चित है कि आशु बाबूके घर अबतक सब अत्यन्त चिन्तित हो रहे होंगे, सोनेकी बात तो दूर रही, खाना पीनातक शायद बन्द होगा। घर पहुँचकर वह क्या कहेगा, कुछ सोच न सका। सच कहना तो कहा नहीं जा सकता यह तब स्पष्ट है कि क्या नहीं कहा जा सकता।—यदि झूठ कहा जा सकता है, मगर, झूठ बोलनेकी उसे आदत नहीं थी। नहीं तो मोटरमें अकेले निकलकर देर होनेका कारण ढूँढ निकालनेमें इतनी चिन्ता नहीं करनी पड़ती।

गेट खुला था। दरबानने सलाम करके कहा कि शोफर नहीं है, वह आपको ढूँढ़ने गया है। गाड़ी अस्तबलमें रखकर अजित आशु बाबूकी बैठकमें गये। तुरत ही देखा कि वे अभीतक सोने नहीं गये हैं, अत्यन्त उदास लिये अकेले बैठे उसकी बाट देख रहे हैं। वे उद्वेगसे सीधे होकर बैठ गये और बोले, 'आ गये! मैं बार-बार यही सोच रहा था कि कोई एक्सिडेंट हो गया होगा। कितनी बार तुमसे कह चुका हूँ कि दूसरे मुल्कमें कभी अकेले नहीं निकलना चाहिए। घोड़ेकी बात आखिर सामने आई न! गिरा तो नहीं?"

अजित शर्मिन्दा होकर जरा हँस दिया, बोला, "आप लोगोंको इतनी दुश्चिन्तामें डाल दिया, इसके लिए मैं अत्यन्त दुःखित हूँ।"

"दुःख क्या करना! घड़ीकी तरफ नजर उठाकर देखा, दो बज रहे हैं। थोड़ा बहुत खा पीकर सो जाओ जाके। कल सुनूँगा सारी बातें। जदु, ओ जदुआ!—वह भी नालायक चला गया क्या तुम्हें ढूँढ़ने?"

अजितने कहा, "देखिए तो आप लोगोंकी कितनी ज्यादती है। इतने बड़े शहरमें भला वह कहाँ मुझे गली गली ढूँढ़ता फिरेगा?"

आशु बाबूने कहा, "तुमने तो कह दिया 'ज्यादती है' मगर हम लोगोंका कैसा हाल रहा था सो हम ही जानते हैं। ग्यारह बजे शिवनाथका गाना खतम हुआ, तबसे—मणि गई कहाँ? उसे भी तो तबसे नहीं देख रहा हूँ?"

अजितने कहा, "शायद सो गई होगी।"

"सोयेगी कैसे जी? अभीतक उसने खाया भी नहीं है।" कहते कहते सहसा उन्हें एक बात याद आ गई, बोले, "अस्तबलमें कोचवानको देखा था क्या?"

अजितने कहा, "नहीं तो।"

"तब तो हो गया!" कहकर वे दुश्चिन्ताके मारे फिर एक बार उठकर सीधे बैठ गये, बोले, "जो सोचा था वही हुआ। मालूम होता है, गाड़ी लेकर वह भी गई ढूँढ़ने। देखो तो कैसी परेशानीमें डाल गई। इस डरसे कि कहीं मैं मना न कर दूँ, जरा कुछ कहकर नहीं गई, चुपकेसे चली गई। कौन जाने कब लौटेगी! आजकी रात, मालूम होता है, सारी आँखोंमें ही बीतेगी।"

"मैं देखता हूँ जाकर, गाड़ी है या नहीं।" कहता हुआ अजित बाहर चला गया। अस्तबलमें जाकर देखा कि गाड़ी मौजूद है और घोड़े नीचे नीचेमें पैर पसारते हुए मजेमें घास खा रहे हैं। उसकी एक दुश्चिन्ता मिटी।

नीचेके बगीचेमें उत्तरकी तरफ कुछ विलायती झाऊ और पामके पेड़ जबरदस्त लापरवाहीके साथ खड़े थे।—उनके ऊपर ही मनोरमाका सोनेका कमरा है। यह देखनेके लिए कि अबतक कमरेमें बत्ती जल रही है या नहीं, अजित उस तरफसे घूमकर आशु बाबूके पास जा रहा था। इतनेमें झाड़ोंमेंसे किसीकी आवाज सुनाई दी। अत्यन्त परिचित कण्ठ था। बात हो रही थी किसी एक गानेके स्वरके विषयमें। कोई बुरी बात नहीं थी,—किन्तु फिर भी उसके लिए पेड़ पौधोंके झुरमुटमें बैठनेकी जरूरत नहीं थी। क्षणभरके लिए अजितके दोनों पैर निश्चलसे हो गये, पर क्षण भरके लिए ही। आलोचना चलने लगी और वह जैसे चुपचाप आया था वैसे ही चुपकेसे चल दिया। उन दोनोंमेंसे

कोई भी न जान सका कि उनके इस निशीथकालीन विश्रम्भालापका भेद क्या है।

आशु बाबूने व्यग्र होकर पूछा, "पता क्या?"

अजितने कहा, "गाड़ी घोड़ा अस्तबलमें ही है। मणि बाहर नहीं गई।"

'खैर, जानकर जान आई,' कहकर आशु बाबूने निश्चिन्त परितृप्तिका दीर्घ श्वास लिया, फिर कहा, "रात बहुत हो चुकी है, शायद वह थक थकाकर घरमें जाकर सो गई होगी। देखता हूँ कि आज किसीका खाना नहीं हुआ। जाओ बेटा, थोड़ा बहुत खाकर तुम भी सो जाओ।"

अजितने कहा, "इतनी रात गये मैं अब न खाऊँगा, आप सोने जाइए।"

"जाता हूँ। पर तुम कुछ भी न खाओगे? जरा कुछ खा पीकर—"

"नहीं, कुछ नहीं। आप देर न करें। सोने जायें।" इतना कहकर उस क्षण आदमीको भीतर भेजकर अजित अपने कमरेमें चला गया और वहाँ खुली हुई खिड़कीके पास आकर खड़ा रहा। वह निश्चित जानता था कि खबर-सम्बन्धी आलोचना खतम होनेपर पिताकी खबर लेनेको मनोरमा इधर एक बार जरूर ही आयेगी।

मणि आई, पर लगभग आध घण्टे बाद। पहले उसने पिताके बैठकके सामने जाकर देखा, कमरेमें अँधेरा है। यदु शायद पास ही कहीं जाग रहा था, मालिकके पुकारनेपर उसने जवाब तो नहीं दिया था, पर उनके चले जानेपर बत्ती बुझा दी थी। मनोरमाने क्षण भर इधर उधर करके मुँह फेरा तो देखा कि अजित अपने कमरेमें खुली खिड़कीके पास चुपचाप खड़ा है। उसके कमरेमें भी बत्ती नहीं जल रही थी, लेकिन सहनके ऊपरके बरामदेके क्षीण प्रकाशकी किरणें आकर उसकी खिड़कीपर पड़ रहा था।

"कौन?"

"मैं हूँ, अजित।"

"वाह! कब आ गये? बापूजी शायद सोने चले गये।" कहकर मनोरमाने मानो जरा चुप रहनेकी कोशिश की, परन्तु अकस्मात् बातकी रफ्तारने उसे करने नहीं दिया। कहने लगी, "देखो तो तुम्हारा कैसा अविचार है! घर भरके लोग सारे फिक्रके परेशान होते रहे,—जरूर कुछ न कुछ हुआ होगा। इसीसे बापूजी बार-बार मना करते हैं अकेले जानेके लिए।"

इन सब प्रश्नों और मन्तव्योंका अजितने कुछ भी जवाब नहीं दिया।

मनोरमाने कहा, "मगर उनकी नींद हरगिज न आई होगी। जरूर जाग रहे होंगे। उन्हें जरा खबर तो कर दूँ।"

अजितने कहा, "जरूरत नहीं। वे मुझे देखकर ही सोये हैं।"

"देखकर सोये हैं? तो फिर मुझे खबर क्यों नहीं दी?"

"उन्होंने समझा कि तुम सो गई हो।"

"सो कैसे जाती? अबतक तो मैंने खाया भी नहीं है।"

"तो खाकर सो जाओ। रात अब ज्यादा नहीं है।"

"तुम नहीं खाओगे?"

"नहीं।" कहकर अजित खिड़कीके पाससे हट गया।

"वाह, अच्छे रहे!" इससे ज्यादा बात उसके मुँहसे न निकली। मगर भीतरसे भी फिर कोई जवाब न आया। बाहर मनोरमा स्तब्ध खड़ी रही। उसमें मनामानकर, गुस्सा होकर अपनी जिद कायम रखनेलायक जोर नहीं रहा,—न मालूम किसने उसका मुँह कसकर बन्द कर दिया। अजित रात खतम करके घर लौटा है, घर भरमें सबकी दुश्चिन्ताका अन्त नहीं। उसीने खुद इतना बड़ा अपराध करके उसके अपमानकी हद कर दी और फिर भी जरा सा प्रतिवाद करनेकी भाषातक उसकी जबानपर न आई। और, सिर्फ जीभ ही निर्वाक् नहीं हुई, बल्कि सारी देह ही मानो कुछ क्षणोंके लिए लाचार हो रही। खिड़कीपर कोई वापस नहीं आया। यह जाननेकी भी किसीने जरूरत नहीं समझी कि वह रही या चली गई। गहरी निशीथ रात्रिमें उसी तरह चुपचाप खड़ी रहकर बहुत देर बाद वह धीरे धीरे चली गई।

सवेरे ही नौकरके जरिए आशु बाबूको मालूम हुआ कि कल रातको अजित या मनोरमा दोनोंमेंसे किसीने भी नहीं खाया। चाय पीते वक्त उन्होंने उत्कण्ठाके साथ पूछा, "कल जरूर ही कोई जबरदस्त एक्सिडेण्ट हो गया था, हुआ था न?"

अजितने कहा, "नहीं।"

"तो फिर अचानक तेल निबट गया होगा?"

"नहीं, तेल काफी था।"

"तो फिर इतनी देर कैसे हो गई?"

अजितने सिर्फ कहा, "ऐसे ही।"

मनोरमा खुद चाय नहीं पाती। उसने पिताको चाय देकर एक प्याला चाय और नाश्तेकी तश्तरी अजितकी ओर रख दी, पर न तो कोई बात पूछी और न मुँह उठाकर उसकी ओर देखा। दोनोंके इस भाव परिवर्तनको पिता ताड़ गये। नाश्ता करके अजित जब नहाने चला गया तब लड़कीको एकान्तमें पाकर उद्विग्न कण्ठसे बोले, "नहीं बेटी, यह बात अच्छी नहीं। अजितके साथ हम लोगोंका सम्बन्ध चाहे जितना भी घनिष्ठ क्यों न हो, फिर भी घरमें वे अतिथि हैं। अतिथिके योग्य सम्मान उनका होना ही चाहिए।"

मनोरमाने कहा "मैंने तो नहीं कहा बाबूजी कि नहीं होना चाहिए।"

"नहीं नहीं, 'नहीं कहा' यह सच है लेकिन हमारे आचरणसे किसी तरहकी त्रुटि या लापरवाही होना भी अपराध है।"

मनोरमाने कहा, "सो मानती हूँ। पर तुमने किससे सुना कि मेरे आचरणसे अपराध बन पड़ा है?"

आशु बाबू इस प्रश्नका जवाब न दे सके। उन्होंने सुना कुछ भी नहीं, न कुछ जानते ही हैं, सब-कुछ उनका अनुमानमात्र है। फिर भी मन उनका प्रसन्न न हुआ। कारण इस तरहसे बहस की जा सकती है किन्तु उत्कण्ठित पिताके चित्तको निःशङ्क नहीं किया जा सकता। थोड़ी देर बाद उन्होंने धीरे धीरे कहा, "उतनी रातमें अजितने फिर खाना नहीं चाहा, और मैं भी सोने चला गया, तुम तो पहले ही सो गई थी,—न जाने कहींसे, हो सकता है, हम लोगोंकी तरफसे ही कोई लापरवाही जाहिर हुई हो। उनका मन आज वैसा प्रसन्न नहीं मालूम होता।"

मनोरमाने कहा, "वे अगर सारी रात राहमें बिताना चाहें तो हम लोगोंको भी क्या उनके लिए रातभर जागते रहना होगा? यही क्या अतिथिके प्रति गृहस्थका कर्तव्य है बाबूजी?"

आशु बाबू हँस दिये। अपना तर्क इशारा करके बोले, "गृहस्थके माना अगर यह गृहिणीका स्वामी हो बेटा, तो उसका कर्तव्य है कि आठ बजेके अन्दर ही सो जाय। नहीं तो, कम से कम बहुत बड़े सम्मानित अतिथि गृहिणीके प्रति सम्मान दिखाना होगा। और, उसके मानी अगर और विशेष हों, तो उसका कर्तव्य शास्त्रकारोंमें भी नहीं बना। आज बहुत दिन पहलेकी एक घटना याद आ गई भाई, तुम्हारी मा तब जिन्दा थी। एक बार मैं मछली पकड़ने

गुप्तिपाड़ा जा गया सो लौट नहीं सका। सिर्फ एक रात ही नहीं,—तुम्हारा मौन उसीपर पूरीकी पूरी तीन रात सिरहाने बैठे बिता दीं। उसका यह कर्ज किसने सुझाया था, तब पूछा नहीं जा सका, मगर बाद फिर कभी मुलाकात हुई तो यह बात पूछना भूलूँगा नहीं।" इतना कहकर उन्होंने क्षणभरके लिए मुँह फेरकर लड़कीकी निगाहसे अपनी आँखोंको छिपा लिया।

यह कहानी कोई नई नहीं। किसके लोगपर इस घटनाका वे बहुत बार लड़कीके सामने उल्लेख कर चुके हैं मगर फिर भी वह पुरानी नहीं होती। जब कभी याद आ जाती है तभी वह नई बनकर दिखाई दे जाती है।

इतनेमें नौकरानी आकर दरवाजेके पास खड़ी हो गई। मनोरमा उठ खड़ी हुई, बोली, "बापूजी, तुम जरा बैठो, मैं खानेका इन्तजाम कर आऊँ।" और वह जल्दीसे चली गई। बातचीत बहुत आगे न बढ़ पाई, इससे उसे आराम मालूम हुआ।

दिन भरमें आशु बाबूने कई बार अजितके बारेमें पूछा। एक बार मालूम हुआ कि वह किताब पढ़ रहा है, फिर खबर मिली कि वह अपने कमरेमें बैठा चिट्ठी पत्री लिख रहा है, दोपहरको भोजनके समय उसने लगभग बात ही नहीं की और खाना खतम होते ही वह उठकर चल दिया। और, और किसीके लिए वह जितना कड़वा था उतना ही आश्चर्यजनक।

आशु बाबूके क्षोभकी सीमा नहीं रही। बोले, "बात क्या है मणि?"

मनोरमा आज बराबर पिताकी दृष्टिसे बचकर चल रही थी, अब भी नाम कर किसी तरफ बिना देखे ही बोली, "मालूम नहीं बापूजी!"

वे क्षण भर चुपके मनमें कुछ सोच विचारकर मानो अपने आपसे ही कहने लगे, "उसके वापस आनेतक मैं जाग ही रहा था। खानेके लिए भी कहा था, पर बहुत रात हो जानेसे उसने खुद ही नहीं खाया। तुम्हारा सो जाना ठीक नहीं हुआ बेटी,—लेकिन इसमें ऐसा क्या अपराध हो गया, मेरी तो कुछ समझमें नहीं आता। इससे बढ़कर आश्चर्य और क्या होगा कि इस तुच्छ कारणको उसने इतना बड़ा मान लिया!"

मनोरमा चुप रही। आशु बाबू खुद भी कुछ देर मौन रहकर भीतरकी लज्जाको दबाते हुए बोले, "बात तुमने उससे पूछी क्या नहीं?"

मनोरमाने जवाब दिया, "पूछनेकी कौन सी बात है,—पिताजी?"

पूछनेकी बहुत-सी बात है, पर पूछना भी कठिन है, खासकर मणिके लिए। इसे वे समझते थे, फिर भी उन्होंने कहा, "यह तो बिल्कुल साफ है कि वह नाराज है। शायद उसने सोचा है कि तुमने उसकी उपेक्षा की है। इस तरहकी बुरी धारणा तो उसके मनमें रहने नहीं दी जानी चाहिए बेटी।"

मनोरमाने कहा, "मेरे बारेमें अगर ऐसी धारणा उन्होंने कर ली हो तो यह उनका अपराध है। एक आदमीके अपराधको सुधारनेकी गरज क्या दूसरे आदमीको अपने ऊपर ले लेनी चाहिए बाबूजी?"

पिता इस प्रश्नका उत्तर नहीं दे सके। लड़कीको वे जिस ढंगसे पालते आये हैं उससे उसके आत्म-सम्मानपर चोट पहुँचे, ऐसा कोई आदेश वे नहीं कर सकते। उसके उठ जानेपर इसी बातपर भीतर ही भीतर ऊहापोह करते करते वे अत्यन्त उदास हो गये। बार बार इस बातको दुहराते हुए भी कि ऐसा हुआ ही करता है और यह क्रम स्वाभाविक है, उन्हें भीतरसे जोर नहीं मिला। अजितको भी वे जानते थे। वह लिए सब तरहसे सुनिश्चित ही नहीं है, बल्कि उसमें ऐसी एक स्वाभाविक सत्यपरता उन्होंने पाई थी कि आज के अकारण बिगाड़से किसी तरह भी उसका सामंजस्य नहीं बैठता था। इसका निर्णय करना कठिन हो गया कि क्या सचमुच इसीमें उद्वेगका कारण बनकर भी वह शायद इतना बड़ा नाराज हो गया और ऐसी असम्भव बात कैसे उसमें सम्भव हुई।

शामके समय एक ताँगेको गेटके अन्दर घुसते देख आशु बाबूने दरियाफ्त किया तो मालूम हुआ कि वह अजितके लिए आया है। अजितको उन्होंने बुला भेजा और उसके आनेपर मुश्किलसे जरा-सा हँसकर पूछा, "ताँगेका क्या होगा अजित?"

"जरा एक दफे घूमने निकलूँगा।"

"क्यों, मोटर क्या हुई? फिर बिगड़ गई क्या?"

"नहीं। लेकिन उसकी आप लोगोंको जरूरत पड़ सकती है।"

"अगर पड़े भी तो उसके लिए काफी मोटरें हैं।" और फिर एक क्षणभर चुप रहकर बोले, "क्यों अजित, मुझे सच बता दो। मोटरके बारेमें कोई बात हुई है क्या?"

अजितने कहा, "कहाँ, मुझे तो नहीं मालूम। लेकिन, आज भी तो आपके यहाँ गाने-बजानेका आयोजन है। लोगोंका निमन्त्रण है, मुझे घर पहुँचानेके

लिए मास्टरकी ही ज्यादा जरूरत है। नहीं तो ठीक न रहेगा।"

मनोरमा तरह-तरहकी दुश्चिन्ताओंके कारण आशु बाबू इस बातको भूल से गये थे। अब याद आया कि कल सभा भंग होनेके बाद शामके लिए भी उन सबको आमंत्रित कर दिया गया था और शामके बाद ही मजलिस बैठेगी। साथ साथ यह भी ख्याल आ गया कि सबको निमंत्रित करनेका प्रस्ताव भी मनोरमाके सामने पेश हुआ था पर वे मन ही मन जरा हँसकर रह गये। कारण, ऐसा हुए बिना कन्याकी मानसिक अस्वच्छन्दताका लक्षण इस बातको ख्याल उठते ही प्रकट हो गया था और अब याद भी आई तो उसने तबीयत प्रसन्न नहीं हुई। उस समय मनोरमाके लिए यह सब बात कितनी निरर्थक है, इस बातको स्पष्ट सिद्धकी भाँति अनुमान करके वे बोले, "आज यह सब-कुछ नहीं होगा आजका।"

अजितने कहा, "क्या ?"

"क्या ? मणिको ही पूछ देखो एक बार।" कहकर उन्होंने बहरेको जोरसे पुकारकर लड़कीको बुलाने भेज दिया, और फिर जरा हँसकर कहा, "तुम नादान हो बच्चे, गाना बाना सुनेगा कौन ? मणि ? अच्छा, वह सब और किसी दिन होगा, अभी जाओ तुम मोटर लेकर जरा घूम आओ। लेकिन ज्यादा देर नहीं लगा सकते। और यह कहता हूँ कि तुम्हारा अकेले जाना भी नहीं होगा। ड्राइवर लालचंद बिलकुल आलसी हुआ जा रहा है। इतना कहकर वे एक कठिन समस्याकी अचिन्तनीय मीमांसा करके उज्ज्वल आनन्दमें आराम कुरसीपर चित पड़ गये और जोरसे एक संतोषकी साँस छोड़नेके साथ बोले, "तुम जाओगे सो गाड़ी किरायेकी करके घूमने ? छि।"

मनोरमा कमरेमें पैर रखते ही अजितको देख गरदन टेढ़ी करके खड़ी हो गई। आहट पाकर आशु बाबू फिर सीधे होकर बैठ गये और मरातुर स्निग्ध हँसीसे चेहरेको चमकाकर बोले, "मैं पूछता हूँ, आजकी बात याद तो है बेटी, या बिलकुल भूल जाकर निश्चिंत बैठी हो ?"

"क्या बाबूजी ?"

"आज सबको निमन्त्रण दे रखा है ? तुम लोगोंका गाना आना खतम होनेके बाद, उन लोगोंको जो आज जिमाना है,—सो भी कुछ ख्याल है ?"

मनोरमाने सिर हिलाकर कहा, "है क्यों नहीं। मोटर भेज दी है उन लोगों

को ले जानेके लिए।"

"मोटर भेज दी है ले आनेके लिए? मगर खाने-पीनेका इन्तजाम?"

मणिने कहा, "सब ठीक है, कोई त्रुटि न होगी।"

"अच्छा!" कहकर वे फिर कुरसीपर पड़ रहे। उनके मुँहपर मानो किसीने स्याही-सी पोत दी।

मनोरमा चली गई। अजित भी बाहर जा रहा था कि आशु बाबूने उसे इशारेसे मना किया और वे बहुत देरतक चुप रहे। बादमें उठके बैठे और कहने लगे, "अजित, लड़कीका तरफसे क्षमा माँगनेमें मुझे लज्जा आती है। पर उसकी माँ जिन्दा नहीं है,—वे होती तो मुझे यह बात कहनी नहीं पड़ती।"

अजित चुप रहा। आशु बाबू बोले, 'यह बात वे ही तुम्हारे मुँहसे निकाल लेतीं कि उसने तुम क्या गुस्सा हो, मगर वे तो हैं नहीं,—मुझसे क्या यह बात कभी नहीं जा सकता?"

उनका स्वर ऐसा करुण था कि सुनकर हृदय व्यथित हो उठे। फिर भी अजित चुप रहा।

आशु बाबूने पूछा, "उसमें क्या तुम्हारा कोई वारदात नहीं हुई?"

अजितने कहा, "हुई थी।"

आशु बाबू व्यग्र हो उठे, "हुई थी? कब हुई? मणि अचानक रुक जो गई थी, सो क्या तुमसे उसने कहा था?"

अजितने कुछ देर चुप रहकर शायद यही मान लिया कि क्या जवाब देना चाहिए, फिर आहिस्तेसे कहा, 'उतनी राततक जागते रहना न आसान ही था, और न उचित। सो जाती तो अविचार न होता, मगर वे सोई नहीं थीं। आपके सोने चले जानेपर थोड़ी देर बाद ही उनसे भेंट हुई थी।"

"फिर?"

"फिर और कोई बात आपसे नहीं कहूँगा।" कहकर वह चल दिया। दरवाजेके पाससे वह कहता गया, "शायद कल-परसोंतक ■ यहाँसे चला जाऊँगा।"

आशु बाबू कुछ भी समझ न सके, सिर्फ इतना ही उनकी समझमें आया कि कोई भयंकर दुर्घटना हो गई है।

शिवनाथको लेकर ताँगा बाहर चला गया और उसकी आवाज उन्होंने सुन

गी। कुछ मिनटोंके बाद जोरका शोर मचाती हुई मोटर निर्मलाको लेकर आ पहुँची। उसका शोर भी उन्होंने सुन लिया। पर वे हिले डुले नहीं, जहाँके तहाँ मूर्तिकी तरह निश्चल बैठे रहे। बैठक-बैठनपर नौकरने जाकर संवाद दिया, "बाबू साहबकी तबीयत ठीक नहीं है, वे सो गये हैं।"

उस दिन गाना नहीं जमा, खाने पीनेका उत्साह भी म्लान हो गया — सबको बार-बार यही खयाल आने लगा कि एकका एक व्यक्ति घूमनेके बहाने बाहर चला गया है और दूसरा व्यक्ति अपने विपुल शरीर और प्रसन्न स्निग्ध हास्यके साथ सभाका जिस जगहको उज्ज्वल बनाये रखता था, आज वह सूनी पड़ी है।

१०

इधर अजितका ताँगा कमलके घरके सामने आकर खड़ा हो गया। कमल सड़कवाले खनीज बरामदेपर खड़ी थी, आँख चार होते ही हाथ उठाकर उसने नमस्कार किया। ताँगेको इशारेसे बताते हुए मिलाकर बोली, "उसे बिदा कर दीजिए। सामने खड़ा खड़ा बार बार लौटनेकी जल्दी मचाएगा।"

जीनेमें सामने ही फिर भेंट हुई। अजितने कहा, "बिदा तो कर दिया, पर लौटते वक्त दूसरा मिल तो जायगा?"

कमलने कहा, "नहीं। ऐसी कितनी दूरी है, पैदल ही चले जाइएगा।"

"पैदल जाऊँगा?"

"क्या डर लगेगा क्या? न हो तो मैं खुद जाकर आपको घरतक पहुँचा आऊँगी। आइए।" कहकर वह उसे साथ लेकर रसोई घरमें गई और बैठनेके लिए कल्याणी यही आसन बिछाकर बोली, "जरा देखिए तो सही, सारे दिन मैंने कितने व्यंजन बनाये हैं। आप न आते तो मैं गुस्सेमें यह सब मोचियोंको बुलाकर बाँट देती।"

अजितने कहा, "आपका गुस्सा तो कम नहीं है। मगर उससे इन व्यंजनोंका इससे अपेक्षा विशेष अच्छा उपयोग होता।"

"क्यों माने?" कहकर कमल कुछ देरतक अजितके चेहरेकी तरफ देखती रही और फिर अन्तमें खुद ही बोली, "अर्थात् आपके तो किसी चीजकी कमी नहीं,—शायद इसमेंसे हो बहुत कुछ फेंकना पड़ेगा,—लेकिन उन लोगोंके

बड़ी भारी कमी है। वे तो इसे खाकर जैसे नया जीवन प्राप्त करेंगे। लिहाजा, उन्हें खिलाना ही रसोईका सर्वोत्तम उपयोग है, यही न?"

अजितने गरदन हिलाकर कहा, "इसके सिवा और क्या मानी हो सकते हैं!"

कमलने कहा, "यह हुआ साधु सज्जनोंका भण्डार-घरका विचार,— पुण्यात्माओंकी धर्म-बुद्धिकी युक्ति। परलोकके खातेमें वे लाभ दिखाकर साधक पुण्य मानकर लिख रखना चाहते हैं। यह नहीं समझते कि असलमें यह अन्तःकरणका धोखा स्वयं है। इस बातको वे कहाँसे जानेंगे कि सच्चे आनन्दका सुधा-पान तो अपव्ययके अविचारसे ही कण्ठतक भर उठता है!"

अजितने आश्चर्यके साथ कहा, "मनुष्यके कर्तव्यकी भावनाके अन्दर क्या आनन्द है ही नहीं?"

कमलने कहा, "नहीं, नहीं है। कर्तव्यके अन्दर जो आनन्द मालूम होता है वह आनन्द नहीं, आनन्दका भ्रम है, वास्तवमें वह दुःखका ही नामान्तर है। उस बुद्धिके शासनसे जबरदस्ती आनन्द मानना पड़ता है। पर वह तो बन्धन है। नहीं तो, यह जो शिवनाथका आसन लाकर आपको बिठाया है, प्रेमके इस अपव्ययमें आनन्द कहाँसे पाती? यह जो दिनभर भूखी रहकर मैंने इतनी चीजें बनाई हैं—आप आकर खायँगे इसलिए ही तो? फिर इतने बड़े अपव्ययके अन्दर मुझे तृप्ति कहाँसे मिलती? अजित बाबू, आज मेरी सब बातें आप नहीं समझेंगे, समझनेकी कोशिश करनेसे भी कुछ फायदा नहीं होगा, मगर इतनी बड़ी उलटी बातके मानी अगर कभी अपने आप आपकी समझमें आ जायँ तो उस दिन मेरी याद कीजियेगा। पर अब रहने दीजिये, आप खाने बैठिए।" और उसने थाल भरकर बहुत तरहके व्यंजन उनके सामने रख दिये।

अजितने बहुत देरतक चुप रहकर कहा, "यह ठीक है कि आपके कुछ अन्तिम शब्दोंका अर्थ मैं कयासमें नहीं ला सका लेकिन मालूम होता है कि वे बिलकुल ही अबोध्य हों सो बात नहीं। समझा देनेसे समझ भी सकता हूँ।"

कमलने कहा, "कौन समझा देगा अजित बाबू? मैं? मुझे जरूरत?" और हँसते हुए उसने बाकी पात्र उसके आगे रख दिये।

अजित खानेमें मन लगाकर बोला, "आपको शायद मालूम नहीं कि कल मेरा खाना नहीं हुआ।"

कमलने कहा, "जानती तो नहीं, पर मुझे डर था कि इतनी रातमें जाकर शायद आप खायेंगे नहीं। यही हुआ। मेरे अपराधसे ही कल आपने तकलीफ पाई।"

"लेकिन आज ब्याज-समेत वसूल हो रहा है।" बात करते ही उसे याद आ गई कि कमल अभीतक भूखा है। मन ही मन लज्जित होकर बोला, "पर मैं बिल्कुल जानवरों जैसा स्वार्थी हूँ। दिन भर आपने कुछ खाया नहीं, उसका मैंने जरा भी खयाल नहीं किया और मजेसे खाने बैठ गया।"

कमलने हँसते चेहरेसे जवाब दिया, "पर यह तो मेरे अपने खानेसे भी बढ़कर है। इसीसे तो झटपट आपको बिठा दिया है अजित बाबू।" फिर जरा ठहरकर कहा, "और यह मांस मछलीका मामला,—मैं तो खाती नहीं।"

"फिर खायँगी क्या आप?"

"यह है न।" उसने एक ओर ढककर रखे हुए एनामेलके कटोरेकी ओर हाथके इशारेसे दिखाते हुए कहा, "और उसके अन्दर मेरे लिए चावल दाल आलू उबाले हुए रखे हैं। यही मेरा राज भोग है।"

इस विषयमें अजितका कुतूहल दूर नहीं हुआ, साथ ही उसे संकोच न रहा भी। इस डरसे कि कहीं यह गरीबीका जिक्र न कर बैठे, उसने दूसरी ही बात छेड़ दी, कहा, "आपको देखकर मुझे शुरूसे ही ऐसा आश्चर्य हुआ कि कुछ कह नहीं सकता।"

कमल हँस पड़ी, बोली, "यह तो मेरा रूप है। पर उसने भी हार कबूल कर ली अभय बाबूके आगे। वह उन्हें परास्त नहीं कर सका।"

अजित शर्मिन्दा होकर भी हँस दिया, बोला, "मालूम तो नहीं होता। वे गोलकुण्डाके माणिक हैं। उनके ऊपर खरोंच नहीं पड़ती। लेकिन मुझे तो सचमुच बढ़कर आश्चर्य हुआ था आपकी बात सुनकर। सहसा मानो धैर्य-सा छूट जाता है,—गुस्सा आ जाता है। मालूम होता है, किसी भी सत्यको आप टिकने नहीं देना चाहतीं। हाथ बढ़ाकर रास्ता रोकना ही जैसे आपका स्वभाव हो।"

कमल शायद क्षुब्ध हुई। बोली, "हो सकता है। पर मुझसे भी बड़ा एक आश्चर्य वहाँ था,—वह था दूसरा पहाड़। जैसी विपुल देह थी, वैसी ही विराट् शान्ति। धैर्य जैसे हिमाचल हो। उत्तापकी भापतक वहाँ नहीं पहुँचती। ऐसा जी होता है कि मैं अगर उनकी लड़की होती—"

बात अजितको बहुत ही अच्छी लगी। आशु बाबूके प्रति यह अन्तःकरणसे देवताकी भाँति भक्ति रखता है। फिर भी उसने कहा, "आप दोनोंकी ऐसी विपरीत प्रकृति मिली कैसे?"

कमलने कहा, "मालूम नहीं। मैंने सिर्फ अपनी इच्छाकी ही बात कही है। मणिकी तरह मैं भी अगर उनकी लड़की होकर पैदा होती!" फिर कुछ देर चुप रहकर बोली, "मेरे अपने पिताजी भी कम नहीं थे। वे ऐसे ही धीर, ऐसे ही शान्त आदमी थे।"

कमल दासीकी क्या है, छोटी जातकी लड़की है,—सबके मुँहसे अजितने यह बात सुनी थी। अब स्वयं कमलके मुँहसे उसके पिताके गुणोंका उल्लेख सुनकर उसका जन्म-रहस्य जाननेकी आकांक्षा प्रबल हो उठी, मगर इस डरसे कि पूछने ताछनेसे कहीं उसके स्वभावके स्थानपर असावधानीसे चोट न पहुँचे, वह कुछ पूछ न सका। परन्तु मन उसका भीतर ही भीतर स्नेह और करुणासे ऊपर तक भर आया।

खाना खतम हुआ, किन्तु उठनेके लिए कहनेपर अजितने इनकार कर दिया, बोला, "पहले आप खा लें। उसके बाद।"

"क्या तकलीफ दे रहे हैं अजित बाबू, उठिए। जाकर हाथ मुँह धो आइए, फिर बैठिए,—मैं खा रही हूँ।"

"नहीं, सो नहीं होगा। बगैर खाये न आसन छोड़कर एक कदम भी इधर उधर न होऊँगा।"

"अच्छे आदमी हैं आप।" कहकर कमल हँसती हुई अपना भोजन उघाड़ कर खाने बैठ गई। अजितने देखा कि उसमें रत्तीमात्र भी अत्युक्ति नहीं थी। चावल, दाल और उबले हुए आलू ही थे। सूखकर बदरंग हो गये थे। और दिन वह क्या खाती पीती है उसे नहीं मालूम। पर आज इतनी तरहकी और खासी तैयारियोंके बीच भी उसके इस स्वेच्छाकृत आत्मपीड़नसे अजितकी आँखोंमें पानी भर आया। कल उसने सुना था कि दिनमें वह सिर्फ एक बार ही खाती है और आज जाना कि वह यही है जो सामने दीख रहा है। लिहाजा, युक्ति और तर्कके छलसे कमल मुँहसे चाहे जो भी कहे, वास्तवमें भोगके क्षेत्रमें उसके इस कठोर आत्म-संयमसे अजितका अभिभूत और मुग्ध अन्तर माधुर्य और श्रद्धासे अपरूप-सुन्दर हो उठा और वंचना, असम्मान और अनादरसे जिन

व्यक्तियोंने उसे लांछित किया था उन सबके प्रति उसकी घृणाकी सीमा न रही। कमलके मुखकी तरफ एकटक देखकर अपने इस भावको वह दबा न सका। उफनते हुए आवेगके साथ कहने लगा, "आपको बड़ा मानकर जो लोग अपमान करके आपको दूर रखना चाहते हैं, जो लोग अकारण ग्लानि करते फिरते हैं, वे तो आपके पाँव छूने योग्य भी नहीं। संसारमें देवीका आसन अगर किसीके लिए हो तो वह आपके लिए है।"

कमलने अत्यन्त विस्मयके साथ मुँह उठाकर पूछा, "क्या ?"

"क्यों, सो मैं नहीं जानता, मगर शपथके साथ कह सकता हूँ।"

कमलका विस्मयका भाव दूर न हुआ, मगर वह चुप रही।

अजितने कहा, "अगर क्षमा करें तो एक बात पूछूँ।"

"क्या बात ?"

"पाखण्डी शिवनाथके द्वारा अपमान और वंचना पानेके बाद ही क्या आपने यह कृच्छ्र व्रत लिया है ?"

कमलने कहा, "नहीं तो। मेरे पहले पतिके मरनेके बादसे ही मैं यह खाया करती हूँ। इससे मुझे कष्ट नहीं होता।"

अजितके मुँहपर जैसे किसीने स्याही पोत दी। उसने कुछ देर स्तब्ध रहकर अपनेको सँभालते हुए धीरे धीरे पूछा, "आपका एक बार पहले और भी विवाह हुआ था क्या ?"

कमलने कहा, "हाँ। वे एक आसामी क्रिश्चियन थे। उनके मरनेके बाद ही मेरे पिता भी मर गये अकस्मात् घोड़ेसे गिरकर। उस समय, शिवनाथके एक चाचा थे। चाय बगीचेके हेड क्लर्क। उनकी स्त्री नहीं थी, माँको उन्होंने अपने घरमें आश्रय दिया। मैं भी उनके घरमें आ गई। इस तरह, तरह तरहके दुःख कष्टके बीच रहते रहते एक वक्त खानेकी ही मेरी आदत पड़ गई है।' कृच्छ्र व्रत तो क्या, पर इससे शरीर और मन दोनों अच्छे रहते हैं ?"

अजितने एक साँस लेकर कहा, "मैंने सुना है, जाति आपकी जुलाहा है ?"

कमलने कहा, "लोग तो यही बताते हैं। पर माँ कहती थी कि उनके पिता आप लोगोंकी जातिके ही एक कविराज थे। अर्थात् मेरे वास्तविक मातामह जुलाहे नहीं, वैद्य थे।" और वह जरा हँसकर बोली, "सो वे चाहे जो भी रहे हों, अब गुस्सा होना भी व्यर्थ है और अफसोस करनेमें भी कोई लाभ नहीं।"

अजितने कहा, "सो तो ठीक है।"

कमलने कहा, "माँके रूप था, पर रुचि नहीं थी। ब्याहके बाद कोई बदनामी हो जानेके कारण उनके पति उन्हें लेकर आसामके चाय-बगीचेमें भाग गये थे। पर वहाँ वे जीये नहीं,—कुछ ही महीनेमें बुखार ही बुखारमें मर गये। अनेक साल बाद मेरा जन्म हुआ बगीचेके बड़े साहबके घर।"

कमलके वंश और जन्मका वर्णन सुनकर अजितका क्षण भर पहलेका स्नेह और श्रद्धासे मिला हुआ हृदय अरुचि और संकोचके मारे सिकुड़कर बूँद-सा रह गया। उसे सबसे ज्यादा यह बात अखरी कि अपनी और माँकी इतनी बड़ी शर्मकी बात कहनेमें भी इसे रत्ती भर लज्जा नहीं आई। अनायास ही कह गई, माँके रूप था, पर 'रुचि' नहीं थी। जिस आधारपर एक स्त्री मारे शर्मके जमीनमें धँस जाती है, वह इसके निकट 'रुचिका विकार' मात्र है। इससे ज्यादा कुछ नहीं।

कमल कहने लगी, "पर मेरे पिता थे साधु-सज्जन आदमी। चरित्रमें, पाण्डित्यमें, सचाईमें,—ऐसे आदमी मैंने बहुत कम देखे हैं अजित बाबू, जीवनके उन्नीस साल मैंने उन्हींके पास बिताये हैं।"

अजितको एक बार सन्देह हुआ था कि शायद यह परिहास कर रही है। पर यह कैसा तमाशा? बोला, "यह सब क्या आप सच कह रही हैं?"

कमलने जरा कुछ आश्चर्यके साथ ही जवाब दिया, "मैं तो कभी झूठ नहीं बोलती अजित बाबू।" पिताकी स्मृति लहमे भरके लिए चेहरेपर एक स्निग्ध दीप्ति फैल गई। फिर बोली, "इस जीवनमें कभी किसी भी कारण झूठी चिन्ता, झूठे अभिमान, झूठी बातका सहारा मुझे न लेना पड़े,—पिताजी यही शिक्षा मुझे बार-बार दे गये हैं।"

अजित फिर भी मानो विश्वास न कर सका, बोला, "आप एक अँग्रेजके पास हो अगर इतनी बड़ी हुई हैं तो आपको अँग्रेजी भी आनी चाहिए?"

उत्तरमें कमल सिर्फ जरा मुस्करा दी। बोली, "मेरा खाना हो गया, चलिए उस कमरेमें चलें।"

"नहीं, अब मैं जाऊँगा।"

"बैठेंगे नहीं? आज इतनी जल्दी चले जायँगे?"

"हाँ, आज अब और बैठनेका समय नहीं रहा।"

इतनी देर बाद कमलने मुँह उठाकर उसके चेहरेकी अत्यन्त कठोरतापर ध्यान दिया। शायद, कारणका भी अनुमान कर लिया। वह कुछ दूर निर्निमेष दृष्टिसे देखती रही, फिर धीरेसे बोली, "अच्छा, जाइए।"

इसके बाद अजित क्या कहे, कुछ समझमें न आया। अन्तमें बोला, "आप क्या अब आगरेमें ही रहेंगी?"

"क्यों?"

"मान लीजिए, शिवनाथ बाबू आइन्दा अगर नहीं आये। उनपर तो आपका जोर है नहीं!"

कमलने कहा, "नहीं।" फिर जरा स्थिर रहकर कहा, "आप लोगोंके यहाँ तो वे रोज जाते हैं, गुप्त रूपसे जानकर क्या मुझे बता नहीं सकते?"

"उससे क्या होगा?"

कमलने कहा, "होगा और क्या, घरका किराया इस महीनेका दिया ही हुआ है, फिर मैं कल परसोंतक चली जा सकती हूँ।"

"कहाँ जायँगी?"

कमलने इस प्रश्नका उत्तर नहीं दिया, चुप रही।

अजितने पूछा, "आपके हाथमें शायद रुपये नहीं हैं?"

कमलने इस प्रश्नका भी कोई उत्तर नहीं दिया।

अजित खुद भी कुछ देर मौन रहकर बोला, "आते वक्त आपके लिए कुछ रुपये साथ लेता आया था, लीजिएगा?"

"नहीं।"

"नहीं क्यों? मुझे निश्चित मालूम है कि आपके हाथमें कुछ नहीं है। जो भी कुछ था, सो आज मेरे ही लिए खतम हो गया।"

इसका भी कुछ उत्तर न पाकर वह फिर बोला, "जरूरत पड़नेपर क्या मित्रोंसे कोई कुछ लेता नहीं?"

कमलने कहा, "पर मित्र तो आप नहीं हैं?"

"न सही। पर अमित्रोंसे भी लोग कर्ज लिया करते हैं और फिर चुका देते हैं। तो आप वैसे ही ले लीजिए।"

कमलने गरदन हिलाकर कहा, "आपसे कह चुकी हूँ, मैं कभी झूठ नहीं बोलती।"

बात कोमल थी, किन्तु तीरके फलकी तरह तीक्ष्ण। अजितने समझ लिया कि इसमें कुछ रद्दोबदल नहीं हो सकता। उसकी तरफ गौरसे देखा तो मालूम हुआ कि पहले दिन उसके शरीरपर जो मामूली सा जेवर था वह भी आज नहीं है। सम्भवतः घरका किराया चुकानेमें और इधर कुछ दिनोंका खर्च चलानेमें वह खतम हो चुका है। सहसा व्यथाके भारसे उसका मन भीतरसे रो उठा। उसने पूछा, "घर जाना ही आपने तय कर लिया है क्या?"

कमलने कहा, "इसके सिवा और उपाय क्या है।"

उपाय क्या है, यह उसे नहीं मालूम, और इसीलिए उसे कष्ट होने लगा। अन्तिम चेष्टाके तौरपर उसने कहा, "दुनियामें क्या कोई भी ऐसा नहीं है जिससे इस समय आप कुछ सहायता ले सकें?"

कमलने जरा सोचकर कहा, "है, और लक्ष्मीकी तरह सिर्फ उन्हींके पास जाकर हाथ पसारकर माँग सकती हूँ। पर आपको तो रात हुई जा रही है। साथ चलकर पहुँचा दूँ क्या?"

अजित चंचल होकर बोला, "नहीं नहीं, मैं अकेला ही जा सकूँगा?"

"तो जाइए। नमस्कार।" कहकर वह अपने सोनेके कमरेमें चली गई।

अजित दो एक मिनट वहाँ स्तब्ध होकर खड़ा रहा। फिर चुपचाप धीरे धीरे नीचे उतर गया।

११

दिनका तीसरा पहर है। धूपकी सीमा नहीं। आशु बाबूकी बैठककी काँच की खिड़कियाँ सारे दिन बन्द रहती हैं। वे आरामकुरसीके दोनों हत्थोंपर पैर फैलाकर गहरे मनोयोगके साथ पड़े पड़े कुछ पढ़ रहे थे। हाथके कागजपर पीछेके दरवाजेकी तरफसे एक छाया पड़ते ही वे समझ गये कि अब उनके नौकरकी दिवा निद्रा समाप्त हुई है। बोले, "कहीं नींदमें तो नहीं उठ बैठे यदु, नहीं तो गिर पड़ोगे। ज्यादा तकलीफ न मालूम हो तो रजाईसे जरा इधर आकर पैर ढँक दो।"

नीचे कार्पेटपर रजाई पड़ी थी, आगन्तुकने उसे उठाकर उनके पैर नीचे तलुओंतक अच्छी तरह ढक दिये।

आशु बाबूने कहा, "हो गया, हो गया, ज्यादा यत्नकी जरूरत नहीं।

जब एक चुरट देकर और थोड़ा सो लो—अभी तो दिन बाकी है। पर समझ रखना कि—कल, हाँ, कल।"

अर्थात् कल तुम्हारी नौकरी चली हो जायगी। कोई जवाब नहीं आया, कारण मालिकके इस तरहके मन्तव्यसे नौकर अभ्यस्त हो चुका है। जैसे उसका प्रतिवाद करना व्यर्थ है वैसे ही विचलित होना भी फिजूल है।

आशु बाबूने हाथ बढ़ाकर चुरट ले लिया और दियासलाई जलनेके शब्दके साथ ऊपर मुँह उठाकर देखा। कुछ क्षण अभिभूतकी तरह दंग रहकर बोले, "यही तो सोच रहा था कि यह क्या जदुआका हाथ है! इस तरह पैर दबना तो उसकी चौदह पीढ़ियाँ भी न जानती होंगी।"

कमलने कहा, "पर इधर जो हाथ जला जा रहा है!"

आशु बाबूने व्यस्तताके साथ उसके हाथसे जलती हुई दियासलाई लेकर फेंक दी और उस हाथको अपने हाथमें लेकर उसे जोरसे सामने खींच लिया। बोले, "इतने दिनोंमें तुम्हें देखा क्यों नहीं बेटी?"

यह उन्होंने पहले पहल उसे 'बेटी' कहकर पुकारा। परन्तु यह उन्हें कहनेके बाद स्वयं मालूम हो गया कि उनके प्रश्नका कोई मानी नहीं होते।

कमल एक कुरसी खींचकर जरा दूर बैठना चाहती थी, पर उन्होंने उसे ऐसा नहीं करने दिया, कहा, "वहाँ नहीं बेटी, तुम मेरे बिल्कुल पास आकर बैठो।" और उसे बिल्कुल पास खींचकर बोले, "आज अचानक कैसे कमल?" कमलने कहा, "आज बहुत जी चाहने लगा आपको देखनेको,—इससे चली आई।"

आशु बाबूने उत्तरमें सिर्फ कहा, "अच्छा किया।" और इससे ज्यादा वे न बोल सके। अन्यान्य सभी लोगोंके समान उन्हें भी मालूम था कि कमलका कोई सगी साथी नहीं है, कोई उसको चाहता नहीं, किसीके घर जानेका उसे अधिकार नहीं,—नितान्त निःसंग जीवन ही इस लड़कीको बिताना पड़ता है, फिर भी यह बात उनके मुँहसे न निकली कि 'कमल, तुम्हारी जब तबीयत हो, खुशीसे चली आया करो, और चाहे जिससे हो, पर मेरे पास तुम्हें कोई संकोच नहीं होना चाहिए।' इसके बाद शायद शब्दोंके अभावसे ही वे दो-तीन मिनट तक मानो अन्यमनस्ककी तरह मौन रहे। उनके हाथका कागज नीचे गिसक जानेपर कमलने उसे उठा लिया और उनके हाथमें देते हुए कहा, "आप पढ़

रहे थे, मैंने असमय ही आकर शायद विघ्न डाल दिया।"

आशु बाबूने कहा, "नहीं। मैं पढ़ चुका। जो कुछ थोड़ा-बहुत बाकी है उसे बगैर पढ़े भी काम चल सकता है, और पढ़नेकी इच्छा भी नहीं है।" जरा ठहरकर फिर कहा, "इसके सिवा तुम्हारे चले जानेपर मुझे अकेला रहना पड़ेगा, उससे अच्छा तो यह है कि तुम बात करो, मैं सुनूँ।"

कमलने कहा, "मैं आपसे दिन भर बात कर सकूँ तो कहना ही क्या है। पर और सब जो नाराज होंगे?"

उसके मुँहपर हँसी होनेपर भी आशु बाबूको चोट पहुँची, बोले, "बात तुम्हारी झूठ नहीं कमल। पर जो लोग नाराज होंगे उनमेंसे यहाँ कोई मौजूद नहीं है। यहाँके नये मजिस्ट्रेट एक बंगाली हैं। उनकी खास मणिकी मित्रता है, दोनों साथ-साथ कालेजमें पढ़ी हैं। दो दिन हुए वे यहाँ पतिके पास आई हैं,—मणि उन्हींके यहाँ घूमने गई है, शायद रातको लौटेगी।"

कमलने हँसते हुए पूछा, "आपने कहा, कि वो लोग नाराज होंगे—सो एक तो मनोरमा हुई, और बाकीके और कौन हैं?"

आशु बाबूने कहा, "सभी हैं। यहाँ ऐसोंकी कमी नहीं। पहले मालूम होता था कि अजितकी तुम्हारे प्रति नाराजगी नहीं है, पर अब देखता हूँ कि उसका विद्वेष ही सबसे बढ़कर है। उसने तो अक्षय बाबूको भी मात कर दिया है।"

यह देखकर कि कमल चुपचाप सुन रही है, वे कहने लगे, "जब आया था तब उसे ऐसा नहीं देखा था, अचानक दो ही तीन दिनमें मानो वह बिलकुल बदल गया है। अब अविनाशको भी ऐसा ही देख रहा हूँ। इन सबोंने मिलकर मानो तुम्हारे विरुद्ध षड्यन्त्र-सा रच रखा है।"

अबकी बार कमल हँस दी, बोली, "अर्थात्, कुशांकुरके ऊपर वज्राघात! पर मुझ जैसी समाज और दुनियासे बहिष्कृत एक तुच्छ औरतके विरुद्ध षड्यन्त्र किसलिए? मैं तो किसीके घर जाती नहीं।"

आशु बाबूने कहा, "सो तो ठीक है। शहरमें यह भी कोई नहीं जानता कि तुम्हारा घर कहाँ है, पर इसलिए तुम तुच्छ नहीं हो कमल। और इसीलिए ये लोग न तुम्हें भूल ही सकते हैं और न माफ ही कर सकते हैं। तुम्हारी चर्चा बगैर किये, तुम्हें कोंचे बगैर इन्हें न चैन मिलता है न शान्ति।" कहते-कहते वे अकस्मात् हाथके कागजको उठाकर बोले, "यह क्या है, जानती हो? अपने

बाबूकी रचना है। अँग्रेजीमें नहीं होती तो तुम्हें सुनाता। नाम धाम नहीं है, पर शुरूसे आखिरतक सिर तुम्हारा ही बात है, तुम्हींपर हमला है। कल मजिस्ट्रेट साहबके घरपर, सुनते हैं, नारी-कल्याण-समितिका उद्घाटन होगा, यह उसीका मंगल अनुष्ठान है।" यह कहकर उन्होंने उसे दूर फेंक दिया और कहा, "यह सिर्फ निबन्ध ही नहीं है, बीच-बीचमें विशेष तौरपर पात्र पात्रियोंके मुँहसे इसमें तरह-तरहकी बातें भी कहलवाई गई हैं। इसकी मूल नीतिके साथ किसीका विरोध नहीं,—विरोध हो भी नहीं सकता। पर इसमें वही बात नहीं, व्यक्ति विशेषपर कदम-कदमपर आघात करते रहनेमें ही मानो इसका आनन्द है। पर अगयका आनन्द और मेरा आनन्द एक नहीं है, कमल। इसे तो मैं अच्छा नहीं कह सकता।"

कमलने कहा, "पर मैं तो इस लेखको सुनने नहीं जाऊँगी,—फिर मुझपर चोट करनेकी सार्थकता क्या हुई?"

आशु बाबूने कहा, "कुछ भी सार्थकता नहीं, इसीसे शायद उन लोगोंने मुझे पढ़नेको दिया है। सोचा होगा 'इतनेमेंसे मुट्ठीभर ही सही।' इस बूढ़ेको दुःख देकर जितना क्षोभ मिटाया जा सके उतना ही अच्छा।" कहते हुए उन्होंने हाथ बढ़ाकर फिर एक बार कमलको अपनी ओर खींचा। इस स्पर्श मात्रमें कितनी बात थी, कमल सबकी सब तो नहीं समझ सकी फिर भी उसका अन्तःकरण न जाने कैसा हो उठा। वह जरा ठहरकर बोली, "आपकी कमजोरी को तो उन लोगोंने ताड़ लिया, पर आपके भीतरके असल आदमीको वे नहीं पहचान सके।"

"क्या तुमने पहचान लिया है बेटी?"

"शायद उन लोगोंसे ज्यादा।"

आशु बाबूने इसका उत्तर नहीं दिया, बहुत देरतक नीरव रहकर वे धीरे धीरे कहने लगे, "सभी सोचते हैं कि हमेशा खुश रहनेवाले इस बूढ़ेके समान सुखी कोई नहीं। बहुत रुपया है, काफी जमीन जायदाद—"

"पर यह तो झूठ नहीं।"

आशु बाबूने कहा, "झूठ नहीं। धन और सम्पत्ति मेरे काफी है, पर यह आदमीके लिए कितना-सा है कमल?"

कमल हँसती हुई बोली, "बहुत है आशु बाबू।"

आशु बाबूने गरदन फेरकर उसकी तरफ देखा, फिर कहा, "अगर कुछ खयाल न करो तो तुमसे एक बात कहूँ,—"

"कहिए ?"

"मैं बुड्ढा आदमी हूँ, और तुम मेरी मणिकी उमरकी हो। तुम्हारे मुँहसे अपना नाम मेरे खुदके कानोंमें न जाने कैसा खटकता है कमल। तुम्हें कोई एतराज न हो तो तुम मुझे 'चाचाजी' कहा करो।"

कमलके आश्चर्यका ठिकाना न रहा। आशु बाबू कहने लगे, "कहावत है कि निरकुल मामा न होनेसे तो काना मामा ही अच्छा, मैं काना न सही, पर लँगड़ा जरूर हूँ, गठियासे लाचार। बाजारमें आशु वैद्यकी कानी कौड़ी कीमत नहीं।" फिर उन्होंने हँसकर कौतुकके साथ हाथका अँगूठा हिलाते हुए कहा, "न हो तो क्या है बेटी, लेकिन जिसके पिता जिन्दा नहीं उसके इतने शकी होनेसे काम नहीं चलेगा। उसके लिए लँगड़ा चाचा भी अच्छा !"

दूसरे पक्षसे जवाब न पाकर वे फिर कहने लगे, "कोई अगर चिढ़ाये कमल, तो उसे विनयके साथ कहना, 'मेरे लिए इतना ही बहुत है।' कहना 'गरीबके लिए राँग ही सोना है'।"

उनकी कुरसीके पीछे बैठी कमल छतकी ओर आँख किये आँसू रोकनेकी कोशिश करने लगी, कुछ जवाब न दे सकी। इन दोनोंमें कहींसे भी कोई मेल नहीं, और सिर्फ अनात्मीय अपरिचितका ही जबरदस्त फासला नहीं है, बल्कि शिक्षा, संस्कार, रीति नीति, गार्हस्थ्य और सामाजिक व्यवस्थामें भी दोनोंमें कितनी जबरदस्त जुदाई है! जहाँ कोई सम्बन्ध ही नहीं, वहाँ सिर्फ एक सम्बोधनके छलसे ही उसे बाँध रखनेकी चतुराई देख कमलकी आँखोंमें बहुत दिनों बाद आज आँसू भर आये।

आशु बाबूने पूछा, "क्या बिटिया, यह सकोगी ?"

कमलने उमड़ते हुए आँसुओंको सँभालते हुए सिर्फ इतना कहा, "नहीं।"

"नहीं ? नहीं क्यों ?"

कमलने इस प्रश्नका उत्तर नहीं दिया, दूसरी बात छेड़ दी। बोली, "अजित बाबू कहाँ हैं ?"

आशु बाबू कुछ देर चुप रहकर बोले, "क्या मालूम, शायद घरपर ही होगा।" फिर कुछ देर मौन रहकर धीरे धीरे कहने लगे, "कई दिनसे मेरे पास

विशेष आता जाता नहीं और शायद वह यहाँसे जल्दी हो जायगा।"

"कहाँ जायँगे?"

आशु बाबूने हँसनेका प्रयास करते हुए कहा, "बूढ़े आदमीको सब लोग क्या सब बात बताते हैं, बिटिया? नहीं बताते। शायद जरूरत ही नहीं समझते बतानेकी।" जरा ठहरकर बोले, "सुना होगा शायद, मणिके साथ उसका सम्बन्ध बहुत दिनोंसे तय था, सहसा मालूम हो रहा है कि दोनोंमें किसी बातपर झगड़ा हो गया है। कोई किसीके साथ अच्छी तरह बात ही नहीं करता।"

कमल चुप हो रही। आशु बाबू एक गहरी साँस लेकर बोले, "जगदीश्वर मालिक हैं, उनकी इच्छा। एक तो ज्ञानमें उन्मत्त है और दूसरा अपने पुराने अभ्यासोंको भय भागके ठीक करनेमें लग गया है। इस समय यही तो चल रहा है।"

कमलसे अब चुप नहीं रहा गया, कुतूहलके मारे पूछ बैठी, "पुराने अभ्यास क्या?"

आशु बाबूने कहा, "बहुत से हैं। पहले गेरुआ पहनकर सन्यासी हुआ, फिर मणिसे प्रेम किया, देशोद्धारके काममें जेल गया, विलायत जाकर इंजीनियर हुआ, वहाँसे वापस आनेके बाद गृहस्थ होनेकी इच्छा हुई,—पर फिलहाल शायद वह कुछ बदल गई है। पहले मांस मछली नहीं खाता था, उसके बाद खाने लगा था, अब देखता हूँ कि कल परसोंसे फिर छोड़ बैठा है। जदु कहता है, बाबू घण्टे घण्टे भर कमरेमें बैठे नाक मूँदकर योगाभ्यास किया करते हैं।"

"योगाभ्यास करते हैं?"

"हाँ। नाम्बर ही कह रहा था, देश लौटने समय शायद काशी उतरकर समुद्रयात्राके लिए प्रायश्चित्त करता जायगा।"

कमलने अत्यन्त आश्चर्यके साथ कहा, "समुद्र यात्राके लिए प्रायश्चित्त करेंगे? अजित बाबू?"

आशु बाबूने सिर हिलाते हुए कहा, "वह कर सकता है। उसमें सर्वतोमुखी प्रतिभा है।"

कमल हँस दी। कुछ कहना ही चाहती थी कि इतनेमें दरवाजेके पास किसी आदमीकी छाया दीख पड़ी और जिस नौकरने इतने विभिन्न प्रकारके

संवाद मालिकको पहुँचाये थे वही समाचार आ गया हुआ, और उसीने सबसे अन्दर कमरेमें संवाद यह दिया कि शिवनाथ, अजय, हरेन्द्र, अजित आदि बाबुओंका दल आ गया है।—सुनकर सिर्फ कमला ही नहीं, बल्कि, बाबुओंके आगमन होनेपर उच्छ्वसित उल्लाससे अभ्यर्थना करना जिनका स्वभाव है उन आशु बाबूतकका मुँह सूख गया। क्षण भर बाद आगन्तुक शिवनाथ कमरेमें घुसते ही आश्चर्यचकित हो गया। कारण, यह बात उनकी कल्पनाके बाहर थी कि यह औरत यहाँ इस तरह मिल सकती है। हरेन्द्रने हाथ उठाकर कमलको नमस्कार करके कहा, "अच्छी तो हैं? बहुत दिनोंसे आपको देखा नहीं।"

शिवनाथने हँसने जैसी मुखाकृति करके एक बार इधर और एक बार उधर गरदन हिलाई जिसका कोई अर्थ ही समझमें नहीं आया। अजय सीधा आदमी ठहरा। वह सीधे मार्गसे आया और सीधे अभिप्रायसे पत्थरकी तरह क्षण भर सीधे खड़े रहकर एक आँखसे अवज्ञा और दूसरीसे विरक्ति बरसाता हुआ एक कुरसी खींचकर बैठ गया। आशु बाबूसे उसने पूछा, "मेरा आर्टिकल पढ़ा?" यह पूछनेके बाद ही उसकी नजर जमीनपर लोटते हुए अपने लेखपर पड़ी। उसे वह खुद ही उठाने जा रहा था कि हरेन्द्रने उसे रोकते हुए कहा, "रहने दीजिए न अजय बाबू, झाड़ू लगाते वक्त नौकर ही फेंक देगा।"

उसका हाथ अलग करके अजयने कागज उठा लिये।

"हाँ, पढ़ लिया।" कहते हुए आशु बाबू उठकर बैठ गये। आँख उठाकर देखा कि अजितने उधरके सोफेपर बैठकर कलके अखबारपर नजर दौड़ाना शुरू कर दिया है। शिवनाथने कुछ कहनेका मौका पा जानेसे एक सन्तोषकी साँस ली और कहा, "मैंने भी अजयका लेख शुरूसे आखिरतक ध्यानसे पढ़ा है, आशु बाबू। अधिकांश बातें सच और मूल्यवान् हैं। देशकी सामाजिक व्यवस्थाका अगर सुधार किया जाय तो उसे अच्छी तरह जाने हुए और पक्के मार्गपर ही करना चाहिए। हम मानते हैं कि यूरोपके समागमसे हमने बहुत-सी अच्छी चीजें पाई हैं और अपनी बहुतेरी त्रुटियोंको हमने देखा है, परन्तु हमारा सुधार हमारे अपने मार्गपर ही होना चाहिए। दूसरोंके अनुकरणसे हमारा कल्याण नहीं हो सकता। भारतीय नारीकी जो विशिष्टता है, जो उसकी अपनी चीज है, अगर लोभ और मोहके वश होकर हम उससे उसे भ्रष्ट करें, तो हम हर तरहसे असफल होंगे।—ठीक है कि नहीं, अजय बाबू?"

बात अच्छी है और सब आशु बाबूके लेखकी है। विनय-वश उन्होंने मुँहसे और कुछ नहीं कहा, पर आत्म गौरवकी अनिर्वचनीय तृप्तिसे आधे मुँदे नेत्रोंसे कई बार सिर हिलाया।

आशु बाबूने निष्कपटतासे स्वीकार करते हुए कहा, "इस विषयमें तो कोई तर्क नहीं, अविनाश बाबू। अनेक मनीषी अनेक दिनोंसे यह बात कहते आये हैं, और शायद भारतका कोई भी आदमी इसका विरोध नहीं करता।"

अक्षय बाबूने कहा, "करनेका रास्ता ही नहीं, और इसके अलावा और भी एक विषय है जो इस लेखमें लिखा नहीं गया है, किन्तु कल नारी-कल्याण समितिमें मैं अपने भाषणमें कहूँगा।"

आशु बाबूने कमलकी तरफ मुँह फेरकर कहा, "तुम्हारे लिए तो समितिकी तरफसे निमंत्रण आया नहीं है, तुम वहाँ नहीं आओगी। मैं भी गठियासे लाचार हूँ। मैं भले ही न जाऊँ पर है वह तुम्हीं लोगोंकी भलाई बुराईकी बात। अच्छा कमल, तुम्हें तो इस बातपर आपत्ति नहीं होगी?"

और किसी समय होता तो आजके दिन कमल चुप ही रहती, पर, एक तो उसका मन यों ही ग्लानिसे भरा हुआ था, दूसरे इतने आदमियोंकी इस पौरुषहीन क्षुद्रता और दम्भपूर्ण प्रतिकूलतासे उसके मनमें एक आग-सी जल उठी। परन्तु अपनेको यथासाध्य संयत करके वह मुँह उठाकर हँसती हुई बोली, "कौन सी बातपर आशु बाबू? अनुकरणपर या भारतीय विशिष्टतापर?"

आशु बाबूने कहा, "मान लो कि दोनों ही पर?"

कमलने कहा, "अनुकरण चीज अगर सिर्फ बाहरकी नकल हो तो वह धोखा है, अनुकरण है ही नहीं क्योंकि तब वह आकृतिसे मेल खाते हुए भी प्रकृतिसे नहीं मिलती। मगर, भीतर-बाहरसे वह अगर एक-सी हो तो 'अनुकरण' होनेके कारण लज्जित होनेको उसमें कोई भी बात नहीं।"

आशु बाबूने सिर हिलाते हुए कहा, "है क्यों नहीं कमल, है। उस तरह सर्वांगीण अनुकरणमें हम अपना विशेषता खो बैठते हैं। उसके मानी हैं अपनेको बिल्कुल ही खो बैठना। इसमें अगर दुःख और लज्जा नहीं, तो किसमें है बताओ?"

कमलने कहा, "भले ही खो बैठें आशु बाबू! भारतके वैशिष्ट्य और यूरोपके वैशिष्ट्यमें बड़ा भारी भेद है, परन्तु किसी देशके किसी वैशिष्ट्यके लिए

मनुष्य नहीं है, बल्कि मनुष्यके लिए ही उस वैशिष्ट्यका आदर है। असल बात विचारनेकी यह है कि वर्तमान समयमें वह वैशिष्ट्य उसके लिए कल्याणकर है या नहीं। इसके सिवा और सब बात सिर्फ अंध मोह हैं।"

आशु बाबूने व्यथित होकर कहा, "सिर्फ अंध मोह ही हैं कमल, उससे ज्यादा कुछ नहीं?"

कमलने कहा, "नहीं, उससे ज्यादा कुछ नहीं। सिर्फ इसीलिए कि किसी एक जातिकी कोई एक विशेषता बहुत दिनोंसे चली आ रही है, क्या उस देशके मनुष्योंको अपने कल्याण-अकल्याणका ख्याल किये बगैर उसी साँचेमें हमेशा ढलते रहना होगा? इसके क्या मानी? मनुष्यसे बढ़कर मनुष्यकी विशेषता नहीं हो सकती, और इस बातको जब हम भूल जाते हैं तब विशेषता भी जाती रहती है और मनुष्यको भी हम खो बैठते हैं। यहाँपर तो वास्तविक लज्जा है आशु बाबू।"

आशु बाबू मानो हतबुद्धि-से हो गये, बोले, "तब तो फिर सब एकाकार हो जायगा? भारतीयके रूपमें तो फिर हम पहचाना भी नहीं जा सकेगा। इतिहासमें ऐसी घटनाओंकी साक्षी भी मौजूद है।"

आशु बाबूके कुण्ठित और विक्षुब्ध चेहरेकी तरफ देखकर कमलने हँसते हुए कहा, "तब मुनि ऋषियोंके वंशधरके रूपमें भले ही न पहचाना जाय, पर मनुष्यके रूपमें तो हम पहचाना ही जायगा और जिसे आप ईश्वर कहा करते हैं, वह भी पहचान लेगा, उससे भी गलती न होगी।"

अक्षयने उपहासके ढंगसे चेहरेको कठोर बनाकर कहा, "ईश्वर सिर्फ हम ही लोगोंका है? आपका नहीं?"

कमलने जवाब दिया, "नहीं।"

अक्षयने कहा, "यह सिर्फ शिवनाथकी प्रतिध्वनि है, सिखाई हुई बात है।"

हरेन्द्र बोल उठा, "ब्रूट!" (हिंस्र पशु!)

"देखिए हरेन्द्र बाबू—"

"देख रहा हूँ। बीस्ट!" (पशु!)

आशु बाबू सहसा मानो स्वप्नाविष्टकी भाँति जाग उठे। बोले, "देखो कमल, दूसरोंकी बात मैं नहीं कहना चाहता, पर, हमारा भारतीय वैशिष्ट्य सिर्फ बात ही-बात नहीं है। इसका चला जाना कितनी जबरदस्त क्षति है, उसका

हिसाब लगाना दु साध्य है। कितने धर्म, कितने आदर्श, कितने पुराण इतिहास, काव्य, उपाख्यान, शिल्प,—कितनी कितनी अमूल्य सम्पदाएँ,—सब कुछ इसी वैशिष्ट्यपर ही तो आजतक जीवित है। फिर इनमेंसे तो कुछ भी नहीं रह जायगा ?"

कमलने कहा, "रहने रखनेके लिए आखिर इतना व्याकुलता क्यों ? जा जानेके हा, सो नहीं जायँगे। मनुष्यकी आवश्यकताओंके अनुसार फिर वे नवीन रूप, नवीन सौन्दर्य, नवीन मूल्य लेकर दिखाई देंगे। वही होगा उनका सच्चा परिचय। अन्यथा, सिर्फ इसीलिए कि बहुत दिनोंसे कोई चीज है, उसे और भी बहुत दिनोंतक पकड़े रहना होगा,—यह कैसी बात है ?"

अजयने कहा, "इसके समझनेकी शक्ति नहीं है आपमें।"

हरेन्द्रने कहा, "आपके अशिष्ट व्यवहारपर मुझे आपत्ति है अजय बाबू।"

आशु बाबूने कहा, "यह मैं नहीं कहता कमल कि तुम्हारी युक्तियोंमें सत्य नहीं, पर जिसकी तुम अवज्ञासे उपेक्षा कर रही हो उसके भीतर भी बहुत-सा सत्य है। नाना कारणोंसे हमारे सामाजिक विधि विधानोंपर तुम्हारी अश्रद्धा हो गई है। मगर एक बात मत भूलो कमल कि बाहरके बहुत-से उत्पात हम सहते पड़े हैं, फिर भी जो आजतक हम अपनी सम्पूर्ण विशेषताओंको लिये जिन्दा हैं सो केवल इसीलिए कि हमारा आधार सत्य था। संसारकी बहुत सी जातियाँ बिलकुल लुप्त हो चुकी हैं।"

कमलने कहा, "तो इसमें भी दु ख किस बातका है ? हमेशा एक जगह घेरे बैठे रहनेकी भी क्या आवश्यकता है ?"

आशु बाबूने कहा, "यह दूसरी बात है कमल।"

कमल कहने लगी, "भले ही हो। पिताजीसे मैंने सुना था कि आर्यांकी एक शाखा यूरोपमें जाकर रहने लगी थी, आज वह नहीं है। मगर उनके बदले जो हैं, वे और भी बड़े हैं। ऐसा ही अगर यहाँ होता, तो उनकी तरह ही हम लोग भी आज पूर्व पितामहोंके लिए शोक करने न बैठते, और न अपने सनातन वैशिष्ट्योंपर दम्भ करते हुए दिन ही गुजारते। आप कह रहे थे अतीतके उपद्रवोंकी बात, पर यह भी तो सत्य नहीं कहा जा सकता कि उनसे भी बढ़कर उपद्रव भविष्यमें हमारे भाग्यमें नहीं बदे हैं, या हमारी सारी ही जल्फ कट चुकी हैं। तब हम लोग जीवित रहेंगे किसके बलपर, बताइए भला ?"

आशु बाबूने इस प्रश्नका उत्तर नहीं दिया, मगर अक्षय बाबू उद्दीप्त हो उठे, बोले, "तब भी हम जीवित रहेंगे अपने उस आदर्शकी नित्यताके बलपर जो कि हजारों युगोंसे हमारे मज्जामें अभिनन्दित बना हुआ है। जो आदर्श हमारे दानमें, हमारे पुण्यमें, हमारी तपस्यामें मौजूद है, जो आदर्श हमारी नारी जातिके अक्षय सतीत्वमें निहित है, हम उसीके बलपर जीवित रहेंगे। हिन्दू कभी नहीं मरते।"

अजित हाथका अखबार फेंककर उनकी तरफ आँख फाड़-फाड़कर देखता रहा, और क्षण भरके लिए कमल भी चुप हो रही। उसे खयाल आ गया कि निबन्ध लिखकर इन्हीं आदमीने उसपर अकारण आक्रमण किया है। उसे वह कल नारी जातिके कल्याणके लिए अनेक नारियोंके समक्ष इनके साथ पड़ेगा, और उसमें सारे-के-सारे कटाक्ष सिर्फ उसीको लक्ष्य करके किये हैं। दुःख और क्रोधसे उसका चेहरा सुर्ख हो उठा, परन्तु इस बार भी उसने अपनेको सँभाल लिया और स्वाभाविक स्वरमें कहा, "आपके साथ बात करनेकी मेरी इच्छा नहीं होती अक्षय बाबू, मेरे आत्म-सम्मानमें चोट लगती है।" यह कहकर वह आशु बाबूकी तरफ मुँह फेरकर कहने लगी, "यही बात मैंने आपसे कहनी चाही थी कि कोई भी आदर्श सिर्फ इसीलिए कि वह बहुत कालतक स्थायी रहा है, चिरस्थायी नहीं हो सकता और उसके परिवर्तनमें भी लज्जाकी कोई बात नहीं, उससे जातिकी विशिष्टता भी अगर जाती हो, तो भी। एक उदाहरण देती हूँ। अतिथि सत्कार हमारा एक बड़ा आदर्श है। कितने काव्य, कितने कथानक, कितनी धर्मकथाएँ इसपर रची जा चुकी हैं। अतिथिको खुश करनेके लिए दाता कर्णने पुत्रतककी हत्या कर दी थी। इस बातपर न जाने कितने आदमियोंने आँसू बहाये होंगे। फिर भी, यह कार्य आज सिर्फ कुत्सित ही नहीं बल्कि बीभत्स माना जायगा। एक सती स्त्रीने पतिको कंधेपर रखकर गणिकालय पहुँचा दिया था,—सतीत्वके इस आदर्शकी भी किसी दिन तुलना नहीं थी,—मगर आज ऐसी घटना कहीं हो जाय तो वह मनुष्यके हृदयमें सिर्फ घृणा ही उत्पन्न करेगी। आपका अपने जीवनका जो आदर्श, जो त्याग, लोगोंके मनमें श्रद्धा और विस्मयका कारण हो रहा है, किसी दिन ऐसा आ सकता है जब यह सिर्फ अनुकम्पाकी बात रह जायगी और उस निष्फल आत्म-निग्रहकी ज्यादतीपर लोग उपहास करते चले जायँगे।"

इस आघातकी निर्ममतासे क्षणभरके लिए आशु बाबूका चेहरा वेदनासे पीला पड़ गया। वे बोले, "कमल, इसे निग्रहके रूपमें ले क्या रही हो, यह तो मेरा आनन्द है। यह तो मेरा उत्तराधिकार सबसे प्राप्त अनेक युगोंका धन है।"

कमलने कहा, "हाँ अनेक युगोंका। सिर्फ वर्ष गिनकर ही आदर्शोंका मूल्य नहीं आँका जाता। अचल, अनड़ गलतियोंमें भरे समाजके हजारों वर्ष भी, सम्भव है, भविष्यके दस वर्षके गति-वेगमें वह जायँ। वे दस वर्ष ही उन हजारों वर्षोंसे बहुत ज्यादा बड़े हैं, आशु बाबू।"

अजित अकस्मात् मनुष्यके छोड़े हुए तीरकी तरह सीधा खड़ा हो गया, बोला, "आपकी शालीनता उग्रतासे इन लोगोंके शायद आश्चर्यका ठिकाना न रहा होगा, मगर मुझे जरा भी आश्चर्य नहीं हुआ। मैं जानता हूँ कि इस विजातीय मनोभावका मूल स्रोत कहाँ है? किसलिए हमारे समस्त मंगल आदर्शोंके प्रति आपको इतनी जबरदस्त घृणा है? मगर चलिए, अब हमारे पास व्यर्थ देर करनेका वक्त नहीं है, पाँच बज गये।"

अजितके पीछे पीछे सबके सब चुपचाप कमरेसे बाहर निकल गये। किसीने उससे अभिवादनतक नहीं किया, और न किसीने उसकी तरफ मुड़कर देखा ही। युक्तियाँ जब हार मानने लगीं तब इस तरहके पुरुषार्थ-दलने विजय-घोषणा करके अपने पौरुषको कायम रखा। उन लोगोंके चले जानेपर आशु बाबूने धीरे धीरे कहा, "कमल, मुझपर ही आज तुमने सबसे ज्यादा चोट पहुँचाई है, किन्तु मैंने ही आज तुम्हें मानो सम्पूर्ण हृदयसे प्यार किया है। मेरी मणिसे मानो किसी अंशमें भी तुम कम नहीं हो बेटी।"

कमलने कहा, "इसका कारण यह है कि आप सचमुचमें महान् पुरुष हैं चाचाजी। आप तो इन सबों जैसे मिथ्या नहीं हैं। पर मेरा भी समय निकला जा रहा है, मैं जाती हूँ।" इतना कहकर उसने उनके पाँवोंके पास जाकर झुकके प्रणाम किया।

प्रणाम वह साधारणतः किसीको भी नहीं करती। आज उसके इस अनहोने आचरणसे आशु बाबू चंचल हो उठे। आशीर्वाद देते हुए बोले, "अब कब आओगी बेटी?"

"अब शायद मेरा आना न होगा चाचाजी।" इतना कहकर वह कमरेसे बाहर चली गई और आशु बाबू उसकी तरफ देखते हुए चुपचाप बैठे रहे।

१२

आगरेके नये मजिस्ट्रेटकी स्त्रीका नाम है मालिनी। उन्हींके प्रयाससे और उन्हींके मकानपर नारी-कल्याण समितिकी स्थापना हुई। प्रथम अधिवेशनकी तैयारियाँ जरा कुछ समारोहके साथ ही हुई थीं, किन्तु अधिवेशन अच्छी तरह सम्पन्न तो हुआ नहीं, बल्कि उसमें न जाने कैसी एक विशृङ्खला-सी पैदा हो गई। बात मुख्यतः यह थी कि यद्यपि आयोजन सब स्त्रियोंके लिए ही था पर पुरुषोंके शरीक होनेकी भी मनाही नहीं थी, बल्कि देखा जाय, तो इस आयोजनमें पुरुष ही कुछ विशेषतासे निमन्त्रित हुए थे। इसका भार था अक्षयपर। मननशील लेखकके तौरपर अक्षयका नाम था, और लेखोंका दायित्व उन्होंने ग्रहण किया था। अतएव, उन्हींके परामर्शके अनुसार एक शिवनाथके सिवा और किसीको भी छोड़ा नहीं गया था। अविनाशकी छोटी साली नीलिमा घर घर जाकर धनीसे लेकर गरीबतक शहरकी सभी बंगाली शिष्ट महिलाओंसे आनेके लिए अनुरोध कर आई थी। फिर, आनेकी इच्छा नहीं थी आशु बाबूकी, पर गठियाके दर्दने आज उनको रोका नहीं तो, मालिनी खुद आकर उन्हें पकड़ ले गई। अक्षय अपना व्याख्यान हाथमें लिये तैयार था, मामूली विनय भावगर्भ प्रचलित दो-चार शब्दोंके बाद वह सीधा और तनकर खड़ा हो गया और व्याख्यान पढ़ने लगा। थोड़ी ही देरमें ऐसा लगा कि उसका वक्तव्य विषय जैसा जटिलतर है वैसा ही लम्बा भी। साधारणतः जैसा हुआ करता है, प्राचीन कालकी सीता-सावित्री आदिका उल्लेख करके उसने आधुनिक नारी जातिकी आत्म-हीनतापर कटाक्ष किये थे। एक आधुनिक और शिक्षिता महिलाके घरपर उन्हींकी 'तथाकथित' शिक्षाके विरुद्ध कड़वी बातें कहनेमें उसे संकोच नहीं हुआ। कारण अक्षयको गर्व था कि अप्रिय सत्य कहनेमें वह डरता नहीं। लिहाजा, व्याख्यानमें सत्य हो, चाहे न हो, अप्रिय वचनोंकी कमी नहीं थी। और उस 'तथाकथित' शब्दकी व्याख्याके रूपमें शिक्षाके उदाहरणकी नजीर थी कमल। इस अनुपस्थित स्त्रीके प्रति अक्षयके व्याख्यानमें इतना अपमान था कि जिसकी हद नहीं। अन्तके अंशमें वह गहरे दुःखके साथ ये शब्द कहनेके लिए मजबूर हो गया कि इसी शहरमें और ऐसी ही एक स्त्री मौजूद है, जो शिष्ट समाजमें बराबर प्रश्रय पा रही है। ऐसी स्त्री, जिसने अपने दाम्पत्य जीवनको अवैध जानकर

भी लज्जित होना तो दूर रहा, सिर्फ उपेक्षाकी हँसी हँसी है, जिसके लिए विवाह अनुष्ठान सिर्फ अर्थहीन संस्कारमात्र है और पति-पत्नीका अत्यन्त एकनिष्ठ प्रेम जिसकी दृष्टिमें महज मानसिक कमजोरी है। उपसंहारमें अन्तमें इस बातका भी उल्लेख किया कि नारी होकर भी जो नारीके गम्भीरतम आदर्शको अस्वीकार करती है, तथाकथित उस शिक्षित नारीके उपयुक्त विशेषण और खास स्थानका निर्णयमें वक्ताका अपनी तरफसे कोई संशय न होनेपर भी सिर्फ संकोचवश वह उसे बतानेमें असमर्थ है। इस त्रुटिके लिए वह सबसे क्षमा चाहता है।

वर्तमान महिला-समाजमें मनोरमाके सिवा और किसीने उस औरतको नहीं देखा था। परन्तु उसके रूपकी ख्याति और चरित्रकी अख्यातिने हरेक पुरुषके मुँहपर चक्कर लगाते व्याप्त होनेमें कसर नहीं रखी। यहाँतक कि इस नव प्रतिष्ठित नारी-कल्याण-समितिकी सभानेत्री मालिनीके कानोंमें भी वह पहुँच चुकी थी, और इस विषयको लेकर नारी मण्डलमें परदेके भीतर और बाहर कुतूहलकी सीमा न रही थी। इसलिए, रुचि और नीतिके सम्बन्ध विचारके उत्साहसे उद्दीप्त प्रश्नमालाकी प्रखरतासे व्यक्तिगत आलोचना तीव्र हो उठनेमें शायद देर न लगती, किन्तु वक्ताका परम मित्र हरेन्द्र ही इसमें कठोर प्रतिवादकर हो उठा। वह सीधा उठके खड़ा हो गया और बोला, "अक्षय बाबूके इस निबन्धका मैं पूर्णतः प्रतिवाद करता हूँ। सिर्फ अप्रासंगिक होनेकी वजहसे ही नहीं,—किसी भी महिलापर उसकी गैरमौजूदगीमें आक्रमण करनेकी रुचि नीरस्ली (पाशविक) और उसके चरित्रका अकारण उल्लेख करना अशिष्ट और हेय है। नारी-कल्याण समितिकी तरफसे इस निबन्ध लेखकका धिक्कार देना चाहिए।"

इसके बाद ही एक महामारीका-सा काण्ड उठ खड़ा हुआ। अक्षय हिताहित ज्ञानशून्य होकर जो मनमें आया, कहने लगा और उसके उत्तरमें स्वल्पभाषी हरेन्द्र बीच बीचमें 'नीस्ट' और 'ब्रूट' कहकर जवाब देने लगा।

मालिनी नई नई ही इनके सम्पर्कमें आई थी, सम्भवतः इस तरहके वाक् वितण्डाकी उग्रतासे बड़ी आफतमें पड़ गई, और इस उत्तेजनाके प्रवाहमें अपना मतामत प्रकट करनेमें किसीने भी कञ्जूसीसे काम नहीं लिया। चुप रहे सिर्फ एक आशु बाबू। निबन्ध पढ़े जानेके प्रारम्भसे ही जो वे गरदन झुकाकर बैठे सो सभा खतम होनेतक फिर उन्होंने मुँह नहीं उठाया। और भी एक आदमीने इस तर्कयुद्धमें साथ नहीं दिया, और वे थे हरेन्द्र अक्षयकी बातचीतके नित्य

अच्छा अविनाश बाबू ।

इस बातको मालिनी जानती थी कि व्यक्ति विशेषके चरित्रकी भलाई बुराईका निरूपण करना इस समितिका लक्ष्य नहीं है और इस प्रकारकी आलोचनासे नर नारीमेंसे किसीका भी कल्याण नहीं होता । इस बातको भी किसी तरह मालिनी समझ गई कि किस ढंग आशु बाबूपर भी विशेष कटाक्ष किया गया है और इससे उनको अत्यन्त क्लेश हुआ है । सभा भंग होनेके बाद वह चुपकेसे अपना आसन छोड़कर इस प्रौढ़ व्यक्तिके पास आकर बैठ गई और लज्जित मृदु कण्ठसे बोली, "निश्चय आज आपकी शान्ति नष्ट करनेके लिए दुःखित हूँ आशु बाबू ।"

आशु बाबूने हँसनेकी कोशिश करते हुए कहा, "घरमें भी मैं अकेला ही बैठा रहता । यहाँ कमसे कम समय तो कट गया ।"

मालिनीने कहा, "यह इससे अच्छा था ।" फिर जरा ठहरकर कहा, "आज व[illegible] नहीं यहाँ, मणि यहाँसे क्या पैदल जायगी ?"

"अच्छी बात है, मैं यहाँसे जाकर गाड़ी भेज दूँगा । लेकिन और सब स्त्रियाँ ?"

"वे भी सब आज यहीं जीमेंगी ।"

अविनाश और अजितके साथ आशु बाबू गाड़ीमें बैठ ही रहे थे कि हरेन्द्र और अक्षय आ धमके । उन्हें भी पहुँचा देना होगा । राजी होना पड़ा । रास्ते भर आशु बाबू मौन रहे । निरन्तर उन्हें इस बातका खयाल होता रहा कि कमलको लक्ष्य करके [illegible] अक्षयने उनपर अशिष्ट कटाक्ष किया है ।

गाड़ी घरपर पहुँची । नीचेके बरामदेमें एक परिचित आदमी बैठा था । दफ्तरवाला जैसी उसकी पोशाक थी । पास आकर आशु बाबूको उसने अंग्रेजीमें अभिवादन किया ।

"क्या है ?"

जवाबमें उसने एक परचा हाथमें देते हुए कहा, "चिट्ठी है ।"

चिट्ठी उन्होंने अजितके हाथमें दे दी । अजितने उसे मोटरकी बत्तीके सामने ले जाकर पढ़ा, बोला, 'कमलकी चिट्ठी है ।"

"कमलकी ! क्या लिखा है कमलने ?'

"लिखा है, पत्र ले जानेवालेसे सब मालूम होगा ।"

आशु बाबूके जिज्ञासु चेहरेकी तरफ देखते हुए उसने कहा, "उनकी

इच्छा नहीं थी कि यह चिट्ठी और किसीके हाथ पड़े। आप उनके अपने आदमी हैं। मेरे उनपर कुछ रुपये चाहिए थे।"

बात खतम भी न हुई थी कि आशु बाबू सहसा अत्यन्त क्रुद्ध हो उठे, बोले, "मैं उसका अपना आदमी नहीं हूँ, असलमें वह मेरी कोई नहीं होती। उसकी तरफसे मैं क्यों रुपये देने लगा?"

गाड़ीमेंसे अक्षयने कहा, "जस्ट लाइक हर!" (ठीक उसीकी तरह)

बात सभीके कानमें पड़ी। पत्रवाहक भला आदमी था। लज्जित होकर बोला, "रुपये आपको नहीं देने होंगे, वे ही देंगी। आप सिर्फ कुछ दिनोंके लिए जामिन हो जायँ तो—"

आशु बाबूका गुस्सा और भी चढ़ गया। उन्होंने कहा, "जामिन होनेकी गरज मेरी नहीं है, उनके पति हैं, उनकी बात उन्हींसे करिएगा।"

भला आदमी अत्यन्त विस्मित हुआ, बोला, "उनके पतिकी बात तो मैंने सुनी नहीं।"

"पता लगानेसे सुन लेंगे। गुड् नाइट्। आओ अजित, अब देर न करो।" कहकर वे उसे लेकर ऊपर चले गये। ऊपरके सहनवाले बरामदेसे झाँककर फिर एक बार ड्राइवरको याद दिला दिया कि मजिस्ट्रेट साहबकी कोठीपर गाड़ी पहुँचानेमें देर नहीं होनी चाहिए। अजित सीधा अपने कमरेमें जा रहा था, पर आशु बाबू उसे अपनी बैठकमें ले गये, बोले, "बैठो। देख लिया मजा?"

इस बातके मानी क्या हुए, अजित समझ गया। वास्तवमें उनकी स्वाभाविक सहृदयता, शान्तिप्रियता और चिराभ्यस्त सहिष्णुताके साथ उनकी इस क्षण भर पहलेकी अकारण और अनचेती रूखाईने एक अक्षयके सिवा शायद और किसीको भी आघात पहुँचानेमें कसर नहीं रखी। बगैर कुछ जाने एक दिन इस रहस्यमयी तरुणीके प्रति अजितका अन्तःकरण श्रद्धा और विस्मयसे भर उठा था। मगर जिस दिन कमलने निशीथ रात्रिमें अपने विगत नारी जीवनका कच्चा चिट्ठा अनायास ही खोलकर रख दिया, उस दिनसे अजितके विराग और घृणाकी सीमा न रही। इसी तरह उसके ये कई दिन बीते हैं, और इसीमें आज नारी-कल्याण समितिके उद्घाटनके अवसरपर आदर्शवादी अक्षयने जो नारीत्वका आदर्श दिखानेके बहाने इस स्त्रीपर जितने भी कटाक्ष और

कटूक्तियाँ की थी, उनसे अजितको दुःख नहीं हुआ था। मानो उसने ऐसी ही आशा कर रखी थी। फिर भी आयकी क्रोधाग्नि नरताम चाहे जितना भी तीक्ष्ण शूल क्या न हो, आशु बाबू अभी अभी जो कर बैठे उसमें कमलके मानो कान मल दिये गये,—केवल अनवता होनेके कारण ही नहीं, पुरुषके अयोग्य होनेके कारण भी। कमलको वह अच्छा नहीं कहता। उसके मतामत और सामाजिक आचरणकी मुनीम निन्दामें अजितने अन्याय नहीं देखा। वह अपने अन्दर इस रमणीके विरुद्ध कठोर घृणाका भाव ही परिपुष्ट होता देख रहा है। वह कहता है, शिष्ट समाजमें जो चलता नहीं उसे छोड़ देनेमें अपराध इतावत नहीं। मगर इससे क्या हुआ?—दुर्नाम पड़ी एक कर्जदार स्त्रीकी बुरे दिनोंमें माँगी गई मामूली-सी कुछ रुपयोंकी भीखको लात मार देनेमें मानो वह पुरुष मानके चरम असम्मानका अनुभव करके मन ही मन जमीनमें गड़ गया। उस रातकी सारी बातचीत उसे याद आ गई। उसे बड़े जतनसे खिलाते वक्त कमल ने जो उस चाय-बगीचेकी आप बीती सारी घटनाएँ सुनाई थी, उसकी माँका किस्सा, उसका अपना इतिहास, अँग्रेज मनेजर साहबके घर पैदा होनेका वर्णन,—सब बात उसके दिमागमें घूमने लगी। वे जितनी अद्भुत थी, उतनी ही अरुचिकर। मगर वह सब कहनेकी उसे जरूरत क्या थी? और छिपा रखती तो नुकसान ही क्या होता? मगर दुनियाकी इस सहज सुबुद्धिके जमा-खर्चका हिसाब शायद कमलके खयालमें नहीं आया। अगर आया भी हो तो उसने उसकी परवाह नहीं की।

और सबसे बढ़कर आश्चर्यजनक उसका कठोरसे कठोर धैर्य है। दैवक्रमसे इसीके मुँहसे उसे पहले पहल मालूम हुआ कि शिवनाथ कहीं बाहर नहीं गया, इसी शहरमें छिपा हुआ है। और सुनकर वह चुप रही। चेहरेपर न तो वेदनाका आभास दिखाई दिया और न जबानसे शिकायतकी भाषा निकली। इतने बड़े मिथ्याचारके विरुद्ध उसने दूसरेके सामने शिकायत करनेका नामतक नहीं लिया।—उस दिन सम्राट् महिषी मुमताजके स्मृति-सौधके किनारे बैठकर जो बात उसने हँसते हुए हँसी हँसीमें मुँहसे निकाली थी उसका बिलकुल अक्षरशः पालन किया।

आशु बाबू खुद भी शायद क्षण भरके लिए अनमने हो गये थे, सहसा सचेत होकर पहले प्रश्नकी पुनरावृत्ति करते हुए बोले, "मजा देख लिया न अजित!

मैं निश्चयके साथ कहता हूँ कि यह उस शिवनाथकी ही चालाकी है।"

अजितने कहा, "नहीं भी हो। बिना जाने कुछ कहा नहीं जा सकता।"

आशु बाबूने कहा, "हाँ, हो सकता है। मगर मेरा विश्वास है कि यह चाल शिवनाथकी है। मुझे वह बड़ा आदमी जानता है न ?"

अजितने कहा, "यह तो सभीको मालूम है। कमल खुद भी न जानती हो, सो बात नहीं।"

आशु बाबूने कहा, "तब तो और भी ज्यादा बुरा है। पतिसे छिपाना तो अच्छी बात नहीं।"

अजित चुप रहा। आशु बाबू कहने लगे, "पतिसे छिपाकर और शायद उसकी रायके खिलाफ दूसरेसे रुपये उधार लेना स्त्रीके लिए कितनी बुरी बात है! इसे हरगिज प्रश्रय नहीं दिया जा सकता।"

अजितने कहा, "उन्होंने रुपये तो माँगे नहीं, सिर्फ जामिन होनेके लिए अनुरोध किया था।"

आशु बाबूने कहा, "दोनों बात एक ही है।" क्षण भर मौन रहकर वे फिर बोले, "और फिर मुझे अपना आदमी बताकर उस आदमीको धोखा किसलिए दिया ? वास्तवमें तो उसका कोई लगता नहीं।"

अजितने कहा, "शायद वे आपको सचमुच ही अपना समझती हों। मालूम होता है, उनका किसीको धोखा देनेका स्वभाव नहीं है।"

"नहीं नहीं, मैंने ठीक वैसी बात नहीं कही अजित।" कहकर मानो उन्होंने अपने तई जवाबदेही की। उस आदमीको सहसा झोंकमें आकर विदा कर देनेसे उन्हें भी मन ही मन बड़ा भारी ग्लानि सी हो रही थी। बोले, "अगर वह मुझे अपना ही समझती थी और दो चार सौ रुपयोंकी जरूरत ही आ पड़ी थी, तो वह सीधी खुद आकर ले जाती। खामखाह एक बाहरके आदमीको मेरे सामने भेजनेकी क्या जरूरत थी ? और चाहे जो हो, पर उस लड़कीमें विनय बिल्कुल नहीं।"

नौकरने आकर कहा कि भोजन तैयार है। अजित उठना चाहता था कि आशु बाबूने कहा, "तुमने उस आदमीको माफ किया था अजित, कैसा भद्दा चेहरा था,—मनी लेण्डर ठहरा न ! वहाँ जाकर शायद तरह-तरहकी बातें बनाकर कहेगा।"

अजितने हसकर कहा, "मनानेकी जरूरत नहीं पड़ेगी,—सच-सच कह देना ही काफी है।" यह कहकर ज्यों ही वह जानेको तैयार हुआ कि आशु बाबू सचमुच विचलित हो उठे, बोले, "यह अक्षय तो बिल्कुल ही दुस्सह मालूम होता है। आदमीकी सहन शक्तिकी सीमा लाँघ जाता है। बल्कि एक काम न करो अजित, जल्दी बुलाकर उस ड्राअरको खोलके देखो तो क्या है। कमसे कम पाँच-सात सौ रुपया,—फिलहाल जो हो, भेज दो। अपना ड्राइवर शायद उन लोगोंका घर जानता है,—शिवनाथको कभी कभी पहुँचा आया है।" यहकर उन्होंने खुद ही जोर-जोरसे नौकरको पुकारना शुरू कर दिया।

अजितने रोकते हुए कहा, "जो होना था सो हो चुका,—अब रातमें यह रहने दीजिए, कल सवेरे विचार कर देखिएगा।"

आशु बाबूने प्रतिवाद किया, "तुम समझते नहीं अजित, कोई खास जरूरतके बिना रातहीको यह आदमी हरगिज न भेजती।"

अजित क्षण भर स्थिर खड़ा रहा। अन्तमें बोला, "ड्राइवर तो अभी है नहीं यहाँ, मनोरमाको लेकर न जाने कबतक लौटे। इस बीच कमलको सब मालूम हो ही जायगा। उसके बाद रुपया भेजना उचित न होगा। शायद आपसे अब वे सहायता लेंगी भी नहीं।"

"मगर यह तो सिर्फ तुम्हारा अनुमान ही है अजित?

"हाँ, अनुमान तो है ही।"

"लेकिन, परदेसमें रुपयेकी जरूरत तो उससे लिए इससे भी ज्यादा हो सकती है?"

"सो हो सकती है, मगर वह जरूरत शायद आत्म-सम्मानसे बढ़कर न भी हो।"

आशु बाबूने कहा, "लेकिन यह भी तो तुम्हारा सिर्फ अनुमान ही है?"

अजितने सहसा कोई उत्तर नहीं दिया। क्षण भर सिर झुकाये चुप रहकर वह बोला, "हाँ, यह अनुमानसे भी बढ़कर है। यह मेरा विश्वास है।" इतना कहकर वह धीरे धीरे कमरेसे बाहर निकल गया।

आशु बाबूने अबकी उसे रोका नहीं, सिर्फ वेदनासे दोनों आँखें फैलाकर वे उसकी ओर देखते रहे। इस बातको वे खुद भी जानते हैं कि कमलके सम्बन्धमें ऐसा विश्वास होना न असम्भव है और न असङ्गत। निरुपाय पश्चात्ताप उनके

अन्त करणको माना ग्रराचने लगा ।

१३

नारी कल्याण मिनिसे लौटनेपर नीलिमा अविनाश बाबूको ले बैठ, "मुकर्जी महाशय, कमलसे एक दफे मिलूँगी । मेरी बडी इच्छा है, उसे निमन्त्रण देकर खिलाऊँ ।"

अविनाशने आश्चर्यके साथ कहा, "तुम्हारी हिम्मत तो कम नहीं है छोटी मालिकिन ! सिर्फ जान पहचान ही नहीं, एकबारगी निमन्त्रणतक कर देना चाहती हो ?"

"क्यों, वह कोई बाघ भालू है ? उससे इतना डर किसलिए ?"

अविनाशने कहा, "बाघ भालू इस प्रान्तमें नहीं मिलते, नहीं तो तुम्हारे हुक्मसे उन्हें भी निमन्त्रण दे आता । मगर इन्हें नहीं दे सकता । अक्षय सुन लेगा तो फिर खैर नहीं । मुझे देश निकाला देकर ही पिण्ड छोडेगा ।"

नीलिमा बोली, "अक्षय बाबूसे मैं नहीं डरती ।"

अविनाशने कहा, "तुम्हारे न डरनेसे कोई नुकसान नहीं उसका काम मेरे अकेले डरनेसे चल जायगा ।"

नीलिमाने जिद करते हुए कहा, "नहीं, सो नहीं होगा । तुम न जाओगे, तो मैं खुद जाकर उन्हें लिवा लाऊँगी ।"

"मगर मैं तो उनका घर जानता नहीं ।"

नीलिमा बोली, "लालाजी जानते हैं । मैं उनके साथ चली जाऊँगी । वे तुम जैसे डरपोक नहीं हैं ।"

फिर जरा सोचकर कहने लगी, "तुम लोगोंके मुँहसे जो सुना करती हूँ, उससे तो मालूम होता है कि शिवनाथ बाबूका ही कुसूर है । सो उन्हें तो मैं योतना नहीं चाहती । मैं चाहती हूँ कमलको देखना, उनसे बातचीत करना । कमल अगर आनेको राजी हो जाय तो मजिस्टेट साहबकी स्त्री,—वे भी आनेके लिए कहती हैं, समझे ?"

अविनाश समझ तो सब गये, पर साफ-साफ सम्मति न दे सके और न उनको रोकनेकी ही हिम्मत हुई । नीलिमापर वे सिर्फ स्नेह और श्रद्धा ही करते हों सो बात नहीं, मन ही मन उससे डरते भी थे ।

दूसरे दिन सवेरे हरेन्द्रको बुलाकर नीलिमाने कहा, "लालाजी, तुम्हें एक काम और करना होगा। तुम कुँआरे आदमी ठहरे, घरमें बहू तो है नहीं जो सदाचारके नामपर तुम्हारे कान ऐंठ देगी। आश्रम रखते हो, बिना माँ बापके अनाथ लड़कोंके झुण्डमें—तुम्हें डर किस बातका है?"

हरेन्द्रने कहा, "डरकी बात पीछे होती रहेगी, पहले बताइए, काम क्या करना होगा?"

नीलिमाने कहा, "कमलसे मैं मिलूँगी, बातचीत करूँगी, घर बुलाकर खिलाऊँगी। तुम उनका घर जानते हो क्या? मुझे साथ लेकर उन्हें निमन्त्रण दे आना होगा। किस वक्त चलोगे, बताओ?"

हरेन्द्रने कहा, "जिस वक्त हुक्म करोगी उसी वक्त। लेकिन घर मालिक, भाई साहबका अभिप्राय क्या है?" कहकर उसने नरामदेके उस तरफ बैठे हुए अविनाशकी तरफ इशारा किया। वे इजी चेयरपर पड़े हुए 'पायोनियर' पढ़ रहे थे। सुना सब कुछ, पर बोले कुछ नहीं।

नीलिमाने कहा, "वे अपना अभिप्राय अपने पास रक्खें—मुझे उसका जरूरत नहीं। मैं उनकी साली हूँ, साली की बहन नहीं जो 'पति परमगुरु'का गदा घुमाकर मुझपर शासन करेंगे। मेरे जीमें जिसे आयेगा, उसे खिलाऊँगी। मजिस्ट्रेटकी बहूने कहा है कि उन्हें खबर मिल गई तो वे भी आयेंगी। उन्हें अच्छा न लगे, तो उतना समय वे और कहीं जाकर बिता आवें।"

अविनाशने अखबारपरसे दृष्टि बिना हटाये ही जवाब दिया, "लेकिन यह काम अच्छा नहीं होगा, हरेन्द्र, कलकी बात याद है न? आशु बाबू जैसे मर्यादित आदमीको भी सावधान होना पड़ता है।"

हरेन्द्रने कुछ जवाब नहीं दिया और इस डरसे कि कहीं कलकी वह रुपयों वाली बात न उठ गयी हो और नीलिमाको भी न मालूम हो जाय, उसने इस प्रसङ्गको जल्दी दबाकर कहा, "इससे तो बल्कि एक काम न करें भाभी, उन्हें मेरे घरपर आनेका निमन्त्रण दे आइए और आप हो जाइए उस घरकी मालकिन। लक्ष्मीहीन घरमें कमसे कम एक दिन तो लक्ष्मीका आविर्भाव हो जाय। मेरे लड़के भी थोड़ी-बहुत बुरी भली चीजें खाकर खुशी मना लें।"

नीलिमाने अभिमानके स्वरमें कहा, "अच्छी बात है, ऐसा ही सही—मैं भी भविष्यमें उलाहनोंसे बच जाऊँगी।"

अविनाश उठके बैठ गये, बोले, "अर्थात् छीछालेदर होनेमें फिर कोई कसर ही न रह जायगी, कारण, शिवनाथको छोड़कर सिर्फ उन्हींको तुम्हारे घर निमंत्रित करानेसे फिर कोई कैफियत ही नहीं दी जा सकेगी। इससे तो बल्कि, यही सुननेमें बहुत अच्छा लगेगा कि औरतें आपसमें जान-पहचान करना चाहती हैं।"

बात सचमुच ही युक्तिसंगत थी। इसलिए यही तय हुआ कि कालेजकी छुट्टी होनेके बाद हरेन्द्र नीलिमाको साथ ले जाकर कमलको न्योता दे आये।

शामको हरेन्द्रने आकर कहा कि अब तकलीफ उठाकर वहाँ जानेकी कोई जरूरत नहीं। कल रातको आनेकी बात उनसे कही जा चुकी है और वे आनेको राजी हो गई हैं।

नीलिमा उत्सुक हो उठी। हरेन्द्र कहने लगा, "कल घर लौटते वक्त अचानक उनसे रास्तेमें भेंट हो गई। साथमें पल्लेदारके सरपर एक भारी भरकम बक्स था। मैंने पूछा कि इसमें क्या है? कहाँ जा रही हो? उन्होंने कहा, जा रही हूँ जरा कामसे। तब फिर मैंने आपका परिचय देते हुए कहा, भाभीने आपको कल शामके लिए न्योता भेजा है। औरतोंका मामला ठहरा, आपको जाना ही पड़ेगा। जरा चुप रहकर उन्होंने कहा, अच्छा। मैंने कहा, तय हुआ है कि मेरे साथ चलकर वे आपको बाकायदा न्योता दे आतीं—पर उनके आनेकी जरूरत है क्या? जरा हँसकर उन्होंने कहा, नहीं। मैंने पूछा अकेली तो आप आ नहीं सकेंगी, कल किस वक्त आकर मैं आपको लिवा जाऊँ? सुनकर वे वैसे ही हँसने लगीं। बोलीं, अकेली ही मैं पहुँच जाऊँगी, अविनाश बाबूका मकान मैं जानती हूँ।

नीलिमा खिल गई, बोली, "उनकी टेम तो बहुत अच्छी मालूम होती है। घमण्ड बिलकुल नहीं।"

बगलके कमरेमें अविनाश बाबू कपड़े बदलते हुए कान लगाये सब सुन रहे थे, वहींसे पूछने लगे, "और कुलीके सिरपर वह भारी बक्स? उसका इतिहास तो बताया ही नहीं भाई साहब?"

"हरेन्द्रने कहा, पूछा नहीं।"

"पूछते तो अच्छा करते। शायद बेचने या गिरवी रखने जा रही होंगी।"

हरेन्द्रने कहा, "हो सकता है। आपके पास गिरवी रखने आयें तो आप इतिहास

पूछ लीजियेगा।" इतना कहकर वह चला ही जा रहा था कि गंगा दरवाजेके पास गया होकर बोला, "भाभी, अपना नाम-कल्याण-गम्भीर ... व्याख्यान तो आपने सुन ही लिया होगा? हम लोग उसे 'गुरु' कहा करते हैं। मगर उस बेचारेमें और थोड़ी-सी पाखण्ड बुद्धि होती तो वह आसानीसे साधु महात्मा रूपमें चल जाता, क्यों, ठीक है न भाई साहब!"

अविनाश कौतुक हो गरज उठे, "हाँ जी, नित्यानन्द भागवद् महाप्रभुजी, इसमें सन्देह ही क्या है? तुम्हारा यह पागलपन छिपा न रहा ...।"

"कोशिश करूँगा। लेकिन अब चल दिया भाभीजी, कल फिर यथासमय हाजिर होऊँगा।" कहकर वह चला गया।

नाश्तेमान तैयारीमें थाड़ कसर नहीं उठा रखा। मनोरमा शुरू ही कमलके बहुत खिलाफ थी। यह जानकर कि वह किसी भी हालतमें नहीं आयेगी, आशु बाबूसे घरमें बिठाने भी नहीं कहा गया था। मालिनीको खबर भेजी गई थी, पर अचानक अस्वस्थ हो जानेसे वे भी नहीं आ सकीं।

कमल ठीक समयपर आ गई। गाड़ी-घोड़ेपर नहीं, अकेली और पैदल आ पहुँची। घर मालकिनने उसे आदरके साथ बिठाया। अविनाश सामने खड़े थे। कमलको उन्होंने बहुत दिनोंसे देखा नहीं था, आज उसके चेहरे और रूपकी तरफ देखकर आश्चर्यचकित रह गये। गरीबीकी छाप उसपर साफ पड़ी हुई थी। आश्चर्य प्रकट करते हुए बोले, "रातको अकेली ही पैदल चली आ रही हो क्या, कमल?"

कमलने कहा, "इसका कारण अत्यन्त साधारण है अविनाश बाबू, समझने में जरा भी कठिनाई नहीं।"

अविनाश बाबू लज्जित हो गये, और लज्जा छिपानेके लिए चटसे बोल उठे, "हाँ नहीं, क्या कह रही हो तुम? काम ठीक नहीं हुआ लेकिन,—छोटी बहू, ये ही हैं कमल। इन्हींका दूसरा नाम है शिवानी। इन्हींको देखनेके लिए तुम इतनी उतावली कर रही थीं। चलो, भीतर चलकर बैठें। तैयारी तो तुम्हारी सब हो चुकी होगी छोटी मालकिन, फिर निरर्थक देर करनेसे क्या फायदा? ठीक समयपर हुई फिर घर भी तो पहुँचना है।"

इस सब उपदेश और पूछ ताछमें बहुत कुछ ज्यादती थी। न तो इसमें जवाबकी कोई जरूरत थी और न इसकी कोई उम्मीद ही करता था।

हरेन्द्रने आकर कमलको नमस्कार किया। बोला, "अतिथिको स्वागतके साथ ग्रहण करते वक्त मैं पहुँच नहीं पाया भाभीजी, कसूर हो गया। अक्षय आया था, उसे यथोचित मीठे वाक्योंसे परितुष्ट करके विदा करनेमें देर हो गई।" और वह हँसने लगा।

भीतर जाकर कमलने जो भोजन-सामग्रियोंका प्राचुर्य देखा तो क्षण भर चुपचाप खड़ी रह गई और बोली, "मेरे लिए चीज तो ये खूब बनाई हैं, लेकिन मैं तो यह सब खाती नहीं।" इसपर सब व्यस्त हो उठे तो वह बोली, "आप लोग जिसे हविष्यान्न कहते हैं, मैं सिर्फ वही खाती हूँ।"

सुनकर नीलिमा दंग रह गई, बोली, "यह क्या बात कही आपने? आप हविष्य खायेंगी, किस दुःखके कारण?"

कमलने कहा, "बात ठीक है। दुःख नहीं है, सो बात नहीं। लेकिन यह सब खाती नहीं हूँ, इसलिए मेरी जरूरत भी कम है। आप कुछ खयाल न करें।"

"पर बिना खयाल किये काम भी तो नहीं चलता।" नीलिमाने क्षुण्ण होकर कहा, "नहीं खानेसे इतनी चीजें मेरी नष्ट जो होंगी?"

कमल हँस दी। बोली, "जो होना था सो तो हो चुका, उसे लौटाया नहीं जा सकता। उसपर फिर खाकर खुद क्यों नष्ट होऊँ?"

नीलिमाने विनयके साथ अन्तिम चेष्टा करते हुए कहा, "सिर्फ आज भरके लिए, सिर्फ एक दिनके लिए भी क्या नियम भंग नहीं कर सकतीं?"

कमलने सिर हिलाकर कहा, "नहीं।"

उसके हँसते हुए मुँहसे सिर्फ एक ही शब्दको सुनकर सहसा किसीको कुछ भी ठीक खयाल नहीं आ सकता कि उसमें दृढ़ता कितनी जबरदस्त थी। परन्तु उस दृढ़ताकी भनक पड़ी हरेन्द्रके कानमें और सिर्फ वही समझा कि इसमें किसी तरहका फेरफार नहीं हो सकता। इसीसे घर मालिकिनकी तरफसे अनुरोधकी पुनरुक्ति होते ही उसने टोक दिया, बोला, "रहने दो भाभी, अब मत कहो। चीज आपकी कोई बिगड़ेगी नहीं, मेरे यहाँके लड़के आकर पाव पौंछके सब साफ कर जायँगे। पर इनसे अब आग्रह मत करो। बल्कि जो कुछ खायें उसका इन्तजाम करो।"

नीलिमा गुस्सा होकर बोली, "सो किये देती हूँ। पर मुझे अब तसल्ली देनेकी जरूरत नहीं लालाजी, तुम रहने दो। यह घास-फूस नहीं है जो तुम अपने

झुण्डके झुण्ड मेरे घरका आना जाना लगे। इसे मैं बर्दाश्त कर दूँगा, पर उन्हें न मिलाऊँगी।"

हरेन्द्रने हँसते हुए कहा, "क्या, उनपर आपकी इतनी नाराजगी क्यों है?"

नीलिमाने कहा, "उन्हींकी बदौलत तो तुम्हारी यह दुर्गति है। बाप रुपया छोड़ गये हैं, खुद भी पैदा कम नहीं करते,—अबतक बहू आती तो लड़के-बालोंसे घर भर जाता। ऐसा अभागा काण्ड तो न होता। खुद भी जैसे कुँआरे कार्तिक महाराज हो, दल भी वैसा ही लायक तैयार हो रहा है। तुमसे कह देती हूँ, उन्हें मैं हर्गिज न मिलाऊँगी।—जाने दो, मेरा सब बिगड़ जाने दो!"

कमल कुछ भी न समझ सकी, आश्चर्यसे देखती रह गई। हरेन्द्र लज्जित होकर बोला, "भाभीजीकी बहुत दिनोंसे मुझपर जो नालिश चल रही है, यह उसीकी सजा है।" कहते हुए उसने मामला सुलझाना चाहा, बोला, "वे बिना माँ-बापके मेरे अनाथ छात्र हैं। मेरे पास रहकर स्कूल और कालेजमें पढ़ते हैं। उनपर इनका जमानेभरका सारा गुस्सा आ पड़ा है।"

कमलने अत्यन्त आश्चर्यके साथ कहा, "यह बात है क्या? कहाँ, मैंने तो आजतक कभी सुना नहीं!"

हरेन्द्रने कहा, "सुनने लायक इसमें कुछ नहीं। लेकिन वे हैं सब चरित्रवान् अच्छे लड़के। उनपर मेरा स्नेह है।"

नीलिमा क्रुद्ध स्वरमें बोल उठी, "उनका प्रण है कि बड़े होकर वे सब देश सेवा करेंगे।—अर्थात् गुरु जैसे ब्रह्मचारी वीर बनकर निश्चिन्त करेंगे।"

हरेन्द्रने कहा, "चलिएगी एक दिन उन्हें देखने? देखके प्रसन्न होंगी।"

कमल उसी वक्त राजी होकर बोली, "अगर आप ले जायँ तो मैं कल ही जा सकती हूँ।"

हरेन्द्रने कहा, "नहीं, कल नहीं, और किसी दिन। हमारे आश्रमके राजेन्द्र सतीश काशी गये हैं, उन लोगोंके आ जानेपर आपको ले जाऊँगा। मैं दावेके साथ कहता हूँ, उन्हें देखकर आप खुश हो जायँगी।"

अविनाश अभी अभी आके खड़े हुए थे। उसकी बात सुनकर वे आँखें फाड़कर बोले, "कुछ अभागे आवारोंका अड्डा अभीसे आश्रम भी हो गया क्या! न जाने कितना पाखण्ड रचना तुझे आता है रे हरेन्द्र।"

नीलिमा नाराज हो गई। बोली, "यह तुम्हारी बेजा बात है

साहब! लालाजी तो तुमसे आश्रमके लिए चन्दा माँगने आये नहीं जो पाखण्डी कहकर गाली दे रहे हो? अपने खरचेसे पराये लड़कोंको आदमी बनाना पाखण्ड नहीं है। बल्कि जो ऐसा आक्षेप करते हैं, उन्हींको पाखण्डी कहना चाहिए।"

हरेन्द्र हँसता हुआ बोला, "भाभी, अभी-अभी आप ही तो उस भेड़ बकरा का झुण्ड बताकर तिरस्कार कर रही थीं, अब आपकी ही बातकी प्रतिध्वनि करनेमें भाई साहबको यह पुरस्कार मिल रहा है?"

नीलिमाने कहा, "मैं कह रही थी गुस्सेमें। लेकिन उन्होंने ऐसा क्या सोच कर कहा? पाखण्ड किसे कहते हैं, पहले अपने अन्दर साफ कर लें, फिर दूसरेसे कहें।"

कमलने पूछा, "आपके तो सभी लड़के स्कूल-कालेजमें पढ़ते होंगे?"

हरेन्द्रने कहा, "हाँ, बाहरसे तो ऐसा ही है।"

अविनाश बोल उठे, "और भीतरसे क्या सब प्राणायाम और रेचक कुम्भक की चर्चा करते हैं? उसे भी साथ साथ क्यों नहीं कह देते?"

सुनके सब हँस दिये। नीलिमाने अनुनयके स्वरमें कमलसे कहा, "मुखर्जी महाशयका आजका मिजाज देखकर उनके विषयमें कोई धारणा न बना लीजिएगा। कभी कभी इनका दिमाग बहुत ठण्डा रहता है, नहीं तो बहुत पहले ही मुझे यहाँसे भागकर जान बचानी पड़ती।" कहकर वह हँसने लगी।

यहाँपर जरा कुछ उत्तापकी भाप जमती जा रही थी, इस स्निग्ध परिहासके बाद मानो वह उड़ गई। इतनेमें महाराजने आकर खबर दी कि कमलका भोजन तैयार है। अतएव, वर्तमान आलोचना स्थगित रखकर सबको उठना पड़ा।

× × ×

करीब दो घण्टे बाद भोजनादि हो चुकनेपर सब आकर जब बाहरके कमरेमें बैठे, कमलने तब पूर्व प्रसंगके सिलसिलेमें पूछा, "लड़के आपके रेचक कुम्भक नहीं करते तो न सही, पर कालेजकी पुस्तकें कण्ठस्थ करनेके सिवा और जो भी कुछ करते हैं सो क्या है?"

हरेन्द्रने कहा, "करते जरूर हैं। इस बातकी कोशिशमें भी वे लापरवाही नहीं करते जिससे कि भविष्यमें वास्तवमें आदमी बन सकें। मगर जिस दिन आपके पाँवोंकी धूल वहाँ पड़ेगी, उस दिन सब बातें समझा दूँगा। आज नहीं।"

इस स्त्रीका इतना ज्यादा सम्मान किया जा रहा था कि अविनाशका सारा

बदन ईर्ष्यासे जलने लगा, मगर वे चुप ही बने रहे।

नीलिमाने कहा, "आप कहनेमें आखिर अड़चन क्या है, लालाजी? अपनी शिक्षा पद्धतिको सामने नहीं खोलना चाहते तो न सही, पर यह बताओ कि क्या दोष है कि प्राचीन कालके भारतीय आदर्शपर अपनी तरह सबको ब्रह्मचारी बनानेकी शिक्षा दे रहे हो? तुमसे तो मैंने आभासरूपमें यही सुना था?"

हरेन्द्रने विनयके साथ कहा, "झूठ सुना है, यह तो मैं नहीं कह रहा भाभीजी।" कहते कहते उसे उस दिनकी सब बात याद आ गई। कमलको देखकर बोला, "आपकी भी शायद मेरे कामसे सहानुभूति न होगी।"

कमलने कहा, "काम आपका क्या है, बगैर देखे मालूम किये तो कुछ कहा नहीं जा सकता हरेन्द्र बाबू। मगर यह तो कोई युक्ति नहीं है कि प्राचीन कालमें खींचकर डाल देना ही वास्तवमें मनुष्य बना देना है—"

हरेन्द्रने कहा, "परन्तु वही तो हमारे भारतवर्षका आदर्श है।"

कमलने जवाब दिया, "पर यह किसने तय कर लिया कि भारतका आदर्श ही चिर-युगका चरम आदर्श है—बताइए?"

अविनाश अबतक कुछ बोले नहीं थे, अब गुस्सेको दबाकर बोले, "हो सकता है कि चरम आदर्श नहीं भी हो, लेकिन कमल, यह हमारा पूर्वपुरुषोंका आदर्श तो है। भारतवासियोंका यह हमेशाका लक्ष्य है, यही उन लोगोंके चलनेका एकमात्र मार्ग है। हरेन्द्रके आश्रमकी बात मैं नहीं जानता, लेकिन उसने यही लक्ष्य अगर ग्रहण किया है तो मैं उसे आशीर्वाद देता हूँ।"

कमल कुछ देरतक चुप बैठी उनके मुँहकी तरफ देखती रही, फिर बोली, "मालूम नहीं, क्या आदमीसे यह गलती होती है। अपने सिवा मानो वे और किसी भारतवासीको आँखोंसे देखते ही नहीं। भारतमें और भी तो बहुत-सी जातियाँ रहती हैं, वे इस आदर्शको मला क्यों अपनाने चलीं?"

अविनाश कुपित हो उठे, बोले, "चूल्हेमें जायँ वे। मेरे पास ऐसा आवेदन निष्फल है। मैं तो सिर्फ अपना ही आदर्श अगर स्पष्टतासे देख सका तो उसीको काफी समझूँगा।"

कमलने धीरेसे कहा, "यह आपकी बहुत ही गुस्सेकी बात है अविनाश बाबू। नहीं तो, आपको इतना बड़ा अन्धभक्त समझनेकी मेरी प्रवृत्ति नहीं होती।" फिर जरा ठहरकर कहने लगी, "मगर, क्या मालूम, शायद पुरुष मरने

सब इसी तरह विचार किया करते हैं। उस दिन अजित बाबूके सामने भी अकस्मात् यही प्रसंग छिड़ गया था। भारतकी सनातन विशिष्टता और उसकी स्वतन्त्रता नष्ट होनेके उल्लेखसे उनका तमाम चेहरा मारे वेदनाके सफेद फक पड़ गया था। किसी दिन वे उत्कट स्वदेशी थे—आज भी भीतर ही भीतर शायद वही हैं—यह बात उनके लिए सिर्फ प्रत्ययका दूसरा नाम है।" इतना कहकर उसने लम्बी साँस ली और चुप रह गई। अविनाश शायद कुछ जवाब देनेको थे, पर कमल उधर बिना देखे ही कहने लगी, "लेकिन मैं सोचती हूँ कि इसमें डर किस बातका है? किसी एक देश विशेषमें पैदा होनेकी वजहसे ही उसका आचार-व्यवहार छातीसे क्यों चिपकाये रहना पड़ेगा? चली ही गई उसकी अपनी विशेषता, तो इसमें हर्ज किस बातका? इतनी ममता क्या? विश्वके समस्त मानव अगर एक ही विचार, एक ही भाव, एक ही विधि-विधानकी ध्वजा थामकर खड़े हो जायँ, तो इसमें हानि ही क्या है? यही डर है न कि फिर भारतीयके तौरपर हम पहचाने नहीं जायँगे? न पहचाने जायँ, न सही। इस परिचयपर तो कोई आपत्ति नहीं करेगा कि विश्वकी मानव जातिमें हम एक हैं, उसका गौरव क्या कुछ कम है?"

अविनाशको सहसा कोई जवाब ढूँढ़े न मिला, बोले, "कमल, तुम जो कह रही हो, खुद ही उसका अर्थ नहीं समझतीं। इससे मनुष्यका सर्वनाश हो जायगा।"

कमलने जवाब दिया, "मनुष्यका नहीं होगा अविनाश बाबू, जो लोग अभिमानमें अन्धे हो रहे हैं उनके अहंकारका सर्वनाश होगा।"

अविनाशने कहा, "ये सब कोरी शिवनाथकी बात है।"

कमलने कहा, "यह तो मुझे नहीं मालूम कि वे भी यही बात कहते हैं।"

अबकी बार अविनाश अपनेको सँभाल न सके। व्यंग्यसे चेहरेको स्याह करके बोले, "खूब मालूम है, सब बातें कण्ठस्थ कर रखी हैं, और जानती नहीं कि किसकी हैं?"

उनके इस भद्दे अशिष्ट व्यवहारका कमलने कोई जवाब नहीं दिया, जवाब दिया नीलिमाने। बोली, "बात चाहे जिसकी भी हो मुखर्जी साहब, मास्टरीके काममें कड़ी बातकी धमकी देकर छात्रोंका मुँह बन्द किया जा सकता है, पर उससे समस्याका हल नहीं होता। प्रश्नका जवाब न दे सकते हो लालाजी,

तो इसमें शरमानेकी कोई बात नहीं, पर शिष्टताको लाँघ जानेमें, जरूर शरम आनी चाहिए!—एक गाड़ी बुलाने भेजो किसीको भइया। तुम्हें दूर तक पहुँचा आना पड़ेगा। तुम ब्रह्मचारी आदमी ठहरे, तुम्हें साथ भेजनेमें तो भाई डर है ही नहीं।" कहते हुए उसने कटाक्षसे अविनाशकी तरफ देखा, और बोली, "मुखर्जी साहबका चेहरा जैसा मोटा हो उठा है, उसको देखकर अब ज्यादा देर करना ठीक नहीं।"

अविनाश गम्भीर होकर बोले, "अच्छी बात है, तुम लोग बैठी गप्प करो, मैं सोने जा रहा हूँ।" और वे उठकर चल दिये।

नौकर गाड़ी लाने गया था। हरेन्द्रने कमलके प्रति लक्ष्य करके कहा, "मेरे आश्रममें मगर एक दिन आना ही होगा। उस दिन लिवाने आऊँ तो आप 'ना' नहीं कर सकेंगी।"

कमलने हँसते हुए कहा, "ब्रह्मचारियोंके आश्रममें मुझे क्या प्रसाद देंगे हरेन्द्र बाबू? मैं न गई तो न सही।"

"नहीं, सो नहीं होगा। ब्रह्मचारी होनेसे हम लोग ऐसे भयानक नहीं, बिल्कुल सीधे-सादे हैं। गेरुआ नहीं पहनते, जटा वल्कल वगैरह भी कुछ नहीं। सर्वसाधारणके बीचमें हम उनके साथ मिले हुए हैं।"

"मगर यह भी तो अच्छा नहीं। असाधारण होकर साधारणमें आत्मगोपन या [illegible] करना भी एक तरहका अयुक्त आचरण है। शायद अविनाश बाबूने इसीको पाखण्ड कहा होगा। इससे तो बल्कि जटा-वल्कल, गेरुआ वगैरह कहीं अच्छा। उससे आदमीके पहचाननेमें सहूलियत होती है, और ठगाये जानेकी भी कम सम्भावना है।"

हरेन्द्रने कहा, "आपके साथ तर्कमें जीतना मुश्किल है,—हारना ही पड़ेगा। मगर असलमें क्या आप हमारी संस्थाको अच्छा नहीं समझतीं? सफल होऊँ चाहे न होऊँ, इसका आदर्श तो महान् है!"

कमलने कहा, "सो तो मैं नहीं कह सकती हरेन्द्र बाबू। अन्य सभी संयमोंकी तरह यौन-संयम भी सत्य है, मगर वह गौण सत्य है। धूमधाम या समारोहके साथ उसे जीवनका मुख्य सत्य बना देनेसे वह भी एक तरहका असंयम हो जाता है। उसका दण्ड भी है। आत्म-निग्रहके उग्र दम्भसे आध्यात्मिकता क्षीण होने लगती है।—तो ठीक है, मैं आऊँगी आपके आश्रममें एक दिन।"

हरेन्द्रने कहा, "आना ही होगा, न आनेसे मै छोड़ूँगा नहीं। लेकिन एक बात कहे देता हूँ, हमारे यहाँ आडम्बर नहीं है, प्रदर्शनके तौरपर हम कुछ नहीं करते।" कहते-कहते सहसा नीलिमाकी तरफ इशारा करके बोला, "मेरी आदर्श तो ये हैं। इन्हींकी तरह हम लोग स्वाभाविकताके पथिक हैं, वैधव्यका कोई बाह्य प्रकाश इनमें नहीं है,—बाहरसे मालूम होगा कि मानो विलासितामें ये मग्न हो रही हैं मगर मैं जानता हूँ इनका दुःसाध्य आचार विचार, इनका कठोर आत्म शासन—"

कमल मौन रही। हरेन्द्र भक्ति और श्रद्धासे विगलित होकर कहने लगा, "आप भारतके अतीत युगके प्रति श्रद्धासम्पन्न नहीं हैं, भारतका आदर्श आपको मुग्ध नहीं करता परन्तु बताइए तो भला कि नारीत्वकी इतनी बड़ी महिमा,—इतना बड़ा आदर्श और किस देशमें है? इस घरकी ये गृहिणी हैं, भाईसाहबकी मातृहीन सन्तानकी ये जननीके समान हैं। इस घरकी सारी जिम्मेदारी इन्हीं पर है। यह सब होते हुए भी, इनका कोई स्वार्थ नहीं, कोई बन्धन नहीं। बताइए न, किस देशकी विधवाएँ इस तरह पराये काममें अपनेको खपा सकती हैं?"

कमलका चेहरा स्मित हास्यसे विकसित हो उठा उसने कहा, "इसमें भलाईकी कौन सी बात है हरेन बाबू? हो सकता है कि पराये घरकी निःस्वार्थ गृहिणी और पराये बच्चोंकी निःस्वार्थ जननी होनेका दृष्टान्त संसारमें और कहीं न हो। नहीं होना अद्‌भुत हो सकता है, मगर अद्‌भुत होनेके कारण ही अच्छा हो जायगा, किस तरह?"

सुनकर हरेन्द्र दंग रह गया, और नीलिमा मारे आश्चर्यके एकटक उसके चेहरेकी तरफ देखती रह गई। कमलने उसीको लक्ष्य करके कहा, "वाक्योंकी छटासे, विशेषणके चातुर्यसे लोग इसे चाहे जितना गौरवान्वित क्यों न कर डालें, पर गृहिणीपनेके इस मिथ्या अभिनयमें सम्मान नहीं है। इस गौरवको छोड़ देना ही अच्छा है।"

हरेन्द्रने गम्भीर वेदनाके साथ कहा, "यह तो एक सुशृंखल घर गृहस्थीको नष्ट करके चले जानेका उपदेश है। इस बातकी तो आपसे कोई आशा नहीं रखता था।"

कमलने कहा, "मगर घर गृहस्थी तो इनकी अपनी है नहीं, होती तो

ऐसा उपदेश न देती। और मजा यह कि इसी तरहसे कम भोगके नशेमें पुरुष हमें मतवाली बनाये रखते हैं। उनकी वाहवाहीकी तेज शराब पीकर हमारी आँखोंपर नशा छा जाता है। सोचती हूँ, यही शायद नारी-जीवनकी चरम सार्थकता है। हमारे यहाँके चायके बगीचोंके हरीश बाबूकी बात याद आ गई। उनकी जब सोलह सालकी छोटी बहिनका पति मर गया तब उसे घर लाकर वे अपने झुण्डके झुण्ड बाल-बच्चे दिखाके रोते हुए बोले, 'लक्ष्मी, बहन मेरी, अब ये ही तेरे बाल-बच्चे हैं। फिकर किस बातकी बहन, इन्हें पाल-पोसकर आदमी बनाओ, इनकी अपनी माँकी तरह।—इस घरकी सर्वे-सर्वा बनकर आजसे तू सार्थक हो, यही मेरा आशीर्वाद है।' हरीश बाबू बड़े भले आदमी हैं, बगीचे भरमें सब लोग धन्य धन्य कर उठे।—सभीने कहा, 'लक्ष्मीके भाग्य अच्छे हैं।'—अच्छे तो हैं ही। सिर्फ स्त्रियाँ ही समझ सकती हैं कि इतना बड़ा दुर्भाग्य,—इतनी बड़ी धोखेबाजी और कुछ हो ही नहीं सकती। मगर एक दिन जब यह विडम्बना पकड़में आती है, तब प्रतिकारका समय निकल जाता है!"

हरेन्द्रने कहा, "फिर?"

कमलने कहा, "फिरकी बात मुझे नहीं मालूम हरेन्द्र बाबू। लक्ष्मीकी साधनाका अन्त मैं नहीं देख पाई,—उससे पहले ही वहाँसे मुझे चला आना पड़ा था।—लेकिन बस, अब तो गाड़ी आके खड़ी हो गई। चलिए, रास्तेमें जाते जाते बताऊँगी। नमस्कार।" कहकर वह उसी क्षण उठके खड़ी हो गई।

नीलिमा चुपचाप नमस्कार करके खड़ी रही। उसकी आँखोंके तारे मानो अंगारोंकी तरह जलने लगे।

१४

'आश्रम' शब्द कमलके सामने हरेन्द्रके मुँहसे अचानक ही निकल गया था। उसे सुनकर अविनाशने जो मजाक उड़ाया था वह बेजा नहीं था। लोगोंको यही मालूम था कि कुछ गरीब विद्यार्थी वहाँ रहकर बिना खर्चके स्कूल-कालेजमें पढ़ते हैं। वास्तवमें अपने वासस्थानको बाहरवालोंके सामने इतने बड़े गौरवके पदपर प्रतिष्ठित करनेका संकल्प हरेन्द्रके मनमें नहीं था। वह बिल्कुल ही एक मामूली बात थी और शुरू शुरूमें उसका श्रीगणेश भी साधारण तौरपर ही हुआ था। परन्तु इन सब चीजोंका स्वभाव ही ऐसा है कि दाताकी कमजोरीसे अगर

एक बार भी इनमें गति पैदा हो गइ तो फिर उस गतिमें विराम नहीं आता। कठोर जगली पौधेकी तरह मिट्टीका सारा का सारा रस खींचकर जड़से लेकर पत्तों तक व्याप्त होनेमें फिर देर नहीं लगती। हुआ भी यही। इस विषयमें यहाँ कुछ और कह देना ठीक होगा।

हरेंद्रके कोइ भाइ-बहन नहीं है। पिता वकालत करके धन सचय कर गये थे। उनकी मृत्युके बाद घर भरमें रह गई सिर्फ हरेंद्रकी विधवा माँ। वे भी तब परलोक सिधार गइ जब हरेंद्रकी पढ़ाइ खतम हुइ। लिहाजा अपना कहने लायक घरमें ऐसा कोइ न रहा जो उसे ब्याह करनेके लिए तग करता, अथवा स्वय मेहनत और आयोजन करके उसके पाँवोंमें बेड़ी डाल देता। इसलिए पढ़ाइ जब खतम हो गइ तब सहज कोइ काम न रहनेके कारण ही हरेंद्रने देश और देशवासियोंकी सेवामें मन लगाया। काफी साधु-सगति की, बैंकमें पड़ी रकमका ब्याज निकाल निकालकर एक दुर्भिक्ष निवारण समिति कायम की, बाढ़ पीड़ितों की सहायताके लिए आचार्यदेवके दलमें शामिल हो गया, सेवक सघमें मिलकर लूले लगड़े, काने बहरे, गूँगे भूखोंको ला लाकर उनकी सेवा करने लगा। इस तरह जैसे जैसे उसका नाम जाहिर होने लगा वैसे वैसे भले आदमियोंका दल आ आकर उससे कहने लगा 'रुपया दो, परोपकार करो।' जमा रुपये खतम होनेको थे, पूँजीमें हाथ लगाये बिना अब कोइ चारा नहीं था। ऐसी अवस्था जब आ पहुँची, तब अकस्मात् एक दिन अविनाशके साथ उसकी भेट हुइ ओर परिचय हो गया। सम्बन्ध चाहे जितनी दूरका हो, पर उसी दिन उसे पहले पहले पता चला कि उसकी दुनियामें अब भी एक आदमी ऐसा है जिसे वह आत्मीय कह सकता है। अविनाशके कालेजमें तब एक अध्यापककी जगह खाली थी, कोशिश करके वे उस कामपर उसको नियुक्त कराकर अपने साथ आगरा ले गये। इस प्रान्तमें आनेका यही उसका इतिहास है। पछाँहकी तरफ मुसल्मानी राज्यके शहरोंमें पुराने जमानेके न,त से बड़े-बड़े मकान अब भी कम किरायेपर मिल जाया करते हैं और उन्हींमेंसे एक हरेंद्रने ले लिया। यही उसका आश्रम है।

मगर यहाँ आकर जो चन्द दिन उसने अविनाशके घर बिताये, उन्हींके बीच नीलिमाके साथ उसका परिचय हो गया। उस रमणीने उसे बिना जान पहचानका आदमी समझकर एक दिन भी ओटमें रहकर नौकर नाकरानीकी

मारफत आत्मीयता दिखलानेकी कोशिश नहीं की।—एकबारगी पहले ही दिन सामने निकल आई। बोली, "तुम्हें कब क्या चाहिए लालाजी, मुझसे कहनेमें शरमाना मत। मैं घरकी गृहिणी नहीं हूँ, मगर गृहिणीपनका भार सब मेरे ही ऊपर है। तुम्हारे भाई साहब कहते थे, छोटे बाबूकी खातिरदारीमें कमी रह गई तो तनखा कट जायगी। सो इस गरीबिनीका नुकसान मत करा देना भाई, अपनी जरूरतोंसे वाकिफ करते रहना।"

हरेन्द्र क्या जवाब दे, उसकी कुछ समझमें न आया। मारे शरमके वह ऐसा सिकुड़ गया कि जो इन मीठी बातोंको अनायास ही हँसती हुई कह गई, उसके मुँहकी तरफ देख भी नहीं सका। पर शरम दूर होनेमें भी उसे दो एक दिनसे ज्यादा देर न लगी। मालूम हुआ, जैसे उसे बिना दूर किये दूसरा कोई चारा ही नहीं। इस रमणीकी जैसी स्वच्छन्द और अनाडम्बर प्रीति है वैसी ही सहज स्वाभाविक सेवा। एक तरफ जैसे यह बात उनके चेहरे मोहरे, ओढ़ाव पहनाव और मधुर आलाप-आलोचनासे नहीं मालूम हो सकती कि वे विधवा हैं, इस घरमें उनका कोई वास्तविक आश्रय नहीं, वे भी इस घरमें गैर हैं,—वैसे ही यह भी नहीं मालूम पड़ता कि उनका यही सब कुछ है जो बाहरसे दीख रहा है।

उमर भी उनकी बिलकुल कम हो, सो बात भी नहीं है। शायद तीसके लगभग पहुँच चुकी है। उस उमरके योग्य गम्भीरता उनमें खोज निकालना मुश्किल है—ऐसा हलका उनका हँसी-खुशीका मेल है। और मजा यह कि जरा-सा ध्यान देनेसे ही यह बात साफ समझी जा सकती है कि एक ऐसा अदृश्य आच्छादन उन्हें दिन-रात घेरे रहता है जिसके भीतर प्रवेश करनेका कोई रास्ता ही नहीं। न तो घरके नौकर-चाकर या दास-दासी ही वहाँ घुस सकते हैं और न मालिक ही।

इस घरमें, इसी आदर-यत्नके बीच हरेन्द्रके दो सप्ताह बीत गये। सहसा एक दिन यह सुनकर कि उसने अलग एक मकान किरायेपर ले लिया है, नीलिमाने नाराज होकर कहा, "इतनी जल्दी क्यों कर डाली लालाजी, यहाँ ऐसा कौन तुम्हें पकड़ रखना चाहता था?"

हरेन्द्रने लज्जित होकर कहा, "एक दिन तो जाना ही पड़ता भाभीजी!"

नीलिमाने जवाब दिया, "सो तो शायद जाना पड़ता। मगर देश-सेवाके

नशेका रंग अभीतक तुम्हारी आँखोंसे गया नहीं लालाजी, और भी कुछ दिन भाभीकी हिफाजतमें रह लेते तो अच्छा था।"

हरेन्द्रने कहा, "सो तो रहूँगा ही भाभीजी। यहां तो हूँ, दसेक मिनटका रास्ता है यहाँसे, आपकी निगाह बचाके जाऊँगा कहाँ?"

अविनाश घरके भीतर बैठे काम कर रहे थे, वहींसे बोले, "जाओगे जहन्नुममें! बहुत मना किया कि और कहीं मत जा रे, यहीं रह। मगर सो कैसे हो?—इज्जत नहीं है या भाइ साहबकी बात बड़ी है! जा, नये अड्डेमें जाकर दरिद्र नारायणकी सेवामें चल जो कुछ पास है सो।—छोटी मालकिन, उससे कहना-सुनना व्यर्थ है। वह ठहरा चकरा सन्यासी—पीठ ठिकाकर चरखीकी तरह घूमे बगैर इन लोगोंका जीना ही गलत है।"

नये मकानमें आकर हरेन्द्रने नौकर, रसोइया वगैरह रखकर अत्यन्त शान्त शिष्ट निरीह मास्टरोंकी तरह कालेजके काममें मन लगाया। बहुत बड़ा मकान है, उसमें बहुत-से कमरे हैं। दो एक कमरोंके सिवा बाकीके सब यों ही खाली पड़ रहे। महीने भर बाद ही ये सूने कमरे उसे पीड़ा देने लगे। किराया देना ही पड़ता है और काम कुछ आते नहीं। लिहाजा चिट्ठी गई राजेन्द्रके पास। वह था उसकी दुर्भिक्ष निवारिणी समितिका मंत्री। देशोद्धारके लिए विशेष आग्रहके कारण दो सालकी सजा भुगतकर पाँच-छै महीने हुए छूटा था और पुराने बन्धु-बान्धवोंकी तलाशमें घूम रहा था। हरेन्द्रकी चिट्ठी और रेलका किराया पाकर वह उसी वक्त चला आया। हरेन्द्रने कहा, 'देखूँ, अगर तुम्हारे लिए कोई नौकरी-चाकरी दिला सकूँ।' राजेन्द्रने कहा, 'अच्छी बात है।' उसका परम मित्र था सतीश। वह किसी तरह हवालातसे बचकर मेदिनीपुर जिलेके किसी एक गाँवमें ब्रह्मचर्याश्रम खोलनेकी उधेड़बुनमें लगा था, राजेन्द्रका पत्र पाते ही वह एक हफ्तेके अन्दर अपने साधु-संकल्पको स्थगित करके आगरे चला आया और अकेला ही नहीं आया, कृपा करके गाँवसे एक भक्तको भी साथ लेता आया। सतीशने इस बातको युक्ति और शास्त्र वचनोंके बलपर बड़ी खूबीके साथ साबित कर दिया कि भारतवर्ष ही एकमात्र धर्म भूमि है। मुनि ऋषिगण ही इसके देवता हैं। हम लोग ब्रह्मचारी होना भूल गये हैं, इसीसे हमारा सब कुछ चला गया है। इस देशके साथ संसारके किसी भी देशकी तुलना नहीं हो सकती। कारण, हम ही लोग एक दिन थे जगत्‌के शिक्षक और हम ही लोग

थे मनुष्यके गुरु। लिहाजा, वर्तमानमें भारतवासियोंके लिए एकमात्र करने लायक काम है गाँव-गाँव और नगर नगरमें असंख्य ब्रह्मचर्याश्रम स्थापित करना। देशोद्धार करना अगर कभी सम्भव हुआ, तो वह इसी रास्तेसे सम्भव होगा।

उसकी बात सुनकर हरेन्द्र मुग्ध हो गया। सतीशका नाम तो उसने सुन रखा था, परन्तु परिचय न था, इसलिए इस सौभाग्यके लिए उसने मन ही मन राजेन्द्रको धन्यवाद दिया, और इसके लिए भी अपनेको धन्य समझा कि पहले उसका ब्याह नहीं हो गया। सतीश सदाचारादि-सम्मत अच्छी-अच्छी बातें जानता था और कई दिनोंतक यही बात चलती रही। हम ही लोग इस पुण्य भूमिके मुनि ऋषियोंके वंशधर हैं, हमारे ही पूर्वपुरुष एक दिन संसारके गुरु थे,—अतएव फिर एक दिन गुरु पदके हम ही उत्तराधिकारी हो सकते हैं। कौन आर्य-रक्तसे उत्पन्न पाखण्डी इस बातका विरोध कर सकता है?—नहीं कर सकता। और कर सकने लायक दुर्मतिसम्पन्न आदमी भी वहाँ कोई न था।

हरेन्द्र उन्मत्त-सा हो गया, परन्तु तपस्या और साधनाकी चीज होनेके कारण आश्रमकी सारी बात यथासाध्य गुप्त रखी जाने लगीं, सिर्फ राजेन्द्र और सतीश बीच बीचमें बाहर जाकर लड़के संग्रह करके ले आने लगे। जो उमरमें छोटे थे वे स्कूलमें भरती हो जाते और स्कूलकी शिक्षा पूरी करके उत्तीर्ण हो जाते वे हरेन्द्रकी कोशिशसे किसी न किसी कालेजमें दाखिल करा दिये जाते। इस तरह थोड़े ही समयमें लगभग सारा मकान नाना उमरके लड़कोंसे भर गया। बाहरके लोग विशेष कुछ जानते भी न थे और न कोई जाननेकी कोशिश ही करता था। उड़ती हुई खबरसे सिर्फ इतना ही सुन लेते थे कि हरेन्द्रके घरमें रहकर कुछ गरीब बंगाली लड़के पढ़ते लिखते हैं। इससे ज्यादा अविनाशको भी मालूम न था और न नीलिमाको पता था।

सतीशके कठोर शासनमें घरमें मांस मछली आनेका कोई रास्ता न था, ब्राह्म मुहूर्तमें उठकर सबको स्तोत्र-पाठ, ध्यान, प्राणायाम आदि शास्त्र विहित प्रक्रियाएँ करनी पड़ती थीं, उसके बाद पढ़ना लिखना और नित्य-कर्म। मगर अधिकारियोंका इससे भी मन नहीं भरा, और साधन मार्ग क्रमशः कठोरतर हो गया। रसोइया महाराज भाग खड़े हुए, नौकरको बरखास्त कर दिया गया और उनका काम पारी-पारीसे लड़कोंपर आ पड़ा। किसी दिन एक ही तरकारी होती तो किसी दिन वह भी नहीं, लड़कोंका पढ़ना लिखना जाता रहा,—स्कूलमें

उनपर फटकार भी पड़ने लगी, किन्तु कठोर बँधे हुए नियमोंमें शिथिलता नहीं आई। सिर्फ एक विषयमें अनियम था और वह बाहरसे कहीं निमन्त्रण आने पर। नीलिमाने किसी एक व्रत उद्यापनके उपलक्ष्यमें इस व्यतिक्रमको हरेन्द्रसे जबरदस्ती कायम किया था। इसके सिवा और कहीं भी किसी विषयमें क्षमाके लिए स्थान न था। लड़के नंगे पाँव रहते और बाल रूखे रखते। इस विषयमें सतीशकी अत्यन्त सतर्क आँखें हरदम पहरा देने लगीं कि कहीं किसी छिद्र पथसे उनमें विलासिताका अनधिकार प्रवेश न हो जाय। इसी तरह आश्रमके दिन बीत रहे थे। सतीशका तो कहना ही क्या, हरेन्द्रके मनमें भी आत्म गौरवकी सीमा न रही थी। बाहरके किसी आदमीके सामने वे विशेष कोई बात प्रकट नहीं करते थे, परन्तु अपने अन्दर हरेन्द्र आत्म प्रसाद और परितृप्तिसे उच्छ्वसित आवेगमें अक्सर यह कह दिया करते कि इनमेंसे एक भी लड़केको अगर वे आदमी बना सके तो समझेंगे कि इस जीवनकी चरम सार्थकता उन्हें प्राप्त हो गई। यह सुनकर सतीश कुछ बोलता नहीं, सिर्फ अपना सिर झुका लेता।

सिर्फ एक विषयमें हरेन्द्र और सतीश दोनोंको पीड़ाका अनुभव होता था। दोनों ही इस बातका अनुभव करते थे कि कुछ दिनोंसे राजेन्द्रका आचरण पहले जैसा नहीं रहा है। आश्रमके किसी काममें अब वह उतनी दिलचस्पी नहीं लेता, सबेरे साधन भजनमें अब वह प्रायः अनुपस्थित रहता है और पूछनेपर कहता है कि तबीयत ठीक नहीं है। इसकी मजा यह कि तबीयत खराब होनेके कोई लक्षण नहीं दिखाई देते। क्या उसकी शिकायत है, क्यों वह ऐसा हुआ जा रहा है,—पूछनेपर भी कुछ जवाब नहीं मिलता। किसी दिन सुबह ही उठ कर कहीं चला जाता है, दिनभर आता ही नहीं, और रातको जब घर लौटता है तब उसका चेहरा ऐसा होता है कि हरेन्द्रतकको कारण पूछनेकी हिम्मत नहीं पड़ती। और मजा यह कि ये सब बातें आश्रमके नियमोंके सर्वथा विरुद्ध हैं। इस बातको राजेन्द्र अच्छी तरह जानता था कि एक हरेन्द्रके सिवा आश्रमके बाद और किसीको भी बाहर रहनेका अधिकार नहीं है,—फिर भी उसे कोई परवाह नहीं। आश्रमका सेक्रेटरी था सतीश, उसीपर शृंखला रखनेका भार है। इन सब अनाचारोंके विरुद्ध वह हरेन्द्रसे ठीक शिकायतके तौरपर तो कुछ कह सकता नहीं किन्तु बीच-बीचमें आभास और इशारेसे वह भाव प्रकट कर देता है कि उसे आश्रममें रखना अब उचित नहीं है।—लड़के बिगड़ सकते हैं। यह

बात नहीं कि हरेंद्र खुद भी न समझता हो, किंतु मुँह खोलकर कुछ कहनेकी हिम्मत उसमें नहीं थी। एक दिन सारी रात वह लापता रहा, सबेरे जब वह घर लौटा तब उसीकी बातको लेकर खूब जोरकी आलोचना होने लगी हरेंद्रने आश्चर्यके साथ उससे पूछा, "बात क्या है, राजेन, कल रात भर थे कहाँ?"

उसने जरा हँसनेकी कोशिश करते हुए कहा, "एक पेड़के नीचे पड़ा था।"

"पेड़के नीचे? पेड़के नीचे क्यों?"

"बहुत रात हो गई थी। उस वक्त शोर मचा आप लोगोंको जगाकर परेशान नहीं किया।"

"अच्छा। इतनी रात कैसे हो गई?"

"ऐसे ही घूमते घामते।" कहकर वह अपने कमरेमें चला गया।

सतीश पास ही बैठा था। हरेंद्रने पूछा, "बात क्या है, बताओ तो?"

सतीशने कहा "आपकी बात टालकर चला गया। कुछ परवाह ही नहीं की। फिर भला मैं कैसे जान सकता हूँ?"

"बात तो ठीक है भाई, इतनी ज्यादती तो ठीक नहीं।"

सतीश मुँह भारी करके कुछ देरतक चुप रहा, फिर बोला, "आप एक बात तो जानते होंगे कि पुलिसने उसे दो साल जेलमें रखा था?"

हरेंद्रने कहा, "जानता हूँ, लेकिन वह तो झूठे सन्देहपर रक्खा था। उसका कोई अपराध नहीं था।"

सतीशने कहा, "मैं सिर्फ उसका मित्र होनेकी वजहसे ही जेल जाते जाते बच गया था। पुलिसकी दृष्टिने उसे आज भी छुटकारा नहीं दिया है।"

हरेंद्रने कहा, "असम्भव कुछ नहीं।"

उत्तरमें सतीशने जरा विषभरी हँसी हँसकर कहा, "मैं सोचता हूँ, उसके कारण कहीं हमारे आश्रमपर पुलिसकी मोह न हो जाय।"

सुनकर हरेंद्र चिन्तित चेहरेसे चुप रहा। सतीश खुद भी कुछ देर चुप रहकर सहसा पूछ बैठा, "आपको शायद मालूम होगा कि राजेन्द्र ईश्वरका अस्तित्वतक नहीं मानता।"

हरेन्द्र दंग रह गया, बोला, "नहीं तो!"

सतीशने कहा, "मुझे मालूम है, वह नहीं मानता। आश्रमके काम-काज और विधि निषेधपर उसकी रत्तीमात्र श्रद्धा नहीं। इससे तो बल्कि उसकी कहीं

नौकरी ओकरी लगा दीजिए तो अच्छा।"

हरेंद्रने कहा, "नौकरी तो पेडका फल नहीं सतीश कि जब चाहूँ तब तोडकर हाथमें दे दूँ। उसके लिए काफी कोशिश करनी पडती है।"

सतीशने कहा, "तो वही कीजिए। आप जब कि आश्रमके प्रतिष्ठाता और प्रेसिडेण्ट हैं और मैं सेक्रेटरी हूँ, तब सभी विषय आपको बताते रहना मेरा कर्तव्य है। आप उससे अत्यन्त स्नेह करते हैं और मेरा भी वह मित्र है। इसीसे उसके विरुद्ध कोई बात कहनेकी अबतक मेरी प्रवृत्ति नहीं हुई, मगर अब आपको सावधान कर देना मैं अपना कर्तव्य समझता हूँ।"

हरेंद्र मन ही मन डरकर बोला, "लेकिन मैं जानता हूँ कि उसका चरित्र निर्मल है—"

सतीशने गरदन हिलाकर कहा, "हाँ। इस तरफसे तो उसको उसका बड़ेसे बडा शत्रु भी दोषी नहीं ठहरा सकता। राजेंद्र आजीवन कुँवारा है, लेकिन वह ब्रह्मचारी भी नहीं है। असल कारण यह है कि इस बातको सोचनेका भी उसके पास वक्त नहीं कि स्त्री नामकी कोई चीज भी संसारमें है।" फिर क्षण भर चुप रहकर बोला, "उसके चरित्रकी शिकायत मैं नहीं करता, वह अस्वाभाविक रूपसे निर्मल है, लेकिन—"

हरेंद्रने पूछा, "आखिर तुम्हारे 'लेकिन'का मतलब क्या?"

सतीशने कहा, "कलकत्तेके बासेमें हम दोनों एक साथ रहा करते थे। वह तब कैम्बेल मेडिकल कालेजका छात्र था और मैं बा० एम-सी० पढता था। सभी जानते थे कि वही फर्स्ट पास होगा, लेकिन परीक्षाके पहले अकस्मात् न जाने वह कहाँ चला गया—"

हरेंद्रने विस्मित होकर पूछा, "वह डॉक्टरी पढता था क्या? मगर मुझसे तो कहता था कि वह शिवपुर इंजीनियरिंग कालेजमें भरती हुआ था, पर वहाँका पढाई बडी सख्त होनेसे उसे भाग आना पडा।"

सतीशने कहा, "लेकिन तलाश करें तो मालूम होगा कि कालेजमें फर्स्ट इयरमें वही अव्वल आया था और बिना कारण चले आनेके कारण वहाँके सभी शिक्षक अत्यन्त दुःखित हुए थे। उसकी बुआ धनी घरमें ब्याही हैं, वे ही पढनेका खर्च दे रही थीं। इस तरहकी हरकतोंसे नाराज होकर उन्होंने खर्च देना बन्द कर दिया, उसके बाद ही शायद आपसे उसका परिचय

हुआ है। लगभग दो साल घूम फिरकर जब वह घर पहुँचा तब उसकी बुआने उसीकी रायसे उसे डाक्टरी स्कूलमें भरती कर दिया। छात्रमें प्रत्येक विषयमें वह फर्स्ट हो रहा था, फिर भी तीनेक साल बाद सहसा एक दिन सब छोड़-छाड़ अलग हो गया। यही उसमें एक ऐब है। बड़ा कठोर है। मैं उससे पार नहीं पा सकता। वहाँसे छोड़-छाड़कर हमारे यहाँ आके टूटा गाता है। मुझसे बोला, 'इडने पढ़कर बी० एस-सी० पास करूँगा और कहीं किसी गाँवमें जाकर मास्टरी करके जीवन बिताऊँगा।' मैंने कहा, 'अच्छी बात है, यही करो।' उसके बाद, पन्द्रह बीस दिन पढ़नेमें ऐसी मेहनत की कि न नहानेका ठीक न खानेका, आँखोंकी नीदतक गायब हो गई, —ऐसी मेहनत की कि देखकर आश्चर्य होता है। सब कहने लगे, ऐसा शरीर लिये क्या कोई प्रत्येक विषयमें फर्स्ट हो सकता है?"

हरेन्द्रको पूरा हाल मालूम न था, उसने साँस रोके हुए ही कहा, "फिर?"

सतीश कहने लगा, "उसके बाद जो कुछ उसने शुरू किया वह भी अद्भुत है। किताबें तो फिर उसने छुई ही नहीं। न जाने कहाँ रहता है—कुछ पता ही नहीं। जब लौटकर आता है तब उसका चेहरा देखनेसे डर लगने लगता है। मानो इतने दिनोंतक उसने नहाया-खाया ही न हो।"

"फिर?"

"फिर एक दिन दलबलके साथ पुलिस आ धमकी और उसने मकानभरमें जैसे दक्ष-यज्ञ शुरू कर दिया। इसे छोड़कर उसे पकड़ती, उसे खोलकर इसे बन्द करती, किसीको डाँटती, बिस्तरा खोलती, ऐसा ऊधम मचाया कि बिना अपनी आँखों देखे कोई उसका अनुमान भी नहीं कर सकता। मेसमें रहनेवाले प्रायः सभी कलर्कीका काम करते थे, मारे डरके दो जनोंको तो बुखार हो गया। सभीने सोच लिया कि अब बचना मुश्किल है, पुलिसवाले आज सभीको पकड़ कर फाँसीपर लटका देंगे।"

"फिर क्या हुआ?"

"फिर लगभग तीसरे पहर पुलिस राजेनको और राजेनका मित्र होनेके कारण मुझे पकड़ ले गई। मुझे चारेक दिन बाद छोड़ दिया, पर उसका फिर कोई पता नहीं लगा। छोड़ते वक्त साहबने मेहरबानी करके मुझे बार-बार सावधान कर दिया कि 'वन स्टेप, ओनली वन स्टेप'—तुम्हारे घरसे इस

जेलका फासला सिर्फ एक कदमका रहा है। गा।' मैं गंगा स्नान करके, माँ कालीके दर्शन करके, घर लौट आया। सबने कहा, 'सतीश तुम बड़े भाग्यवान् हो।' ऑफिस पहुँचा, साहबने दो महीनेकी तनखा हाथमें थमाकर कहा, 'गो'। सुना कि इस बीचमें मेरी बहुत कुछ तलाशी हो चुकी है।"

हरेन्द्र स्तब्ध रह गया। कुछ देर उसी तरह रहकर अन्तमें धीरे धीरे बोला, "तो क्या तुम्हें निश्चित मालूम होता है कि राजेन—"

सतीशने विनतीके स्वरमें कहा, "मुझसे मत पूछिए। मेरा वह मित्र है।"

हरेन्द्र खुश नहीं हुआ, बोला, "मेरा भी तो वह भाईकी तरह है।"

सतीशने कहा, "एक बात विचार करनेकी यह है कि उन लोगोंने मुझे बेकसूर पकड़कर परेशान जरूर किया था, पर छोड़ भी दिया।"

हरेन्द्रने कहा "बेकसूर परेशान करनेका भी तो कानून नहीं है। जो लोग यह कर सकते हैं वे वह क्या नहीं कर सकते?" यह कहकर वह उस समय तो कालेज चला गया, परन्तु उसके मनमें अशान्ति बनी रही। सिर्फ राजेन्द्रके भविष्यकी चिन्ता करके ही नहीं, बल्कि इसलिए भी कि देशसेवाके काममें देशके लड़कोंको आदमी बनानेका यह जो आयोजन चल रहा है, कहीं बिना कारण नष्ट न हो जाय। हरेन्द्रने तय किया कि बात झूठ हो या सच, पुलिसकी दृष्टि अकारण आश्रमपर आकर्षित करना हरगिज उचित नहीं। खासकर जब कि वह साफ साफ यहाँके नियम भंग करता जा रहा है, तब कहीं नौकरी लगवाकर या और किसी बहाने उसे अन्यत्र हटा देना ही वाञ्छनीय है।

इसके कई दिन बाद ही मुसलमानोंके किसी त्योहारपर दो दिनकी छुट्टी थी। सतीश काशी जानेकी अनुमति लेने आया। भारतमें सर्वत्र आगरा आश्रमके अनुरूप आदर्शपर संस्थाएँ संगठित करनेकी विशाल कल्पना हरेन्द्रके मनमें थी और उसी उद्देश्यको लेकर सतीश काशी जा रहा था। राजेन्द्रने सुना तो वह भी आकर कहने लगा, "हरेन्द्र भइया, सतीशके साथ मैं भी कुछ दिनोंके लिए काशी घूम आऊँ।"

हरेन्द्रने कहा, "उसे काम है, इसीलिए जा रहा है।"

राजेन्द्रने कहा, "मुझे काम नहीं है, इसीसे जाना चाहता हूँ। जानेका रेलभाड़ा मेरे पास है।"

हरेन्द्रने पूछा, "लेकिन वापस आनेका?"

राजेन्द्र चुप रहा। हरेन्द्रने कहा, "राजेन्द्र, कुछ दिनसे तुमसे एक बात कहना चाहता हूँ, पर कह नहीं पाता।"

राजेन्द्रने जरा हँसकर कहा, "कहनेकी जरूरत नहीं हरेन्द्र भइया, मैं जानता हूँ।" कहकर वह चला गया।

शामकी गाड़ीसे वे जानेवाले थे। घरसे निकलते वक्त हरेन्द्रने दरवाजेके पास आकर अकस्मात् उसके हाथमें एक कागजकी पुड़िया थमाते हुए चुपकेसे कहा, "तुम वापस न आओगे तो मैं बहुत दुःखित होऊँगा राजेन्द्र।" और इतना कहकर वह लज्जासे भागकर अपने कमरेमें चला गया।

इसके दस बारह दिन बाद दोनों ही जने लौट आये। हरेन्द्रको एकान्तमें बुलाकर सतीशने प्रफुल्ल चेहरेसे कहा, "उस दिन आपका उतना ही कहना काम कर गया हरेन्द्र भइया। काशीमें आश्रम स्थापित करनेके लिए राजेनने इन कुछ दिनोंमें अमानुषिक परिश्रम किया है।"

हरेन्द्रने कहा, "परिश्रम करता है तो वह अमानुषिक ही करता है।"

"हाँ, यही किया उसने। पर उसका चौथाई हिस्सा भी अगर हमारे इस आश्रमके लिए मेहनत करे तो क्या कहने हैं!"

हरेन्द्रने आशान्वित होकर कहा, "करेगा भई, करेगा। अबतक शायद वह ठीक बातको ध्यानमें नहीं ला सका। मैं निश्चयसे कहता हूँ, तुम देख लेना, भविष्यमें उसके कामकी हद न रहेगी।"

सतीशने खुद भी यह विश्वास कर लिया।

हरेन्द्रने कहा, "तुम्हारे वापस आनेकी बाटमें एक काम स्थगित पड़ा हुआ है। जानते हो, मैंने मन ही मन क्या तय किया है? हमारे आश्रमका अस्तित्व और उद्देश्य छिपाये रखनेसे अब काम नहीं चल सकता। दसकी और दस जनोंकी सहानुभूति प्राप्त करना हमारे लिए जरूरी है। इसकी विशिष्ट कार्य पद्धतिका जन-साधारणमें प्रचार करना आवश्यक है।"

सतीशने सन्दिग्ध कण्ठसे कहा, "परन्तु उससे क्या काममें विघ्न न आयेगा?"

हरेन्द्रने कहा, "नहीं। इसी रविवारको मैंने कुछ लोगोंको आमन्त्रित किया है, वे सब देखने आयेंगे। ऐसा करना होगा कि आश्रमकी शिक्षा, साधना, संयम और विशुद्धताके परिचयसे उस दिन हम उन्हें मुग्ध कर दें सब,—तुम्हारे ही ऊपर सब दायित्व है।"

सतीशने पूछा, "कौन-कौन आयगे ?"

हरेन्द्रने कहा, "अजित बाबू, अविनाश भइया, भाभीजी। शिवनाथ बाबू फिलहाल यहाँ हैं नहीं, सुना है कि किसी काममें जयपुर गये हैं। पर उनकी स्त्री कमलका नाम सुना होगा, वे आयेंगी, और तबीयत ठीक हुई तो शायद आशु बाबूको भी पकड ला सकूँगा। जानते तो हो, ये लोग कोई ऐसे वैसे आदमी नहीं हैं। इस बातका खयाल रखना है कि उस दिन इन लोगोंसे हम वास्तविक श्रद्धा वसूल कर सकें। इसका भार तुम्हारपर है।"

सतीश विनयसे सिर हिलाता हुआ बोला, "आशीर्वाद दीजिए कि ऐसा ही हो।"

× × ×

रविवारको शामसे पहले ही अभ्यागत लोग आ पहुँचे। आये नहीं सिर्फ आशु बाबू। हरेन्द्र दरवाजेसे उन सबको सम्मानके साथ स्वागतपूर्वक भीतर ले आया। लडके उस समय आश्रमके नित्य कार्योंमें लगे हुए थे। कोई बत्ती जला रहा था, कोई झाडू लगा रहा था, कोई चूल्हा सुलगा रहा था, कोई पानी भर रहा था और कोई रसोईकी तैयारियाँ कर रहा था। हरेन्द्रने अविनाशके प्रति लक्ष्य करके हँसते हुए कहा, "भाई साहब, आप जिन्हें अभागे आवारोंका दल कहा करते हैं, ये ही हैं वे हमारे आश्रमके लडके। हमारे यहाँ नौकर रसोइया नहीं हैं, ये ही लोग सब काम अपने हाथोंसे करते हैं।—भाभीजी, चलिए हमारी भोजनशालामें। आज हमारे यहाँ पर्वका दिन है, वहाँका आयोजन देख आइए, एक बार चलिए।"

नीलिमाके पीछे पीछे सब रसोई घरके सामने जा खड़े हुए। एक दस बारह सालका लडका चूल्हा सुलगा रहा था और उसी उमरका दूसरा लडका हँसियासे आलू बना रहा था। दोनोंने उठकर नमस्कार किया। नीलिमाने लडकासे स्नेहसे सम्बोधन करते हुए पूछा, "आज तुम लोगोंके यहाँ क्या क्या रसोई बनेगी, बेटा ?"

एक लडकेने प्रसन्न मुखसे उत्तर दिया, "आज रविवारके दिन हमारे यहाँ दम आलू[१] बनते हैं।

"और क्या क्या बनता है ?"

१ आलूका एक व्यञ्जन।

"और कुछ नहीं।"

नीलिमाने व्याकुल होकर पूछा, "सिर्फ दम आलू, बस? दाल, शाक या और कुछ—"

लड़केने कहा, "दाल हमारे यहाँ कल बनी थी।"

सतीश पास ही खड़ा था, उसने समझाते हुए कहा, "हमारे आश्रममें एक बारसे ज्यादा बनानेका नियम नहीं है।"

हरेन्द्रने हँसते हुए कहा, "खानेकी गुंजाइश या नहीं भाभीजी, होगा कैसे? हमारे भाई साहब इसी तरह दूसरोंके आगे आश्रमका गौरव बढ़ाया करते हैं।"

नीलिमाने पूछा, "नौकर चाकर भी नहीं होंगे शायद?"

हरेन्द्रने कहा, "नहीं। उन्हें रखा जायगा तो दम-आलूको विदा कर देना पड़ेगा। लड़के उसे पसन्द नहीं करेंगे।"

नीलिमाने आगे कुछ नहीं पूछा, उन लड़कोंकी सूरतकी तरफ देखकर उसकी आँखें छलछला आईं। बोली, "लालाजी, और कहीं चलो।"

सबने इस बातके मानी समझे। हरेन्द्र पुलकित होकर बोला, "चलिए, मैं निश्चयके साथ जानता था भाभी कि यह आपसे सहा नहीं जायगा।" फिर उसने कमलकी तरफ देखकर कहा, "लेकिन, आप तो खुद ही इसमें अभ्यस्त हैं,—सिर्फ आप ही समझेंगी इस संयमकी सार्थकताको। इसीसे उस दिन इस ब्रह्मचर्याश्रममें आनेका विनयके साथ आपको आमन्त्रण दिया था।"

हरेन्द्रके गम्भीर चेहरेकी तरफ देखकर कमल हँस पड़ी, बोली, "मेरी खुदकी बात और है, लेकिन इन सब बच्चोंको इतने आडम्बरके साथ इस तरहकी निष्फल दरिद्रताका आचरण करानेका नाम क्या आदमी बनाना है हरेन्द्र बाबू? ये ही हैं शायद यहाँके ब्रह्मचारी? अगर आदमी बनाना हो तो साधारण और स्वाभाविक मार्गसे बनाइए। झूठे दुःखका बोझ सिरपर लादकर असमयमें ही इन्हें बौना या कुबड़ा न बना डालिए।"

कमलके शब्दोंकी कठोरतासे हरेन्द्र तिलमिला गया, अविनाशने कहा, "कमलसे तुलना तुम्हारा ठीक नहीं हुआ हरेन्द्र।"

कमल शरमा गई, बोली, "सचमुच, मुझसे तुलना किसीके लिए भी ठीक नहीं।"

नीलिमाने कहा, "मगर मैं उन किसीमें शामिल नहीं हूँ कमल। मेरे घरमें कभी तुम्हारा अनादर न होगा। चलो, हम लोग ऊपर चलकर बैठें। देखें, लालाजीने आश्रममें और क्या-क्या आतिशबाजियाँ निकली हैं?" यह कहकर उसने अपने स्निग्ध हास्यके आवरणसे कमलकी लज्जा ढक दी।

दूसरी मंजिलपर काफी लम्बा-चौड़ा आश्रमका खास कमरा था। पुराने जमानेका नक्काशीका काम छतके नीचे और दीवारोंपर अब भी मौजूद है। बैठनेके लिए एक बेंच और चार पाँच कुर्सियाँ हैं, पर साधारणतः उनपर बैठता कोई नहीं। फर्शपर एक बड़ी सतरंजी बिछी हुई है। आज खास दिन होनेके कारण उसपर सफेद चादर बिछा दी गई है और उसपर पड़ोसी लालाजीने यहाँसे बड़े-बड़े तकिये मँगाकर रख दिये हैं। बीचमें उन्हींके यहाँसे लाया हुआ बेल-बूटेदार बारह डालियोंवाला शमादान और एक कोनेमें सब्ज रंगके होदसे ढकी हुई दीवारगिरी जल रही है। नीचेकी अन्धकारमय और आनन्दहीन आबहवासे इस कमरेमें आकर सबके सब खुश हुए।

अविनाशने एक तकियेका सहारा लिया और दोनों पैर सामनेकी ओर पसार कर सन्तोषकी साँस लेते हुए कहा, "उफ्! जानमें जान आई।"

हरेन्द्र पुलकित होकर बोला, "हमारे आश्रमका यह कमरा कैसा है भाई साहब?"

अविनाशने कहा, "यही तो तुमने मुश्किलमें डाल दिया हरेन्द्र। कमल मौजूद है, उसके सामने किसी चीजको अच्छा बतानेकी हिम्मत नहीं पड़ती—हो सकता है कि तीव्र प्रतिवादके जोरसे वह अभी साबित कर दे कि इसके छतकी नक्काशीसे लेकर फर्शतक सब कुछ बुरा है।" इतना कहकर वे कमलके मुँहकी तरफ देखकर जरा हँस दिये और बोले, "इसे तो तुम भी मानोगी कि मेरे पास और कोई पूँजी भले ही न हो, पर उमरकी पूँजी मैंने खूब जमा कर रखी है। उसीके बलपर तुमसे एक बात कहता हूँ। मैं अस्वीकार नहीं करता कि सच बात बहुधा अप्रिय होती है, पर इसके मानी यह नहीं कि प्रिय बात मात्र सत्य नहीं होती कमल। तुम्हें बहुत-सी बातें शिवनाथने सिखाई हैं, सिर्फ यही एक बात सिखाना बाकी रख छोड़ा है।"

कमलका चेहरा सुर्ख हो उठा, पर इसका जवाब दिया नीलिमाने। बोली, "शिवनाथकी जो इतनी त्रुटि रह गई है मुखर्जी साहब, हम उनपर जुरमाना

करके उसका बदला लेंगे, मगर गुरुगीरीमें तो कोई भी पुरुष कम नहीं मालूम होता। इसलिए, प्रार्थना है कि अब आप अपनी उमरकी पूँजीमेंसे और भी दो एक प्रिय वाक्य बाहर निकालें।—हम लोग सुनकर धन्य हों।"

अविनाश भीतरसे जल भुन गये। इतने आदमियोंके बीच उनका जो अपमान किया गया केवल उसीके कारण नहीं, बल्कि इस वक्रोक्तिके तीरके भीतर जो तीक्ष्ण फल छिपा हुआ था उसने विद्ध करके ही दम नहीं लिया, अपमान भी किया। कुछ दिनोंसे एक तरहकी असन्तोषकी गरम हवा न जाने कहाँसे आकर दोनोंके बीचमें बह रही थी। वह आँधीकी तरह भीषण नहीं थी, पर घास तिनके, धूल-रेत उड़ाकर कभी कभी दोनोंकी आँखोंमें झोंक देती थी। कम हिलते हुए दाँतोंकी तरह चबानेका काम तो चलता था परन्तु चबानेके आनन्दसे दोनों वंचित थे। हरेन्द्रको लक्ष्य करके उन्होंने कहा, "नाराज तो नहीं हो सकता हरेन्द्र तुम्हारी भाभीने बिल्कुल झूठ नहीं कहा कि मुझे पहचाननेमें तो अब उनके लिए कुछ बाकी नहीं है वह ठीक ही मालूम है कि मेरी पूँजी जो कुछ है पुराने जमानेकी थोथी-सारी है, उसमें वस्तु होनेपर भी रस-कस कुछ नहीं।"

हरेन्द्रने पूछा, "इसके मानी क्या भाई साहब!"

अविनाशने कहा, "तुम सन्यासी आदमी ठहरे, मानी ठीक समझोगे नहीं। मगर छोटी मालिकिन अचानक कमलकी जैसी भक्त हो उठी हैं, उससे आशा की जाती है कि अगर वे उनके अनुभवसे काम लेंगी तो धन्य होनेका रास्ता अपने आप साफ हो जायगा।"

इस व्यंग्यकी कटुता स्वयं उन्हें अपने कानोंमें भी खटकी थी, और दुर्निवारकी स्पर्धासे वे और भी कुछ कहना चाहते थे कि हरेन्द्रने उन्हें रोक दिया। उसने व्यथित कण्ठसे कहा, "भाई साहब आज आप सभी यहाँके अतिथि हैं। इस बातको अगर आप लोग भूल गये कि कमलको हम आगमकी तरहसे सम्मानके साथ निमंत्रित करके लाये हैं, तो फिर हमारे दुःख की सीमा न रहेगा।"

नीलिमाने कहा, "तो फिर मेरे सम्बन्धमें कृपाकर उन्हें स्मरण करा दो लालाजी कि अगर कोई किसीको छोटी मालिकिन कहकर पुकारने लग जाय तो वह उसकी सचमुचकी गृहिणी नहीं हो जाती। उसे उसपर शासन करनेकी

मालाका भी ज्ञान रहना चाहिए। मेरी तरफसे मुखर्जी साहबके अनुभवके भाण्डारमें इतना आज और जमा करा दिया जाय—भविष्यमें वह काममें आ सकता है।"

हरेन्द्रने हाथ जोड़कर कहा, "रक्षा कीजिए भाभी साहिबा, सारीकी सारी अनुभव-अभिज्ञताकी लड़ाई क्या आज मेरे ही यहाँ आकर लड़ी जायगी! जितनी बाकी बची है उतनी रहने दीजिए, घर जाकर पूरी कर लीजिएगा, नहीं तो हम लोग तो वैसे ही मारे जायगे। जिस बातके डरसे अक्षयको नहीं बुलाया, आखिर क्या वही बात तकदीरमें बदी है?"

सुनकर अजित और कमल दोनों ही हँस पड़े। हरेन्द्रने पूछा, "अजित बाबू, सुना है, कल आप अपने घर जायँगे?"

"पर आपने सुना किससे?"

"आशु बाबूको बुलाने गया था, उन्होंने कहा कि शायद कल आप जा रहे हैं।"

अजितने कहा, "शायद। पर कल नहीं, परसों। यह भी निश्चित नहीं कि घर जाऊँगा या और कहीं। हो सकता है कि आमतक स्टेशन पहुँच जाऊँ और उत्तर, दक्षिण, पूरब, पश्चिम जिस तरफकी गाड़ी मिल जाय उसीपर यात्रा शुरू कर दूँ।"

हरेन्द्रने हँसते हुए कहा, "लगभग वैरागी होनेके दरजेपर। अर्थात् गन्तव्य स्थानका कोई निश्चय नहीं।"

अजितने कहा, "नहीं।"

"लेकिन लौटनेका?"

"नहीं, उसका भी फिलहाल कोई निश्चय नहीं।"

हरेन्द्रने कहा, "अजित बाबू, आप भाग्यवान् आदमी हैं। परन्तु बोरिया बसना ढोनेके लिए अगर चाहिए तो मैं एक आदमी दे सकता हूँ परदेशके लिए ऐसा मित्र मिलना मुश्किल है।"

कमलने कहा, "और रसोइयेकी जरूरत हो तो मैं भी एक ऐसा व्यक्ति दे सकती हूँ जिसकी जोड़ी मिलना मुश्किल है। आप भी स्वीकार करेंगे कि हाँ, है तो अहंकार करने लायक ही।

अविनाशको कुछ भी अच्छा नहीं लग रहा था, वे बोले, "हरेन्द्र, अब देर

चाहेगी है, चलनेकी तैयारी करो न। क्या कहते हो ?"

हरेंद्रने विनयके साथ कहा, "लड़कोंके साथ जरा परिचय न कीजिएगा ? थोड़ा बहुत उपदेश उन्हें न दे जाइएगा, भाई साहब ?

अविनाशने कहा, "उपदेश देने तो मैं आया नहीं, आया था सिर्फ इन लोगोंका साथी बनकर। सो उसकी भी अब शायद जरूरत नहीं रही।"

सतीश बहुत से लड़कोंके साथ ऊपर आ पहुँचा। दस-बारह वर्षसे लेकर उन्नीस-बीस वर्षके युवकतक उसमें थे। जाड़ेके दिन और बदनपर सिर्फ एक कुरता, पाँवमें जूतेतक नहीं—शायद इसलिए कि जीवन धारणके लिए उनका कोई विशेष प्रयोजन नहीं। खाने-पीनेकी व्यवस्था पहले ही दिखा दी गई है। ब्रह्मचर्याश्रममें यह सब शिक्षाका ही अंग है। हरेंद्रने आज एक सुन्दर भाषण रट रखा था, वह मन ही मन उसीको दुहराते हुए यथोचित गाम्भीर्यके साथ बोला, "इन लड़कोंने देशके काममें जीवन अर्पण कर दिया है। यही आशीर्वाद आप लोग हमें दीजिए कि आश्रमका यह महान् आदर्श भारतके नगर नगर और गाँव गाँवमें प्रचार कर सकें।"

सबने मुक्त कण्ठसे आशीर्वाद दिया।

हरेंद्रने कहा, "अगर समय मिला तो अपना वक्तव्य मैं पीछे सुनाऊँगा।" यह कहकर उसने कमलको लक्ष्य करके कहा, "आपको ही आज खास तौरसे आमंत्रण देकर हम लोगोंने बुलाया है, कुछ सुननेकी आशासे। लड़के आशा लगाये हुए हैं कि आपके मुँहसे आज वे ऐसी कोई बात सुनेंगे जिससे उनके जीवनका व्रत अधिकतर उज्ज्वल हो उठे।"

मारे संकोच और दुविधाके कमल सुर्ख हो उठी। बोली, "मैं तो व्याख्यान नहीं दे सकती हरेन बाबू।"

इसका उत्तर दिया सतीशने, बोला, "व्याख्यान नहीं उपदेश चाहते हैं हम। देशके काममें जो चीज हमारे सबसे ज्यादा काममें आयेगी, सिर्फ उसीके बारेमें।"

कमलने उसीसे पूछा, 'देशके कामसे आपका तात्पर्य क्या है, पहले यह बताइए ?"

सतीशने कहा, "जिससे देशका सर्वांगीण कल्याण हो वही तो देशका काम है।"

कमलने कहा, "मगर कल्याणकी धारणा तो सबकी एक सी होती नहीं। आपके साथ मेरी धारणाका अगर मेल न बैठे तो मेरा उपदेश आपके काम नहीं आ सकता।"

सतीश सङ्कटमें पड़ गया। इस बातका ठीक उत्तर उसे ढूँढ़े न मिला। उसका इस सङ्कटसे उद्धार करनेके लिए हरेन्द्रने कहा, "देशकी मुक्ति जिससे मिले वही है देशका एकमात्र कल्याण। देशमें ऐसा कौन होगा जो इस सत्यको न मानता हो?"

कमलने कहा, "कहनेमें डर लगता है हरेन बाबू, कि सबके सब भड़क उठेंगे। नहीं तो मैं ही कहती कि अपने आपको और दूसरोंको भूलभुलैयामें डालनेवाला इस 'मुक्ति' शब्दके समान और कोई छल ही नहीं। किससे मुक्ति हरेन बाबू? त्रिविध दुःखसे या भव-बन्धनसे? बताइए कि किसे देशका एक मात्र कल्याण समझकर आश्रम प्रतिष्ठामें आप लोग नियुक्त हुए हैं? यही क्या आपकी स्वदेश सेवाका आदर्श है?"

हरेन्द्र व्यस्त होकर बोला, "नहीं, नहीं, नहीं, यह सब नहीं, यह सब नहीं, यह कामना हमारी नहीं।"

कमलने कहा, "तो फिर ऐसा कहिए कि यह हमारी कामना नहीं, कहिए कि हमारा आदर्श इससे भिन्न है। कहिए कि संसार त्याग और वैराग्य-साधन हमारा लक्ष्य नहीं। हमारी साधना है संसारका सम्पूर्ण ऐश्वर्य, सम्पूर्ण सौन्दर्य, सम्पूर्ण जीवन लेकर जीवित रहना? मगर उसकी शिक्षा क्या यही है? बदनपर कपड़े नहीं, पाँवोंमें जूते नहीं, फटे पुराने कपड़े पहने रहते हैं, रूखे बाल हैं, एक बार अधपेट खाकर जो लड़के अस्वीकारके बीच बड़े रहे हैं, प्रतिदिन आनन्दका जिनके भीतर चिह्नतक नहीं रहा है, देशकी लक्ष्मी क्या उन्हींके हाथ अपने भाण्डारकी चाबी सौंप देंगी? हरेन्द्र बाबू, संसारकी तरफ एक बार मुँह उठाकर देखिए तो सही। जिन्हें बहुत मिला है, उन्होंने ही आसानीसे दिया है। उन लोगोंको ऐसी अकिंचनताका स्कूल खोलकर त्यागका ग्रेजुएट नहीं बनाया गया था।"

सतीश हतबुद्धि-सा हो गया, बोला, "क्या आप कहना चाहती हैं कि देशके मुक्ति संग्राममें संयमकी साधना और त्यागकी दीक्षाकी कतई जरूरत नहीं?"

कमलने कहा, "मुक्ति-संग्रामका अर्थ तो पहले स्पष्ट हो जाय?"

सतीश गर्व झाँकने लगा। कमल हँसती हुई बोली, "आपके भावोंसे मालूम होता है कि आप विदेशी राजशक्तिके बंधनसे मुक्त होनेको ही दरअसल मुक्ति-संग्राम कह रहे हैं। अगर यही हो सतीश बाबू, तो मैंने न तो कभी धर्मकी साधना की है और न त्यागकी दीक्षा ही ली है, फिर भी आपसे कहे देता हूँ कि मुझे आप सबसे आगे सामना करनेवालोंमें देख पाइएगा,—आप लोग तब ढूँढे भी न मिलेंगे।"

सतीश कुछ बोला नहीं, पर न जाने कैसा घबरा-सा गया, और उसकी चंचल दृष्टिका अनुसरण करती हुई कमल कुछ देरके लिए जिस व्यक्तिकी ओरसे आँख न फेर सकी वह था राजेन्द्र। सतीशके सिवा किसीने उधर लक्ष्य ही नहीं किया था कि कब वह चुपकेसे दरवाजेके पास आ खड़ा हुआ था। वह भावाच्छन्नकी भाँति निष्पलक दृष्टिसे अब तक कमलकी ही ओर देख रहा था, और अब भी ठीक उसी तरह देखता रहा। उसका चेहरा एक बार देखकर फिर भूलना मुश्किल था। उमर शायद पचीस-छब्बीसके लगभग होगी, रंग बिल्कुल साफ गोरा, सहसा देखनेमें अस्वाभाविक-सा मालूम पड़ता है। ऊँचा प्रशस्त ललाट इसी उमरमें बाल उड़ जानेके कारण सामनेकी तरफ बहुत बड़ा दिखाई देता है। आँखें गहरी और बहुत छोटी-छोटी हैं जैसे अँधेरे बिलमेंसे चूहेकी आँख चमक रही हों। नीचेका मोटा ओठ सामनेकी ओर झुककर मानो अन्तःकरणके कठोर संकल्पको किसी तरह दबाये हुए है। सहसा देखनेसे ऐसा लगता है कि इस आदमीसे बचकर चलना ही अच्छा है।

हरेन्द्रने कहा, "ये ही मेरे मित्र हैं राजेन्द्र—सिर्फ मित्र ही नहीं बल्कि छोटे भाई जैसे। इतना बड़ा कार्यकर्ता, इतना बड़ा स्वदेशभक्त, इतना निडर और साधुचित्त पुरुष मैंने दूसरा नहीं देखा। भाभीजी, इन्हींका जिक्र मैं उस रोज आपसे कर रहा था। यह जैसे हँसते-खेलते पाता है वैसे ही हँसते-खेलते फेंक देता है। आश्चर्यजनक आदमी है। अजित बाबू, इन्हींको मैं आपके साथ दे रहा था मार-काट करनेके लिए।"

अजित कुछ कहना ही चाहता था कि एक लड़केने आकर खबर दी, "अक्षय बाबू आये हैं।"

हरेन्द्र विस्मित होकर बोला, "अक्षय बाबू!"

अक्षयने घरमें घुसते हुए कहा, "हाँ जी, हाँ—तुम्हारा, परम मित्र अक्षय

कुमार!" फिर सहसा चाककर कहा, "ऐं! आज बात क्या है? यहाँ तो सभी जन इकट्ठे हैं! आशु बाबूके साथ कारमें घूमने निकला था, सहसा खयाल आया, हरि घोष[1] की गोशाला तो जरा देखते जायँ। इसीसे चला आया, चलो, अच्छा ही हुआ।"

इन सब बातोंका किसीने जवाब नहीं दिया, कारण उसमें न तो कुछ जवाब देने लायक था और न उसपर किसीने विश्वास ही किया। असलमें न तो यह रास्ता ही है और न इधर वह कभी आता है।

अक्षयने कमलकी तरफ देखकर कहा, "तुम्हारे यहाँ कल सबर ही जानेकी सोच रहा था, लेकिन मकान तो मुझे मालूम नहीं—अच्छा ही हुआ जो भेंट हो गई। एक शुभ संवाद है।"

कमल चुपचाप देखती रही, हरेन्द्रने पूछा, "शुभ संवाद क्या है, सुनाओ तो सही। यह निश्चय है खबर जब शुभ है तो गोपनीय तो होगी नहीं।"

अक्षयने कहा, "नहीं, छिपाने लायक अब रह ही क्या गया है! रास्तेमें आज उस सिलाईकी मशीन बेचनेवाले कम्बख्त पारसीसे भेंट हो गई जो उस दिन कमलकी तरफसे रुपये उधार लेने गया था। गाडी रोककर मामला पूछा गया।" फिर कमलकी तरफ इशारा करके कहा, "आप उधारमें एक मशीन खरीद कर मजेसे धड़ल्ले खर्च चला रही थीं।—शिवनाथ मौजसे लापता है।—मगर इकरारके मुताबिक किश्त तो वक्तपर चुकनी ही चाहिए, इससे वह मशीन छीन ले गया। आशु बाबूने आज उसे पूरी कीमत देकर खरीद लिया है।—कमल, कल सवेरे ही आदमी भेजकर मशीन मँगा लेना। खाने पहननेसे भी तंग हो, हम लोगोंसे तो यह बात कहनी थी?"

इसके कहनेकी बर्बर निष्ठुरतासे सबके सब ममाहत हुए। कमलके लावण्य हीन क्षीण चेहरेका कारण जानकर मारे शरमके अविनाशबाबूका चेहरा लाल हो उठा।

कमलने मृदु कण्ठसे कहा, "मेरी तरफसे कृतज्ञता जताकर उन्हें मशीन वापस कर देनेको कह दीजिएगा। अब मुझे उसकी जरूरत नहीं।"

हरेन्द्रने कहा, "अक्षय बाबू, आप चले जाइये इस घरसे। आपको मैंने, बुलाया नहीं था और न चाहा ही था कि आप यहाँ आयें। फिर भी, आप चले

[1] घोष = ग्वाला।

आये। आदमीकी ब्रूटेलिटी (पशुता) की क्या कहीं थाह हद ही नहीं!"

कमलने सहसा मुँह उठाते ही देखा कि अजितकी दोनों आँखें आँसुओंसे भर आई हैं। बोली, "अजित बाबू, क्या आपकी गाड़ी साथ है, कृपाकर मुझे पहुँचा दीजिएगा!"

अजित कुछ बोला नहीं, उसने सिर्फ सिर हिलाकर हाँ कर दी।

कमलने नीलिमासे नमस्कार करके कहा, "अब शायद जल्दी भेंट न होगी, मैं यहाँसे जा रही हूँ।"

पूछनेका किसीको साहस नहीं हुआ कि कहाँ? नीलिमाने सिर्फ उसका हाथ लेकर अपने हाथमें दबा दिया और दूसरे क्षण कमल हरेन्द्रको नमस्कार करके अजितके पीछे पीछे कमरेसे बाहर निकल गई।

१५

मोटरमें बैठकर कमल अन्यमनस्क-सी होकर आकाशकी ओर देख रही थी। गाड़ी थमते ही इधर उधर देखकर उसने पूछा, "यह कहाँ आ गये अजित बाबू, मेरे घरका रास्ता तो यह नहीं है!"

अजितने उत्तर दिया, "नहीं, यह घरका रास्ता नहीं।"

"नहीं है! तो लौटना पड़ेगा शायद?"

"सो आप जानें। हुक्म करते ही लौट पड़ूँगा।"

सुनकर कमल आश्चर्यमें पड़ गई। इस अद्भुत उत्तरके कारण उतनी नहीं जितनी उसके कण्ठकी अस्वाभाविकतासे वह विचलित हो उठी। क्षण भर मौन रहकर उसने अपनेको दृढ़ किया और फिर हँसते हुए कहा, "राह भूलनेका अनुरोध तो मैंने किया नहीं अजित बाबू, जो सम्बोधनका हुक्म मुझको ही देना होगा? ठीक जगह पहुँचा देनेका दायित्व आपका है,—मेरा कर्तव्य है सिर्फ आपपर विश्वास किये रहना।"

"मगर दायित्व-बोधकी धारणामें अगर भूल कर बैठा होऊँ कमल, तो?"

"'मगर'के ऊपर तो कोई विचार चल नहीं सकता अजित बाबू। भूलके बारेमें पहले निःसंशय हो जाने दो, उसके बाद इसका विचार करूँगी।"

अजितने अस्फुट स्वरमें कहा, "तो विचार ही कीजिए,—मैं प्रतीक्षा कर रहा हूँ।" इसके बाद वह क्षण भर स्तब्ध रहकर सहसा बोल उठा, "कमल,

उस दिनकी रात याद है तुम्हें ? उस दिन भी ठीक ऐसा ही अन्धकार था।"

"हाँ, ऐसा ही अन्धकार था।" कहकर कमलने गाड़ीका दरवाजा खोला, वह पीछेसे उतरी और अजितकी बगलमें सामनेकी सीटपर जा बैठी। सुनसान अन्धकार, रात्रि बिल्कुल नीरव थी। कुछ देरतक दोनोंमेंसे कोई कुछ बोला नहीं।

"अजित बाबू ?"

"हूँ।"

अजितकी छातीके भीतर आँधी उठ रही थी, जवाब देनेमें बात उसकी मुँह की मुँहमें ही रुक रही।

कमलने फिर पूछा, "क्या सोच रहे हैं, बताइए न ?"

अजितका कण्ठ काँपने लगा, बोला, "उस दिनका आशु बाबूके मकानका मेरा आचरण तुम्हें याद है ? उस दिन सोचा था कि तुम्हारा अतीत ही शायद तुम्हारा सबसे बड़ा अंग है, मैं उसके साथ समझौता कैसे कर सकता हूँ ? पीछे की ही छायाको सामने बढ़ाकर मैंने तुम्हारा चेहरा ढक लिया था और इस बातको भूल गया था कि सत्य घूमा करता है। मगर उसे जाने दो—लेकिन आज क्या सोच रहा हूँ, तुम नहीं समझ सकतीं ?"

कमलने कहा, "स्त्री होकर इसके बाद भी न समझ सकूँगी, मैं क्या इतनी निर्बोध हूँ ? राह जब भूले, मैंने तो तभी समझ लिया था।"

अजित धीरे धीरे उसके कंधेपर बायाँ हाथ रखकर चुप हो रहा। कुछ देर बाद उसने कहा, "कमल, मालूम होता है, आज अब मैं अपनेको सँभाल नहीं सकूँगा ?"

कमल हटकर नहीं बैठी। उसके आचरणमें विस्मय या विह्वलताका नाम तक न था। सहज स्वाभाविक शान्त कण्ठसे बोली, "इसमें आश्चर्यकी कोई बात नहीं अजित बाबू, ऐसा तो हुआ ही करता है। लेकिन आप तो सिर्फ पुरुष ही नहीं हैं, साथ निरा शिष्ट पुरुष हैं। इसके बाद फिर मुझे कंधेसे उतारिएगा कैसे ? इतना छोटा काम तो आप कर नहीं सकेंगे।"

अजित गाढ़े स्वरमें बोला, "ऐसी आशङ्का तुम करती ही क्या हो कमल कि ऐसा काम करना ही पड़ेगा ?"

कमल हँस पड़ी और बोली, "आशङ्का मैं अपने लिए नहीं करती अजित ... हूँ सिर्फ आपके लिए ... । तो मुझे ...

था, सोच यही है कि करते नहीं बनेगा। सिर्फ एक रातकी गलतीके बदले इतनी बड़ी सजा आपके सिर लाद देनेमें मुझे तरस आता है। अब नहीं, चलिए लौट चलें।"

बात अजितके कानतक पहुँची, पर हृदयतक नहीं पहुँची। क्षणभरमें उसकी नशाका खून पागल हो उठा,—अपनी छातीके पास खींचके उसे दाबकर मत्त कण्ठसे बोल उठा, "मुझपर क्या तुम विश्वास नहीं कर सकतीं कमल ?"

क्षण भरके लिए कमलकी साँस रुक गई, बोली, "कर सकती हूँ।"

"तो किसलिए लौटना चाहती हो कमल ? चलो, हम चले चलें।"

"चलिए।"

गाड़ी चलाने पर अजितने सहसा रुककर पूछा, "घरसे साथ लेने लायक क्या तुम्हारे पास कुछ भी नहीं ?"

"नहीं। लेकिन आपके ?"

अजितको सोचना पड़ा। जेबमें हाथ डालकर बोला, "रुपये पैसे तो कुछ साथमें हैं नहीं,—उनकी तो जरूरत पड़ेगी।"

कमलने कहा, "गाड़ी बेच देनेसे आसानीसे रुपये आ जायँगे।"

अजितने आश्चर्यके साथ कहा, "गाड़ी बेचूँगा ? मगर यह तो मेरी नहीं है—आशु बाबूकी है।"

कमलने कहा, "इससे क्या ? आशु बाबू भले आदमी और घृणाके मारे गाड़ीका नाम तक जबानपर न लायँगे। कोई चिन्ता मत कीजिए—चले चलिए।"

सुनकर अजित स्तब्ध हो रहा। उसका बायाँ हाथ अब भी कमलके कन्धेपर था, वह खिसककर नीचे जा पड़ा। बहुत देर चुप रहकर वह बोला, "तुम क्या मेरा मजाक उड़ा रही हो ?"

"नहीं तो, सच कह रही हूँ।"

"सच कह रही हो और सच ही समझ रही हो कि मैं गाड़ी चुरा सकता हूँ ? यह काम तुम खुद कर सकतीं ?"

कमलने कहा, "मरने न सकनेपर अगर आप निर्भर करते अजित बाबू, तो मैं इसका जवाब देती। पराई चीज हड़प लेनेकी हिम्मत आपमें नहीं है। चलिए, गाड़ी घुमाकर मुझे घर पहुँचा दीजिए।"

लौटते वक्त अजितने धीरेसे पूछा, "पराई चीज हड़प लेनेकी क्या बहुत बड़ी

बात समझती हो तुम ?"

कमलने कहा, "बडी-छोटीकी बात नहीं की मैंने। यह साहस आपमें नहीं है, बस यही कहा है।"

"नहीं, नहीं है, और उसके लिए मैं लज्जाका अनुभव भी नहीं करता।" यह कहकर अजित जरा रुका और फिर बोला, "बल्कि होता तो उसे मैं लज्जाकी बात समझता और मेरा तो विश्वास है कि सभी शिष्ट व्यक्ति इस बातको स्वीकार करेंगे।"

कमलने कहा, "क्योंकि स्वीकार करना बहुत आसान है। उसमें वाहवाही जो मिलती है।"

"सिर्फ वाहवाही ही ? उससे ज्यादा कुछ नहीं ? शिक्षा और संस्कार नाम की क्या कोई चीज ही नहीं देखी तुमने कभी ?"

"अगर देखी भी हो, तो उसकी आलोचना अगर कभी मौका आया तो और किसी दिन करूँगी, आज नहीं।" और वह क्षण भर मौन रहकर बोली, "आपके बदले अगर और कोई होता तो व्यंग्यसे कहता कि 'कमलको हड़प लेनेकी कोशिशमें तो शिक्षा और संस्कारकी सकीर्तन हुआ नहीं ?' मगर मैं ऐसा नहीं कह सकती, क्योंकि, कमल किसीकी सम्पत्ति नहीं है। वह सिर्फ अपनी ही है, और किसीकी भी नहीं।"

"किसी दिन शायद हो भी नहीं सकता ?"

"यह तो भविष्यकी बात है अजित बाबू—आज कैसे इसका जवाब दूँ ?"

"जवाब शायद किसी भी दिन नहीं दे सकोगी। मालूम होता है, इसीलिए शिवनाथकी इतनी बड़ी निर्ममता भी तुम्हें नहीं खटकती। बहुत ही आसानीसे उसे तुमने झाड़ फेंका।" कहकर अजितने जोरकी सांस ले ली।

मोटरके उजालेमें दिखा कि सामने कुछ एक बैलगाड़ियाँ खड़ी हैं। पास ही शायद गाँव है, किसान जैसीकी तैसी गाड़ियाँ सड़कपर ढीलकर, बैल लेकर घर चले गये हैं।

अजित सावधानीसे उस जगहको पार करके बोला, "कमल, तुम्हें समझना कठिन है।"

कमलने हँसकर कहा, "कठिन कैसे ? ठीक ही तो समझे थे कि राह भूलते ही मुझे भुलाकर ले जाया जा सकता है।"

"शायद यह समझना मेरी भूल थी।"

कमलने फिर हँसते हुए कहा, "रास्ता भूलना भूल, मुझे भुलाकर ले जाने की कोशिश भूल, और अपनी भी भूल? इतना बड़ा भूलका बोझा आपका दूर होगा कब? अजित बाबू, अपनेपर श्रद्धा रखना सीखिए। इस तरहसे अपने सामने अपनेको छोटा मत बनाइए।"

"मगर अपनी भूलको अस्वीकार करना ही क्या अपनेपर श्रद्धा रखना है, कमल?"

"नहीं, सो नहीं। पर अस्वीकार करनेकी भी एक रीति है। संसार सिर्फ अपनेको लेकर ही तो है नहीं। ऐसा होता तो फिर सब झंझट ही मिट जाता। यहाँ और भी दस जनोंका वास है, उनकी भी इच्छा-अनिच्छा—उनके भी कामकी धारा हमारी देहसे आ टकराती है। इसीसे, अन्तिम फलाफल अगर मनके माफिक न हो, तो उसे भूल जानकर धिक्कार देते रहना अपना ही अपमान करना है। अपने प्रति इससे बढ़कर अश्रद्धा, बताइए, और क्या प्रकट की जा सकती है?"

अजितने क्षण भर चुप रहकर पूछा, "लेकिन जहाँ सचमुचकी भूल हो? शिवनाथके सम्बन्धमें भी क्या तुम्हें आत्म-पश्चात्ताप नहीं हुआ कमल? और यही क्या मुझे तुम विश्वास करनेको कहती हो?"

कमलने इस प्रश्नका शायद ठीकसे उत्तर नहीं दिया, बोली, "विश्वास करने न करनेकी गरज तो आपकी है। उनके विरुद्ध तो किसीके पास किसी दिन मैंने शिकायत की नहीं।"

"शिकायत करनेवाली तुम स्त्री ही नहीं। पर भूलके लिए क्या अपने आप भी कभी अपनेको नहीं धिक्कारा?"

"नहीं।"

"तो इतना ही सिर्फ मैं कह सकता हूँ कि तुम अद्भुत हो, तुम असाधारण हो।"

इस मन्तव्यका कमलने कोई जवाब नहीं दिया, वह चुप हो रही।

दसेक मिनट बीत जानेके बाद अजित सहसा पूछ बैठा, "कमल, ऐसी भूल अगर फिर भी कर बैठूँ, तो भी क्या तुमसे मत होगा?"

"'अगर'का जवाब तो 'अगर'से ही दिया जा सकता है अजित बाबू।

अनिश्चित प्रस्तावक निश्चित समाधानकी आशा नहीं करनी चाहिए।"

"अर्थात्, यही तुम्हारा विश्वास है कि यह मोह मेरा कलतक टिकेगा नहीं?"

"मुझे लगता है, ऐसा होना कमसे कम असम्भव तो नहीं।"

अजित मन ही मन आहत होकर बोला, "मैं और चाहे जो भी होऊँ कमल, शिवनाथ नहीं हूँ।"

कमलने जवाब दिया, "सो मैं जानती हूँ अजित बाबू, और शायद आपसे भी ज्यादा जानती हूँ।"

अजितने कहा, "जानती होतीं तो यह विश्वास न कर लेतीं कि आज मैंने तुम्हें झूठसे बहकाना चाहा था, इसमें सत्य कुछ भी नहीं था।"

कमलने कहा, "झूठकी बात तो हो नहीं रही अजित बाबू, मोहकी बात हो रही थी। ये दोनों एक चीज नहीं। आज मोहके वश होकर अगर आपने किसीको बहकाना चाहा हो तो वह अपनेको ही बहकाना चाहा है। मुझको बहकाना नहीं चाहा,—जानती हूँ।"

"पर अन्तमें ठगाई तो तुम ही जाती कमल। इसे निश्चित समझकर भी कि मेरा रातका मोह दिनके उजालेमें कट जायगा तुमने साथ चलनेसे इनकार नहीं किया? यह क्या सिर्फ उपहास ही था?"

कमल जरा हँस दी, "जाँच कर देख क्यों नहीं लिया? रास्ता खुला था, एक बार भी तो मैंने मना नहीं किया था।"

अजित जोरकी एक साँस छोड़कर बोला, "अगर नहीं किया तो मैं यही कहूँगा कि तुम्हें समझना वास्तवमें ही कठिन है। एक बात मैं तुमसे कहता हूँ कमल कि जैसे नारीका प्रेम हृदयको आच्छन्न कर देता है, वैसे ही उसके रूपका मोह भी बुद्धिको बेहोश कर डालता है। किया करे, पर इनमेंसे एक जितना बड़ा सत्य है, दूसरा उतना ही बड़ा असत्य है। तुम तो जानती थीं कि यह मेरा प्रेम नहीं है, सिर्फ क्षणिक मोह है। फिर कैसे तुम इसे बढ़ावा देनेको तैयार हो गईं? कमल, कुहरा चाहे जितने बड़े समारोहके साथ सूर्यके प्रकाशको ढक दे, फिर भी, वह असत्य है। ध्रुव सत्य तो सूर्य ही है।"

कमल अँधकारमें क्षण भर निर्निमेष दृष्टिसे उसकी तरफ देखती रही, उसके बाद शान्त कण्ठसे बोली, "यह तो कविकी उपमा है अजित बाबू, कोई युक्ति नहीं, सत्य भी नहीं। मालूम नहीं, किस आदिम कालमें कुहरेकी सृष्टि हुई थी,

पर आज भी वह उसी तरह मौजूद है। सूयको उसने बार-बार देखा है, और बार-बार देखता रहेगा। मालूम नहीं सूर्य ध्रुव है या नहीं, पर कुहरा भी असत्य प्रमाणित नहीं हुआ। दोनों ही नश्वर हैं, और हो सकता है कि दोनों ही नित्य हों। इसी तरह, भले ही मोह क्षणिक हो, पर क्षण भी तो असत्य नहीं। क्षण भरका सत्य लेकर ही वह बार-बार वापस आया करता है। मालती फूलकी आयु सूरजमुखीकी तरह लम्बी नहीं, पर उसे असत्य कहकर कौन उड़ा सकता है? यही अगर आपकी शिकायत हो कि मैंने एक रातके मोहको स्थायी क्यों देना चाहा था, तो मैं पूछती हूँ कि आयुष्य कालकी लम्बाई ही क्या जीवनका इतना बड़ा सत्य है?"

यह जानकर भी कि ये बातें अजित समझ नहीं रहा है, वह कहने लगी, "आपके लिए मेरी बात समझनेका दिन अब भी नहीं आया। इसीसे शिवनाथके प्रति आपके क्रोधकी सीमा नहीं, मगर मैंने उन्हें क्षमा कर दिया है। इसकी मुझे जरा भी शिकायत नहीं कि जितना उनसे मैंने पाया है उससे ज्यादा मुझे क्यों नहीं मिला।"

अजितने कहा, "यानी मनको इतना निर्विकार बना डाला है! अच्छा, संसारमें किसीके विरुद्ध क्या तुम्हें कोई भी शिकायत नहीं?"

कमल उसके मुँहकी ओर देखकर बोली, "है, सिर्फ एकके विरुद्ध।"

"किसके विरुद्ध, बताओ तो सही कमल?"

"क्या करेंगे आप पराई बात सुनकर?"

"पराई बात? कोई भी हो, फिर भी कमसे कम निश्चिन्त हो सकूँगा कि मुझपर तुम्हारा गुस्सा नहीं है?"

कमलने कहा, "निश्चिन्त होनेसे ही क्या आप खुश हो जायँगे? पर उसके लिए अब समय नहीं रहा, हम लोग आ पहुँचे, गाड़ी रोकिए, मैं उतर जाऊँ।"

गाड़ी रुक गई। अँधेरेमें लड़केके किनारे कोई खड़ा था, पास आते ही दोनों चौंक पड़े। अजित डरा हुआ बोला, "कौन?"

"मैं हूँ, राजेन्द्र। वही, जिसे आज हरेन्द्र भइयाके आश्रममें देखा था।"

"अच्छा, राजेन्द्र! इतनी रातमें यहाँ कैसे?"

"आप लोगोंकी ही बाट देख रहा था। आप लोगोंके आनेके बाद ही आशु बाबूके यहाँसे आदमी आया था आपको ढूँढ़ने।" यह कहकर वह कमल-

की तरफ देखने लगा।

"कमलने कहा, "मुझे ढूँढ़नेका कारण ?"

उसने कहा, "आपने शायद सुना होगा कि चारों तरफ जोरका इन्फ्लुएंजा फैल रहा है, और बहुत-से लोग मर रहे हैं। शिवनाथ बाबू बहुत ज्यादा बीमार हैं। अचानक उधर मैं होमियो लेकर आशु बाबूके घर पहुँचा आया हूँ। आशु बाबूने सोचा होगा कि आप आश्रममें होंगी, इसीसे वहाँ बुलाने भेजा था।"

"अभी क्या वक्त होगा ?"

"शायद तीन बज चुके हैं।"

कमलने हाथ बढ़ाकर गाड़ीका दरवाजा खोला और कहा, 'भीतर बैठिए, रास्तेमें आपको आश्रममें उतारते चलेंगे।"

अजितके एक शब्द भी मुँहसे नहीं निकला। काठके पुतलेकी तरह चुपचाप गाड़ी चलाता हुआ हरेन्द्रके घरके सामने आकर ठहर गया। राजेन्द्रके उतरनेपर कमलने कहा, "आपको धन्यवाद। मुझे खबर देनेके लिए आज आपको बहुत कष्ट हुआ।"

"यह तो मेरा काम ही है। जरूरत होते ही खबर दीजिएगा।" कहकर वह चला गया। न कोई भूमिका, न कोई आडम्बर—सीधे-सादे शब्दोंमें जता गया कि यह उसके कर्तव्यके अन्तर्गत है। आज ही शामको हरेन्द्रके मुँहसे इस लड़केके विषयमें जो कुछ उसने सुना था, सब याद आ गया। एक तरफ उसकी परीक्षा पास करनेकी असाधारण दक्षता, और दूसरी तरफ सफलताके सामने पहुँचते ही उसे त्याग देनेकी असीम उदासीनता। उमर भी कम, हाल ही यौवनमें कदम रखा है—और इसी उमरमें 'अपना' कहनेको कुछ भी हाथमें नहीं रखा, पराये काममें सब बाँट दिया।

अजित तबसे चुप ही था। यह सुननेके बाद कि रातके तीन बज चुके हैं, किसी बातपर ध्यान देने लायक शक्ति उसमें नहीं थी। एक असम्बद्ध काल्पनिक प्रश्नोत्तर मालाके आघात प्रतिघातके नीचे इस निशाथ अभियानकी निरवच्छिन्न कुत्सिततासे उसका अन्तःकरण काला हो उठा। जहाँतक सम्भव है, कोई भी उससे कुछ पूछेगा नहीं, और हो सकता है कि पूछनेकी हिम्मत भी किसीकी न पड़े, पर, सिर्फ अपनी इच्छा, अभिरुचि और विद्वेषकी तूलिकासे लोग अज्ञात घटनाकी कहानी आद्योपान्त पूरीकी पूरी बना लेंगे। और इससे भी ज्यादा उसे

व्याकुल कर रखा था इस लज्जाहीन नारीकी निर्भय सत्यवादिताने। इस दुनियामें झूठ बोलनेकी इसे आवश्यकता ही नहीं। यह मानो सारी दुनियाको संकटमें डालने और लज्जित करनेके लिए ही पैदा हुई है।

उधर उसे नहीं मालूम कि शिवनाथकी बीमारीमें कौन और कैसे कैसे लोग आये होंगे। यह कल्पना करके कि इस स्त्रीसे सब लोग इतनी देर होनेका कारण पूछ रहे हैं, उसका खून ठण्डा हो गया। सहसा उसे खयाल आया कि यह कमलसे घृणा करता है और इसीके तुच्छ भोग-वासनासे उसने आत्मविस्मृत उन्मत्तकी तरह क्षणभरके लिए ही सही, अपना होश खो दिया था। मन ही मन यह कहकर वह बार-बार अपनेको अभिशाप देने लगा कि जरूर इसकी उसे सजा मिलनी चाहिए।

गेटके अन्दर घुसते ही उसकी नजर पड़ी खुली खिड़कीके सामने खड़े हुए आशु बाबूपर। शायद वे उसीकी प्रतीक्षामें उत्कण्ठित थे। गाड़ीकी आहटसे नीचेकी ओर देखकर बोले, "आखिर आ गये? साथमें कौन है, कमल?"

"हाँ।"

"जदु, कमलको शिवनाथके कमरेमें ले जाओ।—सुना होगा शायद, वे बीमार हैं?" कहते कहते वे खुद ही उतर आये, और बोले, "यह ऋतु बदलनेका समय ऐसा खराब है कि अचानक चारों तरफ बीमारी शुरू हो गई है और काफी लोग मर रहे हैं। मेरी अपनी तबीयत भी आज सबेरेसे ठीक नहीं, हरारत-सी मालूम पड़ रही है।"

कमल उद्विग्न होकर बोली, "तो आप जाग क्यों रहे हैं? यहाँ नौकर-चाकरोंकी तो कमी नहीं है?"

"कौन है, बताओ? डॉक्टर आकर देख भाल गये हैं, मुझे सोने भेजकर मणि खुद ही बैठी जाग रही है। पर मुझे नींद ही नहीं आती थी और तुम्हारे आनेमें देर होने लगी।—कमल, पतिकी बीमारीके समय भी क्या अभिमान रखा जाता है? लड़ाई झगड़ा तो होता ही रहता है, पर तुमने खबर नहीं ली कि तीन चार दिनसे वहाँ किस मकानमें वह बुखारमें पड़ा हुआ है? छि! यह काम अच्छा नहीं हुआ, अब अकेले तुम्हींको तो सब भुगतना पड़ेगा।"

सुनकर कमलको बड़ा आश्चर्य हुआ, और समझ गई कि इस सरलचित्त व्यक्तिको असलकी कोई भी बात मालूम नहीं। वह चुप रही, आशु बाबू उसके

अभिमानको शान्त करनेके अभिप्रायसे कहने लगे, 'हरेन्द्र बाबूके मुँहसे सुना कि तुम घरपर नहीं हो, तभी मैं समझ गया कि अजितने तुम्हें छोड़ा नहीं। वह खुद खूब घूमना पसन्द करता है, तुम्हें भी ले गया होगा। लेकिन सोचो तो जरा, अँधेरेमें अचानक कोई दुर्घटना हो जाती तो तुम लोग कैसी आफतमें पड़ते ?"

अजितकी छातीपरसे एक पत्थर सा उतर गया। आशु बाबूके लिए वह सोचने लगा किसी बातकी बुराईकी तरफ मानो उनका मन जाना ही नहीं चाहता, निष्कलुष अन्तःकरण हरदम अकलङ्क शुभ्रतासे चमका करता है। स्नेह और श्रद्धासे उसने मन ही मन उन्हें नमस्कार किया। लेकिन, कमलने उनकी सब बातोंपर ध्यान नहीं दिया, शायद इसकी जरूरत भी नहीं समझी। उसने पूछा, "वे अस्पताल न जाकर यहाँ क्यों आये ?"

आशु बाबूने आश्चर्यके साथ कहा, "अस्पताल ! यह देखो, अभीतक तुम्हारा गुस्सा नहीं गया !"

"गुस्सेकी बात नहीं कह रही आशु बाबू, जो संगत और स्वाभाविक है, वही कह रही हूँ।"

"यह स्वाभाविक नहीं है, और संगत तो है ही नहीं। हाँ, इतना मानता हूँ कि मणिको उचित था कि यहाँ न लाकर उन्हें तुम्हारे पास भेज देती।"

कमलने कहा, "नहीं, उचित नहीं था। मणि जानती है कि इलाज कराने की शक्ति नहीं है मेरी।"

इस बातसे उन्हें और एक बात याद आ गई और उससे वे अत्यन्त लज्जित से हो गये। कमल कहने लगी, "सिर्फ मनोरमा ही नहीं शिवनाथ बाबू भी जानते हैं कि सेवासे ही रोग नहीं जाता, दवा दारूकी भी जरूरत पड़ती है। शायद यह अच्छा ही हुआ कि खबर मेरे पास न आकर मणिके पास पहुँची। उनकी आयुका जोर समझिए।"

आशु बाबू लज्जासे म्लान होकर सिर हिलाते हुए बार बार कहने लगे, "यह बात नहीं कमल,—सेवा ही सब कुछ है। तीमारदारी सबसे बड़ी दवा है। नहीं तो, डॉक्टर वैद्य तो महज एक उपलक्ष्य हैं।" उन्हें अपनी स्वर्गीया पत्नीकी याद आ गई, बोले "मैं तो भुक्तभोगी हूँ कमल, बीमारी भुगतते भुगतते मुझे इसकी शिक्षा मिल चुकी है। घर चलो, तुम्हारी चीज है, जैसा तुम ठीक

समझोगी वैसा ही होगा। मेरे रहते दवा दारूकी तकलीफ नहीं होगी।" और उसे वे रास्ता दिखाते हुए आगे ले चले। अजित किंकर्तव्यविमूढ होकर, बगैर समझे ही उनके साथ हो लिया। इस डरसे कि रोगीके कमरेमें शोर होनेसे कहीं उसके विश्राममें विघ्न न हो, सबने दबे पॉव प्रवेश किया। देखा, शय्याके पास कुरसीपर बैठी मनोरमा रात्रि जागरणकी क्लान्तिसे रोगीकी छातीपर अपना थका हुआ मस्तक रखकर शायद अभी-अभी सो गई है और उसकी गरदनमें परस्पर सम्बद्ध दोनों बाँह डाले शिवनाथ भी सो रहा है।

इस स्वप्नातीत दृश्यपर अकस्मात् जैसे ही पिताकी ऑखें पड़ा, वैसे ही उनपर मानो घना अँधेरेका जाल उतर आया। क्षण भर बाद ही वे वहाँसे भाग खड़े हुए। अजित और कमल ऑख उठाकर परस्पर एक-दूसरेका मुँह ताकने लगे और उसके बाद जैसे आये थे वैसे ही चुपचाप बाहर चले गये।

१६

जाने आनेके रास्तेके पास ही एक छायादार बरण्डा है। रोगीके कमरेसे निकलकर अजित और कमल वहाँ रुक गये। एक छोटी सी घिसे काँचकी लालटेन वहाँ झूल रही थी, जिसके अस्पष्ट प्रकाशमें स्पष्ट दीख पडा कि अजितका चेहरा सफेद फक पड गया है, अकस्मात् धक्का खाकर मानो सारा खून कहीं हट गया है। तीसरा कोई व्यक्ति वहाँ नहीं था फिर भी अजितने एक अनात्मीया शिष्ट महिलाके योग्य सम्मान दिखाते हुए कमलसे पूछा, "आप क्या अभी घर लौट जाना चाहती हैं? अगर जाना चाहें तो मैं उसका इन्तजाम कर सकता हूँ।"

कमल उसके मुँहकी तरफ देखकर चुप रह गई। अजितने कहा, "इस मकानमें अब तो आपका एक क्षण भी रहना ठीक न होगा।"

"और आपका रहना ठीक होगा?"

"नहीं, मेरा रहना भी नहीं। कल सवेरे ही मैं और कहीं चला जाऊँगा।"

कमलने कहा, "यही अच्छा है। मैं भी अभी जाऊँगी। फिलहाल, इस कुरसीपर बैठकर रात बिता दूँगी, आप जाकर आराम करें।"

छोटी कुरसीकी तरफ देखकर अजित बगलें झाँकने लगा, बोला, "लेकिन—"

कमलने कहा, " 'लेकिन' रहने दीजिए अजित बाबू, उसमें बड़ा झंझट

है। इस वक्त न घर जाना ही सम्भव है और न आपके कमरेमें। आप जाइए, देर न कीजिए।"

सवेरे बेहरा आकर अजितको आशु बाबूके सोनेके कमरेमें बुला ले गया। अबतक वे खाटसे उठे भी न थे। पास ही एक कुरसीपर कमल बैठी थी, उसे पहले ही बुला लिया गया था।

आशु बाबूने कहा, "तबीयत कलसे ही ठीक नहीं थी, आज मालूम होता है मानो—अच्छा बैठो अजित।"

उसके बैठनेपर वे कहने लगे, "मैंने सुना कि आज सबेरे ही तुम जा रहे हो, पर तुम्हें रहनेके लिए मो मैं नहीं कहता, ठीक है,—गुड बाई। भविष्यमें शायद कभी भेंट न हो, पर यह निश्चय समझो कि मैंने तुम्हें सर्वान्तःकरणसे आशीर्वाद दिया है कि हम लोगोंको क्षमा करके तुम जीवनमें सुखी हो सको।"

अजितने अबतक उनके मुँहकी तरफ देखा नहीं था, अब जवाब देनेके लिए मुँह उठाते ही उससे कुछ कहते नहीं बना। बल्कि यों कहना चाहिए कि अकस्मात् मानो वह अपनी बातको भूल गया। इस बातकी कल्पना भी न कर सका कि एक रातमें कुछ ही घण्टोंमें किसीमें इतना जबरदस्त परिवर्तन हो सकता है।

आशु बाबू खुद भी दो-तीन मिनट मौन रहकर कमलसे कहने लगे, "तुम्हें बुलवा तो लिया, पर तुम्हारी आँखोंमें आँख मिलानेमें भी मेरा सिर नीचा हुआ जा रहा है। सारी रात मेरे मनमें क्या क्या होता रहा है—क्या क्या सोचता रहा हूँ सो मैं किससे कहूँ?"

फिर जरा ठहरकर बोले, "अक्षयने एक दिन कहा था कि शिवनाथ शायद तुम्हारे यहाँ अक्सर नहीं रहते। उस बातपर मैंने ध्यान नहीं दिया था, सोचा था कि वह शायद उसकी अत्युक्ति है—उसके विद्वेषकी ज्यादती है। तुम रुपया मोंके कमीके कारण सबकष्ट थीं, तब उसका कारण मैं नहीं समझा था, मगर आज सब कुछ स्पष्ट हो गया है—कहीं भी कोई सन्देह नहीं रहा।"

दोनों ही चुप हो रहे। थोड़ी देर बाद आशु बाबू कहने लगे, "तुम्हारे साथ मैं कई बार अच्छा व्यवहार नहीं कर सका, पर उस दिन प्रथम परिचयके दिनसे ही मैं तुमपर स्नेह करने लगा था कमल। इसीसे, आज बार बार यही खयाल आ रहा है कि आगरा न आता तो अच्छा था।"

कहते-कहते उनकी आँखोंमें आँसू आ गये, उन्हें हाथसे पोंछते हुए वे बोले, "जगदीश्वर!"

कमल उठकर उनके सिरहाने आ बैठी, और माथेपर हाथ रखकर बोली, "आपको तो बुखार है आशु बाबू!"

आशु बाबूने उसका हाथ अपने हाथमें लेकर कहा, "रहने दो कमल, मैं जानता हूँ, तुम अत्यन्त बुद्धिमती हो। मेरा कोई एक किनारा तुम कर दो। इस घरमें उस आदमीका अस्तित्व मेरे सारे शरीरमें आग-सी लगाये दे रहा है।"

कमलने अजितकी ओर देखा, वह नीचेको सिर झुकाये बैठा है। उसकी तरफसे कोई इशारा न पाकर वह क्षणभर मौन रही, फिर बोली, "मुझे आप क्या करनेको कहते हैं? कहिए।" परन्तु कोई जवाब न पाकर वह क्षणभर चुप बैठी रही, फिर बोली, "शिवनाथ बाबूको आप यहाँ रखना नहीं चाहते, पर वे बीमार हैं। इस हालतमें या तो उन्हें अस्पताल भेज दीजिए या फिर उनके घर। और अगर आप समझते हैं कि मेरे घर भेजनेसे ठीक रहेगा तो वहाँ भेज सकते हैं, मुझे कोई आपत्ति नहीं, पर आप तो जानते हैं कि इलाज करानेकी शक्ति मुझमें नहीं, मैं जी जानसे सिर्फ सेवा ही कर सकती हूँ, उससे ज्यादा कुछ नहीं।"

आशु बाबू कृतज्ञतासे भर उठे, बोले, "कमल, मालूम नहीं क्यों, पर ऐसे ही उत्तरकी मैंने तुमसे आशा की थी। यह मैं जानता था कि पाखण्डीको जवाब देनेमें तुम खुद पत्थर न हो सकोगी। तुम अपनी चीज अपने घर ले जाओ, इलाज खर्चेकी तुम फिकर मत करो, इसका भार मेरे ऊपर रहा।"

कमलने कहा, "पर इस विषयमें एक बात पहलेसे ही स्पष्ट हो जानी चाहिए।"

आशु बाबू बीचमें कह उठे, "तुम्हें कहनेकी जरूरत नहीं कमल, मैं जानता हूँ। एक-न-एक दिन सारी गन्दगी दूर हो जायगी। तुम कोई चिन्ता मत करो, मेरे जीते जी इतना बड़ा अन्याय अत्याचार तुमपर मैं नहीं होने दूँगा।"

कमल उनके मुँहकी तरफ देखती हुई स्थिर बैठी रही, कुछ बोली नहीं।

"क्या सोच रही हो कमल?"

"सोच रही थी कि आपसे कहनेकी जरूरत है, या नहीं। पर मालूम होता है कि जरूरत है नहीं तो कुछ भी स्पष्ट न होगा, उलझन बढ़ती ही जायगी।

आपके पास रुपया है, हृदय है, दूसरोंके लिए खर्च करना आपके लिए कोई मुश्किल नहीं, लेकिन यह भ्रम अगर आपके अन्दर हो कि इस तरह आप मुझ पर दया कर रहे हैं, तो वह दूर हो जाना चाहिए। किसी भी बहाने मैं आपकी दी हुई भीख नहीं लूँगी।"

आशु बाबूको सिलाईकी मशीनकी बात याद आ गई, वे व्यथित होकर बोले, "मुझसे गल्ती अगर कभी हो भी गई हो, तो क्या उसके लिए क्षमा नहीं कर सकती?"

कमलने कहा, "गल्ती शायद इतनी बड़ी नहीं की जितनी कि आप अब करने जा रहे हैं। आप सोचते होंगे कि शिवनाथ बाबूको बचाना प्रकारान्तरसे मुझको ही बचाना है,—मुझपर ही अनुग्रह करना है। मगर असलमें बात ऐसी नहीं। इसके बाद आपकी जो इच्छा हो, कर सकते हैं, मुझे कोई आपत्ति नहीं।"

आशु बाबूने सिर हिलाते हुए कहा, "ऐसा ही गुस्सा आता है कमल, यह कोई अस्वाभाविक बात नहीं और न अन्याय ही है। अच्छी बात है, मैं शिवनाथको ही बचाना चाहता हूँ, तुमपर अनुग्रह नहीं करता। अब तो ठीक है न?"

कमलने चेहरेपर विरक्तिका भाव दिखाई दिया। उसने कहा, "नहीं, यह ठीक नहीं। आपको जब कि मैं समझा नहीं सकती तो फिर कोई उपाय नहीं। तब आप अस्पताल नहीं भेजना चाहते, तो हरेन्द्र बाबूके आश्रममें भेज दीजिए। वे बहुतोंकी सेवा किया करते हैं, इनकी भी करेंगे। आपको जो कुछ खर्च करना हो, वहां कीजिएगा। मैं खुद भी बहुत ज्यादा थक गई हूँ, अब चलती हूँ।" इतना कहकर वह सचमुच ही जानेको तैयार हो गई।

उसकी बात और आचरणसे आशु बाबू मन ही मन क्रुद्ध हो उठे, बोले, "यह तुम्हारी ज्यादती है कमल। तुम्हारे दोनोंके कल्याणके लिए जो कुछ मैं करने जा रहा हूँ, उसे तुम अकारण विकृत करके देख रही हो। एक ओर तो मेरे लिए लज्जाकी सीमा नहीं,—और मैं जानता हूँ कि इस कदाचारको अंकुरमें नष्ट किये बिना मेरी असीम ग्लानि बनी ही रहेगी,—दूसरी ओर यह भी सच नहीं कि मेरी लड़कीका इससे सम्बन्ध है, इसीलिए मैं किसी तरह बच निकलनेका रास्ता देख रहा हूँ। शिवनाथको मैं बहुत तरहसे बचा

सकता हूँ, मगर सिर्फ इतना ही मैं नहीं चाहता। मैं चाहता हूँ कि ऐसे संकटके दिनोंमें तुम सम्पूर्ण अन्तःकरणसे उसकी सेवा करके उसे फिरसे पूर्ववत् पा जाओ। इसीलिए मेरा यह प्रस्ताव है।—सिर्फ अपने स्वार्थवश ही मैं ऐसा नहीं कह रहा हूँ।"

बातें सब सच थीं, सकरुण और आन्तरिकतासे पूर्ण। मगर कमलके मनपर कोई असर नहीं पड़ा। उसने कहा, "ठीक यही बात मैं आपको समझाना चाहती थी आशु बाबू। सेवा करनेसे मैं इनकार नहीं करती। चायके बगीचेमें रहते हुए मैंने बहुतोंकी सेवा की है, इसका मुझे अभ्यास है। लेकिन मैं उन्हें फिरसे पाना नहीं चाहती, न सेवा करके, और न बिना सेवा किये। यह मेरी अभिमानकी आग नहीं, और न झूठा दर्प ही है,—असलमें हम दोनोंका सम्बन्ध टूट गया है, उसे मैं जोड़ नहीं सकती।"

जो कुछ उसने कहा, उसमें न तो किसी तरहकी गरमी थी न उच्छ्वास,—बिलकुल सीधी सादी बात थी। परन्तु इसीने आशु बाबूको दंग कर दिया। क्षण भर बाद उन्होंने कहा, "यह कैसी बात कह रही हो कमल? इस मामूली सी बातपर पतिको त्याग देना चाहती हो? यह शिक्षा तुम्हें किसने दी?"

कमल चुप रही। आशु बाबू कहने लगे, "बचपनमें यह शिक्षा तुम्हें चाहे जिसने भी दी हो, उसने गलत शिक्षा दी है, यह अन्याय है, असंगत है,—यह भारी अपराध है। चाहे किसी भी घरमें तुम पैदा हो, तुम भारतीय कन्या हो। यह मार्ग तुम्हारा हमारा नहीं है,—इसे तुम्हें भूलना ही होगा। जानती हो कमल, एक देशका धर्म दूसरे देशके लिए अधर्म है। और 'स्वधर्ममें मृत्यु भी श्रेय' है।" कहते कहते उनकी आँखें चमक उठीं। और बात खतम करके वे हाँफने लगे। परन्तु जिसे लक्ष्य करके ये बातें कही गईं वह रंच मात्र भी विचलित नहीं हुई।

आशु बाबू कहने लगे, "यह मोह ही एक दिन हमें रसातलकी ओर खींचे लिये जा रहा था। पर भ्रान्ति पकड़ाई दे गई कुछ मनीषियोंकी दृष्टिमें। देशवासियोंको बुलाकर बार-बार वे सिर्फ एक ही बात कहने लगे—तुम लोग उन्मत्तकी तरह जा कहाँ रहे हो! तुम्हें किसी बातकी कमी नहीं, दीनता नहीं, किसीके आगे हाथ पसारनेकी जरूरत नहीं, सिर्फ एक बार अपने घरकी तरफ मुड़कर देखो। पूर्वपुरुष तुम्हारे लिए सब-कुछ छोड़ गये हैं, सिर्फ एक बार

हाथ बढ़ाकर उन्हें भर ले। विशेषतया तो सभी कुछ मैं अपनी आँखोंसे देख आया हूँ और सोचता हूँ कि ठीक समयपर ऐसी सावधान-वाणी अगर वे नहीं घोषित कर गये होते, तो आज देशकी क्या दशा होती! बचपनकी सभी तो बात याद है,—उफ्—शिक्षित लोगोंकी तब कैसी दशा थी।" इतना कहकर उन्होंने स्वर्गीय मनीषियोंको लक्ष्य करके हाथ जोड़कर नमस्कार किया।

कमलने मुँह उठाकर देखा कि अजित मुग्ध दृष्टिसे आशु बाबूकी ओर देख रहा है। कल्पनाके आवेशमें मानो उसे होश ही नहीं रहा,—ऐसी हालत थी।

आशु बाबूका भावावेश अबतक दबा नहीं था, कहने लगे, "कमल, और कुछ भी अगर वे न कर जाते, तो भी, सिर्फ इतनेके ही कारण देशवासियोंके हृदयमें वे प्रातःस्मरणीय बने रहते।"

"क्या सिर्फ इतनी ही बातके लिए वे प्रातःस्मरणीय हैं?"

"हाँ, सिर्फ इतनी ही बातके लिए। बाहरसे हटाकर सिर्फ घरकी तरफ आँख उठाकर देखनेको कहा था,—इसीके लिए।"

कमलने पूछा, "बाहर अगर प्रकाश हो रहा हो और पूर्व-आकाशमें अगर सूर्योदय हो रहा हो, तो भी, पीछे मुड़कर पश्चिमके स्वदेशकी ओर देखना पड़ेगा? और वही होगा स्वदेश प्रेम?"

मगर यह प्रश्न शायद आशु बाबूके कानोंतक नहीं पहुँचा, वे अपनी ही झोंकमें कहते गये, "हमारे देशका धर्म, देशके पुराण इतिहास, देशका आचार व्यवहार, रीति नीति विदेशके दबावसे लुप्त होने जा रही थी, उसके प्रति हमारे अन्दर जो आज फिरसे श्रद्धा और विश्वास वापस आया है, सो सिर्फ उन्हींकी भविष्य दृष्टिका फल है। जातिके हिसाबसे हम ध्वंसकी ओर बढ़ते चले जा रहे थे, उससे बच जाना क्या मामूली बचना है कमल? यह ज्ञान हमें किसने दिया कि उसे फिरसे मत्र प्राप्त किये बगैर किसी भी तरह हम बच नहीं सकते,—बताओ तो?"

अजित उत्तेजनाके मारे अकस्मात् उठ खड़ा हुआ, बोला, "मैंने कभी इसकी कल्पना भी नहीं की थी कि इन सब बातोंका विचार भी आपके मनमें कभी स्थान पा सकता है। मुझे बड़ा भारी दुःख है कि अबतक मैंने आपको पहचाना नहीं, आपके चरणोंमें बैठकर कभी उपदेश नहीं लिया।" वह और भी बहुत कुछ कहने जा रहा था, पर बीचमें विघ्न आ पड़ा। नौकरने आकर खबर

दी कि हरेन्द्र बाबू वगैरह भेंट करने आ रहे हैं और दूसरे ही क्षण हरेन्द्र सतीश और राजेन्द्रके साथ आ पहुँचा। कहा, "मालूम हुआ कि शिवनाथ बाबू आ रहे हैं। आते वक्त डॉक्टरके यहाँ भी होता आया हूँ। उनका कहना है कि सीरियस (खतरनाक) नहीं, जल्दी आराम हो जायगा।" कहते हुए उसने कमलको नमस्कार किया और अपने साथियोंके साथ एक तरफ बैठ गया।

आशु बाबूने सिर हिलाया, पर उनकी दृष्टि थी अजितकी तरफ, और उसीको लक्ष्य करके वे बोले, "मेरा सारा यौवन विलायतमें बीता है, इस बातको तुम लोग भूल क्यों जाते हो? ऐसी बहुत सी चीजें हैं जो नजदीकसे नहीं दिखाई देतीं, दूर जाकर खड़े होनेसे ही दिखाई देती हैं। मैंने जो स्पष्ट देखा है वह है शिक्षित मानसका परिवर्तन। इसी हरेन्द्रके आश्रमको ही देखो न, इनका जो नगर नगरमें शाखा प्रशाखाएँ विस्तार करनेका आयोजन है, उसके मूलमें क्या यही भावना नहीं है? विश्वास न हो, इन्हींसे पूछ देखो। वही ब्रह्मचर्य, वही संयमकी साधना, वही पुरानी रीति-नीतिका पुनः प्रवर्तन—यह सब हमारे उस अतीत कालकी पुनःप्रतिष्ठाका उद्यम नहीं तो और क्या है? उसीको अगर हम भूल जायँ, उसीके प्रति अगर हम अपनी आस्था खो बैठें, तो फिर आशा करनेके लिए हमारे पास बाकी ही क्या रह जाता है? तपोवनका आदर्श सिर्फ हमारे ही यहाँ था। संसार छान डालनेपर भी क्या उसका जोड़ कहीं मिल सकता है अजित? किसी जमानेमें जिन लोगोंने हमारे समाजका निर्माण किया था, हमारे वे शास्त्रकार व्यवसायी नहीं थे, संन्यासी थे, उनके दानको बिना किसी संशयके नतमस्तक होकर ग्रहण करनेमें ही हमारी चरम सार्थकता है,—यही हमारे कल्याणका मार्ग है कमल, इसके सिवा दूसरा कोई मार्ग नहीं।"

अजित स्तब्ध हो रहा। सतीश और हरेन्द्रके आश्चर्यका ठिकाना न रहा,—यह साहबी चाल चलनेवाला आदमी आज कह क्या रहा है! और राजेन्द्र तो समझ ही न पाया कि अकस्मात् क्यों और कैसे यह प्रसंग छिड़ गया। सभीके मुँहपर एक निष्कपट श्रद्धाका भाव प्रस्फुटित हो उठा।

स्वयं वक्ताको भी कम आश्चर्य नहीं हुआ। सिर्फ कहनेकी शक्तिके लिए ही नहीं, बल्कि इसलिए कि इस तरह सिलसिलेसे कहनेका उन्हें पहले कभी मौका ही नहीं मिला,—उनके मनमें एक तरहकी अनिर्वचनीय तृप्तिकी लहर दौड़ने लगी। क्षण भरके लिए वे क्षण भर पहलेका दुःख भूल गये। बोले, "समझी कमल,

क्यों मैं तुमसे ऐसा अनुरोध कर रहा था ?"

कमलने सिर हिलाकर कहा, "नहीं।"

"नहीं ? नहीं क्यों ?"

कमलने कहा, "सिर्फ यही एक समाचार आप परमानन्दके साथ सुना रहे थे कि विदेशी शिक्षाके प्रभावको दूर कर फिर पुरानी व्यवस्थाकी ओर लोगोंका वेग शिक्षितोंमें प्रचलित होती जा रही है। आपकी धारणा है कि इससे देशका कल्याण होगा, परन्तु कारण आपने कुछ भी नहीं बतलाया। बहुत-सी प्राचीन नीतियाँ लुप्त होती जा रही थीं, हो सकता है कि यह सच हो कि उनका पुनरुद्धार उत्साह हो रहा है, मगर भला इसका प्रमाण क्या है आशु बाबू कि उससे हमारा भला ही होगा ?—कहाँ,—यह तो आपने बताया ही नहीं ?"

"बताया कैसे नहीं ?"

"नहीं, नहीं बताया। जो कुछ आप कह रहे थे, वह तो सभी सुधार विरोधी और प्राचीनताके अभक्तातिकार कहा करते हैं। इसका कोई भी प्रमाण नहीं कि सभी लुप्त वस्तुओंका पुनरुद्धार अच्छा ही होगा। मोहक रूपोंमें बुरी चीजोंका पुनरुद्धार भी संसारमें होते देखा जाता है।"

आशु बाबूको इसका जवाब ढूँढ़े न मिला, परन्तु अजितने कहा, "बुरी चीजका उद्धार करनेमें कोई शक्तिका क्षय नहीं करता।"

कमलने कहा, "बहुत लोग करते हैं। बुराईके लिए नहीं, बल्कि पुरानी वस्तु मात्रको स्वत सिद्ध अच्छी चीज समझकर करते हैं। एक बात आपसे पहले ही कहना चाहती थी, पर आपने ध्यान नहीं दिया। चाहे लौकिक आचार अनुष्ठान हो और चाहे पारलौकिक धर्म कर्म, अपने देशकी चीज समझकर उसे गले लगाये रहनेमें स्वदेश भक्तिकी वाहवाही तो मिल सकती है, पर स्वदेशके कल्याणके देवता उससे खुश नहीं किये जा सकते। बल्कि वे इससे नाराज ही होते हैं।"

आशु बाबू दंग रह गये, बोले, "तुम कह क्या रही हो कमल ? अपने देशका धर्म, अपने देशका आचार अनुष्ठान त्यागकर यदि हम बाहरसे भीख माँगने लगें तो फिर अपना कहनेको हमारे पास बाकी ही क्या रह जायगा ? फिर हम संसारमें मनुष्यत्वका दावा करनेके लिए अपना क्या परिचय देंगे ?"

कमलने कहा, "दावा खुद हमारे घर आ जायगा, परिचयकी जरूरत न

होगी। फिर विश्व-जगत् हम बिना-परिचयके ही जान जायगा।"

आशु बाबू व्याकुल होकर बोले, "तुम्हें तो मैं समझ ही न सका कमल!"

"समझनेकी बात भी नहीं आशु बाबू, ऐसा ही होता है। इस चलनशील संसारमें प्रगतिशील मानव चित्तको कदम कदमपर जो सत्य नित्य नये-नये रूपमें दिखाई देता है, उसे सभी नहीं पहचान सकते। सोचते हैं, यह आफत कहाँसे आ गई! आपको उस दिनकी ताजमहलकी छायामें नीचे खड़ी शिवानीकी याद है? आज कमलके भीतर उसे पहचाना भी नहीं जा सकता। मन ही मन कहेंगे, जिसे उस दिन देखा था वह गई कहाँ! किन्तु यही मनुष्यका सच्चा परिचय है,—मैं तो यही चाहती हूँ कि हमेशा इसी भावसे लोगोंमें परिचित हो सकूँ।"

जरा ठहरकर फिर बोली, "पर इस वितर्ककी आँधीमें हमारी असल बात तो उड़ ही गई—मूल विषयसे हम बहुत दूर जा पड़े हैं। लेकिन मैं बहुत थकी हुई हूँ, अब जाती हूँ।"

आशु बाबूसे कुछ जवाब देते न बना, विह्वलकी भाँति देखते रह गये। इस स्त्रीको कहीं उन्होंने अस्पष्ट समझा और कहीं बिलकुल ही नहीं समझ पाया। उन्हें ऐसा लगने लगा कि अभी-अभी उसने जिस आँधीका जिक्र किया था, उसकी प्रचण्ड झञ्झामें तिनकेकी तरह उनका सब तरहका आवेदन निवेदन उड़कर कहींका कहीं चला गया।

कमल उठ खड़ी हुई। अजितको इशारेसे बुलाकर बोली, "साथ लाये थे, अब चलिए न पहुँचा दीजिए।"

मगर आज वह मारे संकोचके सिर भी न उठा सका। कमल मन ही मन जरा हँसकर आगे बढ़ी और सहसा राजेन्द्रके कन्धेपर हाथ रखकर बोली, "राजेन्द्र बाबू, तुम चलो न भाई, मुझे पहुँचा आओ!"

इस आकस्मिक भाईके सम्बोधनसे राजेन्द्रने विस्मित होकर एक बार उसकी तरफ देखा और उसके बाद कहा, "चलिए।"

दरवाजेके पास जाकर कमल सहसा खड़ी हो गई, बोली, "आशु बाबू, अपना प्रस्ताव मैंने वापस नहीं लिया है। उसी शर्तपर इच्छा हो तो भेज दीजिएगा, मैं यथासाध्य कोशिश कर देखूँगी। बच जायँ तो अच्छा ही है, न बचे तो उनका भाग्य।" इतना कहकर वह चली गई। सबके सब स्तब्ध होकर बैठे रहे। अकस्मात् आशु बाबूकी आँखोंके आगे प्रभातका प्रकाश भी विवर्ण

और निस्वाद हो उठा।

आधे रास्तेमें राजेंद्रने विदा ले ली और कहा, "मैं घण्टे भरमें अपना एक काम निबटाकर वापस आता हूँ।" कमलने अन्यमनस्कताके कारण ही शायद कोई आपत्ति नहीं की, या हो सकता है कि और बात वजह हो। जल्दी जल्दी घर पहुँचकर उसने देखा कि सीढ़ीवाले दरवाजेमें ताला बन्द है, पर खोला नहीं गया है। रास्तेमें उस तरफ मोदीकी दूकानमें तलाश करनेपर मालूम हुआ कि नौकरानी बीमार पड़ गई है, काम करने नहीं आई और उसकी जगह नातिन सबेरे आकर घरकी चाबी रख गई है।

घर खोलकर कमल घरके काम धन्धेमें लग गई। एक तरहसे कलसे ही वह नहीं-खाये थी, उसने तय किया था कि झटपट किसी तरह कुछ बना-खाकर आराम करेगी, आराम करनेकी उसे सख्त जरूरत भी थी, पर घरका काम इतना पड़ा था कि वह खतम ही नहीं होता था। चारों तरफ इतना कूड़ा-कर्कट जमा हो रहा था कि उसे देखकर वह हैरान हो गई।—इतना निरुपायसा उसके दिन कट रहे थे कि इधर उसका ध्यान ही नहीं गया था। आज जिस किसी चीजपर भी उसकी नजर पड़ी वही मानो उसका तिरस्कार करने लगी। छतके नीचेसे पुराना चूना झड़कर खाटपर आ पड़ा है, उसे साफ करना जरूरी है, चिड़ियोंके घासलेका बचा हुआ मसाला बिछौनेपर पड़ा है, उसे भी साफ करना है चादर बदलनी है, तकियोंके खोल बहुत मैले हो गये हैं, उन्हें भी बदलना है टेबल कुरसी स्थानभ्रष्ट हो रही है, दरवाजेपर पड़े पायदाजपर मिट्टी जमी हुई है, आइनेकी ऐसी हालत है कि साफ करते करते शाम हो जायगी दावातकी स्याही सूख गई है कलमका पता ही नहीं पैडका ब्लॉटिंग पेपर लापता है,—इस तरह जिधर आंख उठाकर देखा उधर ही ऐसी गन्दगी मालूम हुई कि उसे खुद ही लगा कि इतने दिनोंसे यहाँ कोई आदमी रहता है या और कोई? नहाना खाना यों ही पड़ा रहा, किधरसे उसे और कब दिन बीत गया,—कुछ मालूम ही नहीं पड़ा। सब काम निबटाकर जब वह नीचेसे नहा धोकर ऊपर आई तब शाम हो चुकी थी। इतने दिनोंसे वह निश्चित समझ रही थी कि यहाँ उसे नहीं रहना है। रहना सम्भव भी नहीं और उचित भी नहीं। महीनेके महीने किराया कहाँसे दिया जाय? जाना तो पड़ेगा ही, पर सिर्फ जानेके दिन तक पहुँचना ही मानो उसके लिए मुश्किल हो रहा था,—रातके बाद सवेरा

और सबेरेके बाद रात आ आकर उसे कदम बढ़ानेका समय नहीं दे रहे थे।

घरसे उसे कोई ममता नहीं, फिर भी किसलिए वह दिन भर मेहनत करती रही, अकस्मात् इसकी क्या जरूरत आ पड़ी—इसी तरहकी एक धुँधली-सी जिज्ञासा उसके मनमें घूम रही थी। काम छोड़कर वह दरवाजे आ बैठती और शून्य दृष्टि सड़ककी तरफ लगाती हुई न जाने क्या भूलनेकी कोशिश करती, और फिर भीतर आकर काममें लग जाती। इसी तरह आज उसका काम और दिन दोनों खतम हुए। दिन तो रोज ही खतम होता है, पर इस तरह नहीं। शामके बाद बत्ती जलाकर उसने रसोई खत्म की और बहुत समय काटनेके लिए एक किताब उठाकर बिस्तरके सहारे बैठी-बैठी उसके पन्ने उलटने लगी। लेकिन आज उसकी थकावटकी कोई हद न थी, इसका पता भी नहीं चला कि कब किताबके पन्नोंके साथ-साथ उसकी आँखोंके पलक बन्द हो गये। जब पता लगा तब कमरेकी बत्ती बुझ चुकी थी और खिड़कियोंसे अरुण प्रकाशने आकर सारे कमरेको आरक्त कर दिया था। दिन चढ़ने लगा, पर महरी नहीं आई। इसलिए खासा तकाजा करके उसकी भी खबर पूछ लेनेकी आवश्यकता मालूम हुई। कपड़े बदलकर वह निकल ही रही थी कि इतनेमें जीनेपर किसीके चलनेकी आहट हुई। उसका कलेजा धड़क उठा।

वहींसे किसीने पुकारा, "घर है क्या? आ सकता हूँ?"

"आइए।"

जो आये, उनका नाम है हरेन्द्र। कुरसी खींचकर उसपर बैठ गये और बोले, "कहीं बाहर जा रही थीं क्या?"

"हाँ। जो बुढ़िया मेरे यहाँ काम करती थी, वह बीमार है। उसीको देखने जा रही थी।"

"अच्छी खबर है। इन्फ्लुएंजाके सिवा और कुछ नहीं। मालूम होता है आगरेमें भी शायद एपिडेमिक फार्म (संक्रामक रूप) शुरू हो गया है। बस्तियोंमें तो मौत भी शुरू हो गई है। यदि मथुरा-वृन्दावनकी तरह शुरू हुआ तो भागना पड़ेगा, या मरना पड़ेगा। बुढ़िया रहती कहाँ है?"

"मालूम नहीं। सुना है कि यहीं पास ही कहीं रहती है, ढूँढ़ना पड़ेगा।"

हरेन्द्रने कहा, "बड़ी छुतैल बीमारी है, जरा सावधान रहिएगा। इधरकी खबर मिली होगी शायद?"

कमलने गरदन हिलाकर कहा, "नहीं तो।"

हरेंद्र उसके मुँहकी तरफ देखकर क्षण भर चुप रहा, फिर बोला, "डरो मत, डरकी ऐसी कोई बात नहीं। कल ही आना चाहता था, पर समय नहीं मिला। हमारे अक्षय बाबू कालेज नहीं आये, सुना है कि उनकी भी तबीयत खराब है। आशु बाबू बिस्तरपर पड़े हैं, सो आप कल देख ही आई हैं,—उधर अविनाश भइयाको कल शामसे बुखार है, भाभीका चेहरा भी देखा कि सूखा सूखा सा हो रहा है। वे खुद कभी बीमार न पड़ जायँ।"

कमल चुप बैठी उसकी तरफ देखती रही। इन सब खबरोंपर मानो वह अच्छी तरह ध्यान ही न दे सकी।

हरेंद्र कहता गया, "इसके अलावा शिवनाथ बाबू भी पड़े हैं। इन्फ्लुएंजाका मामला है, कुछ कहा नहीं जा सकता। अस्पताल भी नहीं जाना चाहते। कल शामको उनके घरपर ही उन्हें रिमूव कर दिया गया है। आप एक बार जाकर खबर लेनी है।"

कमल ने पूछा, "वहाँ है कौन?"

"एक नौकर है। ऊपरकी कोठरीमें कुछ पंजाबी रहते हैं, जो ठेकेदारीका काम करते हैं। सुना है कि आदमी अच्छे हैं।"

कमल एक उसास लेकर चुप रह गई। थोड़ी देर बाद बोली, "एक बार राजेन्द्र बाबूको मेरे पास भेज सकते हैं?"

"भेज सकता हूँ, पर वह मिलेगा कहाँ? आज तड़केसे ही निकल पड़ा है। उधर कहीं मोचियोंके मुहल्लेमें जोरकी बीमारी फैल रही है, वह गया है उनकी सेवा करने। आश्रममें अगर खाने आया तो कह दूँगा।"

"उन्हें घर पहुँचाया किसने? आपने?"

"नहीं, राजेंद्रने। उसीके मुँहसे सुना कि पंजाबी लोग उनकी देख भाल कर रहे हैं। फिर भी, वे करें या न करें, पर राजेंद्रको जब कि पता लग गया है तो वह किसी बातकी त्रुटि नहीं होने देगा,—सम्भव है, खुद ही तीमारदारी करने लग जाय। एक बातका पक्का भरोसा है कि उसे रोग नहीं पकड़ता। पुलिस न पकड़े तो वह अकेला ही एक फौज बराबर है। वह केवल उन्हीं लोगोंसे घबराता है,—नहीं तो उसे काबू कर सके ऐसा तो दुनियामें कोई दिखाई नहीं देता।"

"पकड़े जानेकी आशंका है क्या ?"

"आशा तो की जाती है। कमसे कम इससे आश्रमकी तो रक्षा हो जायगी।"

"उन्हें कह क्यों नहीं देते कि चले जायँ ?"

"यही तो मुश्किल है। कहनेसे उसी वक्त चला जायगा और ऐसा जायेगा कि फिर सर दे मारनेपर भी वापस न आयेगा।"

"न आवें तो नुकसान ही क्या है ?"

"नुकसान ? उसे तो आप जानती नहीं, बगैर जाने उस नुकसानका अन्दाजा नहीं लगाया जा सकता। आश्रम न रहे तो सहा जा सकता है, लेकिन मुझसे उसका नुकसान न सहा जायगा।" इतना कहकर हरेन्द्र मिनट भर चुप रहा, फिर सहसा प्रसंग बदलकर बोल उठा, "एक बड़े मजेकी बात हो गई है। किसीकी मजाल नहीं कि उसकी कल्पना भी कर सके। कल भाई साहबके यहाँसे लौटकर रातको घर आया तो देखता क्या हूँ कि अजित बाबू पधारे हैं। मैं तो डर गया कि आखिर मामला क्या है ? बीमारी बढ़ गई क्या ? मालूम हुआ कि नहीं ऐसी कोई बात नहीं, बकस बिस्तर वगैरह सब साथ ले आये हैं। आश्रममें रहनेके लिए। इस बीचमें सतीशसे उनकी बात पक्की हो गई है कि आश्रमके नियमानुसार आश्रमके कामसे ही अपना जीवन बितायेंगे। यह उनकी प्रतिज्ञा है, इसमें कोई भी व्यतिक्रम नहीं हो सकता। ऐसे बड़े आदमी मिलें तो हमारे लिए अच्छा ही है, पर शंका होती है कि भीतर कोई गड़बड़ न हो। सवेरे आशु बाबूके पास गया, सुनकर उन्होंने कहा कि 'संकल्प तो बहुत ही उत्तम है, पर भारतमें आश्रमोंकी कोई कमी नहीं, वह आगरा छोड़के और कहीं जाकर यह वृत्ति अवलम्बन करता तो मैं कुछ दिन और यहाँ टिका रहता। देखता हूँ, अब मुझे यहाँसे जाना ही पड़ेगा'।"

कमलने किसी तरहका आश्चर्य प्रकट नहीं किया, चुप रही।

हरेन्द्रने कहा, "उन्हींके यहाँसे भागा आ रहा हूँ, वापस जाकर अजित बाबूसे क्या कहूँगा ?"

कमल समझ गई कि शिवनाथ बाबूको स्थानान्तरित करनेके विषयमें बहुत कुछ वाद विवाद हो गया है। शायद प्रकटमें और स्पष्ट रूपसे एक शब्द भी न कहा गया होगा, सब कुछ चुपचाप ही किया गया होगा, फिर भी इसमें सन्देह नहीं कि कठोरतामें वह सब तरहकी हदको लाँघ गया होगा। परन्तु एक बात-

पर भी उसने उत्तर नहीं दिया, जैसीकी तैसी चुप बनी रही।

हरेंद्र कहने लगा, "मालूम होता है, आशु बाबूने सब कुछ सुन लिया है। शिवनाथका आपके प्रति जो आचरण हुआ है उससे वे मर्माहत हुए हैं। लगभग जबरदस्ती ही उन्हें घरसे विदा किया है। मनोरमाकी शायद ऐसी इच्छा नहीं थी,—शिवनाथ उसके संगीतके गुरु हैं,—पास रखकर इलाज करानेका ही उसका विचार था, पर वैसा हो नहीं सका। अजित बाबूने शायद इस पक्षका अवलम्बन करके ही झगड़ा कर डाला है।"

कमल जरा हँस दी, बोली, "आश्चर्य नहीं। पर आपने यह सब सुना किससे? राजेन्द्रने कहा था?"

"राजेन्द्र? भला राजेन्द्र कहेगा! वह ऐसा आदमी ही नहीं। जानता होगा तो भी न बतायेगा। यह मेरा ही अनुमान है। इसीसे सोच रहा हूँ आखिर समझौता तो होगा ही, फिर अजितको चिढ़ानेसे क्या लाभ? चुपचाप रहना ही ठीक है। जितने दिन वह आश्रममें रहेगा, हमारी तरफसे खातिर तवज्जहमें त्रुटि न होगी।"

कमलने कहा, "यही ठीक है।"

हरेंद्रने कहा, "अच्छा, तो अब चला। भाई साहबके लिए चिन्ता है, बहुत थोड़ेमें घबरा जाते हैं। समय मिला तो कल एक बार आऊँगा।"

"आइएगा।" कहकर कमलने उठकर नमस्कार किया और कहा, "राजेन्द्रको भेजना न भूलिएगा। कहिएगा, मैं बड़ी मुसीबतमें पड़कर बुला रही हूँ।"

"मुसीबतमें पड़कर बुला रही हैं?" हरेंद्र आश्चर्यके साथ बोला, "भेंट होते ही उसी वक्त भेज दूँगा,—लेकिन वह मुसीबत क्या मुझसे नहीं कही जा सकती? मुझे भी आप अपना अकृत्रिम बन्धु समझिएगा।"

"सो समझती हूँ। लेकिन उन्हींको भेज दीजिएगा।"

"भेज दूँगा, जरूर भेज दूँगा।" कहकर हरेंद्र आगे बात न बढ़ाकर चला गया।

तीसरे पहर राजेन्द्र आ पहुँचा।

"राजेन्द्र, मेरा एक काम करना होगा।"

"कर दूँगा। पर कलतक तो मेरे नामके साथ 'बाबू' था, आज वह भी

उगा दिया गया ?"

"अच्छा ही तो हुआ, हल्के हो गये। मन्जूर न हो कहो, जोड़ दूँ!"

"नहीं, कोई जरूरत नहीं। मगर आपको मैं क्या कहकर पुकारा करूँ?"

"सभी 'कमल' कहके पुकारते हैं और इससे मेरे सम्मानकी हानि नहीं होती। नामके आगे-पीछे बोझ लादकर अपनेको भारी बनानेमें मुझे लज्जा आती है। 'आप' कहनेकी भी जरूरत नहीं। मुझे सहज नामसे ही पुकारा कर।"

इसके स्पष्ट जवाबको दबाते हुए, राजेन्द्रने कहा, "मुझे क्या करना होगा?"

"मेरा बन्धु होना होगा। लोग कहते हैं, तुम क्रान्तिकारी हो। यह अगर सच हो तो मेरे साथ तुम्हारी मित्रता अक्षय रहेगी।"

"यह अक्षय मित्रता मेरे किस काम आयेगी?"

कमल विस्मित हुई। यह संशय और उपेक्षाकी ध्वनि उसके कानोंमें खटकी, बोली, "ऐसी बात नहीं कहना चाहिए। मित्रता जैसी चीज संसारमें दुर्लभ है, और मेरी मित्रता उससे भी ज्यादा दुर्लभ है। जिसे पहचानते नहीं, उसपर अश्रद्धा करके अपनेको छोटा मत बनाओ।"

मगर इस शिकायतने उस युवकको कुण्ठित नहीं किया, उसने मुसकराते चेहरेसे स्वाभाविक स्वरमें ही कहा, "अश्रद्धाके कारण नहीं,—मित्रताकी आवश्यकता नहीं समझनेके कारण ही कहा था और अगर आप समझें कि यह चीज मेरे काम आ सकती है, तो मैं अस्वीकार भी नहीं करूँगा। लेकिन सोच नहीं रहा हूँ कि क्या काम आयेगी।"

कमलका चेहरा सुर्ख हो उठा। जैसे किसीने चाबुक मारकर उसे अपमानित किया हो। वह उच्च शिक्षिता, अत्यन्त सुन्दरी और प्रखर बुद्धिशालिनी है। उसकी धारणा थी कि वह पुरुषके लिए कामनाका धन है, उसका निष्कपट विश्वास था कि उसका इस तेज अपराजेय है। संसारमें नारियोंने उससे घृणा की है, पुरुषोंने आसक्तिकी आगसे भस्म करना चाहा है, और अवज्ञाका ढोंग भी न किया हो सो बात नहीं, मगर यह तो कुछ और ही चीज है। आज इस युवकके सामने अपनी तुच्छता महसूस करके मानो वह जमीनमें गड़-गड़ गई। शिवनाथने उसे धोखा दिया है, वंचित किया है, मगर इस तरह दीनताका चोर उसके शरीरपर नहीं लपेटा।

कमलके मनमें एक सन्देह प्रकट हो उठा, उसने पूछा, "मेरे सम्बन्धमें

ही है। होते तो देशकी समस्या बहुत कुछ सहल हो जाती।"

जरा ठहरकर फिर बोला, "मगर मैं इस वजहसे नहीं जा रहा हूँ। आश्रम को भी दोष नहीं दे सकता। और चाहे जिसके मुँहसे निकल जाय, पर मेरे लिए चले जानेकी बात हरेन्द्र भइयाके मुँहसे नहीं निकल सकती।"

"तो क्यों जा रहे हो?"

"जा रहा हूँ अपने ही लिए। वह है जरूर देशका काम, पर मेरा उनके साथ मत नहीं मिलता, और न कामकी धारा ही मेल खाती है। मेल है सिर्फ प्रेमकी दृष्टिसे। हरेन्द्र भइयाको मैं सहोदरसे प्रिय हूँ, उससे भी ज्यादा अपना हूँ। किसी दिन इसका व्यतिक्रम भी नहीं होनेका।"

कमलकी दुश्चिन्ता दूर हो गई। बोली, "इससे बढ़कर और क्या हो सकता है राजेन्द्र? मन जहाँ मिल गया, वहाँ मतका मेल न हो, न सही, कामकी धारा न मिले न सही, इससे क्या आता जाता है? सब कोई एक ही तरहसे सोचेंगे, एक ही तरहका काम करेंगे और तभी एक साथ रहेंगे,—यह क्यों? और हम अगर दूसरेके मतपर श्रद्धा न कर सकें, तो फिर शिक्षा ही क्या हुई? मत और कर्म दोनों ही बाहरकी चीज हैं राजेन्द्र, एक मन ही सत्य है। और, इन बाहरकी चीजोंको ही बड़ा मानकर अगर तुम दूर चले जाओ, तो, तुम जो कह रहे थे कि तुम्हारे प्रेममें कोई व्यतिक्रम नहीं होनेका, सो इस तरह तो उसे अस्वीकार करना होगा। यह जो किताबमें लिखा है कि 'छायाके लिए काया छोड़ी,' सो यह भी ठीक वैसी ही बात होगी।"

राजेन्द्र कुछ बोला नहीं, सिर्फ हँस दिया।

"हँसे क्यों?"

"हँसा इसलिए कि तब हँसा नहीं था। आपने अपने खुदके विवाहके मामलेमें मनके मेलको ही एकमात्र सत्य स्थिर करके बाह्य अनुष्ठानको बेमेल 'कुछ नहीं' कहकर उड़ा दिया था। वह सत्य नहीं था, इसीलिए आज आप दोनोंका सब कुछ असत्य हो गया।"

"इसके मानी?"

राजेन्द्रने कहा, "मनके मेलको मैं तुच्छ नहीं समझता, मगर उसीको अद्वितीय कहकर उच्च स्वरसे घोषित करनेकी भी आजकल एक ऊँचे ढंगकी फैशन हो गई है। इससे उदारता और महत्ता दोनों ही प्रकट होती है, परन्तु

सत्य नहीं प्रकट होता। यह कहना गलत है कि संसारमें सिर्फ एक मन ही है और उसके बाहर जो कुछ है, सब छाया है।"

ज़रा रुककर वह फिर कहने लगा, "आप अभी अभी विभिन्न मतवादोंके प्रति श्रद्धा रख सकनेकी हो बड़ी भारी शिक्षा दता रही थीं, मगर आप जानती हैं कि सब तरहके मतोंपर श्रद्धा कौन रख सकता है? जिसके अपने मतका कोई मूल्य नहीं, वही रख सकता है। शिक्षाके द्वारा विरुद्ध मतकी चुपचाप उपेक्षा की जा सकती है, पर उसपर श्रद्धा नहीं की जा सकती।"

कमलको अत्यन्त विस्मय हुआ, यह अबकी बार रुक गई। राजेन्द्र कहने लगा,—"हमारा ऐसा नीति नहीं है, झूठी श्रद्धामें हम संसारको सजाता नहीं करते—मित्रके मतपर भी नहीं,—उस श्रद्धाको तोड़ फोड़कर चकनाचूर कर डालते हैं। यही हम लोगोंका काम है।"

कमलने कहा, 'इसको तुम लोग 'काम' कहते हो?'

राजेन्द्रने कहा, "हाँ, कहते हैं। मतका झमेल अगर हमारे काममें बाधा पहुँचाता रहे तो मनके मेलसे हम क्या करेंगे? हम चाहते हैं मतकी एकता, कामकी एकता, —हमारे लिए भावोंके विलासका कोई भी मूल्य नहीं दिखाती—"

कमल आश्चर्य चकित होकर बोली, "मेरा यह नाम भी तुम्हें मालूम हो गया है?"

"हाँ। कमरे नामक आदमीने व्यवहारका मेल ही बड़ा मेल है, मनका नहीं। मन हो वा न रहे, अन्तःकरणका विचार अन्तर्यामी करेंगे, हमारा काम व्यावहारिक एकताके बिना नहीं चल सकता। यही हमारी कसौटी है,—इसीमें हम जाँच करते हैं। बाहरमें अगर मनमें मेल न हो तो केवल दो जनोंके मनके मेलसे संसारकी सृष्टि नहीं होती, वह तो सिर्फ कोलाहल ही फैलायेगा। राजाकी जो सेनाएँ युद्ध करती हैं, उनकी बाहरकी एकता ही राजाकी शक्ति है। मनसे उसे कोई मतलब नहीं। नियमका शासन सबसे है—और यही हम लोगोंकी नीति है। इसे छोड़ा जानेसे मनके नामपर लिए युगके युगके जा मारती है, और कुछ नहीं। यह उच्छृङ्खलताका ही नामान्तर है।—लॉगवाले, गाने-रोना,—शिवानी, यही है उनका घर।"

सामने एक पुराना टूटा-फूटा मकान है। दोनों तुरन्त उतरकर नाचेका एक कोठरीमें पहुँचे। आहट सुनकर शिवनाथने आँख खोलकर देखा, पर

दियेके धुँधले उजालेमें शायद पहचान न सका। क्षण भर बाद ही उसने आँखें मींच लीं और तन्द्राच्छन्न हो रहा।

१७

चारों तरफ देख भालकर कमल सन्न हो गई। घरकी शकल क्या हो रही है! सहसा किसीको विश्वास नहीं हो सकता कि यहाँ कोई आदमी भी रहता है। किसीके आनेकी आहट सुनाई दी और एक सत्रह-अठारह सालका लड़का आ खड़ा हुआ। राजेन्द्रने उसका परिचय देते हुए कहा, "यह शिवनाथ बाबूका नौकर है। पथ्य बनानेसे लेकर दवा पिलानेतक सब इसीकी ड्यूटीमें है। सूर्यास्तसे ही शायद सोना शुरू किया था इसने, अभी उठकर आ रहा है। रोगीके सम्बन्धमें अगर कुछ उपदेश देना हो तो इसीको दीजिए। मालूम होता है कि समझ तो जायगा, बिल्कुल बेवकूफ नहीं है। नाम कल पूछा तो था पर याद नहीं रहा। क्या नाम है रे?"

"फगुआ।"

"आज दवा दी थी?"

लड़केने साथ हाथकी दो उँगलियाँ दिखाते हुए कहा, "दो खुराक दी है।"

"और कुछ दिया है।"

"हाँ,—दूध भी पिला दिया है।"

"बहुत अच्छा किया। ऊपरके पंजाबी बाबुओंमेंसे कोई आया था?"

लड़केने याद करके कहा, "शायद दोपहरको एक बाबू आये थे।"

"शायद? तब तुम क्या घर रहे थे, सो रहे थे?"

कमलने कहा, "फगुआ, यहाँ झाड़ू आड़ू कुछ है या नहीं?"

फगुआ सिर हिलाकर झाड़ू लेने चला गया। राजेन्द्र बोला, "झाड़ूका क्या करेंगी? उसे पीटेंगी क्या?"

कमलने गम्भीर होकर कहा, "यह क्या मजाकका वक्त है? माया ममता क्या तुम्हारे बिल्कुल है ही नहीं?"

"पहले थी। फ्लड और फेमिन रिलीफमें उड़ झाड़ पोंछकर अलग फेंक आया हूँ।"

फगुआ झाड़ू लेकर हाजिर हुआ। राजेन्द्रने कहा, "मैं भूखके मारे मरा

जा रहा हूँ, वहाँ जाकर कुछ खा आऊँ। तब तक शायद और इस स्टेशनका जो उपयोग कर सकें, आप कीजिए, वापस आकर आपको मैं घर पहुँचा दूँगा। डरिएगा नहीं, मैं डेढ़ दो घण्टेमें लौट आता हूँ।" कहकर वह जवाबकी परवाह किये बगैर ही चल दिया।

शहरके किनारेका यह स्थान थोड़ी ही देरमें निःशब्द और निर्जन हो गया। जो लोग ऊपर रहते हैं उनका कोलाहल और चलने फिरनेका शब्द भी बन्द हो गया। मालूम होता है कि वे सब सो गये हैं। सिग्नलवालेकी खबर लेने कोई नहीं आया। बाहर अँधेरी रात्रि और भी गहरी होने लगी। जमीनपर कम्बल बिछाकर पशुआ ऊँघने लगा। बाहरका दरवाजा बन्द करनेका समय हो रहा था कि सड़कपर साइकिलकी घण्टी सुनाई दी और दूसरे ही क्षण दरवाजा धकेलकर राजेन्द्र भीतर आ गया। उसने इधर उधर देखा और इस थोड़े-से समयमें सारे कमरेमें काफी परिवर्तन देखकर कुछ देर चुपचाप खड़ा रहा, फिर हाथकी पोटली बगलकी तिपाईपर रखता हुआ बोला, "आपको जैसा सोचा था दूसरी स्त्रियोंकी तरह, वैसी आप नहीं हैं। आपपर भरोसा किया जा सकता है।"

कमलने कुछ जवाब नहीं दिया, चुपकेसे उसके मुँहकी ओर देखा। राजेन्द्रने कहा, "इस बीचमें आपने तो सिलसिला बदल डाला है! और सब कुछ तो आपने ढूँढ़-खोजकर निकाल लिया, पर इसे उठाकर ऊपर सुलाया कैसे?"

कमलने आहिस्तेसे कहा, "तरकीब मालूम हो, तो यह काम मुश्किल नहीं।"

"मगर मालूम कैसे हो? मालूम होनेकी तो कोई बात नहीं थी।"

कमलने कहा, "मालूम करना क्या सिर्फ उम्दा सामान हाथकी बात है? बचपनमें चाय बगानमें रहते बहुत-से रोगियोंकी सेवा की है।"

"अच्छा, यह बात है!" कहकर उसने चारों तरफ नजर दौड़ाई, फिर कहा, "आते वक्त साथमें कुछ खानेको लेता आया हूँ। देख गया था कि सुराहीमें पानी है, लाइए, खा लीजिए, मैं बैठा हूँ।"

कमल उसके चेहरेकी तरफ देखकर जरा हँस दी, बोली, "खानेके बारेमें तो मैंने कहा नहीं था, अचानक यह बात सूझ कैसे गई?"

राजेन्द्र बोला, "बात सच है, सूझा तो अचानक ही। जब मेरा पेट भर गया, तब न जाने क्यों ऐसा लगा कि आपको भी भूख लगी होगी। आते वक्त दूकानसे थोड़ा-सा लेता आया। देर न कीजिए, खाने बैठिए।" कहकर वह

खुद ही सुराही उठा लाया। पास ही कलईदार गिलास रखा था, बोला, “ठहरिए, बाहरसे इसे मांज लाऊँ।” कहता हुआ उसे बाहर ले गया। यह कल ही जान गया था कि इस घरमें कहाँ क्या रखा है। लौटा, तो खोजकर साबुनका टुकड़ा उठा लाया और बोला, “आपने बहुत उठा-धरी की है, जरा सावधान रहना अच्छा है। मैं पानी देता हूँ, आप पहले हाथ धो लीजिए।”

कमलको अपने पिताकी याद आ गई। उनकी भी बातोंमें इसी तरह रस कम कुछ नहीं होता था, मगर वे हार्दिकतासे भरी रहती थीं। उसने कहा, “हाथ धोनेमें मुझे कोई आपत्ति नहीं, पर खा नहीं सकूँगी माफ़। तुम्हें तो शायद मालूम है कि मैं खुद अपने हाथसे बनाकर खाया करती हूँ, और दूसरे, यह सब कीमती अच्छी अच्छी मिठाइयाँ भी मैं नहीं खाती। मेरे लिए व्यस्त होनेकी जरूरत नहीं, मैं तो हमेशाकी तरह घर जाकर ही खाऊँगी।”

“तो फिर ज्यादा रात न करके अब घर ही लौट चलिए, आपको पहुँचा दूँ।”

“आप फिर यहाँ लौटकर आएँगे?”

“हाँ।”

“कबतक रहिएगा?”

“कमसे कम कल सबेरेतक। ऊपरके पंजाबी भाइयोंके हाथ कुछ रुपये दे गया था, उनसे एक बार मुलाकात किये बगैर नहीं हिलनेका। जरा थक गया हूँ, पर इसकी कुछ परवाह नहीं। मुझे नहीं मालूम था कि इतनी लापरवाही होगी, उठिए, फिर ताँगा नहीं मिलेगा, पैदल जाना पड़ेगा। लौटते वक्त मोचियोंके मुहल्लेमें भी जरा देखने जाना है। दोके मरनेकी बात थी, देखना है, उन लोगोंने क्या किया?”

कमलको फिर उस बातका खयाल आ गया कि इस आदमीके हृदयमें अनुभूति नामकी कोई चीज ही नहीं। लगभग यन्त्र-सा काम करता है। न जाने कौन-सी अज्ञात प्रेरणा इसे बार बार काममें जोत देती है, और यह काम करता चला जाता है। अपने लिए नहीं, और शायद कोई आशा लेकर भी नहीं करता। काम इसके रक्तमें और सारे शरीरमें जल वायुकी भाँति ही सहज स्वाभाविक हो गया है। और मजा यह कि औरोंके आश्चर्यका ठिकाना नहीं, वे सोचते हैं कि ऐसा होता कैसे है? कमलने पूछा, “राजेन्द्र, आप खुद भी तो डॉक्टर हैं?”

"डॉक्टर? नहीं तो। सिर्फ ज़रा डॉक्टरी स्कूलमें कुछ दिन पढ़ा था।"

"तो फिर उन लोगोंका इलाज कौन करता है?"

"यम।"

"और आप क्या करते हैं?"

"मैं उनके कार्यमें मदद करता हूँ, उनका गुण-मुग्ध परम भक्त हूँ।"

कहकर वह कमलके विस्मयाच्छन्न चेहरेकी तरफ क्षण भर देखता रहा, फिर ज़रा हँसकर बोला, "यम नहीं, वे हैं यम राज। बलिहारी है उसकी प्रतिभाकी जिसने राजा कहकर इन्हें पहले पहल अभिनन्दित किया था। सचमुच है तो राजा ही। जैसी दया है वैसा ही विवेक। मैं होड़ बदकर कह सकता हूँ कि विश्व जगत्‌में कोई अगर सृष्टिकर्ता है, तो वे उसकी सर्वश्रेष्ठ सृष्टि हैं।"

कमलने आहिस्तेसे पूछा, "आप क्या मज़ाक कर रहे हैं गजेन्द्र?"

"कतई नहीं। सुनकर सतीश भइया मुँह गम्भीर बना लेते हैं, हरेन्द्र भइया गुस्सा हो जाते हैं, मुझे 'सिनिक' कहते हैं। और अपने आश्रममें उन सबने मिलकर कृच्छ्रता, संयम, त्याग और अद्भुत कठोरताके तरह-तरहके अस्त्र शस्त्र पैनाकर मानो यम राजके विरुद्ध विद्रोह घोषित कर रखा है। वे समझते हैं कि मैं उनका उपहास कर रहा हूँ। मगर सो बात नहीं है। गवार दुनियाँके मुहल्लोंमें वे जाते नहीं, अगर जाते तो मेरा विश्वास है कि वे भी मेरी तरह परम राज भक्त हो जाते और श्रद्धासे झुककर यम राजका गुण गान करते, अकल्याण समझकर उन्हें गाली देते न फिरते।"

कमलने कहा, "यही अगर तुम्हारा वास्तविक मत हो तो तुम्हें 'सिनिक' कहनेमें बुराई क्या है?"

"बुराईका विचार पीछे होगा। चलिये एक बार मेरे साथ मोचियोंके मुहल्लेमें? बीमारीकी बहार पड़ी है, सिर्फ आजकल एफ्लुएञ्जा। इतना ही नहीं—हैजा, चेचक, प्लेग—कोई भी बहाना भर मिलना चाहिए। औषधि नहीं, पथ्य नहीं, सोनेके लिए बिस्तर नहीं, ढकनेके लिए कपड़ा नहीं, मुँहमें पानी देनेके लिए आदमी नहीं,—देखकर हो यकायक घबरा जाना पड़ता है कि आखिर इसका किनारा कहाँ है? पर उसी वक्त किनारा नजर आ जाता है, चिन्ता दूर हो जाती है और मन ही मन कहने लगता हूँ,—कोई डर नहीं भाई, कोई डर नहीं।—समस्या चाहे कितनी ही गम्भीर क्यों न हो, उसका समाधान

जिनपर जिम्मेदारी है वे आ ही रहे होंगे। जुदे-जुदे देशोंमें जुदी-जुदी व्यवस्थाएँ हैं, पर हमारा इस देश भूमिमें सारीकी सारी जिम्मेदारी यमराजने ले रक्खी है, स्वयं राजाधिराज यमराजने। एक हिसाबसे हम बहुत ज्यादा सौभाग्यवान् हैं। —लेकिन न जाने कहाँसे यह सब बात निकल आई। चलिए, बहुत रात होती जा रही है। बहुत-सा रास्ता पैदल तै करना है।"

"मगर तुम्हें तो फिर उसी रास्ते वापस भी आना है?"

"सो तो आना ही है।"

"तुम्हारा बाकी मुहल्ला है कितनी दूर?"

"पास ही है, याने यहाँसे एक मीलके भीतर।"

"तो तुम साइकिलसे घूम आओ—मैं बैठी हूँ।"

राजेन्द्रको आश्चर्य हुआ, बोला, "सो कैसे! आपने तो दो दिनसे खाया नहीं है!"

"किसने दी तुम्हें यह खबर?"

"अभी अभी खयालकी बात हो रही थी न, उसीसे। पर खबर मैंने खुद ही प्राप्त की है। आते वक्त आपका रसोईघर एक बार झाँककर देख आया था, आलू भात तैयार रखा था,—बटलोईका चेहरा देखनेसे सन्देह नहीं रहा कि वह रात बासिका बनाया हुआ है। अर्थात्, दो दिनसे आपका कोरा उपवास चल रहा है। लिहाजा, या तो चलिए या फिर जो लाया हूँ उसे खा लीजिए। आज हाथसे बनानेका बहाना अवैध है।"

"अवैध?" कमल जरा हँसकर बोली, "मगर मेरे लिए तुम्हें इतना सिर दर्द क्यों?"

"सो नहीं जानता। कारणकी अभी खुद ही तलाश कर रहा हूँ, पता लगते ही आपको खबर दे दूँगा।"

कमल थोड़ी देर कुछ सोचती रही, उसके बाद बोली, "जरूर देना। भूल जाना मत।" फिर कुछ देर चुप रहकर उसने कहा, "राजेन्द्र, तुम्हारे आश्रमके भाई साहबान तुम्हें बहुत कम पहचाना है, इसीसे वे तुम्हें उपद्रव समझते हैं। पर मैं तुम्हें पहचानती हूँ। लिहाजा, मुझे भी पहचान रखना तुम्हारे लिए जरूरी है। लेकिन, उसके लिए समय चाहिए, यह परिचय वाद विवाद करनेसे नहीं होगा।" और फिर जरा स्थिर रहकर कहने लगी, "मैं खुद अपने हाथसे

तुम इतने ओछे हो सिर्फ इसीलिए, मैंने सह लिया, नहीं तो मुझसे नहीं सहा जाता।"

शिवनाथ चुप रहा, कमल उसके चेहरेकी तरफ एकटक देखती रही और बोली, "तुम जानते हो, मुझे सब सहन हुआ, पर तुम्हें घरसे निकाल देना मुझसे नहीं सहा गया। इसमें तुम्हारा मेरा करने आई थी,—तुम्हें रिझाने नहीं।"

शिवनाथने धीरे धीरे कहा, "तुम्हारी इस दयाके लिए मैं कृतज्ञ हूँ शिवानी।"

कमलने कहा, "तुम मुझे 'शिवानी' कहके मत पुकारो, कमल कहके पुकारा करो।"

"क्यों?"

"सुननेमें मुझे घृणा होती है, इसलिए।"

"मगर एक दिन तो तुम इसी नामको सबसे ज्यादा पसन्द करती थीं।" कहते हुए शिवनाथने कमलका हाथ अपने हाथमें ले लिया। कमल चुप रही। अपने हाथको लेकर खींचातानी करनेमें भी उसे सकोच मालूम हुआ।

"चुप हो रहीं, जवाब क्यों नहीं देतीं?"

कमल पूर्ववत् चुप रही।

"क्या सोच रही हो बताओ न शिवानी?"

"क्या सोच रही हूँ, जानते हो? सोच रही हूँ कि इन बातोंकी याद दिलानेवाला आदमी कितना बड़ा पाखण्डी होना चाहिए!"

शिवनाथकी आँखोंमें आँसू छलक आये, उसने कहा, "पाखण्डी मैं नहीं हूँ शिवानी। एक दिन आयगा जब अपनी भूल तुम आप ही समझ जाओगी,—उस दिन तुम्हारे पश्चात्तापकी सीमा न रहेगी। क्या मैंने अलहदा कमरा किरायेपर लिया है—"

"लेकिन अलहदा कमरा किरायेपर लेनेका कारण तो तुमसे मैंने एक बार भी नहीं पूछा? मैंने तो सिर्फ इतना ही जानना चाहा था कि यह बात तुम मुझसे छिपाकर क्या नहीं आये? तुम्हें एक दिनके लिए भी मैं पकड़के नहीं रखती।"

शिवनाथकी आँखोंमें आँसू ढलक पड़े, उसने कहा, "कहनेकी मुझे हिम्मत नहीं पड़ी शिवानी!"

"क्यों?"

शिवनाथ कुरतेकी आस्तीनसे आँखें पोंछता हुआ बोला, "एक तो रुपयोंकी

शिवानी ! तुम्हें साथ लेकर यहाँ आये हैं ?"

"हाँ। उन्हें भी लाये हैं और तुम्हें भी कल यहाँ पहुँचा गये हैं। यही न।"

"नाम क्या है ?"

"राजेन्द्र।"

"तुम दोनों क्या अभी एक ही मकानमें रह रहे हो ?"

"कोशिश तो यही कर रहा हूँ। मगर रह जायँ तो मेरा भाग्य।"

"हूँ। उसे यहाँ क्या लाये हो ?"

कमलने इसका कोई जवाब नहीं दिया। शिवनाथने भी फिर कोई प्रश्न नहीं किया, और मौन बना रहा। बहुत देरतक चुप रहनेके बाद शिवनाथने पूछा, "यह बात तुमने किसके मुँहसे सुना कि मेरे साथ तुम्हारा कोई सम्बन्ध नहीं रहा ! मैं पूछता हूँ,—ऐसा लोग कह रहे हैं क्या ?"

कमलने इस बातका कोई जवाब नहीं दिया, किन्तु अबकी उसने खुद ही प्रश्न किया, "मुझसे तुमने ब्याह नहीं किया, तो मैंने इसपर भूल ही विश्वास न किया हो, तुम तो कहते थे ? पर मुझे छोड़कर चले आते वक्त यह बात तुम मुझसे कह क्यों नहीं आये ? यही सोच रखा था क्या तुमने कि मैं तुम्हें बाँधकर रख सकती हूँ या रो-पीटकर अनर्थ खड़ा कर सकती हूँ ? ऐसा मेरा स्वभाव नहीं, सो तो तुम अच्छी तरह जानते ही थे, फिर कहके क्यों नहीं आये ?"

शिवनाथ थोड़ी देर नीरव रहकर बोला, "कामकी झंझटके मारे या रोजगारके खातिर कुछ दिनोंके लिए अलग मकान लेकर रहने लगना ही क्या त्यागना हो गया ? मैं तो सोचता था —"

शिवनाथकी बात मुँहकी मुँहमें ही रह गई। कमल बीचमें ही बोल उठी, "रहने दो, मैं नहीं जानना चाहती।" पर कहनेके साथ ही वह अपनी उत्तेजनासे आप ही लज्जित हो गई। कुछ देर चुप रहकर अपनेको शान्त करके अन्तमें बोली, "तुम क्या सचमुच ही बीमार थे ?"

"सच नहीं तो क्या झूठ ?"

"सचमुच ही अगर बीमार थे तो यहाँ न आकर आशु बाबूके घर किसलिए गये ? तुम्हारे एक कामने तो मुझे व्यथा ही पहुँचाई है, पर दूसरे कामने मेरा इतना अपमान किया है कि जिसकी हद नहीं ! मैं जानती हूँ, यह सुनकर कि मुझे दुःख हुआ है तुम हँसोगे, पर यह जानना ही मेरे लिए सान्त्वना है।

हथेलीपर पाँव पसारकर वह पड़ रहा। बोला, "दौड़-धूप करते-करते पसीनेसे लथपथ हो गया हूँ,—पंखा-वंखा कुछ है क्या?"

कमल हाथमें पंखा लेकर कुरसी खींचकर उसके सिरहाने बैठ गई और बोली, "मैं ब्यार कर रही हूँ, तुम सो जाओ। राजाके लिए दुश्चिन्ता करनेकी जरूरत नहीं, वे अच्छे हैं।"

"वाह! तब तो सब तरफ शुभ ही शुभ समाचार है।" कहते हुए उसने आँखें मींच लीं।

१८

इन्फ्लुएंजा इस देशमें बिल्कुल नई बीमारी नहीं है, 'डेंगू' या 'हड्डी तोड़' बुखारके नामसे यहाँवाले इसे बहुत कुछ अवज्ञा और उपहासकी दृष्टिसे देखते रहे हैं। लोगोंकी यही धारणा थी कि दो-तीन दिन तकलीफ देनेके सिवा उसका और कोई गहरा उद्देश्य नहीं होता।—परन्तु इसकी किसीको कल्पनातक न थी कि सहसा ऐसी दुर्निवार महामारीके रूपमें उसका प्रकोप हो सकता है। लिहाजा, इस बार अकस्मात् इसकी अपरिमेय शक्तिकी सुनिश्चित कठोरतासे लोग पहले तो हतबुद्धि-से हो गये, बादमें जिससे जिधर बन सका, भाग खड़ा हुआ। अपने और परायेमें ज्यादा भेद-भाव न रहा। बीमारकी तीमारदारी करना तो दूर रहा, मरते वक्त मुँहमें पानी देनेवाला भी बहुतोंके भाग्यमें न जुटा। शहर और गाँव सबकी ही एक-सी दशा थी। आगरेके भाग्यमें भी अन्यथा कुछ नहीं हुआ,—उस समृद्ध जन-बहुल प्राचीन नगरीकी शक्ल कुछ ही दिनोंमें बिल्कुल ही बदल गई। स्कूल-कॉलेज बन्द हो गये हैं, बाजार और मण्डियोंकी दूकानोंमें ताले लग गये हैं, जमुनाका किनारा सुनसान है,—हिन्दू और मुसलमान शव-वाहक शोकाकुल [illegible] आवाजके सिवाय सड़कपर बिल्कुल सन्नाटा है। किसी भी तरफ देखनेसे यही मालूम होता है कि मार भय और आतंकके सिर्फ आदमियोंकी ही नहीं बल्कि मकानों और पेड़-पौधोंतककी शकल-सूरत बिगड़ गई है। शहरकी ऐसी हालतमें चिन्ता, दुःख और शोककी ज्वालाके कारण बहुतोंके साथ बहुतोंका समझौता हो गया है,—कोशिश करके बातचीत द्वारा या मध्यस्थ मानकर नहीं, बल्कि यों ही अपने आप। आज भी जो लोग जिन्दा हैं, अभीतक इस दुनियासे जुदे नहीं हुए, वे सभी मानो परस्पर एक-दूसरेके

लगी, उसपर आये दिन बाहर जाना पड़ता पत्थर खरीदने। माल लादने उतार नेके लिए स्टेशनके पास एक—"

कमल बिस्तरसे उठकर दूर एक कुरसीपर जा बैठी। "मुझ अपने लिए अब दुःख नहीं होता। होता है एक दूसरे आदमीके लिए। पर आज तुम्हारे लिए भी दुःख हो रहा है शिवनाथ बाबू!"

बहुत दिन बाद फिर आज उसने नाम लेकर पुकारा। बोली, "देखो, कोरी रचनाको ही मूल धन मानकर दुनियामें रोजगार नहीं किया जा सकता। मेरे साथ, हो सकता है कि, फिर कभी तुम्हारी मुलाकात न हो, लेकिन मेरी तुम्हें याद आयेगी। जो होना था सो तो हो चुका, वह अब वापस नहीं आ सकता परन्तु भविष्य जीवनको और एक पहलूसे देखनेकी कोशिश करोगे तो हो सकता है कि तुम्हारा भला हो, तुम अच्छी तरह रहो।"

कमलने बड़ी मुश्किलसे अपने आँसू रोके। यह जानकर कि आशु बाबूने क्यों उसे अपने घरसे हटा दिया, उसका असली कारण क्या था,—वह इतनी बड़ी चोट, इतनी बात हो जानेपर भी उसे न पहुँचा सकी।

बाहर साइकिलकी घण्टी सुन पड़ी। शिवनाथ बिना कुछ बोले चुपचाप करवट बदलकर सो रहा।

भीतर आकर राजेन्द्रने धीमे स्वरसे कहा, "अच्छा, सचमुच ही जाग रही हैं आप। रोगीका क्या हाल है? दवा अवा कुछ खिलाई पिलाई क्या?"

कमलने सिर हिलाकर कहा, "नहीं, कुछ नहीं खिलाया।"

राजेन्द्रने उँगलीसे इशारा करके कहा, "चुप। नींद उचट जायगा,—नींद खराब होना अच्छा नहीं।"

"नहीं। पर तुम्हारे मोचियाने क्या किया?"

"वे भले आदमी थे बात रख ली। मेरे पहुँचनेके पहले ही यमराजने भैंसे आकर दो आत्माओंको ले गये, सबेरे दोनों मुर्दोंको म्युनिसिपालिटीके भंगीके हवाले कर छुट्टी पा लूँगा। और भी आठ दस साँस भर रहे हैं, कल एक बार आपको ले जाकर दिखा लाऊँगा। आशा है, आपको पर्याप्त ज्ञान प्राप्त होगा। मगर आराम-कुरसीपर मेरा कम्बलका बिछौना कहाँ है? भूल गई?"

कमलने कम्बल बिछा दिया।

"ओफ्—जानमें जान आई!" कहकर उसने एक लम्बी साँस ली और

हथेलीपर पाँव पसारकर वह पड़ रहा। बोला, "दौड़-धूप करते करते पसीनेमें लथपथ हो गया हूँ,—पंखा रक्खा कुछ है क्या ?"

कमल हाथमें पंखा लेकर कुरसी खींचके उसके सिरहाने बैठ गई और बोली, "मैं तयार कर रही हूँ, तुम खा जाओ। रोगीके लिए दुश्चिन्ता करनेकी जरूरत नहीं, वे अच्छे हैं।"

"वाह! तब तो सब तरफ शुभ ही शुभ समाचार है।" कहते हुए उसने आँख मींच ली।

१८

इन्फ्लुएञ्जा इस देशमें बिलकुल नई बीमारी नहीं है, 'डेंगू' या 'हड्डी तोड़' बुखारके नामसे यहाँवाले इसे बहुत कुछ अवज्ञा और उपहासकी दृष्टिसे देखते रहे हैं। लोगोंकी यही धारणा थी कि दो-तीन दिन तकलीफ देनेके सिवा उसका और कोई गहरा उद्देश्य नहीं होता।—परन्तु इसकी किसीको कल्पनातक न थी कि सहसा ऐसी दुर्निवार महामारीके रूपमें उसका प्रकोप हो सकता है। लिहाजा, इस बार अकस्मात् इसकी अपरिमेय शक्तिकी सुनिश्चित कठोरतासे लोग पहले तो हतबुद्धि-से हो गये, बादमें जिससे जिधर बन सका, भाग खड़ा हुआ। अपने और परायेमें ज्यादा भेद भाव न रहा। बीमारकी तीमारदारी करना तो दूर रहा, मरते वक्त मुँहमें पानी देनेवाला भी बहुतोंके भाग्यमें न जुड़ा। शहर और गाँव सर्वत्र ही एक-सी दशा थी। आगरेके भाग्यमें भी अन्यथा कुछ नहीं हुआ,—उस समृद्ध जन-बहुल प्राचीन नगरीकी शक्ल कुछ ही दिनोंमें बिलकुल ही बदल गई। स्कूल कॉलेज बन्द हो गये हैं, बाजार और मण्डियोंकी दूकानोंमें ताले लग गये हैं, जमुनाका किनारा सुनसान है,—हिन्दू और मुसलमान शव वाहकोंके व्याकुल क्रन्दनकी आवाजके सिवाय सड़कोंपर बिलकुल सन्नाटा है। किसी भी तरफ देखनेसे यही मालूम होता है कि मारे भय और हाहाकारके सिर्फ आदमियोंकी ही नहीं बल्कि मकानों और पेड़ पौधोंतककी शक्ल सूरत बिगड़ गई है। शहरकी ऐसी हालतमें चिन्ता, दुःख और शोककी ज्वालाके कारण बहुतोंके साथ बहुतोंका समझौता हो गया है,—कोशिश करके बातचीत द्वारा या मध्यस्थ मानकर नहीं, बल्कि यों ही अपने आप। आज भी जो लोग जिन्दा हैं, अभीतक इस दुनियासे कूच नहीं हुए, वे सभी मानो परस्पर एक-दूसरेके

परम आत्मीय हो गये हैं। बहुत दिनोंसे जिनमें बातचीततक बन्द थी, सहसा रास्तेमें भेंट होते ही उनकी भी आँखोंमें आँसू छलक आते हैं।—किसीका भाई मर गया है तो किसीका लड़का, किसीकी स्त्री मर गई है तो किसीकी लड़की, नाराजीसे मुँह फेर लेनेकी ताकत अब किसीमें नहीं रह गई,—कभी किसीसे बात हुई और कभी वह भी नहीं हुई, चुपचाप मन ही मन एक-दूसरेका कल्याण कामना करके विदा ले ली है।

मोचियोंके मुहल्लेमें अब ज्यादा आदमी नहीं बचे हैं। जितने मरे उतने ही भाग गये हैं। बाकीके लिए राजेन्द्र अकेला ही काफी है। उनकी गति और मुक्तिका भार स्वयं उसीने अपने जिम्मे ले लिया है। सहकारिणीके तौरपर कमल हाथ बँटाने आई थी। उसीका उसको भरोसा था कि बचपनमें चायके बगीचेमें बीमार कुलियोंकी उसने सेवा की थी, पर दो ही तीन दिनमें वह समझ गई कि उस पूँजीसे यहाँ काम नहीं चल सकता। उफ्, मोचियोंकी वह कैसी दुर्दशा थी! भाषामें उसका वर्णन करके विवरण देना असम्भव है। झोपड़ियोंमें पाँव धरते ही सारा शरीर काँप उठता था,—कहीं भी बैठनेको जगह नहीं। वहाँ आनेके पहले कमल नहीं जानती थी कि गन्दगी कैसा भयंकर रूप धारण कर सकती है। इस बातकी कल्पनातक भी वह अपने मनमें स्थान न दे सकी कि इन सबके मध्यमें हरदम रहते हुए, अपनेको सावधानीसे बचाए रखकर, रोगियोंकी सेवा और देख भाल की जा सकती है। बड़े दर्पके साथ वह राजेन्द्रके साथ यहाँ आई थी। दुस्साहसिकतामें वह किसीसे कम नहीं थी,—संसारकी किसी बातसे वह डरती नहीं थी,—मौतसे भी नहीं, और उसने झूठ भी नहीं कहा था पर यहाँ आकर उसने समझा कि इसकी भी एक सीमा है। कुछ दिनोंमें ही डरके मारे उसकी देहका खून सूखने लगा। फिर भी, बिल्कुल ही दिवालिया होकर घर लौट आनेके पहले राजेन्द्र उसे आश्वासन देते हुए बार बार कहने लगा, "ऐसी निर्भीकता मैंने अपने जीवनमें नहीं देखी। ठीक तूफानके मुँहको ही आपने सँभाल लिया। पर अब जरूरत नहीं,—आप घर जाकर कुछ दिन आराम कीजिए। इनके लिए जो कुछ आप किये जा रही हैं उसका ऋण ये अपने जीवनमें न चुका सकेंगे।"

"और तुम?"

राजेन्द्रने कहा, "इन बचे हुओंको महायात्रा कराकर मैं भी भागूँगा।

मन तो, क्या आप चाहती हैं कि इनके साथ मैं भी मर जाऊँ ?"

कमलको जवाब ढूँढे न मिला, क्षण भर उसकी तरफ देखती रही, फिर चली आई। मगर इससे मानो यह नहीं कि वह इन कई दिनोंमें अपने घर बिलकुल आई ही न सकी हो। रसोई बनाकर साथ ले जानेके लिए उसे रोज एक बार अपने घर आना पड़ता था। पर आज यह जानकर कि उसे फिर उस भयानक स्थानमें वापस न आना पड़ेगा एक ओर जैसे उसे तसल्ली हुई, वैसे ही दूसरी ओर अव्यक्त उद्वेगसे उसका सारा जी भर उठा। आते वक्त वह राजेन्द्रसे उसके नामका पता पूछना भूल गई थी। मगर यह त्रुटि चाहे कितनी ही बड़ी क्यों न हो, जहाँ उसे वह छोड़ आई है, उसकर उसे कुछ नहीं थी।

स्कूल कालेज बन्द होनेके समयसे हरेन्द्रका ब्रह्मचर्याश्रम भी बन्द है। ब्रह्मचारी बालकोंको किसी निरापद स्थानमें पहुँचा दिया गया है और देख-रेखके लिए सतीश उनके साथ है। अविनाशकी बीमारीके कारण हरेन्द्र खुद नहीं जा सका। आज वह कमलके घर आया, और नमस्कार करके बोला, "पाँच-छः रोजसे रोज आ रहा हूँ, आपसे भेंट ही नहीं होती। कहाँ थीं ?"

कमलने मास्त्रियोंके मुहल्लेका नाम लिया तो वह अत्यन्त विस्मित हुआ, बोला, "वहाँ ? वहाँ तो, सुनते हैं, बहुत लोग मर रहे हैं ! यह सलाह आपको दी किसने ? पर किसीने भी दी हो, अच्छा काम नहीं किया।"

"क्यों ?"

"क्यों क्या ? वहाँ जानेके माने हैं लगभग आत्म-हत्या। मैं तो यह सोच रहा था कि शिवनाथ बाबू आगरेसे चले गये हैं, सो शायद आप भी वहीं चली गई होंगी। पर गई होंगी अवश्य ही, कुछ दिनोंके लिए ही, नहीं तो मकान खाली किये बगैर नहीं जातीं—अच्छा राजेन्द्रका पता है कुछ ? वह क्या यहीं है या और कहीं चला गया ? अचानक ऐसा गोता मारा कि कहीं पता ही नहीं मिलता।"

"उनसे क्या आपको कोई खास काम है ?"

"नहीं, खास कामके माने जो साधारणतः समझे जाते हैं, वैसा तो कोई काम नहीं। फिर काम ही समझिए। कारण, मैं भी अगर उसकी खोज-खबर लेना बन्द कर दूँ तो सिवा पुलिसके और कोई उसका आत्मीय जन नहीं रह जाता। मुझे विश्वास है, आपको मालूम है कि वह कहाँ है।"

कमलने कहा, "मुझे मालूम है। पर आपको बतानेमें कुछ फायदा नहीं। यह अनुसन्धान करना अनुचित कुतूहल है कि जिसे घरसे भगा दिया है अब वह बाहर निकलकर कहाँ गया।"

हरेन्द्र कुछ देर चुप रहा, फिर बोला, "मगर वह मेरा घर नहीं, आश्रम है। वहाँ उसे स्थान नहीं दे सका। मगर इसकी शिकायत दूसरेके मुँहसे सुनना भी मुझे गवारा नहीं। अच्छा बात है, मैं जाता हूँ। उसे पहले भी बहुत बार ढूँढ निकाला है, और इस बार भी ढूँढ लूँगा,—आप उसको नहीं रख सकेगी।"

यह बात सुनकर कमल हँस दी, बोली, "जैसा कि आप कह रहे हैं हरेन्द्र बाबू, फिर अगर उसे मैं ढक रखूँगी तो क्या आप समझते हैं कि उससे मेरा दुःख दूर हो जायगा?"

हरेन्द्र खुद भी हँस दिया, पर उस हँसीके इर्द गिर्द बहुत-सी सख्ती रह गई उसने कहा, "मेरे सिवा इस प्रश्नका जवाब देनेवाले आगरेमें और भी बहुतेरे हैं। वे क्या कहेंगे, मालूम है? कहेंगे—कमल, आदमीका दुःख तो एक तरहका है नहीं, बहुत तरहका है। उनकी प्रकृतियाँ भी भिन्न हैं और दुःख दूर करनेके रास्ते भी भिन्न हैं। लिहाजा, उन दुःखी लोगोंके साथ अगर कभी मुलाकात हो जाय तो बातचीत करके उन्हींसे निर्णय कर लीजिएगा।" फिर वह जरा ठहरकर बोला, "लेकिन असलमें आप भूल रही हैं। मैं उस दलका नहीं हूँ। व्यर्थ परेशान करने मैं नहीं आया, क्योंकि, संसारमें जितने लोग आपपर सचमुच श्रद्धा रखते हैं, उन्हींमेंसे मैं भी एक हूँ।"

कमलने उसके चेहरेकी तरफ एक नजर डालकर धीरेसे पूछा, "मुझपर आप सचमुच श्रद्धा रखते हैं सो किस नीतिसे? मेरे मत या आचरण, किसीके भी साथ तो आप लोगोंका मेल नहीं।"

हरेन्द्रने उसी वक्त उत्तर दिया, "नहीं, कोई मेल नहीं। मगर फिर भी मैं गहरी श्रद्धा रखता हूँ। क्यों? यही आश्चर्यकी बात है। अपने आपसे बार-बार पूछा भी करता हूँ।"

"कोई उत्तर नहीं पाते?"

"नहीं। मगर विश्वास है कि किसी-न किसी दिन पा लूँगा जरूर।" फिर जरा ठहरकर बोला, "आपका इतिहास कुछ-कुछ आपके निजके मुँहसे सुना है, कुछ अजित बाबूसे मालूम हुआ है,—हाँ, आपको मालूम होगा शायद,

वे अब हमारे आश्रममें ही रहने लगे हैं।"

कमलने सिर हिलाकर कहा, "सो तो आप पहले ही बता चुके हैं।"

हरेंद्र कहने लगा, "आपके जीवन इतिहासके विचित्र अध्याय ऐसी उदार सरलतासे सामने आ खड़े हुए हैं कि उनके विरुद्ध सरसरी राय जाहिर करनेमें डर लगता है। अबतक जिन बातोंको बुरा मानना सीखा है, आपने जानने मानो उन्हींके विरुद्ध मामला दायर कर दिया है। इन बातोंका न्याय करनेवाला कहाँ मिलेगा और उसका नतीजा क्या होगा सो मुझे कुछ भी नहीं मालूम किन्तु भला बताइए तो सही कि इस तरहसे जो निर्भयतासे आ सकती हैं और शृंखलाकी कोई आवश्यकता ही नहीं समझतीं, उनके प्रति श्रद्धा किये बगैर कैसे रहा जा सकता है?"

कमलने कहा, "निर्भयताके आगे सामने खड़ा हो जाना ही क्या कोई बहुत बड़ा काम है? दो एक बंगाली कहानी क्या आपने नहीं सुनी? वे भी नीच स्टेजसे चलते थे। आपने नहीं देखा, लेकिन मैंने चाय-बगीचोंके साहबोंको देखा है। उनका निर्भय, निःसंकोच बेहयापन देखकर दुनियामें लज्जाको भी लज्जा आती है। लज्जाको उन्होंने मानो गर्दनिया देकर बाहर निकाल दिया है। उनके दुःसाहसकी तो सीमा नहीं,—मगर उनकी यह बात क्या आत्मीके लिए श्रद्धाकी चीज है?"

हरेंद्रको ऐसे उत्तरकी आशा और चाहे किसीसे रही हो, इस स्त्रीसे नहीं थी। सहसा मानो उसे कोई बात ढूँढे न मिली, बोला, "यह और बात है।"

कमलने कहा, "कैसे जाना कि और बात है? बाहरसे मेरे पिताको भी लोग इसीमें एक समझा करते थे। मगर मैं जानती हूँ, यह सच नहीं था। लेकिन सच तो सिर्फ जाननेपर ही निर्भर नहीं है,—दुनियाके आगे उसका प्रमाण क्या है?"

हरेंद्र इस प्रश्नका भी उत्तर न दे सका और चुप रहा।

कमल कहने लगी, "मेरा इतिहास आप सबने सुना है, और खूब सम्भव है कि उस कहानीका परमानन्दके साथ उपभोग भी किया है। पर इस विषयमें आप मौन हैं कि मेरे काम सब अच्छे हुए या बुरे, लेकिन मेरा चरित्र है या कलंकित,—मगर हाँ, वे काम गुप्तरूपसे न होकर सब लोगोंकी आँखोंके सामने,—मेरे प्रति आपकी श्रद्धाके आकर्षणका का— मढ़वी उपेक्षा दृष्टि लिये हुए हैं,—

यही है। हरेंद्र बाबू, दुनियामें आदमीकी श्रद्धा मैंने इतनी ज्यादा नहीं पाई कि लापरवाहीसे बिना कहे सुने उसका अपमान कर सकूँ पर आप मेरे सम्बन्धमें जैसे और भी बहुत कुछ जानते हैं वैसे ही यह भी जान रखिए कि अक्षय बाबुओंकी अश्रद्धासे बढ़कर यह श्रद्धा ही मुझे पीड़ा पहुँचाती है। अश्रद्धा मुझसे सही जाती है, पर इस श्रद्धाका भार मेरे लिए दुःसह है।"

हरेंद्र पहलेकी तरह ही क्षण भर मौन रहा। कमलके वाक्यसे,—खासकर उसके कण्ठस्वरकी शान्त-कठोरतामें मन ही मन उसे अपने अपमानका बोध हुआ। थोड़ी देर बाद उसने कहा, "क्या इसपर आपको विश्वास नहीं होता कि विचार और व्यवहारमें अनैक्य होते हुए भी किसीपर श्रद्धा की जा सकती है, उससे कम से कम लगता है?"

कमलने बहुत ही सरलतासे उसी वक्त जवाब दिया, "ऐसा तो मैंने नहीं कहा हरेंद्र बाबू कि विश्वास नहीं होता। मैंने तो सिर्फ यही कहा है कि ऐसी श्रद्धा मुझे पीड़ा पहुँचाती है।" फिर जरा ठहरकर कहा, "आचार और विचारके लिहाजसे अक्षय बाबू और आपमें कोई विशेष भेद नहीं। उनमें बहुत जगह अनावश्यक और अत्यधिक कठोरता न होती तो आप सब एक-से ही होते। और अश्रद्धाके लिहाजसे भी आप सब एक-से हैं। मेरे लिए इस साहसने कि मैं लज्जा और सकोचके मारे छिपी छिपी नहीं फिरती, आप लोगोंका आदर प्राप्त किया है। मगर इसकी कितनी सी कीमत है हरेंद्र बाबू? बल्कि, यह सोचकर कि आप लोग इसीके लिए अक्सर मेरा वाहवाही करते आ रहे हैं मेरे मनमें एक अरुचि ही पैदा होती है।"

हरेंद्रने कहा, "इसके लिए वाहवाही अगर हो, तो क्या वह असगत है? साहस क्या दुनियामें कोई चीज नहीं?"

कमलने कहा, "आप लोग हर एक प्रश्नको इतना एकांगी करके क्यों पूछते हैं? यह तो मैंने नहीं कहा कि साहस कोई चीज ही नहीं, मैंने तो कहा था कि यह चीज ससारमें दुर्लभ है और दुर्लभ होनेसे ही यह आँखोंमें चकाचौंध पैदा कर देती है। पर इसमें भी बड़ी एक और चीज है, और वह चीज सहसा बाहरसे साहसके अभाव जैसी ही मालूम देती है।"

हरेंद्रने सिर हिलाते हुए कहा, "समझ नहीं सका। आपकी बहुत-सी बात बहुधा मुझे पहेली सी मालूम देती है, लेकिन आजकी बात तो उन्हें भी लाँघ

गई हैं। मालूम होता है, आज आप बहुत ही अन्यमनस्क हैं। इसका आपको कुछ ख्याल ही नहीं कि किसका जवाब किसे दिये चली जा रही हैं।"

कमलने कहा, "ठीक यही बात है।" फिर क्षण भर स्थिर रहकर बोली, "हो भी सकता है। सचमुचकी श्रद्धा पाना क्या चीज है, सो शायद अब तक मैं खुद ही नहीं जानती। उस दिन सहसा चारु सी गई। हरेन्द्र बाबू, आप दुखी न हों, परन्तु उसके साथ तुलना करनेसे और सब बात आज परिहास सी ही मालूम होती हैं।" कहते-कहते उसकी आँखोंकी प्रखर दृष्टि छायाच्छन्न सी हो आई, और सारे चेहरेपर ऐसी एक स्निग्ध सजलता प्रवाहित हो उठी कि हरेन्द्रको अनुभव हुआ कि कमलकी ऐसी मूर्ति उसने पहले कभी देखी ही न थी। अब उसे जरा भी संशय न रहा कि ये बातें कमल किसी अनुपस्थित व्यक्तिको लक्ष्य करके कह रही है। वह सिर्फ निमित्त मात्र है, और इसीलिए शुरुसे आखिरतक सब कुछ उसे पहेली-सा मालूम हो रहा है।

कमल कहने लगी, "अभी अभी आप मेरी दुःसह निर्भीकताकी प्रशंसा कर रहे थे,—अच्छी बात है, आपने सुना है कि शिवनाथ मुझे छोड़ने चले गये हैं?"

हरेन्द्रका मारे शरमके सिर झुक गया, बोला, "हाँ।"

कमलने कहा, "हम दोनोंमें मन ही मन एक शर्त थी कि सम्बन्ध विच्छेदका दिन अगर कभी आयेगा तो सहज ही दोनों अलग हो जाएँगे। नहीं नहीं,—किसी दस्तावेजपर लिखा पढ़ी करनेकी जरूरत न होगी,—यों ही।"

हरेन्द्रने कहा, "जरूर!"

कमलने कहा "सो तो आपके मित्र अक्षय बाबू हैं। शिवनाथ गुणी आदमी हैं, उनके विरुद्ध मुझे अपनी तरफसे कोई बड़ी शिकायत नहीं। और शिकायत करनेसे लाभ ही क्या है? हृदयकी अदालतमें इकतरफा फैसला ही होता है, उसका तो कोई अपील-कोर्ट है नहीं।"

हरेन्द्रने कहा, "इसके मानी यह हुए कि प्रेमके सिवा और किसी बन्धनको आप नहीं मानतीं?"

कमलने कहा, "पहली बात तो यह कि हमारे मामलेमें वह और बन्धन था या नहीं, और दूसरी, यदि होता भी तो उसे मंजूर करानेमें फायदा क्या था? रहता जो हिस्सा स्वर्गसे बदनाम हो जाता है उसके लिए बाहरका बन्धन भारी बोझ हो उठता है। उसके द्वारा काम कराना ही सबसे ज्यादा [illegible]

है !" कहकर क्षण भर वह चुप रही और फिर कहने लगी, "आप सोचते होंगे कि सचमुचका ब्याह नहीं हुआ, इसीसे ऐसी बात मुँहसे निकाल रही हूँ, हुआ होता तो न निकाल सकती। परन्तु यह बात नहीं है। हुआ होता तो भी निकाल सकती थी, पर हाँ, तब इतनी आसानीसे इस समस्याका हल न कर पाती। नाकाम हिस्सा भी शायद देहसे जुड़ा रह जाता, और अधिकांश स्त्रियाँ सम्भ्रम जैसा होता है, मुझे भी उसी तरह आमरण उस दुःखका बोझा लिये यह जिन्दगी बितानी पड़ती। मैं बच गई हरेंद्र बाबू, भाग्यसे छुटकारेका दरवाजा खुला था, सो मुक्ति पा गई।"

हरेंद्रने कहा, "आपको शायद मुक्ति मिल गई। लेकिन इस तरह सभी अगर मुक्तिका द्वार खुला रखना चाहें, तो संसारमें समाज व्यवस्थाकी बुनियाद तक उखड़ जायगी। ऐसा कौन नर है जो उस अवस्थाकी भयंकर मूर्तिको कल्पनामें भी अंकित कर सके। इस सम्भावनाको सोचा भी नहीं जा सकता।"

कमलने कहा, "सोचा जा सकता है, और एक दिन ऐसा आयेगा जब सोचा जायगा। इसका कारण यह है कि मनुष्यके इतिहासका शेष अध्याय अभीतक पूरा लिखा नहीं गया। एक दिनके किसी एक अनुष्ठानके जोरसे अगर उसका छुटकारेका रास्ता सारे जीवनके लिए रोक दिया जाय तो वह श्रेयकी व्यवस्था नहीं माना जा सकता। संसारमें सभी भूल चूकके सुधारकी व्यवस्था है, कोई उसे बुरा नहीं बताता, फिर भी, जहाँ भ्रान्तिकी सम्भावना सबसे ज्यादा है और उसके निराकरणकी आवश्यकता भी उतनी ही अधिक है, वहाँ लोगोंने अगर सारे उपायोंको अपनी इच्छासे बन्द कर रखा हो तो वह अच्छा कैसे मान लिया जाय, बताइए भला!"

इस भाँतिकी तरह तरहकी टुकड़ाओंके कारण हरेंद्रके मनमें गहरी सहानुभूति थी—विरुद्ध आलोचनामें वह जल्दी शामिल नहीं होता और जब विरोधी दल तरह-तरहकी गवाहियों और प्रमाणोंसे उसे हीन साबित करनेकी कोशिश करता, तब वह प्रतिवाद भी करता। विरोधी लोग कमलके प्रकट आचरण और वैसी ही निर्लज्ज उक्तियोंकी नजीरें दे देकर जब धिक्कारते, तब हरेंद्र तर्क युद्धमें परास्त होकर भी जी-जानसे यह समझानेकी कोशिश किया करता कि कमलके जीवनमें हरगिज यह सच नहीं हो सकता। कहीं न कहीं कोई एक निगूढ़ रहस्य है जो एक न एक दिन अवश्य ही व्यक्त होगा। इसपर वे व्यंग्यसे कहते, कृपाकर उसे व्यक्त

कर दीजिए तो प्रवासी बंगाली समाजमें हम लोग बदनामीसे बच जायँ। और यदि कभी आज यह मालूम होता तो क्रोधसे पागल होकर रहता, आप लोग सभी समान हैं। मेरे जैसा विश्वासका पात्र किसीमें था नहीं है, आप लोग उसे अपना भी नहीं सकते, छोड़ भी नहीं सकते। आजकलका कुछ उग्र विलायती विचारोंने भूतकी आप लोगोंको ग्रस्त कर रखा है।

अविनाश कहते, "ये विचार कमलके मुँहसे नये ही सुने हों, सो बात भी नहीं है अक्षय, मैंने तो ये पहलेसे ही सुन रक्खा है। आज कलकी दो चार अँगरेजीकी अनुवादित पुस्तकें पढ़ लेना ही इसके लिए काफी है। विचारोंकी इसमें कोई करामात नहीं।"

अक्षय कठोर होकर पूछता, "तो किसकी करामात है? कमलके रूपकी? अविनाश बाबू, हरेन्द्र अविवाहित लड़का है, उसे माफ किया जा सकता है, मगर आश्चर्य तो यह कि बुढ़ापेमें आकर आप लोगोंकी आँखें भी चौंधिया गईं।" इतना कहकर वह कनखियोंसे आशु बाबूकी तरफ देखता और कहता "मगर यह 'प्रेत-नार'* का उजाला है आशु बाबू, सड़े कीचड़से इसकी पैदाइश है। साफ दिखाई दे रहा है कि उस कीचड़में ही किसी दिन मनुष्यको खींच ले जाकर मारेगा वह, फिर अक्षयको वह भुलावा नहीं दे सकता,—वही असल नकल पहचानता है।"

आशु बाबू मुसकराकर रह जाते, पर अविनाश मारे शर्मके लाल सुर्ख हो जाते। हरेन्द्र कहता, "आप बड़े बहादुर हैं अक्षय बाबू, आपकी जयजयकार हो। हम सब फिसलकर उस कीचड़में डुबकियाँ लेने लगें तब आप किनारेपर खड़े खड़े बगलें बजाकर नाचिएगा, हममेंसे कोई भी आपकी निन्दा न करेगा।"

अक्षय जवाब देता, "निन्दाका काम मैं करता ही नहीं हरेन्द्र। गृहस्थ आदमी हूँ, मैं सहज-सीधी बुद्धिसे समाजको मानकर चलता हूँ। न तो मैं ब्याहकी कोई नई व्याख्या करना चाहता हूँ और न दुनिया भरके वाहियात शब्दोंको जमाकर ब्रह्मचारीगिरी ही दिखाता फिरता हूँ। आश्रममें चरणोंकी धूलका वजन और जरा कम होनेकी कोशिश करो भइया, फिर साधन भजनकी फिर चिन्ता न करनी होगी। देखते देखते साधकका सारा आश्रम छिन्नभिन्न

* Will-o'-the wisp या दलदलवाले स्थानोंमें रह रहकर दिखाई देनेवाला और बुझ जानेवाला प्रकाश जो एक नैसर्गिक चमत्कार है।

ऋषिका तपोवन हो उठेगा और शायद हमेशाके लिए तुम्हारी एक कीर्ति रह जायगी।"

अविनाश गुस्सा भूलकर जोरसे हँस पड़ते और निर्मल दबी मुसकानसे आशु बाबूका चेहरा चमक उठता। हरेन्द्रके आश्रमपर किसीकी भी आस्था नहीं थी, उसे सबने एक व्यक्तिगत ख्यामख्याली भर समझ रखा था।

जवाबमें हरेन्द्र मारे गुस्सेके लाल होकर कहता, "पशुके साथ तो युक्ति-तर्क चल नहीं सकता, उसके लिए दूसरी विधि है। मगर, उसकी व्यवस्था करते नहीं बनती, इसीलिए आप चाहे जिसे लात मारते फिरते हैं। छोटे-बड़े, नीच ऊँच, स्त्री पुरुष किसीका भी खयाल नहीं करते।" और यह कहते हुए अन्य दो चार जनोंको लक्ष्य करके कहता, "पर आप लोग इसे प्रश्रय क्या कर देते हैं? इतना बड़ा एक कुत्सित इंगित भी मानो कोई परिहासका विषय हो!"

अविनाश अप्रतिभ से होकर कहते, "नहीं नहीं, प्रश्रय क्यों देने लगे, पर तुम जानते ही हो, अक्षयको बोलते वक्त उपयुक्त काल और क्षेत्रका ज्ञान नहीं रहता।"

हरे■ कहता, "यह काण्ड ज्ञान सच पूछा जाय तो, उसकी अपेक्षा आप लोगोंको और भी कम है। मनुष्यके मनका चेहरा तो दिखाई देता नहीं भाई साहब, नहीं तो हँसी मजाक कम ही लोगोंके मुँहसे शोभा देता। विवाहके बहाने शिवनाथने कमलको ठग लिया, मगर मेरा दृढ़ विश्वास है कि उस धोखेको भी कमलने सत्यके समान ही मान लिया। गार्हस्थिक लेने देनेके नफे नुकसानका बखेड़ा करके उसने उसे लोगोंकी निगाहमें नीचे नहीं गिराना चाहा। पर उसके न चाहनेपर भी आप लोग क्या छोड़ने लगे? शिवनाथ उसके प्रेमकी निधि हो सकता है, पर आप लोगोंका कौन है? क्षमाका अपव्यय आप लोग न सह सके। यही है न आप लोगोंकी घृणाका मूल कारण,—असल पूँजी? सो उसीको भँजा भँजाकर आप लोगोंसे जितना चलाया जाय, चलाइए, पर मैं विदा लेता हूँ।" इतना कहकर हरेन्द्र उस दिन गुस्सा होकर चला गया।

उसके मनमें इस बातका दृढ़ विश्वास था कि किसी दिन कमलके मुँहसे यह बात व्यक्त होगी कि शैव विवाहको वास्तविक विवाह मानकर ही वह धोखेसे छली गई थी। अपनी इच्छासे, सब कुछ जानते हुए एक गणिकाकी तरह उसने शिवनाथका आश्रय नहीं लिया था। परन्तु आज उसके विश्वासकी यह भीत



सी मिट्टीमें मिल गई। हरेन्द्र कोई अक्षय या अविराम नहीं था। फिर किसी भेदभावके नर नारी सबके प्रति उनकी तबीयतमें एक तरहकी स्निग्ध और गहरी सरलता थी। इसीलिए देश और देशके कल्याणके लिए सब तरहके दुःखनाम उसने बचपनसे अपनेको लगा रखा था। उसका ब्रह्मचर्य आश्रम, उसका उदार दान, सबके साथ अपना सब कुछ बाँट लेना,—इन सबकी जड़में उसकी वही उदार भावना काम कर रही है और उसकी इस प्रवृत्तिने ही उसे शुरूसे कमलके प्रति श्रद्धान्वित कर रखा था। परन्तु इसकी उसने कल्पना भी नहीं की थी कि आज वह उसीके मुँहपर उसके सबसे उत्तम ऐसा भयानक आघात दे उठेगी। भारतीय धर्म, नीति, आचार,—उसके स्वातन्त्र्य और विशिष्ट सभ्यताके प्रति हरेन्द्रके मनमें अत्यन्त स्नेह और अपरिमेय भक्ति थी, फिर भी, लम्बी पराधीनता और वैयक्तिक कमजोरियोंके कारण उत्पन्न होनेवाले उसके व्यतिक्रमोंको भी वह अस्वीकार नहीं करता था। परन्तु कमलके द्वारा ऐसी उग्र अवज्ञाके साथ उसके मूलभूत सिद्धान्तोंतकके अस्वीकार किये जानेके कारण उसकी वेदनाकी सीमा नहीं रही। और इस बातकी याद आते ही कि कमलके पिता यूरोपीय थे और माता कुलटा थी,—उसकी नसोंमें व्यभिचारका खून डोल रहा है, मारे घृणाके वह मन ही मन स्याह पड़ गया। दो तीन मिनट चुप रहकर धीरेसे बोला, "तो अब जाता हूँ—"

कमल हरेन्द्रके मनके भावको ठीकसे ताड़ न सकी, सिर्फ एक परिवर्तनसा उसको लगा। धीरेसे उसने पूछा, "मगर जिस कामके लिए आये थे उसका तो कुछ किया ही नहीं?"

हरेन्द्रने सिर उठाकर पूछा, "क्या काम?"

कमलने कहा, "राजेन्द्रकी खबर जानने आये थे, पर बगैर जाने ही चले जा रहे हैं। अच्छा, यहाँ उसके रहनेके कारण क्या आप लोगोंमें बहुत बुरी आलोचना हुआ करती है? सच बताइएगा?"

हरेन्द्रने कहा, "यदि कभी होती भी है तो उसमें ज्यादा नहीं होता। मेरे लिए यही काफी है कि वह पुलिसके हाथमें न पड़े। उसे मैं पहचानता हूँ।"

"लेकिन मुझे?"

"लेकिन आप तो ऐसी बातोंका खयाल करती नहीं, और न आपके ऐसा विश्वास ही है।"

कहकर वह बाहर जा ही रहा था कि कमलने उसे पास बुलाकर कहा, "तांगेमें हम दोनोंके साथ जानेसे शायद आश्रमके हितैषी लोग नाराज होंगे। चलिए, पैदल ही चले चलें।"

हरेन्द्रने पीछेको मुड़कर कहा, "इसके मानी?"

"मानी कुछ नहीं,—प्रेम ही। चलिए, चलें।"

१९

लगभग तीसरे पहर हरेन्द्र और कमल दोनों आशु बाबूके घर पहुँचे। खाटपर अधलेटी अवस्थामें पड़े हुए अस्वस्थ घर मालिक उस दिनका 'पायोनियर' पढ़ रहे थे। कई दिनसे उनका बुखार नहीं है, अन्यान्य शिकायतें भी दूर होती जाती हैं, सिर्फ शारीरिक कमजोरी अभीतक नहीं गई। इन दोनोंके अन्दर पहुँचते ही वे अखबार फेंककर, उठकर बैठ गये और कितने खुश हुए सो उनके चेहरेसे साफ मालूम हो गया। उनके मनमें डर था कि कमल शायद अब न आयेगी। इसीसे हाथ बढ़ाकर उसे ग्रहण करते हुए बोले, "आओ, मेरे पास आकर बैठो।" और हाथ पकड़कर उसे अपनी खाटके पास पड़ी कुरसीपर बिठाते हुए कहा, "कैसी हो, बताओ तो कमल?"

कमलने हँसते चेहरेसे जवाब दिया, "अच्छी ही हूँ।"

आशु बाबूने कहा, "सो तो भगवानकी आशीर्वाद है। यहाँ तो जैसे कुदिन आये हैं, उसमें यह सोचा भी नहीं जा सकता कि कोई अच्छी तरह होगा। इतने दिन थीं कहाँ, बताओ तो? हरेन्द्रसे रोज ही पूछता हूँ और रोज ही वह जवाब देता है—घरमें ताला पड़ा है, उनका कोई पता नहीं। नीलिमाको शक हो रहा था कि तुम कुछ दिनके लिए कहीं बाहर चली गई हो।"

हरेन्द्रने उसका जवाब दिया, कहा, "और कहीं नहीं, इसी आगरेमें मोचियोंके मुहल्लेमें सेवा कायम लगी हुई थी। आज भेंट हो गई सो पकड़ लाया।"

आशु बाबू भय व्याकुल कण्ठसे बोले, "मोचियोंके मुहल्लेमें? पर अखबारमें खबर है कि वह मुहल्ला बिल्कुल उजाड़ हो गया है। इतने दिन वहाँ थीं? अकेली?"

कमलने सिर हिलाते हुए कहा, "नहीं, अकेली नहीं थी, साथमें राजेन्द्र भी थे।"

सुनते ही हरेन्द्रने उसके मुँहकी तरफ देखा, पर कुछ कहा नहीं। इसका कारण यह था कि तुम्हारे बगैर कहे ही मैंने अन्दाज लगा लिया था। इस बातको मैं नहीं जानूँगा तो और कौन जानेगा कि जहाँ ऐसा इतना जबरदस्त निग्रह शुरू हो गया है, वहाँसे उन अभागोंको छोड़कर वह एक कदम भी इधर उधर नहीं जा सकता।

आशु बाबूने कहा, 'अद्भुत आदमी है यह लड़का। उसे मैंने दो-तीनसे ज्यादा दफे नहीं देखा, उसके बारेमें कुछ जानता भी नहीं, फिर भी ऐसा लगता है कि वह किसी अजीब धातुका बना हुआ है। उसे ले क्यों नहीं आईं, सच पूछना। अखबारोंसे तो सब बात मालूम पड़ती नहीं।"

कमलने कहा, "नहीं। लेकिन उनके आनेमें अब भी देर है।"

"क्यों?"

"मुहल्ला अभीतक पूराका पूरा खतम नहीं हुआ है। उनका प्रण है कि जो लोग अभी बचे हुए हैं उन सबको रवाना किये बगैर वे वहाँसे छुट्टी न लेंगे।"

आशु बाबूने उसके मुँहकी तरफ देखते हुए पूछा, "तो फिर तुम्हें कैसे छुट्टी मिल गई? क्या तुम्हें वहाँ फिर जाना पड़ेगा? मैं मना तो नहीं कर सकता, पर यह तो बड़ी चिन्ताकी बात है कमल!"

कमलने सिर हिलाते हुए कहा, "चिन्ताकी कोई बात नहीं आशु बाबू, चिन्ता कहाँ नहीं है, बताइए। पर मेरी घड़ीमें जितनी चाबी भरी थी वह खतम हो चुकी, और तब मैं आई हूँ। फिरसे वहाँ जानेका सामर्थ्य मुझमें नहीं है। अब अकेले राजेन्द्र वहाँ रह गये हैं। किसी किसीके शरीर-यन्त्रमें प्रकृति ऐसी अनिबद्ध चाबी भरकर दुनियामें भेज देती है कि न तो वह कभी खतम ही होती है और न वह यन्त्र ही कभी बिगड़ता है। राजेन्द्र उन्हींमेंसे एक हैं। शुरू शुरूमें ऐसा लगा कि इस भयानक मुहल्लेमें वे जीते रहेंगे कैसे? और कितने दिन जीते रहेंगे? वहाँसे जब अकेली चली आई, तो किसी भी तरह मेरी चिन्ता न मिटी, पर अब मुझे कोई डर नहीं है। अब आकर मैं निश्चित समझ गई हूँ कि प्रकृति ही खुद अपनी गरजसे ऐसोंको निर्माण करती है। नहीं तो गरीब दुनियाके झोपड़ोंमें जब बाढ़की तरह मौत आ घुसती है तब उसकी ध्वंस-लीलाका गवाह कौन रहेगा? आज ही हरेन बाबूसे सब किस्सा कह रही थी। शिवनाथ बाबूके घरसे आखिरी बार जब लज्जासे सिर झुकाये चली आई—"

आशु बाबू यह वृत्तान्त सुन चुके थे, बोले, "इसमें तुम्हारे लिए लज्जाकी क्या बात है कमल? सुना है, उनकी सेवा करनेके लिए ही तुम बिना कहे अपने आप उनके घर पहुँच गई थीं,—"

कमलने कहा, "लज्जा उस बातकी नहीं आशु बाबू! लज्जा तो मुझे तब हुई जब मैंने देखा कि उन्हें कोई बीमारी ही नहीं है,—मेरे भाग्य से,—किसी बहानेसे आप लोगोंकी कृपा पाना ही उनका उद्देश्य था जो सफल न हो पाया। आखिर आपने अपने घरसे उन्हें निकाल ही दिया।—तब मेरा क्या हाल हुआ सो मैं आपको समझा नहीं सकती। राजेन्द्र साथ था उसे भी यह बात जता नहीं सकी,—फिर किसी तरह रातके अन्धकारमें उस दिन चुपचाप वहाँसे निकल आई। रास्तेमें बार बार फिर एक ही बातका खयाल आता रहा कि इस अति क्षुद्र कंगाल आदमीको जुल्ममें आकर सजा देना न तो धर्म है और न इसमें सम्मान है।"

आशु बाबूने विस्मयापन्न होकर कहा, "कह क्या रही हो कमल! शिव नाथकी बीमारी क्या सिर्फ एक बहाना था? सच नहीं थी?"

परन्तु जवाब देनेके पहले ही दरवाजेके पास पैरोंकी आहट सुनकर सबने उधर देखा कि नीलिमा आ रही है। उसके हाथमें दूधका कटोरा है। कमलने हाथ उठाकर नमस्कार किया। उसने हाथका कटोरा पलंगके सिरहाने तिपाईपर रखकर प्रतिनमस्कार किया, और यह समझकर कि इन लोगोंकी बातचीतमें उसने बाधा पहुँचाई है, खुद कुछ न बोलकर एक तरफ बैठ गई।

आशु बाबूने कहा, "लेकिन यह तो कमजोरी है कमल! यह चीज तो तुम्हारे स्वभावके साथ मेल नहीं खाती। मैं बराबर सोचता था कि जो कार्य अनुचित है, जो मिथ्याचार है, उसे तुम माफ नहीं करतीं।"

हरेन्द्रने कहा, "इनके स्वभावका तो मुझे पता नहीं, मगर मोची मुहल्लेको मात देखकर इनकी धारणा बदल गई है, और यह खबर इन्हींसे मिली है। पहले इनके मनमें चाहे जो बात रही हो, पर अब किसीके भी खिलाफ शिकायत करनेमें ये नाराज हैं।"

आशु बाबूने कहा, "मगर उसने जो तुम्हारे प्रति इतना बड़ा अत्याचार किया, उसका क्या होगा?"

कमलने मुँह उठाते ही देखा कि नीलिमा उसकी तरफ एकटक देख रही है।

जवाब सुननेके लिए वही मानो सबसे ज्यादा उत्सुक है। नहीं तो, शायद वह चुप रहती, हरेन्द्रने जितना कहा है उससे ज्यादा एक शब्द भी नहीं कहती। उसने कहा, "यह प्रश्न मेरे लिए अब असंगत मालूम होता है। सिर्फ इसके लिए कि जो नहीं है, वह क्यों नहीं, आँसू बहानेमें मुझे शरम आती है, इस बातपर झगड़ा करनेमें कि जितना वे कर सके उससे ज्यादा उन्होंने क्यों नहीं किया, मेरा सिर झुक जाता है। आप लोगोंसे सिर्फ इतनी प्रार्थना है कि मेरे दुर्भाग्यको लेकर उनसे खींचातानी न करें।" इतना कह उसने मानो सहसा थककर कुरसीकी पीठसे सिर टेक दिया और आँखें मींच लीं।

घरकी नीरवता भंग की नीलिमाने। उसने आँखोंके इशारेसे दूधका कटोरा दिखाते हुए आशुबाबूसे कहा, "यह जो बिल्कुल ही ठंडा हुआ जा रहा है। इसलिए, पी सकेंगे या नहीं, नहीं तो फिरसे गरम कर लानेके लिए कह दूँ।"

आशु बाबूने कटोरा मुँहसे लगाकर जरा-सा पिया और फिर रख दिया। नीलिमाने मुँह उठाकर देखा और कहा, "टाल रखनेसे काम नहीं चलेगा, डॉक्टरकी व्यवस्था मैं तोड़ने नहीं दूँगी।"

आशु बाबू थके हुए-से होकर मोटे तकियेके सहारे पड़ रहे, बोले, "यह बात तुम्हें भूलनी नहीं चाहिए कि डाक्टरसे भी बड़ा व्यवस्थापक है हमारा अपना शरीर।"

"मैं नहीं भूलती, भूल जाते हैं आप खुद।"

"सो तो मेरी उमरका दोष है नीलिमा, मेरा नहीं।

नीलिमाने हँसते हुए कहा, "सो तो है ही। दोष लादने लायक उमर पानेमें अब भी आपको बहुत देर है।—अच्छा, कमलको लेकर हम जरा उस कमरेमें जा रही हैं, गप-शप करेंगी, आप आँखें मींचकर जरा आराम कीजिए। क्यों? जायँ?"

आशु बाबूकी शायद ऐसी इच्छा नहीं थी, फिर भी उन्हें सम्मति देनी पड़ी, बोले, "मगर एकदम तुम लोग चली मत जाना, बुलानेसे सुन लेना।"

"अच्छी बात है। चलो जी छोटे बाबू, हम लोग बगलवाले कमरेमें चलकर बैठें।" यह कह वह सबको साथ लेकर चली गई। नीलिमाकी बात स्वभावतः ही मधुर होती है और कहनेके ढंगमें भी ऐसा एक विशिष्टता होता है जो सहज ही दिखाई दे जाती है परन्तु आजके ये थोड़े-से शब्द मानो उससे भी

यन्कर आगे निकल गये। हरेन्द्रने उधर ध्यान नहीं दिया, पर कमलने गौर किया। पुरुषकी दृष्टिमें जो नहीं आया, वह पकड़ाई दे गया स्त्रीकी दृष्टिमें। नालिमा तीमारदारी करने आई है, और यह भी ठीक है कि साधारण लोगोंकी दृष्टिमें इस बीमार आदमीकी तन्दुरुस्तीकी तरफ खास सावधानी रखनेमें कोई आश्चर्यकी बात नहीं, मगर उन साधारण जनोंमें कमलकी शुमार नहीं किया जा सकता। नालिमाकी इस अत्यन्त सावधानीकी अपूर्व स्निग्धतासे मानो उसे एक अचिन्त्य विस्मयका सामना करना पड़ा। विस्मय सिर्फ एक तरफसे नहीं, बहुत तरफसे हुआ। ऐसे सन्देहको कि सम्भवतः साइने इस विधवाको मुग्ध कर लिया है, कमल अपनी कल्पनामें भी स्थान न दे सकी, क्योंकि नीलिमाका इतना परिचय तो वह पा ही चुकी थी। आशु बाबूके यौवन और रूपका प्रश्न तो इस मामलेमें सिर्फ असंगत ही नहीं बल्कि हास्यकर है। तब फिर इसका पता कहाँ मिलेगा, मन ही मन कमल उसकी खोज करने लगी। इसके अलावा एक पहलू और भी है। वह है आशु बाबूका अपना पहलू। लोगोंका दृढ़ विश्वास था कि इस सरल और स्नेहशील भले आदमीके हृदयकी नीचेकी गहराईमें पत्नी प्रेमका आदर्श ऐसी अचंचल निष्ठाके साथ नित्य पूजित होता आ रहा है कि किसी दिन कोई भी प्रलोभन उसपर दाग नहीं लगा सकता। जिस दिन मनोरमाकी माँकी मृत्यु हुई थी,—उस समय आशु बाबूकी उमर ज्यादा न थी, तबतक यौवन बीता नहीं था,—उसी दिनसे उस लोकान्तरित पत्नीकी स्मृतिको उखाड़कर नवीनकी प्रतिष्ठा करनेके लिए घरवालों और इष्ट मित्रोंने प्रयत्न करनेमें कुछ उठा नहीं रक्खा था, मगर फिर भी उस दुर्भेद्य दुर्गका द्वार तोड़नेका कौशल किसीको भी ढूँढ़े नहीं मिला। ये सब बातें कमलने बहुतोंके मुँहसे सुनी थीं। और, दूसरे कमरेमें आकर वह अन्यमनस्क-सी चुपचाप बैठी सिर्फ यही सोचने लगी कि नीलिमाके इस मनोभावका लेशमात्र भी इस आदमीके ध्यानमें आया है या नहीं? अगर आया हो, तो दाम्पत्यके जिस सुकठोर व्रतको वे अत्याज्य धर्मकी तरह एकाग्र सावधानीके साथ आजीवन रक्षा करते आये हैं, आसक्तिकी इस नव-जाग्रत चेतनासे वह लेशमात्र विक्षुब्ध हुआ है या नहीं?

नौकर चाय रोटी और फल वगैरह दे गया। अतिथियोंके सामने उन सबको रखती हुई नीलिमा तरह तरहकी बातें करने लगी। आशु बाबूकी बीमारी, उनकी तन्दुरुस्ती, उनकी सहज सज्जनता और बच्चों जैसी सरलताके छोटे मोटे विवरण,

और इसी तरहकी और भी बहुत सी बात जो इधर कई दिनोंसे उसकी निगाहमें गुजरी हैं। आचारके तौरपर हरेन्द्र विचारके लिए लाभकी चीज था, उसके सामने-प्रश्नोंके उत्तरमें नीलिमाकी वाक्शक्ति उच्छ्वसित आवेगसे शतमुखी होकर फूट निकली। उसके कहनेकी इस दक्षतासे हरेन्द्र ऐसा मुग्ध हुआ कि उसे फिर ध्यान ही नहीं रहा कि जिस भाभीको उसने अविनाशके घर देखा है वह यही है या नहीं। वह परिणत यौवनका स्निग्ध गाम्भीर्य, वह कौतुकपूर्ण उज्ज्वल परिमित परिहास, वैधव्यका वह सीमित संयम बातचीत, वह सुपरिचित स्वभाव,—यह सबका सब इन्हीं कई दिनोंमें छोटे-मोटेकर जो अकल्पित वाचालतासे बालिकाकी तरह प्रगल्भ हो उठा है, सो क्या उसकी वही भाभी है?

बात करते-करते नीलिमाकी कमलपर नजर पड़ी, देखा कि चायके प्यालेमें मुँह लगानेके सिवा उसने और कुछ खाया नहीं है। क्षुण्ण स्वरमें उसको उलाहना देते ही कमलने हँसते हुए जवाब दिया, "इतनेमें ही मुझे भूल गई क्या?"

"भूल गई? इसके मानी?"

"इसके मानी यही कि मेरे खाने-पीनेकी बात आपको याद नहीं रही है। मैं तो बहुत कुछ खाती पीती नहीं।"

"और हमारे अनुरोध करनेपर भी उसमें फर्क नहीं पड़ता।" हरेन्द्रने और पीछेसे जोड़ दिया।

उत्तरमें कमलने वैसे ही हँसते हुए कहा, "यह दम्भ तो मैं नहीं करती हरेन्द्र बाबू, कि इस हठमें कोई परिवर्तन नहीं हो सकता, पर हाँ, यह मानती हूँ कि साधारणतः इस नियमका मुझे अभ्यास हो गया है।"

रास्तेमें निकलकर कमलने हरेन्द्रसे पूछा, "अब आप जा कहाँ रहे हैं, बताइए न?"

हरेन्द्रने कहा, "डरिए मत, आपके घर नहीं जाऊँगा, पर जहाँसे आपको लाया हूँ वहाँ न पहुँचा दूँ तो अनुचित होगा।"

तब काफी रात हो चुकी थी, रास्तेमें लोगोंका आना जाना नहीं के बराबर था। चलते-चलते अकस्मात् अत्यन्त घनिष्ठकी तरह कमलने हरेन्द्रका एक हाथ अपने हाथमें लेते हुए कहा, "चलिए मेरे साथ। उचित अनुचितका विचार आपका कितना सूक्ष्म हो गया है, परीक्षा दीजिएगा।"

हरेन्द्र मारे संकोचके व्यस्त हो उठा। स्पष्ट देखने लगा कि यह

नहीं हुआ। इस तरह रास्तेमें चलना आरम्भ करनेसे नहीं, और अगर कोई परिचित कहींसे सामने आ पड़े तो लज्जासे सिर झुकाना न पड़ता। परन्तु बगैर के दाम चुका देनेसे न जाने किस तरह उसका भी यह आराम समाप्त हो गया। मामला बहुत जल्द हुआ और उसे मकानका आश्रम मानकर ही वह उसके फाटक दरवाजेपर जा पहुँचा। जब उसने विदा माँगी तो कमलने कहा, "इतनी जल्दी चाहते हैं? आश्रममें अजित बाबूके सिवा तो और कोई है नहीं?"

हरेन्द्रने कहा, "नहीं। आज वे भी नहीं हैं, सबके सब मशीन देखने गये हैं, शायद कल लौट आयेंगे।"

कमलने पूछा, "रातको खाओगे क्या? आश्रममें रसोइया रसोई तो बनाता है न?"

हरेन्द्रने कहा, "नहीं, हम लोग अपने हाथसे बनाते हैं।"

"अर्थात् आप और अजित बाबू?"

"हाँ। पर आप हँसती क्यों हैं? सिवाय खराब नहीं बनाते हम लोग।"

"अजित बाबू नहीं हैं, इसलिए घर जाकर आपको खुद ही बनाकर खाना होगा। मेरे हाथकी खानेमें अगर आपको घृणा न हो तो मेरी बड़ी इच्छा है कि आपको निमन्त्रण करूँ। खायेंगे मेरे हाथकी?"

हरेन्द्रने अत्यन्त क्षुब्ध होकर कहा, "यह तो बड़ी बेजा बात है। आप क्या सचमुच ही समझती हैं कि मैं घृणासे नामंजूर कर सकता हूँ?" और वह क्षण भर चुप रहकर बोला, "आपको यह जाननेमें भी कोई कसर नहीं रह छोड़ी है कि जो लोग आपको वास्तवमें श्रद्धाकी दृष्टिसे देखते हैं, मैं उन्हींमेंसे एक हूँ। मेरी तरफसे आपत्ति सिर्फ इतनी ही है कि बेवक्त मैं आपको तकलीफ नहीं देना चाहता।"

कमलने कहा, "सो आप खुद ही देख लीजियेगा, मुझे कोई खास तकलीफ नहीं होगी। आइए।"

रसोई बनाते हुए कमलने कहा, "मेरी तैयारियाँ बहुत मामूली हैं, लेकिन आश्रममें आप लोगोंका जो कुछ देख आई हूँ उसे भी प्रचुर नहीं कहा जा सकता। लिहाजा, मुझे भरोसा है कि यहाँ अगर खाने-पीनेकी कोई तकलीफ भी हो, तो आश्रमकी तरह वह आपको असह्य न होगी।"

हरेन्द्रने खुश होकर जवाब दिया, "हमारे यहाँ खाने पीनेकी व्यवस्था

यही है जो आप देख आई हैं। सचमुच ही हम लोग बहुत कष्टके साथ रहते हैं।"

"मगर रहते क्यों हैं? अजित बाबू बड़े आदमी हैं, आपकी अपनी अवस्था भी ऐसी बुरी नहीं,—फिर कष्ट पानेकी तो कोई वजह नहीं।"

हरेन्द्रने कहा, "वजह न हो, जरूरत तो है ही। मेरा विश्वास है कि इस जरूरतको आप भी समझती हैं और इसीलिए आपने अपने साथ भी यही व्यवस्था कर रखी है। लेकिन, अगर कोई बाहरवाला आश्चर्यके साथ आपसे इसका कारण पूछ बैठे तो उसे क्या आप इसका कारण बता सकती हैं?"

कमलने कहा, "बाहरवालोंको भले ही न बता सकूँ, पर भीतरवालेको तो बता ही सकती हूँ। बात यह है कि मैं सचमुच ही बहुत गरीब हूँ, अपने भरण-पोषणके लिए कमानेकी जितनी मुझमें शक्ति है उसमें इससे ज्यादा नहीं किया जा सकता। पिताजी मुझे कुछ भी नहीं दे जा सके, पर वे मुझे दूसरोंके अनुग्रहसे बचनेका यह बीज मन्त्र दे गये हैं।"

हरेन्द्र उसके मुँहकी तरफ चुपचाप देखता रहा। इस विदेशमें कमल कैसी निरुपाय है, यह जानता है। सिर्फ रुपये पैसेके लिए ही नहीं, समाज, सम्मान, सहानुभूति,—किसी तरफ भी ताकनेके लिए उसके पास कुछ नहीं है। मगर, इस सत्यको भी वह याद किये बगैर न रह सका कि इतनी जबरदस्त निःसहायता भी इस रमणीको लेशमात्र दुर्बल नहीं कर सकी है। आज भी वह किसीसे भीख नहीं माँगती, बल्कि भीख देती है। जो शिवनाथ उसकी इतनी बड़ी दुर्गतिका मूल कारण है, उसे भी दान करने लायक पूँजी अबतक उसकी खतम नहीं हुई। और हरेन्द्रने शायद साहस और सान्त्वना देनेके अभिप्रायसे ही उससे कहा, "आपके साथ मैं तर्क नहीं करना चाहता कमल, मगर इसके सिवा मैं और कुछ सोच भी नहीं सकता कि हमारी तरह आपकी गरीबी भी वास्तविक नहीं है, एक बार भी आप चाहें तो आपका यह दुःख मरीचिकाकी तरह मिट जा सकता है। पर ऐसी इच्छा आपमें नहीं है, कारण, आप भी जानती हैं कि स्वेच्छासे ग्रहण किये हुए दुःखको ऐश्वर्यके समान भोगा जा सकता है।"

कमलने कहा, "हाँ, भोगा जा सकता है। मगर क्यों, आप जानते हैं? क्योंकि वह अनावश्यक दुःख है,—क्योंकि वह दुःख सिर्फ एक अभिनय

है। सभी अभिनयोंमें थोड़ा-बहुत कौतुक रहता है, इसलिए उसका उपभोग करनेमें कोई बाधा भी नहीं।" इतना कहकर वह खुद कौतुकसे हँस पड़ी।

उसका हँसना सहसा न जाने कैसा बेसुरा-सा मालूम पड़ा। इस व्यंग्यको सुनकर हरेन्द्र क्षण भर चुप रहा, फिर बोला, "मगर यह तो आप मानती हैं कि बहुतायतके भीतर जीवन तुच्छ होने लगता है, दुःख दैन्यमेंसे गुजरकर मनुष्यका चरित्र महान् और सत्य हो जाता है।"

कमलने 'स्टोव' परसे कड़ाही उतारकर नीचे रख दी और एक दूसरा बरतन चढ़ाकर कहा, "सत्य बननेके लिए उधर भी तो थोड़ा बहुत सत्य रहना चाहिए हरेन्द्र बाबू! आप लोग बड़े आदमी हैं, वास्तवमें आपको कोई कमी नहीं, फिर भी छद्म अभावकी तैयारीमें व्यस्त हैं। और फिर उसमें अजित बाबू भी जा मिले हैं। आपके आश्रमकी फिलासफी मेरी तो कुछ समझमें आती नहीं, पर इतना समझती हूँ कि गरीबीके कष्ट भोगनेकी विडम्बनासे कभी महत्त्वको नहीं पाया जा जा सकता हाँ, पाया जा सकता है तो थोड़े-से दम्भ और अहम्मन्यताको। संस्कारोंसे अन्धे न होकर जरा आँख खोलके आप देखें तो यह चीज स्पष्ट दिखाई दे जायगी। इसके इत्मीनानके लिए भारत भ्रमणकी जरूरत न होगी।—पर बहस अभी छोड़िए, रसोई बन चुकी, आप खाने बैठिए।"

हरेन्द्रने हताश होकर कहा, "मुश्किल तो यह है कि भारतवर्षकी फिलासफी समझना आपके बूतेसे बाहरकी बात है। आपकी शिराओंमें म्लेच्छ रक्त बह रहा है।—हिन्दुओंका आदर्श आपकी दृष्टिमें तमाशा ही मालूम देगा।—दीजिए, क्या बनाया है, खानेको दीजिए।"

"देती हूँ।" कहकर कमलने आसन बिछा दिया। जरा भी नाराज नहीं हुई।

हरेन्द्र उसकी तरफ देखकर सहसा बोल उठा, "अच्छा, मान लीजिए कि कोई अगर वास्तवमें अपना सब कुछ दान कर सचमुचके अभाव और दैन्यमें अपनेको घसीट लाये,—तब तो अभिनय कहकर उसका मजाक नहीं किया जा सकेगा? तब तो—"

कमलने बीचमें ही रोकते हुए कहा, "तब फिर मजाक नहीं,—तब तो सचमुचका पागल मानकर उसके लिए सिर धुन धुनकर रोनेका समय आ जायगा। हरेन्द्र बाबू, कुछ दिन पहले मैं भी कुछ-कुछ आप ही जैसा विचार

किया करता थी, उपवासके नशेकी तरह मुझे भी उसने मोहित कर रखा था, पर अब वह नशा मेरा जाता रहा है। गरीबी या अभाव इच्छासे आवे या इच्छाके विरुद्ध आवे, उसमें गर्व करने लायक कुछ नहीं होता। उसके भीतर है शून्यता, उसके भीतर है कमजोरी और उसके भीतर है पाप। अभाव मनुष्यको कितना हीन और कितना छोटा बना देता है, सो मैंने अपनी आँखोंसे देखा है, इस महामाराम मोचियोंके मुहल्लेमें जाकर। और भी एक आदमीने यह देखा है, वे हैं आपके मित्र राजेन्द्र। पर उनसे तो कुछ मिलनेका नहीं,—आसामके गहरे जंगलकी तरह क्या क्या यहाँ छिपा हुआ है, कोई नहीं जानता। मैं अक्सर सोचा करती हूँ कि आप लोगोंने उन्हें विदा कर दिया! कहावत है न, मणि फेंककर काँचके टुकड़ेको गिरहमें बाँध लेना,—आप लोगोंने ठीक वही किया है। अपने भीतर कहीं भी निषेध नहीं पाता? आश्चर्य!"

हरेन्द्रने उत्तर नहीं दिया, चुप रहा।

आयोजन मामूली था, पर कमलने कैसे जतनसे अतिथिको खिलाया सो कहा नहीं जा सकता। खाने बैठा तो हरेन्द्रको बार-बार नीलिमा भाभीकी याद आने लगी। नारीत्वके ज्ञान माधुर्य और शुचिताके आदर्शकी दृष्टिसे वह नीलिमासे बढ़कर, और किसीको भी न मानता था। मन ही मन बोला—"शिक्षा, संस्कार, रुचि और प्रवृत्तिको देखते इन दोनोंमें चाहे कितना ही भेद क्यों न हो, पर सेवा और ममतामें दोनों बिल्कुल एक-सी हैं। असलमें ये बाहरकी चीज हैं, इसलिए विरोधका अन्त नहीं और तब भी खतम नहीं होता, परन्तु नारीका जो बिल्कुल अपनी चीज है, जो सब तरहके मतामतके घेरेके बाहरकी वस्तु है, नारीके उस गूढ़ अन्त करणका रूप देखनेसे आँखें एकदम जुड़ा जाती हैं। नाना कारणोंसे आज हरेन्द्रको भूख न थी, सिर्फ एकको प्रसन्न करनेके लिए ही उसने भूखसे बाहर खा लिया। कोई एक तरकारी 'बहुत अच्छी लगी है' कहकर उसने उसके बरतनको बिल्कुल साफ कर दिया। बोला, "बहुत बार असमयमें जा जाकर भाभीको मैंने ठीक इसी तरह नाकों दम कर दिया है, कमल!"

"किसको? नीलिमाको?"

"हाँ।"

"उनके नाकमें दम आता था?"

"जरूर, पर मानती न थीं।"

कमलने हँसकर कहा, "सिर्फ आपकी ही नहीं, सभी पुरुषोंकी ऐसी मोटी अक्ल हुआ करती है।"

हरेन्द्रने बहसके ढंगपर कहा, "मैंने अपनी आँखोंसे देखा है।"

कमलने कहा, "सो मैं जानती हूँ। और इस आँखों देखनेके घमण्डमें ही आप लोग मरे जा रहे हैं।"

हरेन्द्रने कहा, "घमण्ड आप लोगोंको भी कम नहीं। तब भाभी खाये बिना रह जाती, उपासी रात बिता देतीं, फिर भी हार नहीं मानतीं।"

कमल चुपचाप उसके मुँहकी तरफ देखती रही। हरेन्द्र कहता रहा, "आप लोगोंके आशीर्वादसे मोटी अक्ल ही हम लोगोंके सदा बनी रहे,—इसमें ज्यादा फायदा है। आप लोगोंकी सूक्ष्म बुद्धिकी डाहसे उपासे मरना हमें मंजूर नहीं।"

कमलने इस बातका भी कुछ जवाब नहीं दिया। हरेन्द्र बोला, "अबसे मैं आपकी सूक्ष्म बुद्धिकी भी बीच बीचमें परीक्षा लिया करूँगा।"

कमलने कहा, "सो आप नहीं ले सकेंगे, गरीब होनेसे आपको मुझपर दया आ जायगी।"

सुनकर हरेन्द्र पहले तो लज्जित-सा हुआ, फिर बोला, "देखिए, इस बातका जवाब देनेमें जबान रुकती है। क्या, जानती हैं? जिसे राज-रानी होना शोभता, उसे यह कंगालपना अच्छा नहीं मालूम देता। मालूम होता है, आपकी गरीबी दुनियाकी तमाम अमीर स्त्रियोंका मजाक उड़ा रही है।"

बात तीरकी तरह कमलके कलेजेमें जा लगी। हरेन्द्र कुछ और कहना चाहता था कि कमलने उसे रोकते हुए कहा, "आप जीम चुके हों तो उठिए। उस कमरेमें जाकर सारी रात गप्प सुनूँगी, तबतक इस कमरेका काम खतम कर दूँ।"

थोड़ी देर बाद सोनेके कमरेमें आकर कमलने कहा, "आज आपकी भाभी का सारा इतिहास सुने बगैर आपको छोड़ूँगी नहीं, चाहे कितनी ही रात क्यों न हो जाय। सुनाइएगा?"

हरेन्द्र संकटमें पड़ गया, बोला, "भाभीकी सारी बातें तो मैं जानता नहीं। उनके साथ पहली जान पहिचान मेरी इसी आगरेमें हुई है अविनाश भइयाके घर। वास्तवमें उनके सम्बन्धमें मुझे लगभग कुछ भी नहीं मालूम। जो कुछ

यहाँके लोग जानते हैं, उतना ही मैं जानता हूँ। फिर एक बात शायद सबसे ज्यादा जानता हूँ, और वह है उनकी असीम शुभ्रता। जब उनके पति मरे थे तब उनकी उमर उन्नीस-बीस सालकी थी। भाभीने उन्हें मचान्त बचपनसे पाया था। वह स्मृति अबतक पुँछी नहीं है और न कभी पुँछ ही सकती है,—जीवनके अन्तिम दिनतक वह अक्षय बनी रहेगी। पुग्गाम जब आशु बाबूकी बात उठती है—मैं मानता हूँ, उनकी निष्ठा भी असाधारण है—लेकिन—'

"हरेन्द्र बाबू, रात बहुत हो गई है, अब तो आपका घर जाना हो नहीं सकता,—इसी कमरेमें आपके लिए बिस्तर कर दूँ?"

हरेन्द्रने आश्चर्यसे पूछा, "इसी कमरेमें? और आप?"

कमलने कहा, "मैं भी यहीं सोऊँगी। और तो कोई कमरा है नहीं।"

हरेन्द्र मारे शरमके पीला पड़ गया। कमलने हँसते हुए कहा, "आप ब्रह्मचारी जो हैं। आपको भी क्या डरनेका कोई कारण हो सकता है?"

हरेन्द्र स्तब्ध होकर एकटक उसके चेहरेकी तरफ देखता रह गया। यह कैसा प्रस्ताव है, उससे कल्पना करते भी न बना। स्त्री होकर मुँहसे यह बात निकली कैसे?

उसकी हदसे ज्यादा विह्वलताने कमलको धक्का दिया। उसने कुछ क्षण चुप रहकर कहा, "मेरी ही गलती हुई, हरेन्द्र बाबू, अपने घर जाइए। इसी कारण आपकी अठाम ब्रह्मचारी पार्टी नीलिमाको आश्रममें जगह नहीं मिली, जगह मिली तो आशु बाबूके घरमें। सूने घरमें अनात्मीय नर-नारीका सिर्फ एक ही सम्बन्ध आपको मालूम है,—पुरुषके निकट औरत सिर्फ औरत ही है, उसके आगे इससे ज्यादा खबर आपतक आजतक नहीं पहुँची।—ब्रह्मचारी हो जाने पर भी नहीं। जाइए, अब देर न कीजिए, आश्रम जाइए।" इतना कहकर वह खुद ही बाहरके अँधेरे बरामदेमें जाकर अदृश्य हो गई।

हरेन्द्र मूर्खकी तरह दो-तीन मिनट खड़ा रहा, फिर धीरे-धीरे नीचे उतर गया।

२०

लगभग एक महीना बीत गया। आगरेमें इन्फ्लुएंजाका विकराल महा—

मारीका रूप शान्त हो गया है, कहीं कहीं दो एक नये आक्रमण होनेकी बात सुनी तो जाती है, पर ऐसे खतरनाक रूपमें नहीं। कमल घरमें बैठी सिलाईका काम कर रही थी, इतनेमें हरेन्द्र आ गया। उसके हाथमें एक पोटली थी, उसे पास ही जमीनपर रखते हुए बोला, "आपकी मेहनत देखकर तकाजा करनेमें शरम लगती है मगर आदमी भी ऐसे बेहया हैं कि भेंट होते ही पूछते हैं, 'बन गया?' मैं साफ साफ जवाब दे देता हूँ कि अभी बहुत देर है। बहुत जल्दी हो तो कहिए, कपड़ा वापस ला दूँ। मगर मजेकी बात तो यह है कि आपके हाथकी चीज जिसने एक बार बरती वह और कहीं सिलाना नहीं चाहता। यह देखिए न, लालाजीके घरसे उनका नौकर फिर गरद रेशमका थान और नमूनेका कुरता दे गया है,—"

कमलने सिलाईपरसे आँख उठाकर कहा, "ले क्या लिया?"

"लिया क्या था ही! कह दिया है कि छह महीनेसे पहले नहीं होगा,—उसपर भी राजी हो गया। बोला, छह महीने बाद तो मिल जायगा! कोई हर्ज नहीं। यह देखिए न, सिलाईके रुपयेतक हाथपर रख गया है।" कहते हुए जेबमेंसे उसने एक नोटमें मुड़े हुए रुपये निकाल कर कमलके सामने रख दिये।

कमलने कहा, "इतना ज्यादा काम आता रहा तो, मैं देखती हूँ, मुझे आदमी रखना पड़ेगा।" फिर उसने पोटली खोलकर पुराना पंजाबी कुरता उठाकर देखा और कहा, "किसी बड़ी दुकानका सिला हुआ मालूम होता है,—बड़े कारीगरका काम है,—मुझसे तो ऐसा शायद न बनेगा। कीमती कपड़ा है, खराब हो जायगा, इसे वापस दे दीजिएगा।"

हरेन्द्रने आश्चर्य प्रकट करते हुए कहा, "आपसे बढ़कर कारीगर और भी हैं क्या कहीं?"

"यहाँ न हो, कलकत्तेमें तो है। वहीं भेज देनेको कहिए।"

"नहीं नहीं, सो नहीं होगा। आपसे जैसा बने वैसा बना दीजिए, उसीसे काम चल जायगा।"

"बनेगा नहीं हरेन्द्र बाबू, बनता तो बना देती।" कहकर वह अकस्मात् हँस पड़ी, बोली, "अजित बाबू रईस आदमी हैं और शौकीन मिजाज ठहरे, ऐसा वैसा बना देनेसे उनसे पहना कैसे जायगा? व्यर्थमें कपड़ा खराब करनेसे कोई फायदा नहीं, आप वापस ले जाइए।"

हरेंद्रको अत्यन्त आश्चर्य हुआ, उसने कहा, "कैसे जाना कि यह अजित बाबूका है?"

कमलने कहा, 'मैं ज्योतिष जो जानती हूँ। गरद रेशमका थान, पेशगी रुपया और फिर छह महीने बाद मिले तो भी कोई हर्ज नहीं!—यहाँके लाला लोग ऐसे मूर्ख नहीं होते हरेंद्र बाबू! उनसे कह दीजिएगा कि उनका कुरता सीनेके लायक योग्यता मुझमें नहीं है, मैं तो सिर्फ गरीबोंके सस्ते दामके कपड़े ही सीना जानती हूँ। यह नहीं सी सकती।"

हरेंद्र असमंजसमें पड़ गया। अंतमें बोला, "उनकी बड़ी इच्छा है कि आपके हाथका सिला हुआ कुरता पहनें। लेकिन, आप कहीं जान न जायँ और यह न समझ बैठें कि हम लोग किसी तरह आपकी सहायता करनेकी कोशिश कर रहे हैं, इससे मैं बहुत दिनोंसे कुछ कह नहीं रहा था। उनसे कहा था कि कम दामका कोई मामूली कपड़ा दें। पर वे राजी नहीं हुए। बोले, यह कोई मेरी शौकिया पहननेकी चीज थोड़े ही है। यह तो कमलके हाथकी सिली हुई चीज है जो सिर्फ किसी विशेष पर्वके दिन पहननेके काम आयगी और रख छोड़ी जायगी। इस संसारमें उनसे बढ़कर आपपर शायद ही कोई दूसरा श्रद्धा करता हो।"

कमलने कहा, "कुछ दिन पहले उनके मुँहसे शायद ठीक इसकी उल्टी बात ही बहुतोंने सुनी होगी! ठीक है कि नहीं? जरा कोशिश कर लो शायद आपको भी स्मरण हो सकता है। जरा याद कर देखिए न!"

कुछ ही दिन पहलेकी बात थी, हरेंद्रको सब याद था। वह कुछ लज्जित-सा होकर बोला, "झूठ नहीं, मगर ऐसी धारणा तो एक दिन बहुतोंकी थी। शायद अकेले आशु बाबूको भले ही न हो, लेकिन उन्हें भी एक दिन विचलित होते देखा गया है। खुद मुझको ही देखिए न,—आज तो कोई प्रमाण पेश करनेकी जरूरत नहीं, पर उस किसी कमेटीपर आज भी अगर कोई मेरी भक्ति श्रद्धाकी जाँच करने लगे तो बताइए मैं कहाँ खड़ा हो सकूँगा?"

कमलने पूछा, "राजेंद्रका पता लगा?"

हरेंद्रने समझ लिया कि यह हृदय-सम्बन्धी आलोचना, पहलेकी तरह, आज फिर स्थगित रही। उसने कहा, "नहीं, अबतक तो नहीं लगा। उम्मीद है कि कहींसे आ सकेगा होगा तो लग जायगा।"

कमलने कहा, "सो तो मैं जानना चाहती नहीं, मैंने तो आपसे सिर्फ इतना ही पता लगानेको कहा था कि वह पुलिसका मेहमान हुआ है या नहीं।"

हरेन्द्रने कहा, "सो तो पता लगा लिया। फिलहाल उससे दामन तो बचा हुआ है।"

सुनकर कमल निश्चिन्त तो नहीं हो सकी, पर उसे कुछ तसल्ली जरूर हुई। पूछा, "वे कहाँ गये हैं और कब गये हैं, मोनियाके मुहल्लेमें क्या जा करके क्या उनका पता नहीं लगाया जा सकता?—हरेन्द्र बाबू, उनके प्रति आपका स्नेह कितना है सो मैं जानती हूँ, इस बारेमें पूछना ज्यादती होगी पर इधर कई दिनोंसे मेरी ऐसी दशा हो गई है कि इसके सिवा और कुछ सोच ही नहीं सकती।" इतना कहकर उसने ऐसी व्याकुल दृष्टिसे हरेन्द्रकी ओर देखा कि वह विस्मित हो गया। पर दूसरे ही क्षण वह आँख नीची करके पहलेकी तरह अपने सिलाईके काममें लग गई।

हरेन्द्र चुपचाप खड़ा रहा। खड़े-खड़े उसके मनमें एकके बाद एक कई प्रश्न उठते रहे और कुतूहल भी होता रहा,—मुँहसे शब्दोंने भी निकलना चाहा, पर उसने अपनेको हर बार सँभाल लिया। किसी तरह वह तय नहीं कर पाया कि इस पूछनेका नतीजा क्या होगा। इस तरह पाँच-सात मिनट बीत जानेपर कमलने खुद ही बात की। सिलाईको एक तरफ रखकर जमाई ली। एक साँस लेकर उसने कहा, "रहने दो, अब नहीं करती।" मुँह ऊपर उठाते ही आश्चर्यके साथ बोली, "यह क्या? खड़े क्यों हैं? कुर्सी खींचकर बैठा भी न गया आपने!"

"बैठनेको तो कहा नहीं आपने।"

"अच्छी बात! कहा नहीं, सो बैठेंगे भी नहीं?"

"नहीं, बगैर कहे बैठना उचित नहीं।"

"मगर खड़े रहनेके लिए भी तो मैंने नहीं कहा, फिर खड़े क्यों हैं?"

"ऐसा अगर आप कहती हैं तो मेरा न खड़ा होना ही उचित था। अपना कसूर मंजूर करता हूँ।"

सुनकर कमल हँस दी। बोली, "तो मैं भी अपना कसूर मान लेती हूँ। अब तक अन्यमनस्क रहना मेरा अपराध है। अब बैठिए।"

हरेन्द्र कुर्सी खींचकर उसपर बैठ गया। कमल सहसा जरा गम्भीर हो

गई। एक बार कुछ सोचा, फिर बोली, "देखिए हरेन्द्र बाबू, मैं जानती हूँ और आप भी जानते हैं कि असलमें इसके अन्दर कुछ है नहीं। फिर भी बात खटकती ही है। यह जो मैं बैठनेके लिए कहना भूल गई,—जो आदर अतिथिको देना चाहिए था वह नहीं दिया,—हजार घनिष्ठताके होते हुए भी इस त्रुटिपर आपकी निगाह पड़ ही गई।—ना नहीं, आप नाराज हुए हैं, सो मैं नहीं कहती,—मगर फिर भी न जाने क्या मनमें कुछ लगता ही है। मनुष्यका यह संस्कार जानेपर भी नहीं जाना चाहता, कहीं न कहीं थोड़ा-बहुत रह ही जाता है।—क्यों, ठीक है?"

हरेन्द्र इसका मतलब न समझ सका, आश्चर्यके साथ उसके मुँहकी तरफ देखता रह गया। कमल कहने लगी, "इसी संसारमें न जाने कितना अन्याय हो रहा है और मजा यह कि इसीको लोग सबसे ज्यादा भूलते हैं। क्यों, है न यही बात?"

हरेन्द्रने पूछा, "यह सब आप मुझसे कह रही हैं, या अपने आपसे? अगर मेरे लिए हो तो जरा और खुलासा करके कहिए। यह पहेली मेरे मगजमें घुस नहीं रही है?"

कमल हँसने लगी, बोली, "है तो पहेली ही। सीधा-सरल रास्ता होता है, मालूम ही नहीं होता कि विपत्ति आँखें लाल कर रही है। चलते-चलते ठोकर लगती है और उँगलीसे खून निकलने लगता है, तब कहीं जाकर होश आता है कि और जरा देखकर चलना चाहिए था। क्यों, है न यही बात?"

हरेन्द्रने कहा, "रास्तेके बारेमें तो यह ठीक है। कमसे कम आगेके कामोंपर तो जरा होश सँभालकर ही चलना अच्छा,—ऐसी दुर्घटनाएँ आश्रमके लड़कोंपर प्रायः घटती हैं। मगर पहेली ही रह गई, भावार्थ मालूम तो कुछ समझमें नहीं आया?"

कमलने कहा, "उसका भाव बताया नहीं जाता हरेन्द्र बाबू। बतानेसे ही सभी बातोंका मतलब समझमें नहीं आ जाता। मुझको ही लीजिए न, मुझे तो किसीने बताया नहीं, फिर भी स्वतः समझनेमें मुझे कोई अड़चन नहीं हुई।"

हरेन्द्रने कहा, "इसका मतलब यह है कि आप भाग्यवती हैं और मैं अभागा। या तो ऐसी भाषामें कहिए कि साधारण आदमीके दिमागमें भी घुस जाय या फिर रहने दीजिए, कुछ मत बोलिए। चाहो अनिन्दाकी तरह,

जितना इसे खोलना चाहता हूँ उतनी ही यह उलझती जा रही है। अज्ञात अज्ञेय विरोधसे शुरू होकर वक्तव्य अब कहाँ आकर रुका है, इसका ओर-छोर नहीं मिला। ये सब बात क्या आप राजेन्द्रकी याद करके कह रही हैं? उसे मैं भी तो जानता हूँ, सहल बना करके कह तो शायद कुछ कुछ समझ भी सकूँ। नहीं तो, फिर इस तरह एक स्वप्नमय आदमीकी वक्तृता सुनते सुनते मुझे अपनी बुद्धिपर विश्वास ही न रह जायगा।"

कमल हँसते मुँहसे बोली, "किसकी बुद्धिपर? मेरीपर या अपनीपर?"

"दोनोंकी ही।"

कमलने कहा, "सिर्फ राजेन्द्रकी ही नहीं। मालूम नहीं क्यों, सबेरेसे आज मुझे सभीकी याद आ रही है—आशु बाबू, मनोरमा, अक्षय, अविनाश, नीलिमा, शिवनाथ,—यहाँतक कि अपने पिताजीकी—"

हरेन्द्रने टोका, "इस तरह नहीं चल सकता। आप फिर गम्भीर होती जा रही हैं। आपके माता पिता स्वर्ग गये हैं, उनको इस मामलेमें घसीटना मुझसे नहीं सहा जायगा। हाँ, जो जिन्दा हैं उनकी बात कीजिए। आप राजेन्द्रकी बात कहना चाहती थीं,—उसीकी कहिए, मैं सुनूँ। वह मेरा मित्र है, उसे मैं जानता हूँ, पहचानता हूँ, प्यार भी करता हूँ,—मेरा विश्वास कीजिए, मैं चाहे आश्रम चलाता होऊँ या और कुछ करता होऊँ, आपको धोखा नहीं दूँगा। संसारमें और लोगोंकी तरह मैं भी प्रेमकी कहानी सुनना पसन्द करता हूँ।"

कमलकी गम्भीरता सहसा हँसीमें परिणत हो गई, उसने पूछा, "सिर्फ दूसरोंकी ही सुनना पसन्द करते हैं? उससे आगे कुछ नहीं चाहते?"

हरेन्द्रने कहा, "नहीं। मैं ब्रह्मचारियोंका पण्डा हूँ, आश्रमका दल सुन लेगा तो मुझे खा ही जायगा।"

सुनकर कमल फिर हँस पड़ी, बोली, "नहीं, वे नहीं खायेंगे। मैं उसका उपाय कर दूँगी।"

हरेन्द्रने सिर हिलाते हुए कहा, "आप नहीं कर सकेंगी। आश्रम तोड़कर भाग जानेपर भी मेरा छुटकारा नहीं है। अक्षयने एक बार जब कि मुझे पहचान लिया है, तब जहाँ भी मैं जाऊँगा वहाँ मुझे वह सन्मार्गपर लगाये ही रखेगा। इससे अच्छा यह है कि आप अपनी ही बात कहें। राजेन्द्रको आप अपने मनसे किसी तरह भुला ही नहीं सकतीं,—उसकी बातके सिवाय और कोई

बात सोच ही नहीं सकता, तो फिर यहींसे शुरू कीजिए। किस तरह उस अभागे जानवरको आप ढूँढ़ना चाहने लगी हैं, यह सुननेकी मुझे बड़ा साध है।"

कमलने कहा, "ठीक यही प्रश्न मैं बार-बार अपनेसे भी कर रही हूँ।"

"कुछ पता नहीं पा रही हैं?"

"नहीं।"

"पानेकी राह भी नहीं, और मुझे विश्वास भी नहीं होता कि यह सच है।"

"क्यों, विश्वास क्यों नहीं होता?"

"खैर, छोड़िए इस बातको। शायद एक बार मैं कह भी चुका हूँ कि इससे भी अच्छे 'कैण्डिडेट' (उम्मीदवार) मौजूद हैं। आखिरी निर्णय करनेके पहले उनके 'क्लेमों' (दरख्वास्तों) पर भी जरा नजर डाल दीजिएगा। यही प्रार्थना है।"

"मगर केसोंपर केवल अनुमानके आधारपर तो विचार किया नहीं जा सकता हरेन्द्र बाबू, बाकायदा गवाह और प्रमाणोंकी जरूरत होती है। सो कौन हाजिर करेगा?"

"वे खुद ही करेंगे। गवाह और सबूतके लिए वे तैयार हैं, पुकार होते ही हाजिर हो जायँगे।"

कमलने कुछ जवाब नहीं दिया, ऊपर मुँह उठाकर देखा और हँस दी।

उसके बाद पूरे और अधूरे सब कपड़ोंको एक एक करके ठीकसे घड़ी कर, एक बेंतकी टोकनीमें जँचाकर रख दिया और उठकर खड़ी हो गई। बोली, "आपका शायद चाय पीनेका वक्त हो गया हरेन्द्र बाबू, जरा-सा चाय बनाकर ले आऊँ, आप बैठिए।"

हरेन्द्रने कहा, "बैठा तो हूँ ही। लेकिन आप तो जानती हैं, चाय पीनेके लिए मुझे कोई खास वेग नहीं। मिले तो पी लेता हूँ, न मिले तो कोई बात नहीं। इसके लिए आपको तकलीफ उठानेकी जरूरत नहीं। एक बात आपसे पूछूँ?"

"पूछिए।"

"बहुत दिनोंसे आप किसीके यहाँ गई नहीं,—सो क्या जान बूझकर जाना बन्द कर दिया है?"

कमलको आश्चर्य हुआ, बोली, "नहीं तो। मुझे इसका खयाल ही नहीं।"

"तो फिर चलिए न, आज जरा आशु बाबूके मकानतक घूम आवें। वे

सचमुच ही बहुत खुश होंगे। जब वे बीमार थे तब एक बार आप गई थीं, अब तो वे अच्छे हो गये हैं। सिर्फ डॉक्टरने मना कर दिया है कि बाहर नहीं निकलें। नहीं तो शायद वे किसी दिन खुद ही यहाँ आ उपस्थित होते।"

कमलने कहा, "वे न आवें तो कोई आश्चर्यकी बात नहीं। जाना तो मुझे ही चाहिए था, लेकिन कामकी झंझटसे जा नहीं सकी। बड़ी गलती हो गई।"

"तो आज ही चलिए न!"

"चलिए। मगर शाम होने दीजिए। आप बैठिए, झटसे एक प्याला चाय बनाये लाती हूँ।" इतना कहकर वह बाहर चली गई।

शामके झुटपुटेमें दोनों घरसे निकल पड़े। रास्तेमें हरेंद्रने कहा, "जरा दिन रहते चलते तो अच्छा रहता।"

कमलने कहा, "नहीं, जान पहचानका शायद कोई देख लेता।"

"भले देख लेता। इन सब बातोंकी अब मैं परवाह नहीं करता।"

"पर मैं तो करती हूँ।"

हरेंद्रने समझा कि मजाक किया जा रहा है, वह बोला, "लेकिन जान-पहचानवाले ही अगर सुनेंगे कि आप मेरे साथ अकेली निकलनेमें आजकल संकोच करने लगी हैं, तो वे क्या सोचेंगे?"

"शायद यही सोचेंगे कि मैंने मजाक किया होगा!"

"मगर आपको जो पहचानता है वह क्या और कुछ सोच सकता है? बताइए?"

अबकी बार कमल चुप रही।

जवाब न पाकर हरेंद्रने कहा, "आज आपको क्या हो गया है, मालूम नहीं, सब कुछ दुराव-सा हो रहा है।"

कमलने कहा, "जो समझनेका नहीं है उसे न समझना ही अच्छा है। राजेंद्रको भूलना चाहकर भी भूलती नहीं। इसका सबसे ज्यादा भान होता है आपके ऊपर। उसके लिए आश्रममें स्थान नहीं हुआ,—हालाँकि किसी पेड़के नीचे पड़े रहनेमें भी उसका काम चल जाता, सिर्फ मैंने ही वहाँ रहने नहीं दिया और आदरके साथ मैं उसे बुला लाई। मेरे घर आया,—वहाँसे भी उसके मनको कोई रुकावट नहीं आई। हवा और प्रकाशकी तरह उसके आनेपर भी

सब दिशाएँ खुली रहीं, पुरुषका मानो एक नया परिचय मिला। यह सोचनेको मुझे समय ही नहीं मिला कि यह अच्छा है या बुरा,—शायद समझनेमें देर भी लगे।"

हरेन्द्रने कहा, "यह बड़ी भारी सान्त्वना है।"

"सान्त्वना क्यों है?"

"सो नहीं मालूम।"

फिर कोई भी कुछ नहीं बोला, दोनों ही न जाने कैसे अन्यमनस्क-से बने रहे। हरेन्द्रने शायद जान बूझकर ही जरा घुमावका रास्ता अख्तियार किया था। जब वे आशु बाबूके घर पहुँचे तब शाम बीते बहुत देर हो चुकी थी। भीतर जानेके लिए खबर देनेकी जरूरत न थी, पर पाँच-छह दिनसे हरेन्द्र आ नहीं सका था इसलिए नौकरको सामने पाकर बोला, "बाबू साहबकी तबीयत अच्छी है?"

उसने नमस्कार करके कहा, "जी हाँ, अच्छी है।"

"अपने कमरेमें ही हैं क्या?"

"नहीं, ऊपरके सामनेवाले कमरेमें सबके साथ बैठे बात कर रहे हैं।"

जीनेपर चढ़ते कमलने पूछा, "'सब' कौन?"

हरेन्द्रने कहा, "भाभी तो हैं ही, और भी शायद कोई होगा,—मालूम नहीं।"

परदा हटाकर भीतर घुसते ही दोनोंको जरा आश्चर्य हुआ। एसेंस और चुरुटकी तेज गन्धने एक साथ मिलकर कमरेकी हवाको भारी कर दिया था। नीलिमा मौजूद नहीं थी, आशु बाबू बड़ी आराम-कुरसीके हथेलेपर पैर फैलाये चुरुट पी रहे थे और पास ही सोफेपर सीधी बैठी एक अपरिचित महिला बात कर रही थी। कमरेकी आबहवाकी तरह ही उसके मुँहका भाव भी तेज था। बंगालिन थी, पर बँगला बोलनेकी उसमें रुचि नहीं थी, और शायद आदत भी न हो। हरेन्द्र और कमलने कमरेमें कदम रखते ही सुन लिया कि वह अनर्गल अँगरेजी बोल रही है।

आशु बाबूने मुँह उठाकर देखा। कमलपर निगाह पड़ते ही उनका सारा चेहरा आनन्दसे उज्ज्वल हो उठा। शायद एक बार उठके बैठनेकी भी कोशिश की, पर सहसा बैठा नहीं गया। मुँहका चुरुट फेंककर बोले, "आओ कमल,

आओ।" और अपरिचिता रमणीको निर्दिष्ट करके बोले, "ये मेरी एक रिश्तेदार हैं। परसों आई हैं, सम्भव है इन्हें कुछ दिन यहाँ रख भी सकूँ।"

जरा ठहरकर फिर बोले, "बेला, ये कमल हैं। मेरी लड़की जैसी तरह।"

दोनोंने दोनोंके लिए हाथ उठाकर नमस्कार किया।

हरेन्द्रने कहा, "और मैं?"

"ओ हो, तुम तो रह ही गये! ये हरेन्द्र हैं, प्रोफेसर अक्षयके परम मित्र। बाकी परिचय यथासमय होता रहेगा,—चिन्ताकी कोई बात नहीं हरेन्द्र।" और कमलको इशारेसे पास बुलाते हुए बोले, "यहाँ मेरे पास आओ कमल, तुम्हारा हाथ लेकर कुछ देर चुप बैठा रहूँ। इसके लिए कई दिनोंसे मेरा जी तड़पता रहा है।"

कमल हँसती हुई उनके पास जाकर बैठ गई और दोनों हाथ बढ़ाकर उनने उनके मोटे भारी हाथको अपनी गोदमें रख लिया।

आशु बाबूने पूछा, "चा पीकर आई हो क्या?"

कमलने सिर हिलाकर कहा, "नहीं।"

आशु बाबूने छोटी-सी एक साँस लेकर कहा, "पूछनेसे फायदा ही क्या? यहाँ तुम्हें खिला तो सकता नहीं!"

कमल चुप रही।

२१

बेलाके मुँहकी तरफ देखकर आशु बाबू जरा हँसे और बोले, "क्या, वर्णन मेरा मिल तो गया? इसे बुढ़ापेकी 'एक्स्ट्रावेगन्स' (बुढ़भस) कहकर मजाक उड़ाना तो तुम्हारा ठीक नहीं हुआ, अब तो मान गईं?"

महिला चुप रही। आशु बाबू कमलका हाथ हिलाने डुलाने लगे और बोले, "इस लड़कीको बाहरसे देखकर जैसा आश्चर्य होता है, भीतरसे देखकर दंग ही दंग रह जाना होता है। क्यों हरेन्द्र, ठीक है न?"

हरेन्द्र चुप रहा। कमलने हँसते हुए जवाब दिया, "ठीक है कि नहीं, इसमें सन्देह है, लेकिन किसीने अगर बुढ़ापेकी 'एक्स्ट्रावेगन्स' कहके आपके कामोंका मजाक किया हो तो इतना तो बेखटके कहा जा सकता है कि वह ठीक नहीं है। मानो ज्ञान आपका इस दुनियामें अचल है।"

"ओह, ऐसा है ?" आशु बाबूने गम्भीर स्नेहके स्वरमें कहा, "जानता हूँ कि इस घरमें मैं तुम्हें खिला पिला कुछ भी न सकूँगा, पर यह तो बताओ अपने घर तुमने क्या क्या खाया है ?"

"जो रोज खाया करती हूँ वही।"

"फिर भी, सुनूँ तो सही ? बेला सोच रही थी कि यह भी मैंने बना-चढ़ाके कहा है।"

कमलने कहा, "यानी मेरे विषयमें मेरी अनुपस्थितिमें बहुत कुछ चर्चा हो चुकी है ?"

"सो तो हुई है,—अस्वीकार नहीं करूँगा।" इतनेमें चौंकेकी रकाबीमें एक छोटा खाट लिये हुए बेहरा आ गया। उसकी लिखावटपर सबकी निगाह पड़ गई और सभीको आश्चर्य हुआ। इस घरमें अजित एक दिन घरके लड़के-की तरह था पर अब आगरेमें रहते हुए भी वह नहीं आता और शायद यही स्वाभाविक है। इस न जानेकी लज्जा और सदाचार द्वारा दोनों तरफसे ऐसा एक व्यवधान उठ खड़ा हुआ है कि उसके इस अप्रत्याशित आगमनसे सिर्फ आशु बाबू ही नहीं, उपस्थित सभी जरा चौंक से पड़े। आशु बाबूके चेहरेपर उद्वेगकी एक गहरी छाप पड़ गई,—बोले, "उसे इसी कमरेमें ले आ।"

थोड़ी देर बाद अजित आ पहुँचा। एक साथ इतने परिचित और अपरिचित जनोंकी उपस्थितिकी सम्भावनाका विचार या आशंका उसने नहीं की थी।

आशु बाबूने कहा, "बैठो अजित। अच्छे तो हो ?"

अजितने सिर हिलाते हुए कहा, "जी हाँ। आपकी तबीयत अब कैसी है ? अब तो अच्छी मालूम होती है ?"

आशु बाबूने कहा, "बीमारी तो अच्छी हो गई मालूम होती है।"

परस्परका कुशल प्रश्नोत्तर यहीं खतम हो गया। कमल न होती तो शायद और भी दो एक बात हो सकती थीं, परन्तु चार आँखें होनेके डरसे अजितने उधर कमलकी ओर आँख उठाकर देखनेका साहस ही नहीं किया। दो-तीन मिनटतक सब लोग चुप रहे। हरेन्द्र सबसे पहले बोला, पूछा, "यहाँ आप क्या अभी सीधे घरसे ही आ रहे हैं ?"

कुछ बोलनेका मौका पाकर अजितकी जीमें जी आ गया। बोला, "नहीं, ठीक सीधा नहीं आ रहा हूँ, आपको खोजते हुए जरा घूम फिरकर आ रहा हूँ।"

आओ।" और अपरिचिता रमणीको निर्दिष्ट करके बोले, "ये मेरी एक रिश्तेदार हैं। परसों आई हैं, सम्भव है इन कुछ दिन यहाँ रख भी सकूँ।"

जरा ठहरकर फिर बोले, "बेला, ये कमल हैं। मेरी लड़कीकी तरह।"

दोनोंने दोनोंके लिए हाथ उठाकर नमस्कार किया।

हरेन्द्रने कहा, "और मैं?"

"आ हो, तुम तो रह ही गये! ये हरेन्द्र हैं, प्रोफेसर अजयके परम मित्र। बाकी परिचय यथासमय होता रहेगा,—विस्तारसे कोई बात नहीं हरेन्द्र।" और कमलको इशारेसे पास बुलाते हुए बोले, "यहाँ मेरे पास आओ कमल, तुम्हारा हाथ लेकर कुछ देर चुप बैठा रहूँ। इसके लिए कई दिनोंसे मेरा जी तड़पता रहा है।"

कमल हँसती हुई उनके पास जाकर बैठ गई और दोनों हाथ बढ़ाकर उसने उनके मोटे भारी हाथको अपनी गोदमें रख लिया।

आशु बाबूने पूछा, "खा पीकर आई हो क्या?"

कमलने सिर हिलाकर कहा, "नहीं।"

आशु बाबूने छोटी-सी एक साँस लेकर कहा, "पूछनेसे फायदा ही क्या? यहाँ तुम्हें खिला तो सकता नहीं!"

कमल चुप रही।

२१

बेलाके मुँहकी तरफ देखकर आशु बाबू जरा हँसे और बोले, "क्या, प्रमाण मेरा मिल तो गया? इसे बुढ़ापेकी 'एक्स्ट्रावेगन्स' (फुजूलखर्ची) कहकर मजाक उड़ाना तो तुम्हारा ठीक नहीं हुआ, अब तो मान गई?"

महिला चुप रही। आशु बाबू कमलका हाथ हिलाने डुलाने लगे और बोले, "इस लड़कीको बाहरसे देखकर जैसा आश्चर्य होता है, भीतरसे देखकर वैसे ही दंग रह जाना होता है। क्या हरेन्द्र, ठीक है न?"

हरेन्द्र चुप रहा, कमलने हँसते हुए जवाब दिया, "ठीक है कि नहीं, इसमें सन्देह है, लेकिन किसीने अगर बुढ़ापेकी 'एक्स्ट्रावेगन्स' कहके आपके कामोंका मजाक किया हो तो इतना तो बेखटके कहा जा सकता है कि वह ठीक नहीं है। मानो शान आपकी इस दुनियामें अचल है।"

"ओह, ऐसा है!" आशु बाबूने गम्भीर स्नेहके स्वरमें कहा, "जानता हूँ कि इस घरमें मैं तुम्हें खिला पिला कुछ भी न सकूँगा, पर यह तो बताओ अपने घर तुमने क्या क्या खाया है?"

"जो रोज खाया करती हूँ वही।"

"फिर भी, सुनूँ तो सही?" बेला सोच रही थी कि यह भी मैंने बना-चढ़ाके कहा है।

कमलने कहा, "यानी मेरे नियम मेरी अनुपस्थितिमें बहुत कुछ ढीली हो चुकी है?"

"हो तो गई है,—अत्याचार नहीं करूँगा।" इतनेमें चाँदीकी रकाबीमें एक छोटा कार्ड लिये हुए बेहरा आ गया। उसकी लिखावटपर सबकी निगाह पड़ गई और सभीको आश्चर्य हुआ। इस घरमें अजित एक दिन घरके लड़के की तरह था पर अब आगरेमें रहते हुए भी वह नहीं आता और शायद यही स्वाभाविक है। इस न आनेकी लज्जा और संकोचके द्वारा दोनों तरफसे ऐसा एक व्यवधान उठ खड़ा हुआ है कि उसके इस अप्रत्याशित आगमनसे सिर्फ आशु बाबू ही नहीं, उपस्थित सभी जरा चौंक से पड़े। आशु बाबूके चेहरेपर उद्वेगकी एक गहरी छाप पड़ गई,—बोले, "उन्हें इसी कमरेमें ले आ।"

थोड़ी देर बाद अजित आ पहुँचा। एक साथ इतने परिचित और अपरिचित जनोंकी उपस्थितिकी सम्भावनाका विचार या आशंका उसने नहीं की थी।

आशु बाबूने कहा, "बैठो अजित। अच्छे तो हो?"

अजितने सिर हिलाते हुए कहा, "जी हाँ। आपकी तबीयत अब कैसी है? अब तो अच्छी मालूम होती है?"

आशु बाबूने कहा, "बीमारी तो अच्छी हो गई मालूम होती है।"

परस्परका कुशल प्रश्नोत्तर यहीं खतम हो गया। कमल न होती तो शायद और भी दो एक बातें हो सकती थीं, परन्तु चार आँखें होनेके डरसे अजितने उधर कमलकी ओर आँख उठाकर देखनेका साहस ही नहीं किया। दो-तीन मिनटतक सब लोग चुप रहे। हरेन्द्र सबसे पहले बोला, पूछा, "यहाँ आप क्या अभी सीधे घरसे ही आ रहे हैं?"

कुछ बोलनेका मौका पाकर अजितके जीमें जी आ गया। बोला, "नहीं, ठीक सीधा नहीं आ रहा हूँ, आपको खोजते हुए जरा घूम फिरकर आ रहा हूँ।"

"मुझे खोजते हुए ? क्या काम है ?"

"काम मेरा नहीं, और एक सज्जनका है। वे राजेन्द्रकी खोजमें दोपहरसे शायद चार बार आ चुके। उनसे बैठनेके लिए कहा था, पर वे राजी नहीं हुए। स्थिरतासे बैठकर प्रतीक्षा करना शायद उनको सहन नहीं है।"

हरेन्द्रने शंकित होकर पूछा, "था कौन ? देखनेमें कैसा था ? कह क्यों नहीं दिया कि यहाँ नहीं है ?"

अजितने कहा, "यह खबर तो उन्हें दे चुका हूँ। पर शायद उन्होंने विश्वास नहीं किया।"

हरेन्द्रका चेहरा उद्विग्नतासे भर उठा, वह उठ खड़ा हुआ और कमलको घर पहुँचानेका भार आशु बाबूपर छोड़कर चल दिया। उसके चले जानेपर आशु बाबूने कहा, "कमल, इस लड़केने राजेन्द्रको मैंने दो तीन बारसे ज्यादा नहीं देखा,—बिना किसी संकटमें पड़े उसके दर्शन ही नहीं होते, पर ऐसा लगता है कि उससे मैं काफी स्नेह करने लगा हूँ। मालूम नहीं, कौन सी महामूल्य वस्तु वह अपने साथ लिये फिरता है, और मजा यह है कि हरेन्द्रके मुँहसे सुना करता हूँ कि वह बिल्कुल 'वाग्ब्न्ड' (=बेघरबार, अव्यवस्थित) है, पुलिस उसे सन्देहकी दृष्टिसे देखती है। डर रहता है, न जाने कब क्या उपद्रव खड़ा कर बैठे और शायद उसकी खबर भी न मिले। यही देखो न, किसीको पता ही नहीं लग रहा है कि अचानक कहाँ गायब हो गया।"

कमल पूछ बैठी, "अचानक अगर मालूम हो जाय कि वे संकटमें पड़ गये हैं, तो आप क्या करेंगे ?"

आशु बाबूने कहा, "क्या करूँगा, सो जवाब तो सिर्फ तभी दिया जा सकता है, अभी नहीं। बीमारीके दिनोंमें नीलिमाने और मैंने उसके बहुत से किस्से हरेन्द्रके मुँहसे सुने हैं। दूसरोंके लिए सचमुच ही अपने आपको किस तरह विलीन कर दिया जा सकता है,—समर्पित किया जा सकता है,—सुनते सुनते मानो उसकी तसवीर-सी खिंच जाती थी सामने। भगवान्से प्रार्थना है कि उसपर कभी कोई आफत विपत न आवे।"

ऊपरसे किसीने कुछ नहीं कहा, पर मन ही मन शायद सभीने इस प्रार्थनामें साथ दिया।

कमलने पूछा, "नीलिमाको आज देख नहीं रही हूँ ? शायद काममें

व्यस्त होंगी ?"

आशु बाबूने कहा, "काम-काजी ठहरीं, दिन-रात काम धन्धेमें ही लगी रहती हैं, मगर आज सुना है कि सिर-दर्दसे बिस्तरपर पड़ी हैं। तबीयत शायद कुछ ज्यादा खराब है। वहा तो पड़े रहनेका उनका स्वभाव नहीं। अपनी आँखोंसे देखे बगैर विश्वास नहीं किया जा सकता कि कोई आदमी लगातार इतनी सेवा —इतना परिश्रम कर सकता है।"

फिर क्षण भर चुप रहकर कहा, "अविनाशके साथ मेरी जान-पहचान आगरेमें हुई। बीच बीचमें जाता-आता रहा हूँ। कितना सा परिचय है ! फिर भी आज सोचता हूँ कि संसारमें अपने-परायेका जो व्यवहार चल रहा है, वह कितना अर्थहीन है ! दुनियामें अपना पराया कोई नहीं। कमल, यह कोई नहीं जानता कि समागम इस महासमुद्रके प्रवाहमें पड़कर कौन कहाँसे बहता हुआ पास आ जाता है और कौन बहकर दूर चला जाता है।"

फिर उस अपरिचित स्त्री बहनके लिए दोनों ही समझ गये कि यह बात किसको लक्ष्य करके और किस दुःखमें कही गई है। आशु बाबू कुछ कुछ मानो अपने मन ही मन कहने लगे, "इस बीमारीसे उठनेके बादसे संसारकी बहुत सी चीज मानो कुछ दूसरी ही तरहकी नजर आने लगी हैं। ऐसा लगता है कि क्या इतनी खींचा-तानी बाँधा बाँधी और इतना भले-बुरेका वाद विवाद किया जाता है ! क्यों मनुष्य अपने चारों तरफ बहुत-सी भूलें और बहुत से धोखोंका जमा करके स्वेच्छासे अंधा बन रहा है ? अब भी उसे बहुत युगोंका अज्ञात सत्य ढूँढ निकालना होगा, तब कहीं वह सच्चे अर्थोंमें मनुष्य हो सकेगा ! आनन्द तो नहीं, बल्कि निरानन्द ही मानो उसकी इस सभ्यता और भद्रताका अन्तिम लक्ष्य बन गया है !"

कमल आश्चर्यसे उनकी तरफ देखती रही। यह बात नहीं कि उनकी बात का मतलब वह बिना किसी सन्देहके समझ रही हो। उसे ठीक ऐसा लगता था जैसे कि कुहरेके बीच किसी आगन्तुकका चेहरा अस्पष्ट-सा दीखता हो, मगर पैरोंकी चाल बिल्कुल परिचित हो।

आशु बाबू खुद ही रुके। शायद कमलकी विस्मित दृष्टिने उन्हें अपनी तरफसे चेता दिया, "तुम्हारे साथ मुझे और भी बहुत-सी बात करनी है कमल, किसी दिन फिर आना।"

"आऊँगी। आज जाती हूँ।"

"अच्छा। गाड़ी नीचे खड़ा है, तुम्हें वह पहुँचा देगा, इसीसे वासुदेवको छुट्टी नहीं दी है। अजित, तुम भी साथ क्यों नहीं चले जाते, लौटते वक्त तुम्हें आश्रममें उतारता आयेगा?"

दोनों नमस्कार करके बाहर निकल आये। बेला साथ-साथ गाड़ीतक आई, बोली, "आपके साथ बातचीत करनेका आज वक्त नहीं रहा, मगर अबकी किस रोज आयगी, मैं नहीं छोड़ूँगी।"

कमलने हँसकर सिर हिलाते हुए कहा, "यह मेरा सौभाग्य है। लेकिन डर लगता है, परिचय पाकर कहीं आपका मत न बदल जाय?"

मोटरमें दोनों जनें पास पास बैठे। चौराहेमें मुड़ते वक्त कमलने कहा, "उस दिनकी रात भी ऐसी ही अँधेरी थी,—याद है?"

"हाँ, याद है।"

"और उस दिनका पागलपन?"

"सो भी याद है।"

"मैं राजी हो गई थी, सो याद है?"

अजितने हँसकर कहा, "नहीं। मगर आपने जो व्यंग्य किया था सो याद है।" कमलने आश्चर्य प्रकट करते हुए कहा, "व्यंग्य किया था? नहीं तो!"

"जरूर किया था।"

कमलने कहा, "तो आपने गलत समझा था। खैर, उसे छोड़िए आज तो व्यंग्य नहीं कर रही?—चलिए न, आज ही दोनों जन चल दें?"

"धुत्। आप बड़ी शरीर हैं।"

कमलने हँसकर कहा, "शरीर कैसी? बताइए, मेरे जैसी शान्त सीधी स्त्री कहाँ मिलेगी? अचानक हुक्म किया, कमल, चलो चलें, और मैं उसी वक्त राजी होकर बोली, चलिए।"

"लेकिन वह तो सिर्फ मजाक था।"

कमलने कहा, "अच्छा, मजाक ही सही, लेकिन बताइए, अचानक ऐसा क्या कसूर हो गया जो 'तुम' छोड़कर अब 'आप' कहना शुरू कर दिया है? कितनी मुसीबतसे दिन काट रही हूँ, भला—आप ही लोगोंके कपड़े सा सीकर किसी तरह पेट चला रही हूँ,—और आपके पास रुपयोंका शुमार

नहीं,—पर एक दिन भी आपने मेरी सुधि ली ? मनोरमा अभी तकलीफ्में पड़ती तो क्या आपसे रहा जाता ? देखिए, दिन रात मेहनत मजदूरी करके कितनी दुबली हो गई हूँ !" इतना कहकर जैसे ही उसने अपना बायाँ हाथ अजितके हाथपर रखा वैसे ही अजित चौंक पड़ा और उसका सारा शरीर सिहर उठा। अस्फुट स्वरमें उसके मुँहसे कुछ निकला ही चाहता था कि कमल सहसा अपना हाथ उठाकर चिल्ला उठी, "ड्राइवर, रोको रोको, यहाँ पागल खानेके पास कहाँ आ गए ? गाड़ी घुमा लो। अँधेरेमें कुछ खयाल ही नहीं रहा।"

अजितने कहा, "हाँ, कुसूर अँधेरेका ही है। उसकी सिफ़्त यही है कि चाहे उसपर हजार अन्याय होता रहे, पर बेचारा प्रतिवाद नहीं कर सकता। इस अधिकारसे वह वंचित है।" और वह हँस दिया। सुनकर कमल भी हँस दी, बोली, "सो तो ठीक है। लेकिन न्याय विचार ही संसारमें सब कुछ नहीं है। यहाँ अन्याय अविचारके लिए भी स्थान है, इसीसे आजतक दुनिया चल रही है, नहीं तो न जाने यह कभीकी रुक गई होती।—ड्राइवर, बस।"

अजितने दरवाजा खोल दिया। कमल सड़कपर उतरकर बोली, "अँधेरेका इससे भी बढ़कर एक और अपराध है अजित बाबू, उसमें अकेले जानेमें डर मालूम होता है।"

इस इशारेपर अजित नीचे उतरकर पास आ खड़ा हुआ। कमलने ड्राइवरसे कहा, "अब तुम घर जाओ, इन्हें जानेमें अभी कुछ देर होगी।"

"सो कैसे ? इतनी रातको मुझे गाड़ी कहाँसे मिलेगी ?"

गाड़ी चली गई। अजित बोला, "मुझे मालूम है, कोई भी इन्तजाम न होगा। मुझे अँधेरेमें तीन-चार मील पैदल चलकर ही जाना पड़ेगा। और अभी मैं आपको पहुँचाकर आसानीसे घर जा सकता था।"

"नहीं जा सकते थे। कारण, बगैर खिलाये मैं आपको उस आश्रमको अनिश्चिततामें नहीं भेज सकती। चलिए, आइए।"

घरपर नौकरानी आग बत्ती जलाये बाट देख रही थी, पुकारते ही उसने दरवाजा खोल दिया। ऊपर रसोई घरमें आकर कमलने उसी सुन्दर आसनको बिछाते हुए अजितसे बैठनेके लिए कहा। सामान सब तैयार था, स्टोव जलाकर कमलने रसोई चढ़ा दी, और पास ही बैठकर बोली, "ऐसे ही और एक दिनकी बात याद है ?"

"जरूर !"

"अच्छा, उस दिनके साथ आज कहाँ क्या फर्क है, बता सकते हैं ? बताइये तो देखें ?"

अजित कमरेमें इधर-उधर देखकर याद करनेकी कोशिश करने लगा कि कहाँ क्या था।

कमलने हँसते हुए कहा, "उधर रात भर भी ढूँढ़कर न बता सकोगे। किसी दूसरी ही तरफ देखना पड़ेगा।"

"किधर, बताइए तो ?"

"मेरी तरफ।"

अजित सहसा मारे शरमके सकुचित सा हो गया। आहिस्तेसे बोला, "एक दिन भी मैंने आपका मुँह अच्छी तरह नहीं देखा। और सब देखा करते थे, पर मालूम नहीं क्यों, मुझसे देखते नहीं बनता था।"

कमलने कहा, "औरोंके साथ आपमें यही तो फर्क है। वे जो देखते थे उसका कारण यह था कि उनकी दृष्टिमें मेरे प्रति सम्मानका भाव नहीं था।"

अजित चुप रहा। कमल कहने लगी, "मैंने तय किया था कि जैसे भी होगा आपको खोज निकालूँगी। मुझे आशा नहीं थी कि आशु बाबूके घर आज आपसे भेंट हो जायगी, पर संयोगसे जब भेंट हो गई तब जान लिया कि पकड़ ही लाऊँगी। भोजन कराना तो महज एक छोटा सा उपलक्ष है, इसलिए भोजन कर चुकनेपर भी छुट्टी नहीं मिलेगी। आज रातको मैं आपको कहीं भी न जाने दूँगी, इसी घरमें बन्द कर रखूँगी।"

"पर इससे आपको फायदा क्या होगा ?"

कमलने कहा, "फायदेकी बात पीछे बतलाऊँगी, पर आप मुझसे 'आप' कहते हैं, तो सचमुच ही मुझे व्यथा होती है। एक दिन 'तुम' कहके बोलते थे,—उस दिन मैंने निहोरा नहीं किया था, आपने ही इच्छासे कहा था। आज उसे बदल देने लायक कोई भी कुसूर मैंने नहीं किया है। रूठकर अगर उत्तर न दूँ, तो आप ही कष्ट पायेंगे।"

अजितने सिर हिलाकर कहा, "हाँ, शायद पाऊँगा।"

कमलने कहा, "'शायद' नहीं, निश्चयसे पायेंगे। आप आगरे आये थे मनोरमाके लिए। पर वह जब इस तरहसे चली गई तब सबने सोचा कि अब

आप एक क्षण भी यहाँ नहा ठहरेंगे । सिर्फ एक मैं ही जानती थी कि आप नहीं जा सकेंगे ।—अच्छा, इस बातपर कि म आपको प्यार करती हूँ , आप विश्वास करते है ?"

"नहा, नहा करता ।"

"जरूर करते हैं । इसीसे आपके खिलाफ मेरी बहुत-सी नालिश है ।"

अजितने कुतूहलके साथ कहा, "बहुत-सी नालिश? एक आध सुनाओगी भी?"

कमलने कहा, "सुनाऊँगी, इसलिए तो मैंने जाने नहा दिया । पहले अपनी बात कहती हूँ । और कोई चारा नहीं, इससे गरीबोंके कपडे सीकर अपनी गुजर करती हूँ ,—यह सब मुझे सह्य है । पर इसलिए कि सकटम पडी हूँ , यह कैसे सहा जा सकता है कि आपके भी कुरते सीकर दाम लूँ?"

"पर तुम किसीका दान तो लेती नहीं हो ।"

"नहा, दान मैं किसीका नहा लेती,—यहाँतक कि आपका भी नहा । लेकिन दानके सिवा क्या ससारमे और देनेका कोई रास्ता खुला ही नहा ? आपने आकर जोर देकर क्यों नहीं कहा कि कमल, यह काम म तुम्हे नहा करने दूँगा । मैं उसका क्या जवाब देती ? दुर्दैवसे आज अगर मेरी मेहनत मजूरी करके खानेकी शक्ति जाती रहे तो फिर आपके जीते जी भी क्या मैं दर दर भीख माँगती फिरूँगी ?"

इस दर्दभरी बातने अजितको व्याकुल कर दिया, उसने कहा, "यह नहा हो सकता कमल, मेरे जीते जी यह असम्भव है । तुम्हारे विषयमें मैंने एक दिन भी इस तरह नहा सोचा । अब भी मानो मनमें यह बात बैठती नहीं कि जिस कमलको हम सब जानते है, वही तुम हो ।"

कमलने कहा, "और लोग चाहे जो जानते रहे, पर आप क्या उन्हींमसे एक हैं ? उनसे ज्यादा कुछ नहा ?"

इस प्रश्नका उत्तर नहा मिला । शायद अत्यन्त कठिन होनेके कारण, और इसके बाद दोनों चुप हो रहे । शायद, दोनोंने यह अनुभव किया कि दूसरेसे पूछनेकी अपेक्षा यह बात अपनेसे ही पूछनेकी ज्यादा जरूरत है ।

कितना सा राँधना था । तैयार होनेमें देर न लगी । खाते-खाते अजितने गम्भीर होकर कहा, "फिर भी, मजा यह कि पास चाहे कितना ही रुपया क्यो न हो, तुम्हारा कमाईका अन्न हाथ पसारके खाये बगैर किसीको छुटकारा

मिलता, और तुम न किसीका लेती हो न किसीका खाती हो,—कोई सिर पटक कर मर जाय, तो भी नहीं।"

कमलने हँसकर कहा, "आप खाते ही क्या हैं? इसके अलावा आपने सिर भी कब पटका है?"

अजितने कहा, "सिर पटकनेकी इच्छा बहुत बार हुई है। और तुम्हारा खाता इसलिए हूँ कि जबरदस्तीमें तुमसे जीत नहीं पाता। आज मैं अगर कहूँ कि कमल, आजसे मैंने तुम्हारा सारा भार अपने ऊपर ले लिया, यह उञ्छ-वृत्ति अब मत करो, तो सम्भव है कि तुम कोई ऐसी बात कह बैठो कि मेरे मुँहसे फिर दूसरा कोई वाक्य ही न निकले।"

कमलने कहा, "यह बात क्या कही थी कभी आपने?"

"शायद कही थी।"

"और मैंने सुनी नहीं वह बात?"

"नहीं।"

"तो आपने सुनने लायक तरीकेसे नहीं कही। शायद, मन ही मन सिर्फ इच्छा ही थी,—मुँहसे वह जाहिर नहीं हुई।"

"अच्छा, मान लीजिए, आज ही अगर कहूँ?"

"और मैं भी अगर कहूँ कि नहीं?"

अजितने हाथका कौर नीचे रखते हुए कहा, "यही तो मुश्किल है। तुम्हें एक दिनके लिए भी हम लोग समझ नहीं सके। जिस दिन ताजमहलके सामने पहले देखा था, उस दिन भी जैसे तुम्हारी बात समझमें नहीं आई, वैसे ही आज भी हम लोगोंके लिए तुम 'रहस्य' ही बनी हुई हो। अभी तुमने कहा था कि मेरा भार सँभाल लो और अभीकी अभी कह रही हो नहीं!"

कमल हँस दी, बोली, "ऐसी 'नहीं' जरा आप भी कह दीजिए न! कहिए कि आज तो खाया है, फिर कभी न खाऊँगे,—देखूँ, कैसे आपकी बात रहती है!"

अजितने कहा, "रहेगी कैसे? बगैर खिलाये तुम तो छोड़ोगी नहीं।"

परन्तु अबकी बार कमल नहीं हँसी। शान्त भावसे बोली, 'आपके लिए मेरा भार उठानेका समय अभी नहीं आया। जिस दिन आयेगा उस दिन मेरे मुँहसे भी 'ना' नहीं निकलेगा। रात ढलती जा रही है, आप खा लीजिए।"

"जाता हूँ। वह दिन कभी आयेगा या नहीं, बता सकती हो?"

कमलने सिर हिलाते हुए कहा, "सो मैं नहीं बता सकती। जवाब आपको खुद ही एक दिन खोज लेना पड़ेगा।"

"इतनी शक्ति मुझमें नहीं है। एक दिन बहुत खोजा था, पर मिला नहीं। इसी आशासे कि जवाब तुम्हींसे मिलेगा, मैं हाथ पसारे बैठा रहूँगा।"

इसके बाद वह चुपचाप खाने लगा। थोड़ी देर बाद कमलने पूछा, "इस घरके होते हुए भी अचानक हरेन्द्रके आश्रममें रहने क्यों पहुँचे?"

अजितने कहा, "कहीं न-कहीं तो पहुँचना ही था। तुम खुद ही जानती हो, आगरा छोड़कर मैं कहीं जा नहीं सकता था।"

"सो जानती हूँ न?"

"हाँ, जानती तो हो ही।"

"और यही अगर सच हो, तो सीधे मेरे पास क्यों न चले आये?"

"अगर आता, तो सचमुच ही जगह दे देतीं?"

"सचमुच तो आये नहीं? खैर, इसे छोड़िए, पर हरेन्द्रके आश्रममें तो असुविधाओंका ओर-छोर नहीं,—यही उनकी साधना ठहरी,—मगर इतनी असुविधाएँ आप कैसे सह लेते हैं?"

"मालूम नहीं, कैसे सह लेता हूँ, पर आज मुझे उन सब बातोंका मनमें खयाल भी नहीं आता। अब तो मैं उन्हींमेंसे एक हो गया हूँ। हो सकता है कि यही मेरा भविष्यका जीवन हो। अबतक चुप भी नहीं बैठा था। आदमी भेजकर जगह-जगह आश्रम कायम करनेकी कोशिश करता रहा हूँ—तीन चार जगहसे उम्मीद भी मिली है,—जी चाहता है, एक बार खुद जाकर घूम आऊँ।"

"यह सलाह आपको दी किसने? हरेन्द्रने शायद?"

अजितने कहा, "अगर दी भी हो तो निष्पाप होकर ही दी है। देशका सर्वनाश जिन लोगोंने अपनी आँखोंसे देखा है,—दारिद्र्यका निष्ठुर दुःख, धर्महीनताकी गहरी ग्लानि, कमजोरोंसे उत्पन्न दयनीय भीरुता—"

कमल बीचमें ही बोल उठी, "हरेन्द्रने यह सब देखा होगा, मैं इनकार नहीं करती, पर आपके निकट तो ये सब सुनी हुई बातें हैं। अपनी आँखोंसे तो आपको कभी कुछ देखनेका मौका मिला नहीं?"

"पर रात तो ये सब ठीक है ?"

"सच नहीं है, या मैं नहीं कहती, पर उसके प्रतिकारका उपाय क्या इन आश्रमकी प्रतिज्ञा है ?"

"नहीं क्या ? भारतवर्ष मानो सिर्फ उत्तरमें हिमालय और ताना ओर समुद्रसे घिरा हुआ थोड़ा सा भूखण्ड ही तो नहीं ? यहाँकी प्राचीन सभ्यता, यहाँकी धार्मिक विशिष्टता, यहाँकी नैतिक पवित्रता, न्याय निष्ठाकी महिमा,—यही तो भारत है। इसीसे इसका नाम है देवभूमि, इस अत्यन्त हीन दशासे बचानेके लिए तपस्याके सिवा और क्या मार्ग है ? ब्रह्मचर्य व्रतधारा निष्कलंक बच्चोंके लिए जीवनमें सार्थक होने और धन्य होनेके—"

कमलने उसे रोक दिया, बोल उठी, "आप जीम चुके हों तो हाथ मुँह धोकर उठिए, उस कमरेमें चलिए—उठिए, अब नहीं।"

"तुम नहीं खाओगी ?"

"मैं क्या दोनों वक्त खाती हूँ जो खाऊँगी ? चलिए।"

"पर मुझे तो आश्रम वापस जाना है।"

"नहीं, नहीं जाना है, उस कमरेमें चलिए। बहुत सी बातें आपसे मुझे सुननी हैं।"

"अच्छा, चलो। लेकिन बाहर रहनेका हमारा नियम नहीं है—कितनी ही रात क्यों न हो, आश्रममें वापस जाना ही पड़ेगा।"

कमलने कहा, "वह नियम दीक्षित आश्रमवासियोंके लिए है, आपके लिए नहीं।"

"मगर लोग क्या कहेंगे ?"

इस उल्लेखमें कि लोग क्या कहते हैं, कमलका धैर्य छूट जाता है। उसने कहा, "लोग सिर्फ आपकी निंदा ही करेंगे, रक्षा नहीं कर सकते। जो रक्षा कर सकेगी उसके निकट आपको कोई डर नहीं। आपके 'उन लोगों' से मैं कहीं ज्यादा आपकी अपनी हूँ। उस दिन आपने साथ चलनेको कहा था, पर मैं जा नहीं सकी,—आज बगैर चले मेरा काम नहीं चलेगा। चलिए उस कमरेमें, मुझसे कोई डर नहीं। मैं उनकी जातिकी नहीं हूँ जो पुरुषके भोगकी ही वस्तु है। उठिए।"

उस कमरेमें ले जाकर कमलने अजितके लिए बिल्कुल नये कपड़ोंसे पलंग-

पर सुन्दर बिस्तर कर दिये और अपने लिए जमीनपर मामूली सा बिछौना कर लिया। फिर उठकर बाहर जाते हुए उसने कहा, "मैं अभी आती हूँ। दसेक मिनट लगेंगे, मगर आप सो मत जाइएगा।"

"नहीं।"

"नहीं तो मैं झकझोरकर जगा दूँगी।"

"उसकी जरूरत न होगी कमल, नींद मेरी आँखोंसे उड़ गई है।"

"अच्छा, उसकी परीक्षा हो जायगी।" कहकर वह कमरेसे बाहर चली गई। रसोईके बरतन यथास्थान उठाके रखना, जूठे बरतन बरण्डेमें रखना, घर गृहस्थीके ऐसे ही सब छोटे मोटे काम जो बाकी थे उन्हें उसने पूरा किया, तब जाने कहाँ उसकी छुट्टी हुई।

सूने कमरेमें कमलके हाथके बड़े जतनसे बिछाए शुभ्र सुन्दर शय्यापर बैठकर सहसा उसने एक गहरी साँस ली। इसका खास कोई गहरा कारण नहीं था, सिर्फ मनके अन्दर 'अच्छा लगने'की एक तृप्ति थी। हो सकता है कि उसमें थोड़ा-सा कुतूहल भी मिला हुआ हो, पर आग्रहका उत्ताप नहीं था। मालूम होता था कि मानो एक शान्त आनन्दका मधुर स्पर्श चुपकेसे उसके सारे शरीरमें फैल गया है।

अजित धनाढ्य घरकी सन्तान है, जन्मसे विलासके अन्दर ही यह इतना बड़ा हुआ है, परन्तु इन्द्रके ब्रह्मचर्य-आश्रममें भरती होनेके बादसे गरीबी और आत्म निग्रहके दुर्गम मार्गसे भारतीय वैराग्यकी मर्मोपलब्धिकी एकाग्र साधनाने उधरसे उसकी दृष्टि हटा दी है। सहसा उसकी नजर तकियेपर पड़ी, देखा कि उसकी खोलीपर चारों तरफ पीले सूतसे छोटे चन्द्रमा लताके फूल कढ़े हुए हैं। बिछौनेकी चादरका जो कोना नीचे लटक रहा है उसपर सफेद रेशमसे कढ़ी हुई किसी अज्ञात लताकी तसवीर बनी हुई है। जरा-सी कारीगरी थी,—मामूली बात, जो न जाने और कितने आदमियोंके घर होगी। फुरसतके वक्त कमलने इसे अपने हाथसे काढ़ा है। देखकर अजित मुग्ध हो गया। हाथसे उसे हिला डुला रहा था कि कमल बाहरका काम निबटाकर कमरेमें आ खड़ी हुई। अजित उसके चेहरेकी तरफ देखकर बोल उठा, "वाह, बहुत सुन्दर है!"

कमलने आश्चर्यके स्वरमें कहा, "क्या सुन्दर है? यह क्या?"

"हाँ, और यह पीले रगके फूल। तुमने अपने हाथसे काढ़े है, न ?"

कमलने हँसते हुए कहा, "खूब पूछा। अपने हाथसे नहा काढ़ती तो क्या बाजारमे कारीगर बुलाकर तैयार कराती ? आपको चाहिए ऐसा ?"

"नहीं, नहा, मुझे नहीं चाहिए। मैं क्या करूँगा ?"

उसके इस आकुल और सल्ज्ज इनकारसे कमल हँस पडी, बाली, "आश्रम म जाकर इसपर साइएगा और कोइ पूछे तो कहिएगा कमल्ने रात भर जागकर इसे बना दिया है।"

"धुत् !"

"धुत् क्यों ? ये सब चीज काइ अपने लिए थोड़े ही बनाता है, दूसरे ही किसी आदमीक लिए बनाइ जाती है। तस्लीप झेल्कर जो फूल काढ़े थे सो क्या अपने सोनेके लिए ? एक न एक दिन कोइ न कोइ आता ही, उसीके लिए ये चीज उठाके रख दी थीं। सबेरे जब आप जाने लगगे तब ये आपके साथ रख दूँगी।"

अबकी बार अजित भी हँस दिया, बोला, "अच्छा कमल, तुमने क्या मुझे बिल्कुल ही मूर्ख समझ रखा है ?"

"क्यों ?"

"क्या इस बातपर भी म विश्वास कर लूँ कि तुमने मेरी ही याद करके ये सब चीज तैयार की थी ?"

"क्यों नहा करेंगे ?"

"इसलिए कि बात सच नहा है।"

"पर अगर कहूँ कि म सच कह रही हूँ, तो विश्वास करगे, कहिए ?"

"जरूर करूँगा। मगर तुम्हारे मजाककी कोइ हद नहीं,—कहा भी तुम्हे हिचकिचाहट नहीं होती। उस दिनकी मोटरपर घूमनेकी बात याद आते ही लज्जाकी हद नहीं रहती। यह बात दूसरी है, पर इसका मुझे भरोसा है कि मजाकके सिवाय और किसी बातके लिए तुम झूठ नहीं बोलोगी।"

"अगर मे कहूँ कि वास्तवमे मैंने मजाक नहा किया, बिल्कुल सच कह रही हूँ, तो विश्वास करगे ?"

"जरूर करूँगा।"

कमलने कहा, "अगर करें तो आज मैं बात ही कहूँगी। तब

तब गजेन्द्र नहीं आया था, अर्थात्, आश्रमसे निकलकर तबतक उसने मेरे यहाँ आश्रय नहीं लिया था। मेरी भी वही दशा थी। आप लोगोंने मिलकर जब मुझे घृणासे दूर कर दिया,—इस परदेशमें जब किसीके पास जाकर खड़े होनेका उपाय नहीं रहा, तबका ही,—उन गम्भीर दुःखके दिनोंका ही यह काम है। शायद मुझे कभी मालूम भी न होता कि उस दिन ठीक किसकी याद करके ये फूल काढ़े थे।—लगभग भूल ही चुकी थी, मगर आज किसी निभृत वक्त अचानक ऐसा लगा कि नहीं-नहीं, उसपर नहीं,—जिसपर कोई किसी दिन सो चुका है उसपर मैं आपको हर्गिज नहीं सुला सकती।"

"क्यों नहीं सुला सकती?"

"मालूम नहीं क्यों, जैसे कोई धक्का देकर यह बात कह गया हो।" कहकर वह क्षणभर मौन रही और फिर बोली, "उसी समय सहसा इन चीजोंकी याद आई कि ये बक्समें रखी हैं। आप तब बाहर हाथ मुँह धो रहे थे। इस डरसे कि आप झटसे आ पहुँचोगे, मैंने जल्दी जल्दी इन्हें निकालकर बिछाना शुरू कर दिया। तब मेरे मनमें पहले-पहल यह ख्याल आया कि उस दिन किसकी याद करके रात भर जागकर यह फूल पत्ती बना डाली थी वह आप ही थे।"

अजित कुछ बोला नहीं। सिर्फ एक रंगीन आभा उसके चेहरेपर दिखाई दी और उसी क्षण विलीन हो गई।

कमल खुद भी कुछ देर चुप रही, फिर बोली, "चुप मारे क्या सोच रहे हो, बताइए न?"

अजितने कहा, "सिर्फ चुप ही मारे हूँ, कुछ सोच नहीं रहा हूँ।"

"इसकी वजह?"

"वजह? तुम्हारी बात सुनकर मेरी छातीके भीतर मानो आँधी-सी उठ खड़ी हुई है। सिर्फ आँधी ही,—न तो आया आनन्द और न बँधी आशा ही।"

कमल चुपचाप उसकी तरफ देखती रही। अजित धीरे धीरे कहने लगा, "कमल, एक किस्सा कहता हूँ, सुनो। मेरी माँको एक बार हमारे गृह-देवता राधावल्लभजीने पूजावाले कमरेमें मूर्ति धारण करके दर्शन दिये और माँके हाथसे भोग लेकर सामने बैठकर खाया। यह उनकी अपनी आँखों देखी बात थी, फिर भी घरमें हम लोगोंमेंसे कोई उसपर विश्वास नहीं कर सका। सबने समझा कि सपना होगा, मगर हमारे इस अविश्वासका दुःख उन्हें मरते दमतक बना रहा।

आज तुम्हारा बात सुनकर मुझे वही बात याद आ रही है। मैं जानता हूँ कि तुम ऐसी नहीं कर रही हो, मगर फिर भी, मेरी माँकी तरह तुमसे भी कहीं बड़ा भारी गलती हो गई है। मनुष्यके जीवनमें ऐसा बहुत-सा समय चला जाता है जब वह अपने मध्य-भ्रममें अँधेरेमें रहता है। फिर शायद सहसा एक दिन आँख खुलती है। मेरा भी यही हाल है। यों तो मैं अबतक दुनियामें और भी बहुत जगह घूमता रहा हूँ, लेकिन सिर्फ इस आगरेमें आकर ही मैंने ठीकसे अपनेको पहचाना है। मेरे पास है तो सिर्फ रुपया है और वह भी पिताकी कमाईका। इसके सिवा ऐसी कोई भी चीज मेरी अपनी नहीं, जिसके लिए तुम मेरी गैर जानकारीमें मुझसे प्रेम कर सकती।"

कमलने कहा, "रुपयाकी कोई फिकर न कीजिए आप। आश्रम-वासियोंका जब कि एक मरतबा उसका पता चल गया है तब उसका सब व्यवस्था वे ही कर डालेंगे।" कहते-कहते वह जरा हँसी और फिर बोली, "लेकिन और सब तरफसे आप ऐसे नि:स्व हैं सो इसकी खबर मैंने क्या पहले खाक पाई थी? अगर पाई होती तो क्या कभी प्रेम करने आती? इसके सिवा आपके स्वभावकी भलाई-बुराई समझनेका वक्त ही कहाँ मिला था मुझे? मनमें सिर्फ एक सन्देह था जिसका पता नहीं चल रहा था, पर अभी-अभी दसेक मिनट हुए, अकेली बिस्तरके सामने खड़ी थी कि अकस्मात् कोई ठीक खबर मेरे कानमें आकर सुना गया।"

अजितने गहरे आश्चर्यके साथ पूछा, "सच कह रही हो? सिर्फ दसेक मिनट हुए? पर अगर सच हो तो यह पागलपन है!"

कमलने कहा, "पागलपन तो है ही। इसीसे तो आपसे कहा था कि मुझे और कहीं ले चलिए। ऐसी भीख तो मैंने माँगी नहीं कि ब्याह करके मेरे साथ घर गृहस्थी कीजिए।"

अजित अत्यन्त कुण्ठित हो गया, बोला, "भीख क्यों कहती हो कमल, यह भीख माँगना नहीं है, यह तुम्हारा प्रेमका अधिकार है। मगर अधिकारका दावा तुमने नहीं किया, माँगी ऐसी चीज जो पानीके बुदबुदेकी तरह अल्पायु है, और उसीकी तरह मिथ्या।"

कमलने कहा, "हो भी सकता है कि उसकी आयु कम हो, मगर इससे वह मिथ्या क्यों होगी? आयुकी दीर्घताको ही जो सत्य समझकर जकड़े रहना चाहते

है, मैं उनमेंसे नहीं हूँ।"

"पर इस आनन्दमें तो कुछ भी स्थायित्व नहीं, कमल!"

"न रहे। लेकिन जो लोग, इस डरसे कि असली फूल जल्दीसे सूख जाते हैं, देरतक रहनेवाले नकली फूलोंका गुच्छ बनाते और फूलदानीमें सजाकर रखते हैं, उनके साथ मेरे मतका मेल नहीं खाता। आपसे पहले भी मैंने एक बार ठीक यही बात कही थी कि किसी भी आनन्दमें स्थायित्व नहीं है। स्थायी हैं सिर्फ उस आनन्दके क्षणस्थायी दिन और वे दिन ही तो मानव-जीवनके परम सञ्चय हैं। उस आनन्दको बाँधने चले कि वह मरा। इसीसे ब्याहमें स्थायित्व तो है, पर उसका आनन्द नहीं। दु:सह स्थायित्वकी माटी रस्सी गलेमें बाँधकर वह आनन्द आत्महत्या करके मर मिटता है।"

अजितको याद आया कि ठीक यही बात उसने पहले भी कमलके मुँहसे सुनी थी। सिर्फ मुँहकी बात ही नहीं है यह,—यही उसका अन्त:करणका विश्वास है। शिवनाथने उससे ब्याह नहीं किया, किन्तु धोखा दिया था, इस बातको लेकर एक दिनके लिए भी उसने कोई शिकायत नहीं की। क्या नहीं की? आज यह पहले पहल अजितने बिना किसी संशयके समझा कि इस मामलेमें कमलकी अपनी भी राय थी। संसार भरकी मानव जातिके इस प्राचीन और पवित्र संस्कारके प्रति इतनी जबरदस्त अश्रद्धाके कारण अजितका मन धिक्कारसे भर उठा।

क्षणभर मौन रहकर वह बोला, "तुम्हारे सामने गर्व करना मुझे शोभा नहीं देता। पर तुमसे अब मैं कोई बात छिपाऊँगा नहीं। ये लोग कहते हैं कि संसारमें कामिनी काञ्चनका त्याग ही पुरुषका सबसे बड़ा पुरुषार्थ है। बुद्धिकी तरफसे मैं इसपर विश्वास करता हूँ और यह भी मानता हूँ कि इस साधनामें सिद्धि प्राप्त करनेकी अपेक्षा और कोई महत्तर वस्तु नहीं। काञ्चन मेरे पास काफी है, उसकी मुझे इच्छा नहीं, परन्तु जब मैं सोचता हूँ कि मुझे अपने सम्पूर्ण जीवनमें न कोई प्यार करनेवाला मिला और न कोई मिलेगा, तब मेरा हृदय मानो सूख जाता है। और डर लगता है कि हृदयकी इस कमजोरीसे शायद मैं मरते दमतक न जीत सकूँगा। भाग्यमें यही अगर किसी दिन घटा, तो मैं आश्रम छोड़कर कहीं चला जाऊँगा। पर तुम्हारा आह्वान तो उससे भी बढ़कर मिथ्या है। उस पुकारका मैं अनुकूल जवाब न दे सकूँगा।"

"इसे आप मिथ्या क्यों कह रहे हैं ?"

"मिथ्या तो है ही। मनोरमाका आचरण समझमें आता है, क्योंकि वास्तवमें कभी उसने मुझे प्यार नहीं किया, किन्तु शिवनाथके प्रति शिवानीका प्यार तो मैंने अपनी आँखोंसे देखा है। उस दिन मानो उसकी कोई सीमा ही नहीं थी, पर आज उसका निशानतक मिट गया है।"

कमलने कहा, "आज वह अगर मिट ही गया हो, तो उस दिनका क्या सिर्फ मेरा छल ही आपकी निगाहमें आया था ?"

अजितने कहा, "सो तो तुम्हीं जानो, पर आज मुझे लगता है कि नारीके जीवनमें इससे बढ़कर मिथ्या और कुछ है ही नहीं।"

कमलकी दृष्टि प्रखर हो उठी, उसने कहा, "नारी-जीवनके सत्यासत्य निर्णयका भार नारीपर ही रहने दीजिए। उसके निर्णयका दायित्व पुरुषको लेनेकी जरूरत नहीं—न मनोरमाका और न कमलका। इसी तरहसे संसारमें न्याय चिरकालसे विडम्बित होता आ रहा है, नारी असम्मानित होती रही है और पुरुषका चित्त मलीन और कलुषित होता गया है। इसीसे इस झूठे मामलेका आजतक फैसला नहीं हुआ। अविचारसे सिर्फ एक ही पक्ष क्षतिग्रस्त नहीं होता अजित बाबू, दोनों पक्षोंका सर्वनाश होता है। उस दिन शिवनाथने जो कुछ पाया था, दुनियामें बहुत कम पुरुषोंके भाग्यमें उतना बड़ा होता है पर आज वह नहीं है। यह तर्क उठाकर कि क्यों नहीं है, पुरुष अपने मोटे हाथमें मोटा डण्डा घुमाकर शासन भले ही कर ले, पर उसे पा नहीं सकता। उस दिनका होना जितना बड़ा सत्य था, आजका न होना भी ठीक उतना ही बड़ा सत्य है। क्योंकि शठताकी फटी गुदड़ी ओढ़ाकर इसे ढक देनेमें शरम आती है, इसी वजहसे पुरुषने विचारसे यह ठहरा दिया नारी जीवनका सबसे बड़ा मिथ्या ! क्या इसी सुविचारकी आशासे हम आप लोगोंका मुँह ताका करती हैं ?"

अजितने जवाब दिया, "मगर उपाय क्या है ? जो इतना क्षणस्थायी है, इतना क्षणभंगुर है, उसे इससे ज्यादा सम्मान मनुष्य देगा ही क्या ?"

कमलने कहा, "देगा नहीं, यह मैं जानती हूँ। हमारे आँगनके किनारे जो फूल खिलते हैं उनका जीवन एक दिनसे ज्यादा नहीं। उससे बल्कि वह मसाला पीसनेका सिल-लोढ़ा कहीं ज्यादा टिकाऊ है,—कहीं ज्यादा दीर्घस्थायी है। सत्यकी जाँचका इससे ज्यादा मजबूत माप दण्ड आप लोग और पा ही कहाँ

सकते हैं !'

"कमल, यह युक्ति नहीं है, यह तो सिर्फ गुस्सेकी बात है।"

"गुस्सा किस बातका अजित बाबू! सिर्फ स्थायित्व लेकर ही जिनका कारोबार है, वे इसी तरह कीमत आँका करते हैं। मेरे आह्वानपर जो आपसे 'हाँ' कहते नहीं बना, उसकी जड़में भी यही संशय है। दस्तखत करके जो चिरकालके लिए बन्धन नहीं लेना चाहती उसपर आप विश्वास करेंगे किस तरह! फूलको जो नहीं जानता उसके लिए वह सिल-लोढ़ा ही सबसे बड़ा सत्य है, क्योंकि उस सिल-लोढ़ेके सूखकर झड़ जानेकी आशंका नहीं है। फूलकी आयु सिर्फ एक शामकी है और सिल-लोढ़ा हमेशाके लिए है। गृहस्थकी जरूरतके मुताबिक वह हमेशा रगड़-रगड़कर मसाला पीस दिया करेगा,—रोटी निगलनेके लिए तरकारीका उपकरण जो ठहरा वह, उसपर भरोसा किया जा सकता है। उसके न होनेसे संसार बरबाद हो जायगा।'"

अजित उसके मुँहकी तरफ देखता हुआ बोला, "यह व्यंग्य किसलिए कमल?"

कमलके कानोंतक शायद यह प्रश्न पहुँचा ही नहीं, वह मानो अपने आप ही कहने लगी, "मनुष्य यह समझ ही नहीं पाता कि हृदय लोहेसे बना नहीं होता,—इस तरह निश्चिन्त निर्भयतासे उसपर सारा बोझा नहीं लादा जा सकता। उसमें दुःख न होता हो सो बात नहीं,—पर यही हृदयका धर्म है, यही उसका सत्य है। फिर भी यह बात कही भी नहीं जा सकती और न मानी ही जा सकती है। इससे बढ़कर अनीति संसारमें और क्या है? इसीसे तो किसीकी समझमें न आया कि शिवनाथको कैसे मैं सहज अन्तःकरणसे क्षमा कर सकी हूँ! रो-धोकर यौवनमें जोगन बनना उनकी समझमें आ जाता, पर यह उनसे नहीं सहा गया। अरुचि और अवहेलनासे सारा मन उनका कडुआ हो गया। पेड़के पत्ते सूखके झड़ जाते हैं और उनके स्थानको नये पत्ते आकर भर देते हैं। यह तो हुआ मिथ्या और बाहरकी लता मर जानेपर भी पेड़से लिपटी रहती है,—यत्नसे चिपटी रहती है, यह हो गया सत्य!"

अजित एक मनसे सुन रहा था, उसकी बात खतम होते ही एक गहरी साँस छोड़कर बोला, "एक बात हम लोग अक्सर भूल जाया करते हैं कि असलमें तुम हमारी अपनी नहीं हो। तुम्हारा खून, तुम्हारा संस्कार, तुम्हारी सारी शिक्षा विदेशी है। इसके प्रचण्ड संघातको काटकर तुम किसी तरह ऊपर उठ नहीं

सकतीं और इसी जगह हमारी तुम्हारे साथ निरन्तर कलह होती है। रात बहुत हो गई कमल, इस निष्फल झगड़ेको बन्द करो।—यह आदर्श तुम्हारे लिए नहीं है।"

"कौन-सा आदर्श? आपके ब्रह्मचर्य आश्रमका?"

इस तानेकी चोटसे अजित मन ही मन गुस्सा हो गया, बोला, "अच्छा, सो ही सही। लेकिन इसे तुम नहीं समझोगी कि इसका गूढ़ तत्व विदेशियोंके लिए नहीं है।"

"आपकी शागिर्दी करनेपर भी नहीं।"

"नहीं।"

अबकी कमल हँस पड़ी, मानो अब वह पहलेकी रही ही नहीं। बोली, "अच्छा, यह तो बताइए कि उन साधुओंके अड्डेमसे आपका नाम कैसे कटवा सकती हूँ? वास्तवमें यह आश्रम मेरी आँखका काँटा बन गया है।"

अजित बिस्तरपर पड़ रहा, बोला, "राजेन्द्रको बुलाकर तुमने अनायास ही जगह दे दी।—तुम्हें कुछ भी हिचकिचाहट न हुई,—क्यों?"

"हिचकिचाहट क्यों होती?"

"इन सब बातोंकी तुम परवाह ही नहीं करती क्या?"

"क्या परवाह नहीं करती?—आप लोगोंके मतामतकी?—सो तो नहीं करती।"

"अपने सभ्य धर्ममें भी शायद कभी किसी बातसे डरती नहीं?"

कमलने कहा, "यह तो नहीं कह सकती कि कभी डरती ही नहीं, पर ब्रह्मचारीसे डर किस बातका?"

"हूँ।" कहके अजित चुप हो गया।

फिर कुछ देर बाद एकाएक बोल उठा, "केंचुआ मिट्टीके नीचे अँधेरेमें रहता है, वह जानता है कि बाहरके उजालेमें निकलनेमें उसका बचना मुश्किल है,—उसे लील जानेके लिए बहुतसे मुँह बाये फिर रहे हैं। छिपनेके सिवा आत्म रक्षाका और कोई उपाय उसे मालूम नहीं। पर तुम जानती हो कि आदमी केंचुआ नहीं, यहाँतक कि औरत होनेपर भी नहीं। शास्त्रमें लिखा है, अपने स्वरूपको जान लेना ही परम शक्ति है,—और तुम्हारा यह अपना स्वरूप ज्ञान ही तुम्हारी असल शक्ति है, —क्यों है न ठीक?"

कमल कुछ बोली नहीं, चुप रही।

अजितने कहा, "स्त्रियाँ जिस चीजको अपने इहजीवनका सर्वस्व समझती हैं, उसपर तुम्हारी ऐसी एक सहज उदासीनता है कि चाहे कोई कितनी ही निन्दा किया करे, वह तुम्हारे चारों तरफ आगकी चहारदीवारी बनकर प्रतिक्षण तुम्हें बचाया करती है। तुम तक पहुँचनेसे पहले ही वह निन्दा खुद जलकर भस्म हो जाती है। अभी-अभी तुम मुझसे कह रही थीं कि जो पुरुषके भोगकी वस्तु हैं उनकी जातिकी तुम नहीं हो। आजकी रातमें तुम्हारे साथ आमने सामने बैठकर उस बातका अर्थ स्पष्ट होता आ रहा है। मैं यह भी समझ रहा हूँ कि लोगोंकी निन्दा प्रशंसाकी अवज्ञा करनेकी हिम्मत तुम्हें कहाँसे मिला करती है।"

कमलने कृत्रिम आश्चर्यसे मुँह ऊपर कर कहा, "आपको हुआ क्या है अजित बाबू, बातें तो आज बहुत कुछ शायरानाकी-सी कर रहे हैं?"

अजितने कहा, "अच्छा कमल, सच्ची बताओ, तुम्हारे लिए मेरा मतामत भी क्या औरोंकी तरह ही तुच्छ है?"

"पर यह बात जानकर आप क्या करेंगे?"

"कमल, अपनेको बलिमान समझकर मैंने कभी तुम्हारे आगे घमण्ड नहीं किया। वास्तवमें भीतर भीतर मैं जितना कमजोर हूँ उतना ही असहाय भी। किसी कामको जोरसे कर डालनेकी ताकत ही नहीं मुझमें।"

कमल हँसने लगी, "सो तो मैं आपसे बहुत ज्यादा जानती हूँ।"

अजितने कहा, "मुझे क्या लगता है जानती हो? लगता है कि तुम्हें पाना जितना सरल है, गँवा देना भी उतना ही आसान है।"

कमलने कहा, "यह भी मुझे मालूम है।"

अजित अपने मन ही मन सिर हिलाकर बोला, "यही तो मुश्किल है। तुम्हें आज पा लेना ही तो सब कुछ नहीं है। एक दिन अगर इसी तरह गँवा देना पड़ा तो क्या होगा?"

कमलने शान्त कण्ठसे कहा, "कुछ भी न होगा, उस दिन गँवाना भी ऐसा ही सहज हो जायगा। जितने दिनतक पास रहूँगी, उतने दिन आपको यही विद्या सिखाया करूँगी।"

अजित भीतरसे चौंक पड़ा। बोला, "विलायतमें रहते हुए मैंने देखा है कि वहाँवाले कितनी आसानीसे,—कितने मामूली कारणोंसे हमेशाके लिए निश्चिन्त

हो जाया करते हैं। मनमें सोचता हूँ, क्या उन्हें जरा भी चोट नहीं लगती? और यही अगर उनके प्रेमका परिचय है तो वे सभ्यताका गर्व कैसे किया करते हैं!"

कमलने कहा, "अजित बाबू, बाहरसे अखबारोंमें वह जितना सहज दीखता है, असलमें वह उतना सहज नहीं है। मगर फिर भी, मैं तो यही कामना करती हूँ कि नर नारीका यह परिचय ही किसी दिन जगत्में प्रकाश और हवाकी तरह सहज-स्वाभाविक बन जाय।"

अजित चुपचाप उसके मुँहकी तरफ ताकता रह गया, कुछ बोला नहीं। उसके बाद आहिस्तेसे दूसरी तरफ मुँह फेरकर लेटते ही, मालूम नहीं क्यों, उसकी आँखोंमें आँसू भर आये।

शायद कमल ताड गई। उठकर वह पलगके सिरहानेके पास जा बैठी और उसके माथेपर हाथ फेरने लगी, मगर सान्त्वनाका एक शब्द भी उसने मुँहसे नहीं निकाला।

सामनेकी खुली हुई खिड़कीसे दिखाई दिया कि पूर्वका आकाश स्वच्छ होता आ रहा है।

"अजित बाबू, सोनेका अब शायद समय नहीं रहा।"

"नहीं, अब उठता हूँ।" कहकर वह आँखें मींचता हुआ उठकर बैठ गया।

२२

आशु बाबूने शायद अपने विधाताके आगे भी कभी इससे ज्यादाका दावा न किया होगा कि वे ससारके साधारण आदमियोंमेंसे एक हैं। जैसे शान्ति आनन्दके साथ उन्होंने अपनी बडी भारी पैतृक धन-सम्पत्तिको ग्रहण किया था वैसे ही अपने विराट् देह भार और उसके साथी वात रोगको भी साधारण दुःखके रूपमें स्वीकार कर लिया था। और इस सत्यको उन्होंने सिर्फ बुद्धिसे ही नहीं, किन्तु, हृदयसे भी अनुभव किया था कि ससारके सुख दुःख विधाताने केवल उन्हींको लक्ष्य करके नहीं गढ़े हैं बल्कि वे अपने नियमानुसार हुआ करते हैं, और इसकी प्राप्तिके लिए भी उन्हें कोई तपस्या नहीं करनी पडी,—उनमें यह बात स्वाभाविक सस्कारके रूपमें आई है। उस दिन, जिस

दिन कि आकस्मिक स्त्री वियोगकी दुर्घटनाके सारा संसार उनकी दृष्टिमें फीका और सूखा दिखाई दिया था, जैसे उन्होंने अपने भाग्य देवताको हजारों धिक्कारोंसे लाञ्छित नहीं किया, वैसे ही आज भी जब कि उनकी अत्यन्त स्नेहकी पूँजी मनोरमाने उनकी तमाम आशा-कामनाओंमें आग लगा दी, वे सिर धुन धुनके रोने नहीं बैठे। क्षोभ और दुःसह नैराश्यके बीच भी उनके मनमें न जाने कौन मानो अत्यन्त परिचित कण्ठसे बार-बार कहता रहा कि यह ऐसा ही होता रहता है, ऐसे बहुत दुःख मनुष्योंके भाग्यमें बहुत बार आये हैं। ऐसे ही संसार चलता है। इस सुख दुःखकी परम्परामें कोई नवीनता नहीं है,—यह उतनी ही सनातन है जितनी कि सृष्टि। उफनते हुए शोककी लहरोंको फिरसे नवीन बनाने और संसारमें उन्हें फैला देनेमें न तो कोई पौरुष है, और न इसकी कोई जरूरत ही है। इसीसे, सब तरहके दुःख अपने आप शान्त होकर उनके भीतर चारों तरफ ऐसी एक स्निग्ध प्रसन्नताकी वेष्टनी बना लेते हैं कि उसके भीतर पहुँचते ही सबका सब तरहका बोझ मानो अपने आप ही हलका और अकिञ्चित्कर हो जाता है।

इसी तरह आशु बाबूकी सारी जिन्दगी बीती है। आगरेमें आकर अनेक उलट-फेरोंके बीच भी उसमें कोई फर्क नहीं आया, पर इधर कई दिनोंसे इसी सिलसिलेमें कुछ फर्क-सा लोगोंकी निगाहमें आने लगा है। अकस्मात् देखनेमें आता कि उनके आचरणमें धैर्यकी कमी अधिकांश स्थलोंपर दबी रहना नहीं चाहती। मालूम होता है कि बातचीतमें अकारण ही रूखापन आ जाता है, यहाँतक कि नौकर चाकरोंतकको उनका कोई-कोई मन्तव्य तीक्ष्ण और अद्भुत-सा सुनाई पड़ता है। पर ऐसा क्यों हो रहा है, यह भी सोच निकालना मुश्किल है। रोगकी ज्यादतीमें भी उनमें ऐसी विकृति आ जाना अविश्वास्य मालूम देता, फिर भी अब वे अच्छे हो गये हैं। परन्तु कारण कुछ भी क्यों न हो, जरा ध्यानसे देखा जाय तो मालूम होगा कि उनके अन्तस्तलमें मानो आग जल रही है और उसकी चिनगारियाँ कभी-कभी बाहर प्रकट हो जाती हैं।

आज तक उन्होंने साफ-साफ जाहिर तो नहीं किया, पर मालूम होता है कि अब उनके आगरेमें रहनेके दिन खतम हो गये। शायद जरा और स्वस्थ होनेकी देर है। उसके बाद सहसा जैसे एक दिन यहाँ आ पहुँचे थे वैसे ही अचानक एक दिन चल देंगे।

शामके वक्त आजकल बहुतसे पदाधिकारी बंगाली सज्जन मुलाकात करने और राजी-खुशी पूछने आ जाया करते हैं। सस्त्रीक मजिस्ट्रेट साहब, राय बहादुर, सदरआला, कॉलेजके अध्यापक मण्डली, नाना कारणोंसे जो आगरा छोड़ नहीं सके हैं वे, हरेंद्र, अजित और बंगाली मुहल्लेके वे लोग जो आनंदके दिनोंमें बहुत-सा पुलाव मांस आदि खा गये हैं,—कोई-न-कोई आते ही रहते हैं।

आता नहीं तो सिर्फ अभय, सो भी इसलिए कि यहाँ वह है नहीं। महामारीके शुरू होते ही वह सस्त्रीक देश चला गया है और शायद बीमारी शान्त होनेकी खबरकी बाट देख रहा है। कमल भी नहीं आती। उस दिन जो आई थी, उसके बाद फिर नहीं आई।

आशु बाबू मजलिसी आदमी हैं, फिर भी पहलेकी तरह अब वे मजलिसमें शरीक नहीं हो पाते,—मौजूद रहनेपर भी लगभग चुप बैठे रहते हैं। उनकी स्वास्थ्यहीनताका खयाल करके लोग आनन्दके साथ उन्हें माफी भी दे देते हैं। एक दिन जो काम मनोरमा किया करती थी, अब वे रिश्तेदार होनेके बेलाको ही करने पड़ते हैं। आतिथ्यमें कहीं कोई त्रुटि नहीं होती। बाहरके लोग आकर सिर्फ उसका रस ही लेते हैं, और शायद मजलिस खतम होनेपर परितृप्त चित्तसे इस निरभिमान गृहस्वामीको मन ही मन धन्यवाद देते हुए आश्चर्यके साथ सोचते हैं कि आव भगतकी ऐसी त्रुटिशून्य व्यवस्था इस बीमार आदमीसे रोजमर्रा कैसे बन पड़ती है।

पर, 'कैसे बन पड़ती है' का इतिहास छिपाका छिपा ही रह जाता है। नीलिमा सबके सामने निकलती नहीं, इसकी उसे आदत भी नहीं और न वह निकलना पसन्द ही करती है। परन्तु परदेकी ओटमें होते हुए भी उसकी जाग्रत दृष्टि इस घरमें सबके प्रति क्षण ध्यान रखा करती है। वह दृष्टि जैसी निगूढ़ होती है वैसी ही नीरव। शिराओंमें प्रवहमान रक्तधारकी तरह वह निःशब्द प्रवाह शायद आशु बाबूको छोड़कर दूसरा कोई अनुभव भी नहीं कर पाता।

शीत ऋतुका प्रथमार्द्ध बीत चला है, परन्तु फिर भी चाहे किसी भी कारणसे हो, इस साल जाड़ा उतना कड़ाकेका नहीं पड़ा। लेकिन आज सवेरेसे ही थोड़ी थोड़ी वर्षा हो रही है, और शामके वक्त तो खूब जोरसे मेह बरसने लगा। ऐसे मेहमें इसकी कोई सम्भावना ही न रही कि बाहरसे कोई आ सकेगा। घरकी

खिड़कियाँ असमयमें ही बन्द कर दी गई हैं और आशु बाबू पैरोंपर दुशाला डाले आराम-कुरसीपर पड़े कोई किताब पढ़ रहे हैं। बेला शायद कुछ विरक्तिके कारण बोल उठी, "इस अभागे देशमें सभी कुछ उलटा है। कुछ दिन पहले—जून या जुलाई महीनेमें जब यहाँ आई थी, तब पानीके लिए देशभरमें ऐसा जबरदस्त हाहाकार मचा हुआ था कि बगैर आँखों देखे उसकी कल्पना भी नहीं की जा सकती। इसीसे सोचती हूँ कि ऐसे कठोर शुष्क देशमें आदमी ताजमहल बनाने बैठे सो किस अक्लमन्दीपर?"

नीलिमा पास ही एक कुरसीपर बैठी कुछ सी रही थी, बगैर आँख उठाये ही उसने कहा, "इसका कारण क्या सभी जान सकते हैं? सब नहीं जान सकते।"

बेलाने सरल चित्तसे पूछा, "क्यों?"

नीलिमाने कहा, "तमाम बड़ी चीज आदमीने हाहाकारमेंसे ही पैदा होती है, अतएव जो लोग संसारके आमोद प्रमोदमें ही मगन रहते हैं उन्हें यह सूझ ही कैसे पड़ सकता है?"

उसका यह जवाब ऐसे कल्पनातीत रूपमें कठोर था कि सिर्फ बेला ही नहीं, बल्कि आशु बाबू तक आश्चर्य-चकित हो गये। उन्होंने किताबपरसे मुँह उठाया तो देखा, नीलिमा पूर्ववत् सीनेके काममें लगी हुई है। मानो, यह बात उसके मुँहसे कतई निकली ही नहीं।

एक तो बेला कलहप्रिय ही नहीं, और दूसरे वह सुशिक्षिता है। उसने बहुत कुछ देखा-सुना है और उमर भी शायद पैंतीसके ऊपर पहुँच चुकी है, किन्तु यत्न-सतर्कताके उसने अपने यौवनके लावण्यको आज भी पश्चिमकी ओर ढलने नहीं दिया है,—अकस्मात् ऐसा मालूम होता है कि शायद वह वैसा ही बना हुआ है। रंग उज्ज्वल है, चेहरेपर एक विशिष्ट रूप है, पर गौरसे देखनेसे मालूम हो जाता है कि कोमलताके अभावने मानो उसे रूखा बना रखा है। आँखोंकी दृष्टि हास्य कौतुकसे चपल चंचल है, निरन्तर बहते फिरना ही जैसे उसका काम है,—किसी भी चीजपर स्थिर होने लायक न तो उसमें भार है और न तल देशमें कोई जड़ ही। आनन्द-उत्सवमें ही वह शोभती है, सहसा दुःखके बीच आ पड़नेसे घर-मालिकको लज्जामें पड़ना पड़ता है।

जब बेलाकी विमूढ़ताका भाव दूर हो गया तब क्षण भरके लिए मारे क्षोभके

उसका चेहरा तमतमा उठा। पर नाराज होकर झगड़ा करना उसकी शिक्षा और सौजन्यके खिलाफ है, इसलिए उसने अपनेको सँभालते हुए कहा, "मुझपर कटाक्ष करनेसे कोई लाभ नहीं। सिर्फ इसलिए ही नहीं कि यह अनधिकार-चर्चा है, बल्कि हाहाकार करते फिरना चाहे जितनी बड़ी ऊँची बात क्यों न हो, वह मुझसे करते नहीं बनती, और उससे कोई अभिज्ञता सञ्चय करनेमें भी मैं असमर्थ हूँ। मेरा आत्म-सम्मान शान्त बना रहे, उससे बढ़कर मैं कुछ नहीं चाहती।"

नीलिमा अपने काममें ही लगी रही, कुछ जवाब नहीं दिया।

आशु बाबू भीतरसे क्षुण्ण हो गये थे, पर इस डरसे कि बात आगे न बढ़े व्यस्त होकर बोल उठे, "नहीं नहीं, तुमपर कोई कटाक्ष नहीं किया बेला, इसमें कोई शक नहीं कि बात उन्होंने साधारण भावसे ही कही है। नीलिमाका स्वभाव तो मुझे मालूम है, ऐसा हो ही नहीं सकता, मैं तुमसे कहता हूँ न, ऐसा हर्गिज नहीं हो सकता।"

बेलाने संक्षेपमें सिर्फ इतना ही कहा, "न हो यही अच्छा है। इतने दिनसे एक साथ रह रही हूँ, ऐसा तो मैं सोच ही नहीं सकती।"

नीलिमाने 'हाँ ना' कुछ भी जवाब नहीं दिया, अपने काममें वह ऐसी तन्मय रही मानो उस जगह और कोई है ही नहीं। कमरेमें बिल्कुल सन्नाटा छा गया।

बेलाके जीवनका एक इतिहास है जिसे यहाँ देना आवश्यक है। उसके पिता वकालतका पेशा करते थे, पर अपने पेशेमें वे यश या धन दोनोंमेंसे कुछ भी प्राप्त न कर सके थे। उनका धर्म क्या था, कोई भी नहीं जानता, और समाजकी दृष्टिसे भी देखा जाय तो वे हिन्दू, ब्राह्मण या क्रिस्तान किसी समाजको मानकर न चलते थे। लड़कीको वे बहुत ज्यादा प्यार करते थे, और उन्होंने सामर्थ्यके बाहर खर्च करके उसे शिक्षा देनेकी कोशिश की थी। यह हम पहले ही बता चुके हैं कि उनकी वह कोशिश बिल्कुल व्यर्थ नहीं हुई। 'बेला' नाम उन्होंने अपने शौकसे रक्खा था। किसी समाजको न माननेपर भी एक दल तो उनका अपना था ही। सुन्दरी और शिक्षिता होनेकी वजहसे बेलाका नाम उस दलमें सबकी जबानपर चढ़ गया, और इसलिए उसे धनी पात्र मिलनेमें भी देर न हुई। वे हाल ही विलायतसे कानून पास करके लौटे थे। कुछ दिन देखा भाला और परस्पर मन निरखने परखनेका सिलसिला चलता रहा, उसके बाद कानूनके अनुसार रजिस्टरी करके ब्याह हो गया। इस तरह कानूनके प्रति गहरे

अनुरागका एक अङ्क खतम हुआ। दूसरे अङ्कमें भोग विलास, साथ-साथ देश भ्रमण, पृथक् पृथक् वायुपरिवर्तन,—आदि ऐसी ही बहुत-सी बातें हुईं। दोनों तरफसे तरह-तरहकी अफवाहें सुनी गई, परन्तु उनकी आलोचना यहाँ अप्रासंगिक होगी। लेकिन उनमें जो अंश प्रासंगिक था, वह शीघ्र ही प्रकट हो गया। वर पक्ष हाथों हाथ पकड़ा गया और कन्या-पक्ष विवाह विच्छेदका मामला दायर करनेकी सोचने लगा। मित्र-मण्डलीमें आपसमें समझौता करानेकी कोशिश हुई, किन्तु शिक्षिता बेला नर-नारीके समानाधिकार-तत्त्वकी सबसे बड़ी पण्डा थी। लिहाजा उसने इस असम्मानके प्रस्तावपर पतई ध्यान नहीं दिया। पति बेचारा चरित्रकी दृष्टिसे चाहे जैसा भी हो, आदमीके लिहाजसे बुरा नहीं था, स्त्रीको वह शक्ति और सामर्थ्यके माफिक प्यार ही करता था। उसने गर्मीके साथ अपना कसूर मंजूर करके अदालतकी दुर्गतिसे छुटकारा पानेके लिए हाथ जोड़कर क्षमा प्रार्थना की, पर स्त्रीने क्षमा नहीं दी। अन्तमें बड़े दुःखपूर्ण ढंगसे फैसला हुआ। एकमुश्त नगद और खाने पहननेके लिए मासिक खर्च देना कबूल करके उसने किसी तरह मामलेसे अपना पिण्ड छुड़ाया। और इधर दाम्पत्य युद्धमें विजय पाकर बेला भग्न स्वास्थ्यकी मरम्मतके लिए शिमला, मसूरी, नैनी आदि पार्वत्य प्रदेशोंमें दलके साथ सैर करने चल दी। उस बातको आज लगभग छह-सात साल हो गये। इसके थोड़े ही दिन बाद उसके पिताका देहान्त हो गया। इस मामलेमें उनकी राय नहीं थी, बल्कि इससे वे अत्यन्त मर्माहत भी हुए थे। आशु बाबूकी स्वर्गीया पत्नीके साथ उनका कोई दूरका रिश्ता था और उसी सम्बन्धसे बेला आशु बाबूकी भी रिश्तेदार थी। उसके ब्याहमें भी आशु बाबू निमन्त्रित होकर गये थे, और उसके पतिसे भी परिचित होनेका उन्हें मौका मिला था। इस तरह वह रिश्तोंके सिलसिलेमें बेला आगरा आई थी, न बिल्कुल गैर होकर आई थी और न निराश्रित होकर ही। तुलनामें इसी जगह नीलिमाके साथ उसका काफी अन्तर था।

फिर भी, हालत इससे बिल्कुल उल्टी हो गई थी। इस विषयमें कि इस घरमें किसका कहाँ स्थान है, घरके किसी व्यक्तिको रत्ती मात्र भी सन्देह न था। पर उसका हेतु जैसा अज्ञात था, कर्तृत्व भी वैसा ही अविसंवादी था।

बहुत देरतक मौन रहकर बेलाहीने पहले बात की, कहा, "यह मैं मानती हूँ कि साफ-साफ कुछ नहीं कहा, पर इस विषयमें मुझे जरा भी सन्देह नहीं कि

मुझे धिक्कारनेके लिए ही नीलिमाने ऐसी बात कही है।"

आशु बाबूके मनमें भी शायद सन्देह न था, फिर भी निरमयर स्वरमें उन्होंने पूछा, "धिक्कार! धिक्कार किस लिए बेला?"

बेलाने कहा, "आपको तो सब कुछ मालूम है। निन्दा करनेवालोंकी उस दिन भी कमी नहीं थी, और आज भी नहीं है। परन्तु अपने सम्मानकी,—सम्पूर्ण नारी जातिके सम्मानकी रक्षाके लिए उस दिन भी मैंने किसीकी परवाह नहीं की, और आज भी नहीं करूँगी। मैं अपनी इज्जत आबरू खोकर पतिकी घर गृहस्थी चलानेको राजी नहीं हुई थी, इसलिए उस दिन ग्लानि प्रचारका काम सबसे बढ़कर स्त्रियोंने ही किया था, और आज भी उन्हींके हाथसे निस्तार पाना मेरे लिए सबसे कठिन हो रहा है। मगर चूँकि मैंने अनुचित कार्य नहीं किया, इसलिए उस दिन भी जैसे मैं नहीं डरी, आज भी उसी तरह निडर हूँ। अपनी विवेक बुद्धिके आगे मैं बिल्कुल चोखी हूँ।"

नीलिमाने सिलाईपरसे आँख नहीं उठाई, किन्तु आहिस्तेसे कहा, "एक दिन कमल कह रही थीं कि विवेक बुद्धि ही संसारमें सबसे बड़ी चीज नहीं है। विवेककी दुहाई देनेसे ही समस्त उचित अनुचितकी मीमांसा नहीं हो जाती।"

आशु बाबूने आश्चर्यमें आकर कहा, 'वह कहती है क्या?"

नीलिमाने कहा, "हाँ। कहती हैं कि वह तो सिर्फ मूर्खोंके हाथका अस्त्र है। आगे पीछे दोनों तरफ चलाया जा सकता है,—उसका कोई ठाक ठिकाना नहीं।"

आशु बाबूने कहा, "जो कहती है, उसे कहने दो, पर ऐसी बात तुम अपने मुँहसे न निकालो नीलिमा।"

बेला ने कहा, "इतने बड़े दुस्साहसकी बात तो मैंने कभी सुनी ही नहीं।"

आशु बाबू क्षण भर मौन रहकर धीरे धीरे कहने लगे, "दुस्साहस तो है ही। उसके साहसका अन्त नहीं। वह अपने नियमपर चलती है, उसकी सब बातें न सब समय समझमें आती हैं और न मानी ही जा सकती हैं।"

बेला ने कहा, "अपने नियमपर तो मैं भी चलती हूँ आशु बाबू। इसीसे बाबूजीकी भी मनाही न मान सकी। मैंने पतिको त्याग दिया, पर सिर न झुका सकी।"

आशु बाबूने कहा, "इसमें शक नहीं कि यह गहरे पश्चात्तापका विषय है,

परन्तु तुम्हारे पिताके सम्मति न देनेपर भी मुझसे तो बिना लिखे रहा नहीं गया।

बेलाने कहा, "धन्स (=धन्यवाद), सो मुझे याद है आशु बाबू!"

आशु बाबू बोले, "उसकी वजह थी। स्त्री-पुरुषके समान दायित्व और समान अधिकारपर मैं पूरा विश्वास करता हूँ। हमारे हिन्दू समाजमें एक बड़ा भारी दाग यह है कि सौ-सौ अपराध करनेपर भी पतिको न्याय विचार या दण्डका डर नहीं, और तुच्छसे तुच्छ दोषपर स्त्रीको दण्ड देनेके हजारों मार्ग खुले हुए हैं। इस व्यवस्थाको मैं एक दिनके लिए भी उचित नहीं मान सका। इसीसे बेलाके पिताने जब मेरे पास राय जाननेके लिए चिट्ठी लिखी थी, तब मैंने उत्तरमें यही बात कही थी कि हालाँ यह कोई शोभाकी बात नहीं और न सुखकी ही, परन्तु वह अगर अपने असच्चरित्र पतिको सचमुच ही त्याग देना चाहती है, तो उसे मैं अनुचित कहकर मना नहीं कर सकता।"

नीलिमाने अकृत्रिम विस्मयसे आँख उठाकर प्रश्न किया "आपने सचमुच यही बात जवाबमें लिखी थी?"

"सचमुच नहीं तो क्या?"

नीलिमा स्तब्ध हो रही।

उस निस्तब्धतामें आशु बाबूको न जाने कैसी एक प्रकारकी अशान्ति-सी मालूम होने लगी। उन्होंने कहा, "इसमें आश्चर्य करनेकी तो ऐसी कोई बात नहीं नीलिमा। बल्कि न लिखना ही मेरी तरफसे अनुचित होता।"

फिर जरा ठहरकर कहा, "तुम खुद भी तो कमलकी बड़ी भक्त हो, बताओ, वह खुद ऐसी हालतमें क्या करती? क्या जवाब देती? इससे तो उस दिन जब बेलासे उसका परिचय कराया था, तब इस बातपर मैंने जोर दिया था कि कमल, तुम्हारी तरह विचार करने और तुम्हारी तरह साहसका परिचय देनेमें मैंने सिर्फ एक ही लड़कीको देखा है, और वह है यह बेला।"

नीलिमाकी आँखें सहसा व्यथासे भर आईं। बोली, "वह बेचारी शिव समाजसे बाहर,—यहाँतक कि मनुष्योंसे बाहर पड़ी हुई है। उसे आप लोग क्यों घसीटते हैं?"

आशु बाबू व्यस्त हो उठे, बोले, "नहीं-नहीं, घसीटनेकी बात नहीं नीलिमा, यह तो सिर्फ एक उदाहरण देना है।"

नीलिमाने कहा, "यही तो घसीटना है। अभी-अभी आपने कहा था कि

उसकी सब बात सब समय समझमें भी नहीं आती और न मानी ही जा सकती है।—माना कुछ नहीं जा सकता, सिर्फ उदाहरण ही दिया जा सकता है।"

आशु बाबूको अपनी बातमें दोषकी कोई बात नजर नहीं आ रही थी। वे क्षुण्ण कण्ठसे बोले, "किसी भी कारणसे हो, आज तुम्हारा मन शायद बहुत ही अस्वस्थ हो रहा है। इस समय किसी विषयकी आलोचना करना ठीक नहीं।"

नीलिमाने इस बातपर ध्यान नहीं दिया, वह बोल उठी, "उस दिन आपने इनके विवाह विच्छेदमें अपनी राय दी थी और आज बिना किसी सकोचके कमलका दृष्टान्त दे रहे हैं। इनकी सी हालतमें कमल क्या करती सो तो वही जाने, मगर उसके दृष्टान्तका वास्तविक अनुसरण करनेके लिए आज इन्हें कुली मजदूरोंके कपड़े सी करके अपनी गुजर करनी पड़ती,—सो भी शायद हमेशा नहीं जुटते। कमल और चाहे जो करती, पर जिस पतिको वह लाञ्छन लगाकर घृणासे छोड़ देती उसीके दिये हुए अन्नका ग्रास मुँहमें देकर और उसीके दिये कपड़ोंसे आबरू बचाकर हरगिज न जीना चाहती। अपनेको इतनी छोटी या ओछी बनानेके पहले वह आत्म हत्या करके मर जाती।"

आशु बाबू जवाब क्या देते? वे तो मायाविष्ट से हो रहे, और बेला ठीक वज्राहतकी भाँति निश्चल हो रही। नीलिमाके दिन हँसी मजाकमें ही कट जाते हैं, सबका मुँह ताकना ही मानो उसका काम है, दोनोंमेंसे कोई भी इस बातको कयासमें न ला सका कि वह सहसा इस तरह निमम हो सकती है।

नीलिमा क्षण भर स्थिर रहकर फिर बोली, "आप लोगोंकी मजलिसमें मैं नहीं बैठती, लेकिन लोगोंको लेकर जो सब तरहकी आलोचनाएँ हुआ करती हैं वे मेरे कानोंतक पहुँच जाती हैं। नहीं तो शायद मैं कोई बात कहती भी नहीं। कमलने एक दिनके लिए भी शिवनाथकी निन्दा नहीं की, एक भी आदमीके आगे अपना दुखड़ा नहीं रोया—क्या, जानते हैं?"

आशु बाबूने विमूढ़की भाँति पूछा, "क्या?"

नीलिमाने कहा, "क्यों, सो कहना व्यर्थ है। आप लोग समझ नहीं सकेंगे।" फिर जरा ठहरकर कहा, "आशु बाबू, यह एक अत्यन्त मोटी बात है कि पति-पत्नीका अधिकार समान है मगर इसके मानी यह न सोचिएगा कि स्त्री होकर स्त्रियोंकी तरफसे इस दावेका मैं प्रतिवाद कर रही हूँ। प्रतिवाद मैं नहीं करती, मैं जानती हूँ कि वह सत्य है, मगर साथ ही यह भी जानती हूँ कि

सत्य-सत्य चिल्लानेवाले एक सत्य विलासी गिरोहने नर-नारीके मुँहके द्वारा और तरह-तरहके आन्दोलनोंसे उस सत्यको ऐसा गन्दा कर दिया है कि आज उसे मिथ्या कहनेको ही जी चाहता है। आज मेरी हाथ जोड़के प्रार्थना है कि सबके साथ मिलकर आप कमलके विषयमें कोई चर्चा न किया करें।"

आशु बाबूने जवाब देना चाहा, पर उनके कुछ कहनेके पहले ही वह मिठाईकी चीजें लेकर भीतर चली गई।

तब क्षुब्ध विस्मयसे एक लम्बी उसाँस लेकर आशु बाबू सिर्फ यह कहकर रह गये, "उसने कब क्या सुना है मालूम नहीं, पर मेरे विषयमें यह बिल्कुल असत्य दोषारोप है।"

बाहर कुछ देरके लिए वर्षा रुक गई थी, किन्तु ऊपरके मेघाच्छन्न आकाश ने घरके भीतर असमयमें अन्धकार फैला दिया। नौकर जब बत्ती जला गया तब आशु बाबूने फिर एक बार पुस्तक उठाकर आँखोंके सामने रख ली। छपेके अक्षरोंमें मन लगाना सम्भव न था और इधर बेलाके साथ आमने-सामने बैठकर बातचीत करना और भी असम्भव मालूम दिया।

इतनेमें भगवान्ने दया की। एक ही छतरीमें रास्ते भर धक्कमधक्का करते हुए ब्रह्मव्रतधारी हरेन्द्र, अजित आँधीकी तरह कमरेमें आ घुसे। दोनों जने आधे-आधे भीग चुके थे। हरेन्द्र बोला, "भाभी कहाँ हैं?"

आशु बाबूके मानो चाँद हाथ लग गया। उनको विश्वास नहीं था कि आजके दिन कोई आयेगा। साग्रह उठके बैठ गये और स्वागतके स्वरमें बोले, "आओ अजित, बैठो हरेन्द्र—"

"बैठता हूँ। भाभी कहाँ हैं?"

"ओह! दोनोंके दोनों खूब भीगे मालूम होते हो।"

"जी हाँ वे हैं कहाँ?"

"बुलवाता हूँ।" कहके आशु बाबूने ज्यों ही पुकारनेका उद्योग किया कि भीतरसे परदा हटाती हुई नीलिमा स्वयं ही बाहर निकल आई। उसके हाथमें दो धोतियाँ और एक कुरता था।

अजितने कहा, "यह क्या! आप ज्योतिष भी जानती हैं क्या?"

नीलिमाने कहा, "ज्योतिष जाननेकी जरूरत नहीं लालाजी, खिड़कीसे ही देख लिया था। एक टूटी छतरीमें जिस तरह एक-दूसरेकी तकलीफका खयाल

रखते हुए तुम दोनों चले आ रहे थे, उसे एक मैं ही क्यों, शायद शहरभरके लोगोंने देखा होगा।"

आशु बाबूने कहा, "एक छतरीमें दो दो जने! तभी तो लोगोंको भींगना पडा है।" और व हँस दिये।

नीलिमाने कहा, "शायद दोनों जने समानाधिकार-तत्वपर विश्वास करते है, अन्याय नहीं करते—इसीसे छतरीका ठीक ठीक बँटवारा करके रास्ता चल रहे थे। लो लालाजी, कपडे बदल लो।" कहते हुए उसने कपडे हरेन्द्रके हाथम दे दिये।

आशु बाबू चुप रहे। हरेन्द्रने कहा, "धोतियाँ तो दो दे दीं, लेकिन कुरता एक ही है!"

"कुरता बहुत बडा है लालाजी, एकसे ही काम चल जायगा।" कहकर वह गम्भीर बनके पासकी कुरसीपर बैठ गई।

हरेन्द्रने कहा, "कुरता आशु बाबूका है, लिहाजा इसम दो ही क्यों, और चार जने समा सकते है, मगर तब इसे मसहरीकी तरह लटकाना पडेगा, यह पहना नही जा सकेगा।"

कमल अबतक विषण्ण मुखसे चुपचाप बैठी थी, हँसी रोक न सकनेके कारण बाहर उठके चली गइ और नीलिमा खिडकीके बाहर देखती हुइ चुप बैठी रही।

आशु बाबू छद्म गाम्भीर्यके साथ कहने लगे, "बीमारीमें पडा पडा सूखके आधा रह गया हूँ हरेन्द्र, अब तुम लोग टोको मत। देखते नहीं, औरतोंको कैसा बुरा मालूम हुआ, एक तो उठके बाहर चली गइ और एकने मारे गुस्सेके मुँह फेर लिया।"

हरेन्द्रने कहा, "टोका टाकी नहा की आशु बाबू, विराटकी महिमा गाइ है। टोका टाकीका कुप्रभाव तो सिर्फ हमारे जैसी नर जातिपे ही विपत्तिम डाल सकता है, आप लोगोंको छू भी नहीं सकता। अतएव, चिरस्थूयमान हिमालयके समान यह देह अक्षय बनी रहे, स्त्रियाँ निःशंक हों, और मेह पानीके बहाने समागत जनोंके भाग्यम जो दैनन्दिन मिष्ठान्नादि बदा है उसम आज भी रत्तीमात्र कमी न हो।"

नीलिमाने इधर मुँह उठाया ओर हँस दी। "बडोंका स्तुतिगान तो अनादि कालसे चला आ रहा है छोटे देवरजी, वही निर्दिष्ट धारा है और उसमें तुम

सिद्धहस्त हो, पर आज जरा नियममें व्यतिक्रम करना पड़ेगा आज छोटोंकी खुशामद बगैर किये इतर जनोंके भाग्यमें मिलनेकी जगह कोरा शून्य पड़ेगा।"

वेला बरामदेसे लौटकर भीतर आ बैठी।

हरेन्द्रने पूछा, "क्यों भाभी?"

गम्भीर स्नेहसे नीलिमाकी आँखें भर आईं, बोली, "ऐसी मीठी बात बहुत दिनोंसे सुनी नहीं है भाई, इसीसे सुननेको जी ललचाता है।"

"तो शुरू कर दूँ क्या?"

"अच्छा अभी रहने दो। पहले तुम लोग उस कमरेमें जाकर कपड़े बदल लो, मैं कुरता भेजे देती हूँ।"

"मगर कपड़े बदल चुकनेके बाद? फिर क्या होगा?"

नीलिमाने हँसते हुए कहा, "फिर कोशिश करके देखूँगी कि इतर जनोंके भाग्यसे अगर कहींसे खाने-पीनेको कुछ जुटा सकूँ।"

हरेन्द्रने कहा, "तकलीफ उठाने कोशिश करनेकी जरूरत न पड़ेगी भाभी, सिर्फ एक बार आँख खोलके देख भर लीजिएगा। आपकी अन्नपूर्णा-सी दृष्टि जहाँ पड़ेगी, वहीं अन्नका भाण्डार निकल पड़ेगा। चलो अजित, अब कोई फिक्रकी बात नहीं, हम लोग तब भींगे कपड़े बदल आयें।" कहकर अजितको वह हाथ पकड़कर बगलके कमरेमें खींच ले गया।

२३

अजितने कहा, "पानी थमनेका तो कोई लक्षण नहीं दिखाई देता!"

हरेन्द्रने कहा, "नहीं। लिहाजा फिर हम दोनोंको उसी टूटी छतरीमें सिरसे सिर भिड़ाकर समानाधिकार तत्त्वकी सत्यता प्रमाणित करते हुए अन्धकार मार्गमें चल देना और अन्तमें आश्रम पहुँच जाना चाहिए। अवश्य ही उसके बादकी चिन्ता नहीं रही,—उसे यहीं पूरा कर चुके हैं, लिहाजा, फिरसे एक बार भींगे कपड़े बदलना और सो जाना रह जायगा।"

आशु बाबू व्यग्र होकर बोले, "तो फिर तुम लोगोंने पेट भरके ही क्यों नहीं जीम लिया?"

हरेन्द्र कह उठा, "नहीं नहीं, रहने दीजिए,—इससे क्या हुआ—आप हमारे लिए कोई चिन्ता न करें।"

नीलिमा पहले तो खिलखिलाकर हँस पड़ी, उसके बाद शिकायतके स्वरमें बोली, "लालाजी, क्यों यों ही रोगी आदमीकी व्याकुलता बढ़ा रहे हो!" फिर आशु बाबूसे बोली, "ये सन्यासी आदमी ठहरे, बैरागीगीरीमें पक्के हो गये हैं,— लिहाजा खाने पीनेकी तरफ इनकी त्रुटि किसीके नजर नहीं आ सकती। हाँ, अजित बाबूके लिए जरूर सोच है। इनका आजका खाना देखकर समझा जा सकता है कि ऐसे ससर्गमें भी ये जल्दी पक नहीं पाये हैं।"

हरेंद्रने कहा, "शायद मनमें पाप होगा, इससे। पकड़े तो जायँगे ही किसी न किसी दिन!"

अजितका चेहरा मारे शरमके सुर्ख हो उठा, बोला, "आप न जाने क्या कह रहे हैं हरेंद्र बाबू!"

नीलिमा क्षण भर हरेंद्रके मुँहकी तरफ देखती रही और बोली, "तुम्हारे मुँहपर फूल-चन्दन पड़े लालाजी, ऐसा ही हो, उनके मनमें थोड़ा-बहुत पाप हो और किसी दिन पकड़े जायँ तो मैं कालीघाट जाकर ठाठसे पूजा दे आऊँ।"

"तो फिर तैयारियाँ करना शुरू कर दीजिए।"

अजित बहुत ही नाराज हो गया, बोला, "आप क्या वाहियात बक रहे हैं हरेंद्र बाबू,—बड़ा भद्दा मालूम होता है।"

हरेंद्रने फिर कुछ नहीं कहा। अजितके मुँहकी तरफ देखकर नीलिमाका कुतूहल तीक्ष्ण हो उठा, पर वह भी चुप रही।

इसके कुछ देर बाद हरेंद्रने नीलिमाको लक्ष्य करके कहा, "हमारे आश्रम पर कमल बहुत नाराज हैं। आपको शायद याद होगा भाभी?"

नीलिमाने सिर हिलाते हुए कहा, "हाँ, है। अब भी उनका वही रुख है क्या?"

हरेंद्रने कहा, "वही रुख नहीं, बल्कि उससे भी जरा बढ़ गया है,—इतना फर्क है।" फिर बोला, "और सिर्फ हम ही लोगोंपर नहीं, सब तरहकी धार्मिक संस्थाओंपर उनका आत्यंतिक अनुराग है। चाहे ब्रह्मचर्यको ले लीजिए, चाहे वैराग्यकी बात कीजिए या ईश्वरकी चर्चा कीजिए, सुनते ही अहेतुक भक्ति और प्रीतिकी बहुलतासे वे अग्निवत् हो उठती हैं। और मिजाज अनुकूल हो तो बूढ़ों और बच्चों के खेलमें भी कौतुकका आनंद लेनेमें वे असमर्थ नहीं। कमाल ही समझिए।

कमल चुप बैठी सुन रही थी, बोल उठी, "इसपर भी उनके लिए लड़कोंका खेल है और आप उन्हींके साथ मेरी तुलना कर रहे थे, आशु बाबू?" इतना कहकर उसने एक तरफसे सबके मुँहकी ओर देखा, पर किसीकी तरफसे कोई उत्साह नहीं मिला। उसका रूखा स्वर किसीके कानतक पहुँचा या नहीं, सो भी ठीक समझमें नहीं आया।

हरेन्द्र कहने लगा, "और मजा यह कि उनके अपने अन्दर एक ऐसा निर्द्वन्द्व संयम, नीरव मिताचार और निःशंक तितिक्षा है कि देखके आश्चर्य होता है। आपको शिवनाथका मामला तो याद होगा आशु बाबू! वह हम लोगोंका कौन था? फिर भी इतना बड़ा अन्याय हमसे सहा नहीं गया, और दण्ड देनेकी आकांक्षासे हमारे मनके भीतर आग जल उठी। पर कमलने कहा, 'नहीं।' उसका उस दिनका चेहरा मुझे स्पष्ट याद है। उसकी 'नहीं' में विद्वेष नहीं था, जलन नहीं थी, ऊपरसे हाथ बढ़ाकर दान देनेकी श्लाघा नहीं थी, और क्षमाका दम्भ भी नहीं था,—उसका दाक्षिण्य मानो अविकृत करुणासे भरा हुआ था। शिवनाथने चाहे कितना ही बड़ा अन्याय क्यों न किया हो, फिर भी, मेरे प्रस्तावपर कमलने चौंककर सिर्फ यही कहा—'छि छि,—नहीं नहीं, ऐसा नहीं हो सकता।' अर्थात् एक दिन जिसे उसने प्यार किया है उसके प्रति निर्ममताकी तुच्छताकी वह कल्पना ही न कर सकी, और सबकी निगाहके ओझल उसने सब दोष चुपकेसे बिलकुल पोंछकर फेंक दिये। उसमें न कोई कोशिश थी न चञ्चलता थी, और न शोकाच्छन्न हाहाकारका कोई भाव था,—मानो पहाड़के शिखरपरसे जलकी धारा लीलामात्रमें स्वतः ही बह आई हो।"

आशु बाबूने एक गहरी साँस ली और कहा, "सच्ची बात है।"

हरेन्द्र कहने लगा, "पर मुझे ज्यादा गुस्सा तब आता है जब वह सिर्फ हमारे आदर्शको ही नहीं बल्कि हमारे धर्म, इतिहास, स्मृति, नैतिक अनुशासन आदि सबको मजाकमें उड़ा देना चाहती है। मैं जानता हूँ कि उसके शरीरमें उत्कट विदेशी खून है और मनमें भी वैसी ही उग्रताके साथ पर धर्मका भाव प्रवाहित है, फिर भी उसके मुँहके सामने खड़े होकर जवाब नहीं दे पाता। उसके कहनेमें न मालूम कैसी एक दृढ़ निश्चयकी दीप्ति फूट निकलती है कि मालूम होता है मानो उसने जीवनके तत्त्वको खोज लिया है। शिक्षाके जरिये नहीं, और न अनुभव-उपलब्धिके जरिये ही, बल्कि ऐसा लगता है कि कमलको जैसे

यह आँखोंसे साफ-साफ प्रत्यक्ष देख रही हो।"

आशु बाबू खुश होकर बोले, "ठीक यही बात मेरे भी मनमें अनेक बार आई है। यही वजह है कि जैसी उसकी बातें हैं वैसे ही अगर काम हैं। वह अगर असत्य भी समझती हो, तो वह असत्य भी गौरवपूर्ण हो उठता है।" फिर जरा ठहरकर बोले, "देखो हरेन्द्र, एक तरहसे अच्छा ही हुआ जो वह पाससे चला गया। उसको हमेशा ढककर रखनेसे न्यायकी मर्यादा नहीं रहती। सुअरके गलेमें मोतीकी मालाकी तरह यह भी अपराध होता।"

हरेन्द्रने कहा, "और फिर, दूसरी तरफ ऐसी माया ममता है कि सिर्फ एक भाभीको छोड़कर मैं और किसी स्त्रीको उसके समान नहीं पाता। सेवामें ऐसी समर्पित जैसे लक्ष्मी। शायद पुरुषोंसे बहुत सी बातोंमें बहुत बड़ी होनेके कारण ही वह अपनेको उनके सामने ऐसी साधारण बनाये रखती है कि आश्चर्य होता है। मन चुपचाप उसके पैरोंपर लोट जाना चाहता है।"

नीलिमा ने हँसते हुए कहा, "लालाजी, तुम पहले जनममें शायद किसी राजरानीके स्तुति पाठक थे इसीसे इस जनममें भी वह संस्कार दूर नहीं हुआ। लड़के पढ़ानेका काम छोड़कर अगर यह रोजगार करते तो इससे कहीं ज्यादा आराम पाते।"

हरेन्द्र हँस दिया, बोला, "क्या करूँ भाभी, मैं सरल सीधा आदमी हूँ, जो मनमें सोचता हूँ वही कह डालता हूँ। लेकिन, आप इन अजित बाबूसे पूछ देखिए जरा, अभी आस्तीन चढ़ाकर मारनेको तैयार हो जायँगे।—भले हो जायँ, पर जिन्दा रहा तो देख लीजिएगा किसी दिन—"

अजित क्रुद्ध कण्ठसे बोल उठा, "आह, आप क्या कहते हैं हरेन्द्रबाबू, आपके आश्रममें तो मालूम होता है, अब चला ही जाना पड़ेगा किसी दिन।"

हरेन्द्रने कहा, "सो मैं जानता हूँ। पर जबतक गये नहीं हैं तबतक तो सहन करना पड़ेगा।"

"तो आप कहते जाइए जो तबीयतमें आवे, मैं जाता हूँ।"

नीलिमाने कहा, "लालाजी, तुम अपने ब्रह्मचर्याश्रमको उठा क्यों नहीं देते? तुम भी बच जाओ और लड़कोंकी भी जान बचे।"

हरेन्द्रने कहा, "लड़के तो बच सकते हैं भाभी, पर मेरे बचनेकी कोई आशा नहीं। कमसे कम अक्षयके जीते जी तो कतई नहीं। वह मुझे यमराजके हवाले

लिये बगैर पीठा नहीं छोड़नेका।"

आशु बाबूने कहा, "तब तो, मालूम होता है, अक्षयसे तुम लोग डरते हो?"

"जी हाँ, डरते हैं। विष खाना सहज है, पर उसने कटाक्ष हजम करना असाध्य है। इन्फ्लुएआमें इतने आदमी मर गये, पर वह नहीं मरा। ठीक वक्तपर भाग गया।"

सब हँस पड़े। नीलिमाने कहा, "अक्षय बाबूसे मैं बोलती नहीं, पर अबकी बार बाहर निकलकर तुम्हारी तरफसे मैं क्षमाकी भीख माँग लूँगी। भीतर ही भीतर जल भुनकर खाक हुए जा रहे हो!"

हरेन्द्रने कहा, "हम लोग ही तो पकड़े जायँगे भाभी, आप लोग तो सब जलने भुननेके परे पहुँच चुकी हैं। विधाताने आगकी सृष्टि सिर्फ हम ही लोगोंको जलानेके लिए की थी, आप लोग उसके इलाकेसे बाहर हैं।"

नीलिमा मारे शमके सुर्ख हो उठी, बोली, "और नहीं तो क्या!"

बेलाने कहा, "ठीक तो है। बाहर तो हैं ही!"

क्षण भर सब चुप रहे। अजितने कहा, "उस दिन ठीक इसी विषयपर एक बड़ी सुन्दर कहानी पढ़ी थी।" फिर आशु बाबूकी तरफ देखकर पूछा, "आपने नहीं पढ़ी क्या?"

"कौन-सी, याद तो नहीं पड़ता!"

"आपके जो मासिक पत्र विलायतसे आते हैं, उन्हींमेंसे किसीमें है। किसी फ्रान्सीसी लेखिकाकी कहानीका अँग्रेजी अनुवाद है। लेडी डॉक्टर अपने परिचयमें कहती है, 'मैंने यौवन पार करके प्रौढ़त्वमें कदम रक्खा है।'—वह है सामनेके शेल्फपर—" कहता हुआ वह पत्रिका उठा लाया।

आशु बाबूने पूछा, "कहानीका नाम क्या है?"

अजितने कहा, "नाम जरा अजीब-सा है—"एक दिन जिस दिन मैं नारी थी।"

बेलाने कहा, 'इसके मानी? लेखिका अब पुरुषोंमें शामिल हो गई है क्या?"

अजितने कहा, "लेखिकाने आप-बीती लिखी है और शायद डॉक्टर होनेकी वजहसे नारी देहके प्रम विकासका जो चित्र खींचा है वह कहीं-कहीं रुचिको चोट पहुँचाता है। जैसे—"

नीलिमा चटसे बोल उठी, "'जैसे' बतानेकी जरूरत नहीं अजित बाबू रहने दीजिए।"

अजितने कहा, "रहने दीजिए। मगर उन्होंने नारीके भीतरका, यानी उसके हृदयका जो चित्र खींचा है वह मधुर न होते हुए भी आश्चर्यजनक है।"

आशु बाबूको कुतूहल हुआ, बोले, "अच्छी बात है अजित, जरा कुछ काट-छाँट करके संक्षेपमें सुनाओ तो सुनें। मेह भी अभी रुका नहीं और रात भी ज्यादा नहीं हुई।"

अजितने कहा, "कहानी बहुत बड़ी है, इसलिए काट-छाँट कर ही पढ़ी जा सकती है,—आप चाहें तो पीछे पूरी पढ़ लीजिएगा।"

बेलाने कहा, "पढ़िए, जरा सुनें। कमसे कम वक्त तो कटेगा।"

नीलिमाके मनमें आई कि उठकर चली जाय, पर जानेका कोई बहाना न मिलनेके कारण वह संकोचके साथ वहीं बैठी रही।

बत्तीके सामने बैठकर अजित किताब खोलकर कहने लगा, "शुरू-शुरूमें जरा भूमिका सी है, उसे संक्षेपमें कह देना जरूरी है। जिसकी यह आत्म कहानी है वह सुन्दरी है, सुशिक्षिता है और बड़े घरकी लड़की है। चरित्र निष्कलंक था या नहीं, इसका कहानीमें स्पष्ट उल्लेख नहीं है, पर इतना निःसंदेह समझमें आ जाता है कि अगर उसके कोई दाग किसी दिन किसी कारणसे लगा भी हो तो वह यौवनके प्रारम्भमें,—बहुत दिन पहले लगा होगा।

"उस दिन उसको बहुतोंने चाहा था,—एकने तो समस्याका कोई हल न पाकर आत्म हत्या कर ली और एक चला गया समुद्रके उस पार कनाडामें। चला तो गया, पर आशा न छोड़ सका। दूरसे कृपा भिक्षा माँगते हुए उसने इतनी चिट्ठियाँ लिखीं कि उन्हें अगर इकट्ठा किया जाता तो एक समूचा जहाज भर जाता, लेकिन जवाबकी आशा उसने नहीं की, और न जवाब पाया ही। उसके बाद एक दिन दोनोंमें मुलाकात हुई। देखते ही सहसा मानो वह चौंक पड़ा। इस बीच पन्द्रह वर्ष बीत गये थे, और इसकी उसे धारणा ही नहीं थी कि जिसे वह पचीस सालकी युवती देखकर विदेश चला गया था उसकी उमर अब चालीस सालकी हो गई है। कुशल प्रश्न अनेक हुए, उलाहने भी कम पेश नहीं किये गये, परन्तु पहले ऑख चार होते ही उसकी आँखोंके कोनोंसे जो चिनगारियाँ निकलने लगती थीं और उन्मत्त-कामनाका जो चक्रावात समस्त

इन्द्रियोंके बन्द दरवाजोंको तोड़कर बाहर निकलना चाहता था,—आज उसका कोई चिह्नतक कहीं दिखाई नहीं दिया। अब वह न जाने क्यों का स्वप्न-सा मालूम देने लगा। स्त्रियोंको और सब विषयोंमें धोखा दिया जा सकता है, पर इस विषयमें नहीं।—यहाँसे कहानी शुरू होती है।" कहकर अजित आगे पन्नेके विचारसे किताबके पन्नेपर झुक पड़ा।

आशु बाबूने टोकते हुए कहा, "नहीं नहीं, अँग्रेजी नहीं अजित, अँग्रेजी नहीं। तुम्हारे मुँहसे हिन्दीमें कहानीका सहज भाव बहुत मीठा लग रहा है, तुम बाकीका हिस्सा भी इसी तरह कहते जाओ।"

"मुझसे बनेगा कैसे?"

"बनेगा, बनेगा। जैसे अभी कह रहे थे वैसे ही कहते जाओ।"

अजितने कहा, "हरेन्द्र बाबूकी तरह मुझे भाषाका ज्ञान नहीं, भाषाके दोषसे अगर सारा-का सारा कड़ुआ हो जाय तो उसमें मेरी ही असमर्थता समझियेगा।" इसके बाद वह कभी किताबके पन्नेकी तरफ देखकर और कभी बगैर देखे ही कहने लगा।

"फिर वह घर पहुँची। उस आदमीको उसने कभी प्यार नहीं किया था और न करना चाहा था, बल्कि, बचपनके स्मरणसे उसने हमेशा यही प्रार्थना की थी कि भगवान् किसी दिन उसे मोह-मुक्त कर दें,—उसे इस निष्फल प्रणयके दाहसे छुटकारा दे दें,—असम्भव वस्तुके झूठे आश्वासनसे वह अब तकलीफ न पाये। देखा गया, कि भगवान्ने इतने दिनों बाद उसकी वही प्रार्थना मंजूर की है। कोई बात नहीं हुई, मगर फिर भी इतना तो निःसन्देह समझमें आ गया कि वह बच्चा वापस आय या न आय, पर दानतासे भगवकी भीख माँगकर न अब वह खुद ही निरन्तर दुःख पायेगा और न उसे ही दुःख देगा। दुःसाध्य समस्याकी आज मानो अन्तिम मीमांसा हो गई। हमेशासे 'नहीं' कहकर बराबर वह स्त्री अस्वीकार ही करती आई है, और आज भी उसमें व्यतिक्रम नहीं हुआ, किन्तु वह अन्तिम 'नहीं' आज आई उल्टी तरफसे। उस स्त्रीने इसकी स्वप्नमें भी कल्पना नहीं की थी कि दोनों 'नहीं' में इतना जबरदस्त प्रभेद होगा। पुरुषोंकी लोलुप दृष्टिने हमेशा उसे परेशान ही किया है, लज्जासे पीड़ित ही किया है,—आज ठीक उसी दिशासे अगर उसे मुक्ति मिली हो, और शरीर धर्मके कारण उसके यथासमय

यौवनने अगर पुरुषकी उद्दीप्त कामना, उन्माद और आसक्तिका रास्ता रोक दिया हो, तो इसमें शिकायतकी कौन-सी बात है ? मगर फिर भी, घर लौटते समय, रास्तेमें मानो आज सारा विश्व-संसार उसे बिल्कुल अपरिचित मूर्ति धारण करके दिखाई देने लगा। प्रेम नहीं, हृदयमें एकान्त मिलनेकी व्याकुलता नहीं,—ये सब तो दूसरी बातें हैं, बड़ी बातें हैं। किन्तु आजके पहले उसे इसकी क्या खबर थी कि जो बड़ी नहीं, जो स्थूल हैं, अशुभ हैं, असुन्दर हैं, अत्यन्त क्षणस्थायी हैं,—उन सब कुत्सित बातोंके लिए भी उस नारीके अनिश्चित चित्तके नीचे इतना बड़ा आसन बिछा हुआ था। और उनके कारण पुरुषकी विमुखता उसे ऐसे निर्मम अपमानसे आहत कर सकती है !"

हरेंद्रने कहा, "अजित कहते तो बड़े अच्छे लगते हैं। कहानीको खूब ध्यानसे पढ़ा है।

स्त्रियाँ चुपचाप बैठी सिर्फ देखती रहीं, उन्होंने कुछ राय जाहिर नहीं की।

आशु बाबूने कहा, "हाँ। उसके बाद, अजित ?"

अजित कहने लगा, "फिर उस महिलाको अचानक खयाल आया कि सिर्फ एक ही पुरुष तो उसे नहीं चाहता था, बहुत-से लोग बहुत दिनोंसे उससे प्रेम करते आ रहे थे, प्रार्थना करते आ रहे थे,—उस दिन उसकी जरा सी मुसकान और मुँहके एक शब्दके लिए उनकी व्याकुलताकी हद न थी। प्रतिदिनके प्रत्येक पदक्षेपमेंसे वे न जाने कहाँसे और किस जमीनको फोड़कर बाहर निकल आते थे। पर वे सब भी आज कहाँ गये ? कहीं भी तो नहीं गये—अब भी तो कभी कभी दिखाई दे जाते हैं। तो क्या उसके अपने कण्ठका स्वर बिगड़ गया है ? उसकी हँसीका रूप बदल गया है ? अभी अभी उस दिनकी बात ही तो है,—दस पन्द्रह वर्ष, सो ऐसे कितने दिन हो गये ?—इतनेमें क्या उसका सब कुछ बीत गया, सब कुछ खो गया ?"

आशु बाबू सहसा बोल उठे, "गया कुछ भी नहीं अजित, गया हो तो शायद उसका यौवन,—उसकी माँ होनेकी शक्ति खो गई होगी।"

अजित उनकी तरफ देखकर बोला, "यही बात है। कहानी आपने पढ़ी थी !"

"नहीं।"

"नहीं तो ठीक यही बात आपने कैसे जान ली ?"

नीलिमाने कहा है, "कहा जा सकता है। कारण, वह तो कोई सालोंकी गिनतासे स्त्रियोंके जीनेका हिसाब नहीं है, इस बातको और चाहे जो भूल जाय, पर स्त्रियोंके भूलनेसे काम नहीं चलेगा कि यौवनकी आयुष्काल अत्यन्त ही कम है।"

अजित सिर हिलाकर और खुश होता हुआ बोला, "ठीक यही उत्तर उसने खुद दिया है। कहा, "आजसे समाप्तिकी शेष प्रतीक्षा करते रहना ही होगा। जराहीन जीवनका एकमात्र सत्य है। मैं जानती हूँ कि इसमें कोई सान्त्वना नहीं, आनन्द नहीं, आशा नहीं,—फिर भी उपहासकी लज्जासे तो बच ही जाऊँगी। ऐश्वर्यका भग्न स्तूप आज भी शायद किसी अभागेका मन हर सके, परन्तु वह मुग्धता जैसे उसके लिए विडम्बनाके सिवा कुछ नहीं, वैसे ही मेरे लिए भी वह मिथ्या है, झूठ है। यह मुझसे नहीं होगा कि रूपका सचमुचका प्रयोजन खतम हो चुका है, उसीको नाना प्रकारसे, नाना वस्त्राभूषणसे सजाकर कहूँ कि 'खतम नहीं हुआ' तथा अपनेको और दूसरोंको धोखा देकर ठगती फिरूँ'।"

इसपर और किसीने कुछ नहीं कहा, सिर्फ नीलिमा बोल उठी, "बहुत सुन्दर है। ये शब्द उसके मुझे बहुत ही सुन्दर लगे अजित बाबू।"

और सबोंकी तरह हरेन्द्र भी खूब ध्यानसे सुन रहा था वह इस मन्तव्यसे खुश न हुआ, बोला, "यह आपका भावावेशका उफान है भाभी, खूब सोच विचारके नहीं कहा आपने। ऊँची डालपर सेमरका फूल भी सहसा सुन्दर दीख पड़ता है, फिर भी फूलोंके दरबारमें उसकी कोई कदर नहीं। रमणीकी देह क्या ऐसी तुच्छ चीज है कि इसके सिवा उसका और कोई उपयोग ही न हो?"

नीलिमाने कहा, "नहीं है, सो तो लेखिकाने कहा नहीं। यह आशंका उसे खुद भी थी कि अभागे आदमियोंकी आवश्यकता आसानीसे नहीं मिटती।" फिर जरा हँसकर कहा, "और उफानकी जो बात कह रहे थे छोटे बाबू, सो अक्षय बाबू मौजूद नहीं, वे होते तो समझ जाते कि उफानकी ज्यादती किस ओर है।"

हरेन्द्रने जवाब दिया, "आप गाली गलौज करती रहेंगी तो मैं ऊब जाऊँगा, सो नहीं होगा भाभी।"

सुनकर आशु बाबू खुद भी जरा हँस दिये, बोले, "वास्तवमें हरेन्द्र, मुझे भी ऐसा लगता है कि इस कहानीमें लेखिकाने स्त्रियोंके रूपके वास्तविक प्रयो

उनकी तरफ ही इशारा किया है।"

"मगर, क्या यही ठीक है?"

"ठीक नहीं, यह बात दुनियाकी तरफ देखते खयाल करना कठिन है।"

हरेन्द्र उत्तेजित हो उठा, कहने लगा, "दुनियाकी तरफ देखकर आप चाहे कुछ भी खयाल करें, मनुष्यकी तरफ देखकर इसे स्वीकार करना मेरे लिए भी कठिन है। मनुष्यका प्रयोजन जगत्‌के साधारण प्रयोजनको पार करके बहुत दूर चला गया है, इससे तो उसकी समस्या ऐसी जटिल, ऐसा दुरूह होती जा रही है। इसीमें तो उसकी मर्यादा है आशु बाबू, कि जन्तुओंसे ऊपर उठाकर उसे अलग नहीं किया जा सकता?"

"सो हो सकता है। कहानीका बाकी हिस्सा क्या है, सुनाओ तो अजित।"

हरेन्द्र क्षुब्ध हो गया, बाधा देते हुए बोला, "सो नहीं होगा आशु बाबू। यह मैं नहीं होने दूँगा कि इस बातको तुच्छ समझकर आप जवाब देनेसे बच जायँ। या तो मेरी बात स्वीकार कीजिए या फिर मेरी गलती दिखा दीजिए। आपने बहुत कुछ देखा है, बहुत पढ़ा है,—बहुत बड़े विद्वान् हैं आप,—यह मुझसे नहीं सहा जायगा कि इस अनिर्दिष्ट ढीली-ढाली बातकी सेंधमेंसे आप भी जीत जायँ। कहिए?"

आशु बाबू हँसते हुए बोले, "तुम ब्रह्मचारी आदमी ठहरे,—रूपके विषयमें हार भी जाओ तो इसमें तुम्हारे लिए लज्जाकी कोई बात नहीं हरेन्द्र।"

"नहीं, सो मैं नहीं सुनूँगा।"

आशु बाबू क्षण भर चुप रहे, फिर धीरे धीरे बोले, "तुम्हारी बातको अप्रमाणित ठहरानेके लिए कमर बाँधकर बहस करनेमें मुझे शर्म आती है। वास्तवमें यही अच्छा है कि नारीके रूपका निगूढ़ अर्थ अपरिस्फुट ही रहे।' फिर जरा चुप रहकर बोले, "अजितकी कहानी सुनते सुनते मुझे बहुत दिन पहलेकी एक दुःखकी कहानी याद आ रही थी। जवानीमें मेरे एक अँग्रेज मित्र थे, वे एक पोलिश छात्राको प्यार करते थे। लड़की बहुत ही सुन्दर थी, छात्राओंको पियानो सिखाकर जीविका चलाती थी। सिर्फ रूपमें ही नहीं, अनेक गुणोंसे गुणवती भी थी। हम सभी उनकी शुभ कामना करते थे और निश्चित जानते थे कि उनके विवाहमें कहीं भी कोई विघ्न न आयेगा।"

अजितने पूछा, "विघ्न कैसे आया?"

आशु बाबूने कहा, "सिर्फ उमरकी बातपर। देशसे एक दिन उसकी माँ आ पहुँची। उसीके मुँहसे बातों ही बातोंमें अचानक पता लगा कि उसकी उमर पैंतीस पार कर चुकी है।"

सुनकर सब चौंक पड़े। अजितने पूछा, "उस महिलाने क्या आप लोगोंसे अपनी उमर छिपाई थी?"

आशु बाबूने कहा, "नहीं। मेरा विश्वास है कि पूछनेपर वह छिपाती नहीं,—उसकी ऐसी प्रकृति ही न थी—मगर पूछनेकी बात किसीके ध्यानमें ही न आई। उसकी देहकी गठन ऐसी थी चेहरेकी ऐसी सुकुमार श्री था और ऐसा मधुर कण्ठस्वर था कि कभी किसीको आशंका ही न हुई कि उसकी उमर तीससे ज्यादा हो सकती है।"

बलाने कहा, "आश्चर्य है! आप लोगोंमेंसे किसीके क्या आँख ही न थीं?"

"थीं क्यों नहीं! मगर दुनियाके सभी आश्चर्य आँखोंसे नहीं पकड़े जा सकते। इसे उसीका एक दृष्टान्त समझो।"

"और उस आदमीकी उमर क्या थी?"

"वह मेरी ही उमरका था,—तब शायद अट्ठाइस उन्तीससे ज्यादा न होगी उसकी उमर।"

"फिर?"

आशु बाबूने कहा, "फिरकी घटना अत्यन्त संक्षिप्त है। उस युवकका सारा हृदय एक ही क्षणमें उस प्रौढ़ा रमणीके विरुद्ध मानो पाषाण बन गया। उस बातको जमाना बीत गया, पर आज भी खयाल करता हूँ तो मनमें एक तरहकी टीस उठती है। कितने आँसू, कितनी हाय हाय, कितना जाना-आना, कितना मनाना रिझाना होता रहा, पर उसके मनसे उस नफरतको जरा भी हिलाया डुलाया नहीं जा सका। इस बातके आगे वह और कुछ सोच ही न सका कि यह ब्याह असम्भव है।"

क्षण भर सभी चुप रहे। नीलिमाने पूछा, "मगर बात इससे ठीक उल्टी होती तो शायद असम्भव न होता?"

"शायद न होता।"

"पर ऐसा ब्याह क्या उस देशमें एक भी नहीं होता? ऐसे पुरुष क्या वहाँ हैं ही नहीं?"

आशु बाबूने हँसते हुए जवाब दिया, "है क्यों नहीं। इस कहानीकी लेखिकाने शायद खास तौरसे ऐसे पुरुषोंको लक्ष्य करके 'अभागे' विशेषणका प्रयोग किया है। लेकिन अब रात तो बहुत हो गई अजित, इसका अन्त क्या है?"

अजितने चौंककर उनकी ओर देखा, और कहा, "मैं आपकी ही कहानीकी बात सोच रहा था। इतना प्रेम होते हुए क्यों वह उसे ग्रहण नहीं कर सका? इतनी बड़ी सत्य वस्तु किधरसे कैसे एक क्षणमें झूठी हो गई?—जिन्दगी भर शायद वह महिला यही सोचती रही होगी, 'एक दिन, जिस दिन मैं नारी थी।' इसके पहले शायद उस विगतयौवना नारीने कभी इस बातकी चिन्ता भी न की होगी कि नारीत्वकी वास्तविक समाप्ति नारीके बिना जाने ही कब और कैसे हो जाती है।"

'लेकिन तुम्हारी कहानीका क्या?"

अजित शान्त भावसे बोला, "रहने दीजिए। यौवनका वह शेष अभीतक निःशेष नहीं हुआ,—अपने और दूसरोंके आगे स्त्रियोंकी इस प्रतारणाकी करुण कहानीके साथ कहानी खतम होती है। अब आज रहने दीजिए, फिर किसी दिन सुनाऊँगा।"

नीलिमाने सिर हिलाते हुए कहा, "नहा नहा, इससे तो बल्कि उसे असमाप्त ही रहने दीजिए।"

आशु बाबूने हाँमें हाँ मिला दी, वेदनाके साथ बोले, "वास्तवमें स्त्रियोंके लिए यही समय निसंग जीवन होनेके कारण सबसे बुरा होता है। इसीसे शायद असहिष्णु, कपटी, पर छिद्रान्वेषी,—यहाँतक कि निष्ठुर होकर घर देखने पुरुष इन अविवाहिता प्रौढ़ा स्त्रियोंसे बचकर चलना चाहते हैं नीलिमा।"

नीलिमाने हँसकर कहा, "ऐसा कहना ठीक नहीं आशु बाबू, बल्कि या कहिए कि तुम जैसी पति पुत्रहीना अभागी स्त्रियोंसे बचकर चलना चाहते हैं।"

आशु बाबूने इसका कोई जवाब नहीं दिया, पर इशारेसे स्वीकार कर लिया। बोले, "पर मजा तो यह है कि जो पति पुत्रसे सौभाग्यवती हैं, वे स्नेह प्रेम और सौन्दर्य माधुर्यसे ऐसी परिपूर्ण हो उठती हैं कि उन्हें पता भी नहीं लग पाता कि जीवनका इतना-बड़ा संकट-काल कब और किस रास्तेसे निकल गया।"

नीलिमाने कहा, "उन भाग्यवतियोंसे मैं डाह नहीं करती **आशु बाबू**, ऐसी

प्रेरणा आजतक भाग कभी नहीं आई, पर भाग्यके दोषसे जो हमारी तरह मरियल्की सारी आशाओंको जलांजलि दे चुकी है, बता सकते हैं कि उनके भाग का निर्देश किस तरफ है?"

आशु बाबू कुछ देरतक तो स्तब्ध हुए बैठे रहे, फिर बोले, "इसके जवाबमें सिर्फ बड़ोंकी बातकी प्रतिध्वनि मात्र कर सकता हूँ नीलिमा, उससे ज्यादा मुझमें शक्ति नहीं। वे कह गये हैं कि दूसरोंके लिए अपनेको उत्सर्ग कर देना चाहिए। संसारमें न तो दुःखका ही अभाव है और न आत्मनिवेदनके दृष्टान्तों का अकाल है। यह सब मैं भी जानता हूँ,—परन्तु इसे मैं आज तक निःसंशय होकर नहीं जान पाया कि इसके भीतर नारीका सचमुचका निरवच्छिन्न कल्याणमय आनन्द है या नहीं।"

हरेन्द्रने पूछा, "यह संदेह क्या आपका शुरूसे ही था?"

आशु बाबू मन ही मन कुछ कुण्ठित से हुए, जरा ठहरकर बोले, "ठीक याद नहीं पड़ता हरेन्द्र। मनोरमाको गये तब दो-तीन दिन हुए होंगे। मन शिथिल था और शरीर निढाल। इसी कुरसीपर चुपचाप पड़ा था, अचानक देखा कि कमल आ पहुँची है। आदरसे बुलाकर उसे पास बिठाया। मेरी व्यथाकी जगहको सावधानीसे बचाते हुए उसने निकल भी जाना चाहा, पर वह निकल नहीं सकी। बातों ही बातोंमें कुछ ऐसा प्रसंग उठ खड़ा हुआ कि फिर उसे कुछ होश ही न रहा। तुम लोग तो उसे जानते ही हो, जो भी कुछ प्राचीन है उसपर उसे कैसी प्रबल वितृष्णा है! उसे झकझोरकर तोड़ डालना ही मानो उसका 'पैशन' (= उत्कट इच्छा) है। मन गवाही नहीं देना चाहता, हमेशाका संस्कार मारे डरके सिकुड़ जाता है। फिर भी जवाब ढूँढ़े नहीं मिलता और हार माननी पड़ती है। याद है, उस दिन भी मैंने उसके सामने स्त्रियोंके आत्मोत्सर्गका उल्लेख किया था, मगर उसने उसे मंजूर ही नहीं किया। कहने लगी, 'स्त्रियोंकी बात मैं आपसे ज्यादा जानती हूँ। यह प्रवृत्ति उनमें है तो पर वह उनके भीतरकी पूर्णतासे नहीं आती, आती है सिर्फ शून्यतासे, और उठती है हृदय खाली करके। वह तो स्वभाव नहीं अभाव है और अभावके आत्मोत्सर्गपर मैं कानी-कौड़ीका भी विश्वास नहीं करती।' मेरी तो समझमें ही न आया कि इसका क्या जवाब दूँ, फिर भी मैंने कहा, 'कमल, हिन्दू सभ्यताकी मूल वस्तुसे तुम्हारा परिचय होता तो आज शायद तुम्हें मैं समझा देता कि त्याग और विसर्जनकी दीक्षामें सिद्धि प्राप्त

करना ही हमारा सबसे बड़ी तपस्या है और इसी मार्गका अवलम्बन कर हमारी कितनी ही विधवा स्त्रियाँ जीवनकी सर्वोच्च सार्थकता अनुभव कर गई हैं।' इसपर कमल हँसकर बोली, 'करते हुए देखा है आपने? एकाध नाम तो बताइए?' मुझे नहीं मालूम था कि वह ऐसा प्रश्न कर बैठेगी, बल्कि मन तो यह सोचा था कि शायद वह बातको मान लेगी। मैं बड़े चक्करमें पड़ गया—"

नीलिमा बोल उठी, "क्यूँ! आपने मेरा नाम क्यों नहीं बता दिया! याद नहीं आई होगी शायद?"

कैसा कठोर परिहास है! हरेन्द्र और अजितने सिर झुका लिया, और बेलाने दूसरी तरफ मुँह फेर लिया।

आशु बाबू कुछ अप्रतिभ से तो हुए, पर, उन्होंने यह जाहिर नहीं होने दिया, बोले, "नहीं, याद ही नहीं आई। आँखोंके सामनेकी चीजपर जैसे कभी कभी नजर नहीं पड़ती वैसे ही। तुम्हारा नाम ले लेनेसे सचमुच ही उसका माकूल जवाब हो जाता, किन्तु तब यह याद ही नहीं आया।'

"तब कमलने कहा, 'मुझे जिस शिक्षाका आपने उलाहना दिया है, खुद आप लोगोंके सम्बन्धमें भी क्या वह सोलहों आने सच नहीं है? साधनाका जो आदर्श बचपनसे ही लड़कियोंके दिमागमें आप लोग भरते आये हैं, उसकी रटी हुई बातोंको ही तो ये दर्पके साथ दुहराकर सोचा करती हैं कि शायद यही सत्य है। नतीजा यह होता है कि आप लोग भी धोखा खाते हैं और आत्मप्रसादके व्यर्थ अभिमानसे ये खुद भी मर मिटती हैं।'

"इतना कहकर वह फिर बोली, 'सहमरणकी बात तो आपके ध्यानमें आनी चाहिए। जो स्त्रियाँ जलके मरती थीं और जो उन्हें प्रेरणा दिया करते थे, दोनों ही पक्षोंका दम्भ उस दिन यह सोचकर आकाशसे जा छूता था कि वैधव्य जीवनके इतने बड़े आदर्शका दृष्टान्त संसारमें और है कहाँ!'

"इसका मैं क्या उत्तर देता, कुछ समझमें ही न आया। मगर उसने उत्तरकी अपेक्षा भी नहीं की, खुद ही कहने लगी, 'उत्तर है ही नहीं, देंगे क्या!' फिर जरा ठहरकर मेरे मुँहकी तरफ देखके बोली, 'लगभग सभी देशोंमें आत्मोत्सर्ग शब्दसे एक तरहका अभ्यास और बहुप्राचीन पारमार्थिक मोह है। उस मोहका नशा जिसे चढ़ता है, उसकी दृष्टि परलोककी असाधारण अवस्तु भी इस लोककी सहीम साधारण वस्तुको ढक देती है,—वह उसे सोचने ही नहीं देती कि उसमें

नर और नारी इन दोनोंमेंसे किसीने सस्कार उससे मानो कान पकडवाके मनवा लेते है,—उसी तरह जिस तरह कि लगभग सहमरणको उन्होंने मनवा लिया था। बस अब और नहीं, मैं जाती हूँ।' कहकर उसे सचमुच ही चले जाते देखकर मैंने व्यस्त होकर कहा, 'कमल, प्रचलित नीति और समस्त प्रतिष्ठित सत्यको अवज्ञासे चूरा चूरा कर देना ही मानो तुम्हारा व्रत है। यह शिक्षा जिसने तुम्हें दी है उसने जगत्का कल्याण नहा किया है'।

"कमलने कहा, 'मेरे पिताने दी है'।

"मैंने कहा, 'तुम्हारे ही मुँहसे सुना है कि वे ज्ञानी और विद्वान् आदमी थे। यह बात क्या उन्होंने कभी तुम्हें सिखाई ही नहीं कि अन्ततक सर्वस्व दान करके ही आदमी सत्य रूपमें अपनेको पाता है! स्वेच्छासे दुःख स्वीकार करनेमें ही आत्माकी यथार्थ प्रतीक्षा है।'

"कमलने कहा, 'वे तो यही कहा करते थे कि आदमीका सर्वस्व चूस लेनेका जिन्होंने षड्यन्त्र रच रक्खा है,—जिन्हें दुःखका अनुभव नहीं, वे ही दुःख स्वीकार करनेकी महिमा गानेमें पचमुख हो जाया करते हैं। वह दुःख ससारके दुर्लंघ्य शासनका नहा है,—वह तो मानो उसे स्वेच्छासे जान बूझकर बुला लाना है,—अर्थहीन शौककी चीजकी तरह महज एक लडकोंका खेल है वह। उससे बडा नहीं'।

"मैं तो आश्चर्यसे हतबुद्धि-सा हो गया। बोला, 'कमल, तुम्हारे पिता क्या तुम्हें शुद्ध भोगका मन्त्र ही दे गये हैं, और जगत्में जो कुछ महान् है, उसपर अश्रद्धासे अवज्ञा करनेको ही कह गये हैं?'

"कमलने इस तरहके दोषारोपकी शायद मुझसे आशा नहीं की थी। उसने क्षुण्ण होकर उत्तर दिया, 'यह आपकी असहिष्णुताकी बात है आशु बाबू। आप निश्चित जानते हैं कि कोई भी पिता अपनी कन्याको ऐसा मन्त्र नहीं दे जा सकता। मेरे पिताके प्रति आप अविचार कर रहे हैं। वे साधु पुरुष थे।'

"मैंने कहा, 'जैसा कि तुम कह रही हो, यदि वास्तवमें यह शिक्षा वे तुम्हें दे गये हों तो उनके प्रति सुविचार करना भी कठिन है। मनोरमाकी मृत्युके बाद अन्य किसी स्त्रीको जो मैं प्यार न कर सका इसे सुनकर तुमने कहा था कि यह चित्तकी कमजोरी है, कमजोरीको लेकर गर्व नहीं किया जा सकता। मृत पत्नीकी स्मृतिके सम्मानको तुमने निष्फल आत्म निग्रह कहके उपेक्षाकी दृष्टिसे

देखा था। संयमके कोई माने ही उस दिन तुम्हारे ध्यानमें नहीं आये थे।'

"कमलने कहा, 'आज भी नहीं आते आशु बाबू। जो संयम उद्धत आस्फालनसे जीवनके आनन्दको म्लान कर देता है वह तो कोई चीज ही नहीं,—सहज मनकी एक लीला है—उसे बाँधनेकी जरूरत है। सीमा मानकर चलना ही तो संयम है।—शक्तिकी स्पर्धामें भी संयमकी सीमाको लाँघ जाना सम्भव है। तब फिर उसे उतनी इज्जत नहीं दी जा सकती। यह बात क्या आपने कभी विचारके नहीं देखा कि अति-संयम भी एक तरहका असंयम है?"

"विचारके नहीं देखी, यह सच था। इसीसे विचारके देखनेकी बात चटसे याद आ गई। मैंने कहा, 'यह तो सिर्फ तुम्हारी बातोंकी जादूगरी है, उसी भोगकी वकालतसे भरी हुई। पर आदमी जितना ही ज्यादा जकड़ पकड़के भोग को लील जाना चाहता है, उतना ही उसे खो बैठता है। उसकी भोगकी भूख तो मिटती नहीं,—बल्कि निरन्तर अतृप्ति ही बढ़ती चलती है। इसीसे हमारे शास्त्रकार कह गये हैं कि उस मार्गमें शान्ति नहीं है, तृप्ति नहीं है, उससे मुक्ति की आशा व्यर्थ है। उनका कहना है कि 'न जातु कामः कामानामुपभोगेन शाम्यति, हविषा कृष्णवर्त्मेव भूय एवाभिवर्द्धते।' आगमें घी देनेसे जैसे वह और भी जोरसे जलने लगता है, वैसे ही भोग-उपभोगोंके द्वारा कामना बढ़ती ही जाती है, कभी घटती नहीं'।"

हरेन्द्र उद्विग्न होकर बोल उठा, "उसके सामने शास्त्र-वाक्य आप क्यों कहने गये? हाँ, फिर?"

आशु बाबूने कहा, "तुमने ठीक कहा। सुनकर वह हँस पड़ी और बोली, 'शास्त्रमें ऐसी बात है क्या? सो तो होगी ही। उन्हें यह भी तो मालूम था कि ज्ञानकी चर्चासे ज्ञानकी इच्छा बढ़ती है, धर्मकी साधनासे धर्मकी प्यास भी उत्तरोत्तर बढ़ती जाती है, पुण्यके अनुशीलनसे पुण्यका लोभ भी क्रमशः उग्र होता जाता है—मालूम होता है मानो अभी बहुत बाकी है। इसकी भी ठीक यही हालत है। यह कामना भी शान्त नहीं होती। इसलिए, इस क्षेत्रमें भी वे लोग क्या यही आक्षेप नहीं कर गये?—उनमें विवेक था, शायद इसलिए।"

हरेन्द्र, अजित, बेला और नीलिमा चारोंके चारों हँस पड़े।

आशु बाबू बोले, "हँसनेकी बात नहीं। लड़कीके उपहास और व्यंग्यसे मानो मैं हतवाक् हो गया, अपनेको सँभालकर बोला, 'नहीं,

अभिप्राय नहीं, वे तो यही निर्देश कर गये हैं कि भोगसे तृप्ति नहीं हो सकती, कामनासे निवृत्ति नहीं हो सकती।'

"कमल जरा रुककर बोली, 'मालूम नहीं, ऐसे बाहुल्यका इंगित वे क्या कर गये? यह क्या बाजारमें बैठकर 'यात्रा' के गान सुनना है या पड़ोसीके घरका ग्रामोफोन है जो बीचमें ही मालूम हो जायगा कि जाने दो, काफी तृप्ति हो चुकी, अब जरूरत नहीं। इस तृप्ति-अतृप्तिकी असल सत्ता तो बाहरके भोगमें है नहीं, उसका स्रोत तो है जीवनके मूलमें। वहांसे यह हमेशा, जीवनकी आशा, आनन्द और रस जुटाया करती है और शास्त्रका धिक्कार व्यर्थ होकर दरवाजेपर पड़ा रह जाता है—उसे छूतक नहीं पाता।'

"मैंने कहा, 'हो ही सकता है, मगर है तो आखिरकार वह शत्रु ही, हमें उसे जीतना तो चाहिए ही?'

"कमलने कहा, 'मगर शत्रु कहके गाली देनेसे ही तो वह छोटा न हो जायगा। प्रकृतिके लिखे पक्के पट्टेके अनुसार वह दखलदार है,—उसके किस स्वत्वको कब कौन सिर्फ विद्रोह करके ही उड़ा सका है? दुःखसे घबराकर आत्महत्या करना तो दुःखको जीतना नहीं है? फिर भी मजा यह कि ऐसी ही युक्तियोंके बलपर आदमी अकल्याणके सिंहद्वारपर शान्तिका रास्ता टटोलता फिरता है। इससे शांति तो मिलती नहीं, स्वस्थता भी चली जाती है।'

"सुनकर मुझे ऐसा लगा कि शायद यह सिर्फ मुझको ही कोंच रही है।" इतना कहकर वे क्षण भर चुप रहे, फिर कहने लगे, "और न जाने मेरा कैसा जी हो गया कि मुँहसे चटसे निकल पड़ा, 'कमल, तुम अपने जीवनपर तो एक बार विचार कर देखो।' बात मुँहसे निकल जानेके बाद खुद मुझे ही अपने कानोंको खटकी। कारण, कटाक्ष करने लायक उसके पास कुछ था ही नहीं,—कमलको खुद भी आश्चर्य हुआ, पर वह न तो गुस्सा हुई, न रूठी, शान्त चेहरेसे मेरी तरफ देखती हुई बोली, 'मैं प्रतिदिन ही विचार देखती हूँ आशु बाबू। दुःख नहीं पाती हूँ सो मैं नहीं कहती, पर मैंने उस दुःखको ही जीवनका चरम नहीं मान लिया है। शिवनाथको जो कुछ देना था वे दे चुके, मुझे जो मिलना था सो मिल गया,—आनन्दके वे छोटे-छोटे क्षण ही मेरे मनमें मणि माणिक्यकी तरह संचित हैं। न तो निष्फल मानसिक दाहसे मैंने उन्हें जलाकर राख किया और न सूखे झरनेके नीचे रीते हाथ पसारकर भीख माँगनेके लिए

ही खड़ी हुई। उनके प्रेमकी आयु जब खतम हो चुकी, तो शान्त मनसे मैंने उन्हें विदा दे दी, पछतावे और शिकायतके धुएँसे आकाश काला करनेकी मेरी प्रवृत्ति ही नहीं हुई। इसीसे उनके सम्बन्धमें मेरा उस दिनका आचरण आप लोगोंको अद्भुत-सा लगा। आप लोगोंने सोचा था कि इतने बड़े अपराधको कमलने माफ कैसे कर दिया? मगर मेरे मनमें उस दिन उनके अपराधसे बढ़ कर अपने ही दुर्भाग्यकी बात ज्यादा आई थी।"

"सुनते-सुनते मुझे ऐसा लगा कि मानो उसकी आँखोंसे आँसू छलक आये हैं। हो सकता है कि सच हो, या शायद मेरी भूल हो। उस वक्त मेरा हृदय मानो वेदनासे ऐंठ गया,—उसमें और मुझमें प्रभेद ही कितना-सा था! मैंने कहा, 'कमल ऐसे मणि माणिक्योंका सञ्चय मैंने भी अपने मनमें किया है, वही तो मेरे लिए सात राज्योंका धन है,—अब हम लोग किसके वास्ते काम करने जायँ बतलाओ'?

"कमल चुपचाप देखती रह गई। मैंने पूछा, 'इस जीवनमें क्या अब तुम और किसीको प्यार कर सकती हो कमल? इस तरह समस्त देह मनसे अंगीकार कर सकती हो और किसीको'?

"कमलने अविचलित कण्ठसे जवाब दिया, 'कमसे कम जिन्दा तो यही आशा लेकर रहना पड़ेगा आशु बाबू। अकस्मात बादलोंकी ओटमें आज अगर सूर्य अस्त हो गया-सा मालूम दे, तो क्या वह अन्धकार ही सत्य हो जायगा और कल प्रभातमें अरुण प्रकाशसे अगर आकाश छा जाय तो क्या अपनी आँखोंको बन्द करके यह कह दूँगी कि यह प्रकाश नहीं है, अन्धकार है? जीवनको क्या ऐसे ही बच्चोंके खेल-खेलमें खतम कर दूँगी'?

"मैंने कहा, 'रात तो सिर्फ एक ही नहीं होती कमल, प्रभातका प्रकाश खतम करके वह तो दुबारा भी आ सकती है'?

"उसने कहा, 'आया करे। तब भी प्रभातपर विश्वास करके फिर रात बिता दूँगी'।

"मैं तो मारे आश्चर्यके स्तब्ध होकर बैठा रहा,—कमल चली गई।"

"बच्चोंका खेल! सोचा था, शोकमेंसे गुजरकर हम दोनोंकी चिन्ता धारा शायद एक ही स्रोतमें मिल गई है। परन्तु देखा कि नहीं, सो बात नहीं है। अभी आसमानका फर्क है। उसके दृष्टिकोणसे तो जीवनका अर्थ ही अलग है,—

हम लोगोंके साथ उसका कोई मेल ही नहीं। वह न तो अदृष्टको ही मानती है और न अतीतकी स्मृति उसके आगेका रास्ता ही रोकती है, उसके लिए अनागत ही सब कुछ है,—जो आजतक आया नहीं है। इसीसे उसकी आशा भी जितनी दुर्निवार है, आनन्द भी उतना ही अपराजेय है। सिर्फ इसी वजहसे कि किसी गैरने उसके जीवनको धोखा दिया है, वह अपने जीवनको धोखा देने या वंचित रखनेके लिए किसी तरह तैयार नहीं।"

सुनके सब चुप रहे।

उठते हुए दीर्घ निःश्वासको दबाकर आशु बाबू फिर कहने लगे, "विलक्षण लड़की है! उस दिन नफरत और पछतावेका ठिकाना न रहा, पर साथ ही यह बात भी मन ही मन स्वीकार किये बिना न रहा गया कि यह सिर्फ बापसे सीखकर रटी हुई भाषा नहीं है। जो कुछ उसने सीखा है, बिल्कुल निःसहाय होकर पूरी तरह खुद ही सीखा है। ऐसी विशेष उमर भी नहीं, पर फिर भी मालूम होता है कि अपनी आत्माको उसने इसी उमरमें पूरी तरह उपलब्ध कर लिया है।"

फिर जरा ठहर कहने लगे, "और बात भी सच है। वास्तवमें जीवन कोई बच्चोंका खेल तो है नहीं। भगवान्का इतना बड़ा दान इसलिए नहीं आया। ऐसी बात भी भला मैं कैसे कह सकता था कि कोई एक आदमी किसी दूसरेके जीवनमें विफल हो गया तो उसी शून्यताकी जिन्दगी भर जय घोषणा करता रहे?"

बेलाने आहिस्तेसे कहा, "बात तो बड़ी सुन्दर है।"

हरेन्द्र चुपकेसे उठके खड़ा हो गया, बोला, "रात काफी हो गई, मेह भी कम हो गया,—आज इजाजत मिले।"

अजित भी उठ खड़ा हुआ, कुछ बोला नहीं। और दोनों नमस्कार करके बाहर हो गये।

बेला सोने चली गई। नीलिमाको छोटे मोटे दो एक काम करने बाकी थे, पर आज वे यों ही अधूरे पड़े रहे और अन्यमनस्ककी तरह वह भी चुपचाप चल दी।

नौकरकी प्रतीक्षामें आशु बाबू आँखोंपर हाथ धरे पड़े रहे।

बड़ा भारी मकान था। बेला और नीलिमाके सोनेके कमरे आमने-सामने थे। दोनों कमरोंमें बत्ती जल रही थी, इतनी सबकी सब बातें और आलोचनाएँ

सूने निःसंग कमरोंमें पहुँचनेके बाद मानो धुँधली-सी हो गई, फिर भी, परम आश्चर्यकी बात यह है कि कपड़े बदलनेके पहले दर्पणके सामने जाकर खड़े होनेपर दोनों नारियोंके मनमें, एक ही समयमें, ठीक एक ही प्रश्न उठ खड़ा हुआ 'एक दिन, जिस दिन मैं नारी थी !'

२४

दस-बारह दिन हुए कमल आगरा छोड़कर कहीं बाहर चली गई है, और इधर आशु बाबूको उसकी सख्त जरूरत है। थोड़ी बहुत चिन्ता तो सभीको हुई थी, पर उद्वेगके काले बादल सबसे ज्यादा हरेन्द्रके ब्रह्मचर्य-आश्रमके माथेपर मँडराये। ब्रह्मचारी हरेन्द्र और अजित व्याकुलताकी प्रतिस्पर्धामें ऐसे सुलगने लगे कि शायद उनका 'ब्रह्म' भी खो जाता तो ऐसे परेशान न होते। अन्तमें उन्होंने एक दिन उसे ढूँढ़ ही निकाला। घटना अत्यन्त साधारण थी। कमलके बापके यहाँके एक घनिष्ठ परिचित फिरंगी साहब वहाँका काम छोड़कर टूँडलामें रेलवेकी नौकरी करने आया है, उसके स्त्री नहीं है, दो ढाई सालकी एक छोटी लड़की है। बड़ी परेशानीमें पड़कर वह कमलको ढूँढ़ला ले गया है। उसकी घर गृहस्थी ठीक करनेमें कमलको इतनी देर लग गई। आज सबेरे वह घर लौटी है और तीसरे पहर उसके लिए मोटर भेजकर आशु बाबू बाट देख रहे हैं।

सिलाई करते-करते नीलिमा सहसा बोल उठी, "उस आदमीके घरमें स्त्री नहीं, एक नन्ही-सी लड़कीके सिवा और कोई औरत भी नहीं,—फिर भी उसके घर कमलने आसानीसे दस-बारह दिन बिता दिये।"

आशु बाबूने बड़ी मुश्किलोंसे सिर घुमाकर उसकी तरफ देखा, पर वे समझ न सके कि इस बातका तात्पर्य क्या है।

नीलिमा मानो अपने मन ही मन कहने लगी, "वह तो, मालूम होता है, नदीकी मछली है जिसके पानीमें भीगने-न भीगनेका कोई प्रश्न ही नहीं उठता, खाने-पहननेकी उसे चिन्ता नहीं,—बिल्कुल स्वाधीन है।"

आशु बाबूने सिर हिलाते हुए मृदु कंठसे कहा, "बात तो करीब-करीब ऐसी ही है।"

"उसके रूप-यौवनकी सीमा नहीं, बुद्धि भी वैसी ही अनन्त है। उस राजेन्द्रके साथ उसकी कै दिनकी जान-पहचान थी, मगर उपद्रवके [illegible]

कहीं उसे जगह नहीं मिली, तो उसे भी उसने बिना किसी संकोचके अपने घर बुला लिया। किसीके मतामतकी परवाहने उसके कर्तव्यमें विघ्न नहीं डाला। जो किसीसे नहीं बना, उसे वह बड़ी आसानीसे कर गुजरी। सुनकर ऐसा लगा जैसे सब उससे छोटे हो गये हैं,—इसके लिए दूसरी औरतोंको न जाने कितनी कितनी बातोंका खयाल रखना पड़ता है!"

आशु बाबूने कहा, "खयाल तो रखना ही चाहिए नीलिमा!"

बेलाने कहा, "हम भी चाहें तो वैसी ही बेपरवाह और स्वाधीन बन सकती हैं।"

नीलिमाने कहा, "नहीं, नहीं बन सकतीं। मैं भी नहीं बन सकती, और आप भी नहीं। कारण, दुनिया हमपर जो स्याही उडेल देगी उसे धो पोंछकर साफ कर डालनेकी शक्ति हम लोगोंमें नहीं है।"

जरा ठहरकर नीलिमा कहने लगी, "वैसी इच्छा एक दिन मेरी भी हुई थी, इसके सब ओरसे मैंने इस बातको सोच देखा है। पुरुषोंके बने हुए अविचार और अत्याचारसे हम जल जल मरी हैं और कितनी जली हैं यह कह नहीं सकतीं,—सिर्फ जलना ही सार हुआ है।—पर समाजके इस अत्याचारका असली रूप कमलको देखनेके पहले हमें कभी नहीं दिखाई दिया। स्त्रियोंकी मुक्ति, स्त्रियोंकी स्वाधीनता तो आजकल हरएक स्त्री पुरुषकी जबानपर है, पर वह जबानके आगे एक कदम भी आगे नहीं रखती। सो क्यों, जानती हैं? अब मालूम हुआ है कि स्वाधीनता तर्क विचारसे नहीं मिलती, न्याय और धर्मकी दुहाई देनेसे भी नहीं मिल सकती, सभामें खड़े होकर पुरुषोंके साथ कलह करनेसे भी नहीं मिलती,—असलमें स्वाधीनता जैसी चीज कोई किसीको दे ही नहीं सकता,—लेने देनेकी वह चीज ही नहीं। कमलको देखते ही दीख जाता है कि यह स्वाधीनता हमारी अपनी पूर्णतासे, आत्माके अपने विस्तारसे, स्वतः ही आती है। बाहरसे अण्डेका छिलका तोड़कर भीतरके जीवको मुक्ति देनेसे वह मुक्ति नहीं पाता,—बल्कि मर जाता है। हमारे साथ यहीपर उसका पार्थक्य है।"

फिर बेलासे बोली, "अभी जो वह दस बारह दिनके लिए न जाने कहाँ चली गई, सबके डरका ठिकाना न रहा, पर यह आशंका किसीको स्वप्नमें भी न हुई कि ऐसा कोई काम वह कर सकती है जिससे उसकी इज्जतपर बट्टा लगे? बताइए, हम होतीं तो आदमीके दिलमें इतना जबरदस्त विश्वासका जोर कहाँ

पाता ? यह गौरव हमें कौन देता ? न पुरुष ही देते, न औरत ही।"

आशु बाबू आश्चर्यके साथ उसके मुँहकी तरफ क्षण भर देखते रहे, फिर बोले, "वास्तवमें यह सच है नीलिमा।"

बेलाने पूछा, "लेकिन उसका पति होता तो वह क्या करती ?"

नीलिमाने कहा, "उसकी सेवा करती, रसोई बनाती खिलाती, घर-द्वार झाड़ती-बुहारती, बच्चे होते तो उनकी परवरिश करती, और क्या करती ? अभी तो वह अकेली है और रुपये-पैसेसे भी तंग है, नहीं तो वैसी हालतमें, मैं तो समझती हूँ, समयके अभावमें यह हम लोगोंसे मिलने-जुलनेतक न आ सकती।"

बेलाने कहा, "तब फिर ?"

नीलिमा, "तब फिर क्या ?" कहकर हँस दी और बोली, "घरका काम काज नहीं करें, तमीज़ या लिहाज़ कुछ रहे नहीं, हरदम सैर-सपाटा करती फिरें,—क्या यही स्त्रियोंकी स्वाधीनताका मान दण्ड है ? स्वयं विधाताके भी काम-काजका अन्त नहीं, लेकिन कोई क्या इस कारण उन्हें पराधीन सोचता है ? इस संसारमें हमारी खुदकी मेहनत मशक्कत भी क्या कुछ कम है ?"

आशु बाबू गहरे आश्चर्यके साथ मुग्ध दृष्टिसे उसकी तरफ देखते रहे। असलमें इस ढंगकी कोई बात अबतक उन्होंने नीलिमाके मुँहसे नहीं सुनी थी।

नीलिमा कहने लगी, "कमल बैठी रहना तो जानती ही नहीं, तब वह पति पुत्र और घर गृहस्थीके कामोंमें तल्लीन हो जाती,—आनन्दकी जल धाराकी तरह घर-गृहस्थी उसके माथेपरसे बही चली जाती, उसे पता भी न पड़ पाता। मगर जिस दिन समझती कि पतिका काम बोझ बनकर उसके सिरपर सवार हो गया है, उस दिन मैं सौगन्ध खाकर कह सकती हूँ कि उसे संसारमें कोई एक दिनके लिए भी पकड़कर नहीं रख सकता।"

आशु बाबू आहिस्तेसे बोले, "सो ही ठीक है। ऐसा ही मालूम होता है।"

इतनेमें परिचित मोटरका हॉर्न सुनाई दिया। बेलाने खिड़कीसे झाँककर देखा और कहा, "अपनी ही गाड़ी है।"

थोड़ी देर बाद नौकर बत्ती रखने आया और कमलके आनेकी खबर दे गया।

कई दिनसे आशु बाबू उसीकी प्रतीक्षा कर रहे थे, मगर फिर भी खबर पाते ही उनका चेहरा अत्यन्त म्लान और गम्भीर हो गया। अभी-अभी वे आराम-कुरसीपर सीधे होकर बैठे थे, अब फिर पीठ टेककर लेट गये।

भीतर आकर कमलने सबको नमस्कार किया, और आशु बाबूके पासकी कुरसीपर जाकर बैठ गई। बोली, "मैंने सुना कि आप मेरे लिए बड़े व्यस्त हैं, किसे मालूम था कि आप लोग मुझे इतना चाहते हैं,—नहीं तो जानेके पहले अवश्य ही आपको खबर दे जाती।" कहते हुए उसने आशु बाबूका शिथिल हाथ बड़े स्नेहके साथ खींचकर अपने हाथमें ले लिया।

आशु बाबूका मुँह दूसरी ओर था, और अब भी वह उधर ही रहा। उसकी बातका वे कुछ भी उत्तर न दे सके।

कमलने पहले तो समझा कि उनके सम्पूर्ण स्वस्थ होनेके पहले ही वह चली गई थी और अबतक कोई खबर-सुध नहीं ली, इसीसे उनका यह अभिमान है। फिर उसने उनकी मोटी उँगलियोंमें अपनी चम्पाकी कली सी उँगलियाँ उलझाते हुए कानके पास मुँह ले जाकर चुपकेसे कहा, "मेरी गल्ती हुई है, मैं माफी माँगती हूँ।" मगर इसका भी जब कोई जवाब नहीं मिला, तब उसे सचमुच ही बड़ा आश्चर्य हुआ और साथ ही डर भी लगा।

बेला जानेके लिए कदम बढ़ा चुकी थी, खड़े होकर उसने विनयके साथ कहा, "अगर मालूम होता आप आयगी, तो आज मालिनीका निमंत्रण मैं हर्गिज स्वीकार न करती, लेकिन अब तो न जानेसे उन लोगोंको बड़ी निराशा होगी।"

कमलने पूछा, "मालिनी कौन ?"

नीलिमाने जवाब दिया, "यहाँके मॅजिस्ट्रेट साहबकी स्त्री,—नाम शायद तुम्हें याद नहा रहा।" फिर बेलाकी तरफ मुखातिब होकर कहा, "सचमुच ही आपका जाना जरूरी है। नहीं जानेसे उनकी गानेकी सारी महफिल बिल्कुल मिट्टी हो जायगी।"

"नहीं नहीं, मिट्टी नहीं होगी,—मगर हाँ, रज जरूर होगा। सुना है कि उन्होंने और भी दो चार सज्जनोंको आमन्त्रित किया है। अच्छा तो, आज तो वहीं जाती हूँ, फिर और किसी दिन बातचीत होगी। नमस्कार।" कहकर वह जरा कुछ व्यग्रताके साथ बाहर चली गई।

नीलिमाने कहा, "अच्छा ही हुआ जो आज उनका बाहर निमंत्रण था, नहीं तो सब बातें खुलासा करनेमें हिचकिचाहट होती। अच्छा कमल, तुम्हें मैं 'आप' कहती थी या 'तुम' कहके पुकारती थी ?"

कमलने कहा, " 'तुम' कहके। मगर मैं तो कोई ऐसे निर्वासनमें नहीं गई थी जो इस बीचमें ही भूल जातीं ?"

"नहीं, सिर्फ जरा खटका हो गया था। और होनेकी बात भी है। खैर, इसे जाने दो। सात आठ दिनसे तुम्हें हम लोग ढूँढ रहे थे। हमारा यह सिर्फ खोजना ही नहीं था बल्कि मेरी तो यह तुम्हें पानेके लिए मन ही मनकी तपस्या थी।"

परन्तु तपस्याका शुष्क गाम्भीर्य उसके चेहरेपर न था, इसलिए, अकृत्रिम स्नेहके मीठे परिहासकी कल्पना करके कमल हँसती हुई बोली, "इस सौभाग्यका कारण ! मैं तो सबकी परित्यक्ता हूँ जीजी, शिष्ट-समाजका तो कोई मुझे चाहता तक नहीं।"

उसका यह 'जीजी'का सम्बोधन बिल्कुल नया था। नीलिमाकी आँखें सहसा भर आईं, पर वह चुप रही।

आशु बाबूसे न रहा गया, उसकी तरफ मुँह करके बोले, "शिष्ट-समाजको जरूरत होगी तो इसका जवाब वही देगा, लेकिन मैं जानता हूँ, जीवनमें किसीने अगर वास्तवमें तुम्हें चाहा है तो नीलिमाने ही चाहा है। इतना प्रेम तुमने शायद किसीका भी न पाया होगा कमल।"

कमलने कहा, "सो मैं जानती हूँ।"

नीलिमा चंचल पैरोंसे उठ खड़ी हुई। कहीं जानेके लिए नहीं बल्कि इसलिए कि इस ढंगकी आलोचनामें व्यक्तिगत इशारेसे वह हमेशा कुछ अस्थिर-सी हो जाया करती है बहुतसे मौकोंपर प्रिय जनोंको इससे गलतफहमी हुई है, फिर भी, ऐसा ही उसका स्वभाव है। बातको झटपट दबाकर उसने कहा, "कमल, तुम्हें आज दो खबरें सुनानी हैं।"

कमल उसके मनका भाव समझ गई, हँसके बोली, "अच्छी बात है, सुनाइए।"

नीलिमाने आशु बाबूकी तरफ इशारा करके कहा, "ये शरमके मारे तुमसे मुँह छिपाये हुए हैं, इससे मैंने ही भार लिया है सुनानेका। मनोरमाके साथ शिवनाथका ब्याह होना स्थिर हो गया है,—पिता और भावी ससुरकी अनुमति और आशीर्वाद पानेके लिए दोनोंने पत्र दिये हैं।"

सुनते ही कमलका चेहरा फक पड़ गया, पर उसी क्षण अपनेको सँभालते

हुए उसने कहा, "इसमें इनके लिए लज्जाकी क्या बात है ?"

नीलिमाने कहा, "इनकी लड़की है इसलिए। और चिट्ठी पानेके बादसे इन कई दिनोंमें इनके मुँहसे सिर्फ एक ही बात बार-बार निकली है कि आगरेमें इतने आदमी मर गये, भगवान्‌ने मुझपर दया क्यों नहीं की ! अपनी जानमें किसी दिन कोई अनुचित काम नहीं किया, इसीसे इनका अनन्य विश्वास था कि ईश्वर मुझपर भी सदय हैं। और यह अभिमानकी व्यथा ही मानो इनकी सारी वेदनाओंसे बढ़ गई है। मेरे सिवा किसीसे कुछ कह नहीं सके हैं, रात दिन मन ही मन सिर्फ तुम्हारो पुकार रहे हैं। शायद, इनकी धारणा है कि सिर्फ तुम ही इससे परित्राणका रास्ता बता सकती हो।"

कमलने झुककर देखा कि आशु बाबूकी मिची आँखोंके कोनोंसे आँसू ढलक रहे हैं, हाथसे उन आँसुओंको चुपचाप पोंछकर वह खुद भी स्तब्ध हो रही।

बहुत देर बाद बोली, "एक खबर तो यह हुई और दूसरी ?"

नीलिमाने कुछ परिहासके रूपपर बात करनी चाही, पर ठीकसे कहते नहीं बना, बोली, "मामला जरा अचिन्तित जरूर है, पर ऐसा कुछ भयंकर नहीं। हमारे मुकर्जी महाशयके स्वास्थ्यके विषयमें सब कोई बहुत चिन्तित थे, सो वे स्वस्थ हो गये हैं और उसके बाद उनके भाई और भाभीने मिलकर उनकी इच्छाके सर्वथा विरुद्ध जबरन् उनका ब्याह कर दिया है। और बड़ी धूमके साथ उन्होंने यह संवाद आशु बाबूको अपने पत्रमें लिखा है,—बस।" इतना कहकर अबकी बार वह खुद ही हँसने लगी।

उसकी इस हँसीमें न तो सुख ही था और न कौतुक ही। कमल उसके मुँहकी तरफ देखकर बोली, "दोनों ही ब्याहकी खबरें हैं। एक हो गया है, और एकका होना तय हो गया है—लेकिन मेरी पुकार क्या हुई ? इनमेंसे किसीको भी तो मैं रोक नहीं सकती ?"

नीलिमाने कहा, "पर, रुकवानेकी कल्पना करके ही शायद ये तुम्हें ढूँढ रहे थे। लेकिन मैंने तुम्हें नहीं ढूँढा बहन, मैं तो काय मनसे भगवान्‌से यही चाह रही थी कि भेंट होनेपर तुम्हारी प्रसन्न दृष्टि प्राप्त कर सकूँ। इस देशमें स्त्रीके रूपमें जन्म लेकर भाग्यको दोष देने बैठूँ तो उसका किनारा न खोज पाऊँगी, अपनी बुद्धिके दोषसे मायका और ससुराल दोनों ही खो दिये हैं,—उसपर ऊपरी नुकसान जो हुआ है उसका विवरण नहीं दे सकूँगी।—अब बहनोईका

आश्रय भी जाता रहा।" फिर आशु बाबूकी तरफ इशारा करके कहा, "इनके तो दया-दाक्षिण्यकी हद ही नहीं, जितने दिन ये यहाँ हैं, किसी तरह दिन कट ही जायँगे, मगर उसके बाद मुझे अन्धकारके सिवा अपनी आँखोंके आगे और कुछ नहीं सूझ रहा है। सोचा है, अबकी बार तुम्हींसे जगह देनेको कहूँगी, और न मिली तो मर जाऊँगी। अब पुरुषोंसे कृपाभिक्षा माँगती हुई नदीके कूड़की तरह घाट घाट टकराती हुई आयुर अन्ततक प्रतीक्षा न कर सकूँगी।" कहते-कहते उसका स्वर भारी हो आया, पर आँखोंका पानी उसने किसी तरह जबरदस्ती दबा लिया।

कमल उसके मुँहकी तरफ देखकर सिर्फ जरा हँस दी।

"हँसी क्यों?"

"इसलिए कि हँसना जवाब देनेकी अपेक्षा सहज है।"

नीलिमाने कहा, "सो जानती हूँ, पर आजकल बीच-बीचमें न जाने कहाँ अदृश्य हो जाया करती हो!—डर तो इस बातका है।"

कमलने कहा, "होती रहूँ अदृश्य लेकिन जरूरत पड़नेपर मुझे ढूँढ़ने नहीं जाना पड़ेगा जीजी, मैं ही आपको देश भरमें ढूँढ़ने निकल पड़ूँगी। इस विषयमें आप निश्चिन्त रहें।"

आशु बाबूने कहा, "अब इसी तरह मुझे भी अभय दो कमल, मैं भी जिससे इनकी तरह निश्चिन्त हो सकूँ।"

"आदेश दीजिए, मैं आपके लिए क्या कर सकती हूँ?"

"तुम्हें और कुछ नहीं करना होगा कमल, जो करना होगा मैं खुद ही करूँगा। मुझे सिर्फ इतना उपदेश दो कि पिताके कर्तव्यके खिलाफ मैं कोई अपराध न कर बैठूँ। इतना ही नहीं कि इस ब्याहमें मैं सिर्फ राय ही नहीं दे सकता, बल्कि मैं उसे होने भी नहीं दे सकता।"

कमलने कहा, "राय आपकी है, सो आप नहीं भी दें। पर ब्याह नहीं होने देंगे, सो कैसे! लड़की तो आपकी बड़ी हो चुकी है।"

आशु बाबू अपनी उत्तेजनाको दबा न सके, कारण, यह बात उनके मनमें भी दिन-रात चक्कर काटती रही है कि अस्वीकार करनेका कोई उपाय नहीं। बोले, "सो मैं जानता हूँ। लेकिन लड़कीको भी मालूम होना चाहिए कि बापसे बड़ा नहीं हुआ जा सकता। सिर्फ मतामत ही मेरी अपनी चीज नहीं कमल,

सम्पत्ति भी मेरी अपनी है। आशु वैद्यकी कमजोरीके परिचयका ही लोगोंको अभ्यास हो गया है, पर उसका एक दूसरा पहलू भी है,—उसे लोग भूल गये हैं।"

कमलने उनके मुँहकी तरफ देखकर स्निग्ध कण्ठसे कहा, "आपने उस पहलूको लोग भूले ही रहें तो अच्छा, आशु बाबू। लेकिन, अगर ऐसा न हो, तो क्या उसका परिचय सबसे पहले अपनी लड़कीको ही देना होगा?"

"हाँ, अबाध्य लड़कीको।" वे क्षण भर चुप रहकर बोले, "वह मेरी मातृहीन एकमात्र सन्तान है, किस तरह मैंने उसे आदमी बनाया है, इसे वे ही जानते हैं जिन्होंने पितृ हृदयकी सृष्टि की है। इसकी मार्मिक व्यथा कितनी बड़ी है, उसे अगर मुँहसे व्यक्त किया जाय तो उसकी विकृति सिर्फ मेरा ही नहीं, बल्कि सबके पिताके जो पिता हैं उनका भी उपहास करने लगेगी। इसके सिवा इसे तुम समझ भी कैसे सकती हो? लेकिन पिताका स्नेह ही नहीं है, कमल, उसका कर्तव्य भी तो है? शिवनाथको मैं पहचान गया हूँ। उसके सत्यानाशी ग्राससे लड़कीको बचानेका इसके सिवा और कोई रास्ता ही मुझे नजर नहीं आता। कल उन लोगोंको चिट्ठीमें लिख दूँगा कि इसके बाद मणि मुझसे एक कौड़ीकी भी आशा न रक्खे।"

"पर उस चिट्ठीपर अगर वे विश्वास न करें? अगर सोच लें कि यह गुस्सा ज्यादा दिन न रहेगा,—एक दिन आप अपनी गलतीको खुद ही सुधार लेंगे,—तब?"

"तब वे उसका फल भोगेंगे। लिखनेकी जिम्मेदारी मेरी है, विश्वास करनेका दायित्व उनपर है।"

"यही क्या आपने वास्तवमें तय किया है?"

"हाँ।"

कमल चुप बैठी रही और प्रतीक्षामें सिर ऊपर उठाये आशु बाबू खुद भी कुछ देरतक चुप मन ही मन व्याकुल हो उठे। बोले, "चुप हो रहीं कमल, जवाब नहीं दिया?"

"कहाँ, आपने तो कोई प्रश्न नहीं किया? संसारमें यह व्यवस्था तो प्राचीन कालसे ही चली आ रही है कि एकके साथ जब दूसरेके मतका मेल नहीं खाता, तो जो शक्तिशाली होता है वह कमजोरको दण्ड देता है। इसमें कहनेको क्या

बात है ?"

आशु बाबूके क्षोभकी सीमा न रही, बोले यह तुम्हारी कैसी बात है कमल ! सन्तानके साथ पिताका नात्ति-परी जैसा सम्बन्ध तो है नहीं, जो उसके कमजोर होनेके कारण ही मैं उसे दण्ड देना चाहता हूँ ! कठोर होना कितना कठिन है, यह सिर्फ पिता ही जानता है, फिर भी मैंने जो इतना बड़ा कठोर सङ्कल्प किया है वह सिर्फ इसलिए कि उसे गलतीसे बचा दूँ। सचमुच ही क्या तुम इसे समझ नहीं सकी हो ?"

कमलने सिर हिलाते हुए कहा, "समझ तो सकी हूँ, पर अगर आपकी बात न मानकर वह भूल ही कर बैठे, तो उसका दुःख भी तो नहीं पायेगी। अगर उस दुःखको दूर न कर सकें तो इसलिए क्या आप गुस्सेमें आकर उसके दुःखके बोझको और भी हजार गुना बना देना चाहेंगे ?"

फिर जरा ठहर कर कहा, "आप उसके सब आत्मीयोंसे बढ़कर परमात्मीय हैं। जिस आदमीको आपने बहुत ही बुरा समझ लिया है क्या उसीके हाथ अपनी लड़कीको हमेशाके लिए निःस्व निरुपाय करके विसर्जित कर देंगे ?—किसी दिन लौटनेका कोई रास्ता ही किसी तरफसे खुला न रहने देंगे ?"

आशु बाबू निःशब्द दृष्टिसे सिर्फ देखते रह गये, एक शब्द भी उनके मुँहसे न निकला—सिर्फ देखते-देखते उनकी दोनों आँखोंसे आँसुओंकी बड़ी-बड़ी बूँदें टपक पड़ीं।

कुछ देर इसी तरह बात जानेपर उन्होंने अपनी आस्तीनसे आँखें पोंछी और रुके हुए कण्ठको साफ करके धीरे धीरे सिर हिलाकर कहा, "लौटनेका रास्ता अभी ही है, बादमें नहीं। पतिको त्यागकर जो लौटना है, जगदीश्वर करें कि वह मुझे अपनी आँखोंसे न देखना पड़े।"

कमलने कहा, "यह अनुचित है। बल्कि, मैं तो यह कामना करती हूँ कि भूल अगर उसे कभी अपनी आँखोंसे दिखाई दे जाय, तो उस दिन उसके संशोधनका मार्ग किसी भी तरफसे बन्द न रहे। इसी तरह तो मनुष्य अपनेको सुधारते सुधारते आज मनुष्य हो सका है। भूलमें तो कोई डर नहीं आशु बाबू, जबतक कि दूसरी तरफका मार्ग खुला है। वह मार्ग आँखोंके सामने बन्द दिखाई देता है, तभी तो आज आपकी आशङ्काकी सीमा नहीं है।"

मनोरमा उनकी कन्या न होकर अगर और कोई होती तो यह सीधी-सी

बात सहजहीमें उनकी समझमें आ जाती, परन्तु एकमात्र सन्तानके भयङ्कर भविष्यकी निस्सन्दिग्ध दुर्गतिकी कल्पनाने कमलके सम्पूर्ण आवेदनको निष्फल कर दिया।

उन्होंने अनुनयके स्वरमें कहा, "नहीं कमल, इस ब्याहको रोकनेके सिवा और कोई रास्ता मुझे नहीं सुझाई देता। इसका कोई भी उपाय क्या तुम नहीं बता सकती?"

"मैं?" उनका इशारा इतनी देर बाद कमलकी समझमें आया, और उसीको स्पष्ट करनेमें उसका स्निग्ध कण्ठ क्षण भरके लिए गम्भीर हो उठा, पर यह सिर्फ एक ही क्षणके लिए। नीलिमाकी तरफ नजर जाते ही उसने अपनेको सँभालते हुए कहा, "नहीं, इस विषयमें कोई भी सहायता मैं आपकी न कर सकूँगी। नहीं जानती कि उत्तराधिकारसे वञ्चित करनेका डर दिखानेसे वह डरेगी या नहीं। पर अगर डर जाय तो मैं कहूँगी कि आपने खिला पिलाकर और स्कूल कालेजकी किताबें रटाकर लड़कीको बड़ा भले ही किया हो पर उसे मनुष्य नहीं बनाया। उस अभावको दूर करनेका सुयोग दैवने आज ला ही दिया हो, तो मैं उसके बीचमें अन्तराय बनने क्यों जाऊँ?"

बात आशु बाबूको अच्छी नहीं लगी, उन्होंने कहा, "तो क्या तुम यह कहना चाहती हो कि रोकना मेरा कर्तव्य नहीं?"

कमलने कहा, "कमसे कम डर दिखाकर रोकना तो नहीं। फिर भी मैं इतना कह सकती हूँ कि अगर मैं आपकी लड़की होती और शायद बाधा पाती, तो इस जीवनमें फिर कभी आपपर श्रद्धा न कर सकती। मेरे पिता मुझे इसी तरहसे गढ़ गये हैं।"

आशु बाबूने कहा, "इसमें कोई असम्भव बात नहीं कमल, तुम्हारे कल्याण का मार्ग उन्होंने इधर ही देखा होगा। पर मुझे नहीं दीखता। फिर भी, मैं पिता हूँ कमल, मैं साफ देख रहा हूँ कि शिवनाथसे वह यथार्थ प्रेम नहीं कर सकती,—यह उसका मोह है। यह मिथ्या है और जिस दिन इस क्षणस्थायी नशेकी खुमारी दूर होगी उस दिन भविष्यके दुःखका अन्त नहीं रहेगा। मगर तब उसे बचाओगी कैसे?"

कमलने कहा, "नशेमें ही चिन्ताकी बात है, पर जब नशा दूर हो जायगा और वह स्वस्थ हो जायँगी, तब तो फिर डरकी कोई बात रह नहीं जायगी। तब

तो वह स्वस्थता ही उनकी रक्षा करेगी।"

आशु बाबूने अस्वीकार करते हुए कहा, "यह सब बातचीतका दाँव-पेंच है कमल, युक्ति नहीं। सत्य इससे बहुत दूर है। भूलका दण्ड उसे बड़े रूपमें पाना ही होगा,—वकालतके जोरसे उससे उसे छुटकारा नहीं मिल सकता।"

कमलने कहा, "छुटकारेकी बात मैंने कहा कहीं आशु बाबू! मैं जानती हूँ कि भूलका दण्ड पाना ही पड़ता है। पर उस दण्ड पानेमें दुःख है, लज्जा नहीं, क्योंकि मणिने किसीको ठगना नहीं चाहा। यही भरोसा आपको मैंने दिलाना चाहा था कि भूल मालूम होनेपर वह अगर जहाँकी वहाँ लौट आना चाहे, तो उसे सिर नीचा करके न आना पड़े।"

"फिर भी तो भरोसा नहीं हो रहा है कमल। मैं जानता हूँ, उसे भूल मालूम पड़े बिना न रहेगी,—लेकिन उसके बाद भी तो उसे लम्बे समयतक जिन्दा रहना है, तब जीयेगी क्या लेकर? किस आधारपर दिन काटेगी?"

"ऐसी बात न कहिए। मनुष्यका दुःख ही यदि दुःख पानेका अंतिम परिणाम होता, तो उसका कोई मूल्य नहीं था। एक तरफका नुकसान दूसरी तरफके भारी लाभसे पूरा हो जाता है, नहीं तो, मैं ही भला आज कैसे जी सकती? बल्कि आप तो यह आशीर्वाद दीजिए कि किसी दिन भूल अगर मालूम पड़े तो वह अपनेको मुक्त कर ले सके, तब उसे कोई लोभ, कोई भय राहुग्रस्त न कर रक्खे।"

आशु बाबू चुप हो रहे। जवाब देनेमें उन्हें हिचकिचाहट-सी हुई, पर स्वीकार करनेमें वे भी ज्यादा हिचकिचाये। बहुत देर बाद बोले, "पिताकी दृष्टिसे मैं मणिका भविष्य-जीवन अन्धकारमय देख रहा हूँ। इसपर भी तुम क्या यही कहोगी कि वास्तवमें मुझे रुकावट न डालना चाहिए, और चुपचाप मान लेना ही मेरा कर्तव्य है?"

"मैं माँ होती तो अवश्य मान लेती। उसके भविष्यकी आशंकासे शायद आप जैसी ही व्यथा पाती, फिर भी इस तरीकेसे रुकावट डालनेको तैयार न होती। और यह भी मुझे स्वीकार करना होगा कि मैं तब मन ही-मन कहती कि इस जीवनमें जिस रहस्यके सामने आकर आज वह खड़ी हुई है वह मेरी समस्त दुश्चिन्ताओंसे बढ़कर है।"

आशु बाबू फिर कुछ देर मौन रहे, और बोले, "फिर भी मैं न समझा

सका कमल। शिवनाथका चरित्र और उसकी सभी दुष्कृतियोंका हाल मणि जानती है,—एक दिन इस घरमें आने देनेमें भी उसे आपत्ति थी, मगर आज जिस सम्मोहनसे उसका हिताहित ज्ञान,—उसकी सारीकी सारी नैतिक बुद्धि ढँक गई है वह यथार्थ प्रेम नहीं है, वह जादू है, वह मोह है —यह असत्य, चाहे जैसे भी हो, दूर करना ही पिताका कर्तव्य है।"

अबकी बार कमल एकदम स्तब्ध हो रही। इतनी देरमें जाकर दोनोंकी चिन्ता धाराके मौलिक भेदपर उसकी दृष्टि पड़ी। इन दोनों चिन्ता धाराओंकी जाति ही अलग अलग है, और चूँकि यह भेद तत्वकी चीज नहीं है, इस कारण अब तककी इतनी आलोचना और बातचीत बिल्कुल विफल सिद्ध हुई। कमल इस बातको समझ गई कि जिस तरफ उनकी दृष्टि लगी हुई है उधर हजारों वर्ष देखते रहनेपर भी इस सत्यका साक्षात्कार नहीं हो सकता, और समझ गई कि इसमें वही बुद्धिकी जाँच, वही हिताहित बोध, वही भले बुरे और सुख दुःखका अतिवितर्क हिसाब, वही मजबूत नींव डालनेके लिए इंजीनियर बुलाना है,—इसके सिवा और कुछ नहीं। गणित फैलाकर ये लोग प्रेमका फल या नतीजा निकालना चाहते हैं। अपने जीवनमें आशु बाबूने अपनी पत्नीको अत्यन्त एकान्त भावसे प्रेम किया था। उनकी स्त्रीको मरे जमाना बीत गया, फिर भी आजतक शायद उस प्रेमकी जड़ उनके हृदयमें शिथिल नहीं हुई।—संसारमें इसकी तुलना बहुत कम मिलती है।—फिर भी यह सब कुछ सत्य होते हुए भी, यह मानना पड़ता है कि ये हैं दोनों भिन्न जातीय।

इन दोनों धाराओंकी भलाई बुराईका प्रश्न उठाकर बहस करना निष्फल है। अपने दाम्पत्य जीवनमें एक दिनके लिए भी पत्नीके साथ आशु बाबूका मत भेद नहीं हुआ,—हृदयमें मालिन्य तकने स्पर्श नहीं किया। निर्विघ्न शान्ति और अविच्छिन्न सुख चैनके साथ जिनका दीर्घ विवाहित जीवन बीता है उनके गौरव और माहात्म्यको भला कौन गर्व कर सकता है? संसारने मुग्धचित्तसे उनका स्तव गान किया है, उनकी दुर्लभ कहानियाँ लिखकर कवि अमर हो गये हैं, और अपने जीवनमें इसीको प्राप्त करनेकी व्याकुलतापूर्ण वासनासे मनुष्यके लोभकी सीमा नहीं रही है। जिसकी निःसंदिग्ध महिमा स्वतःसिद्ध प्रतिष्ठासे चिरकाल अविचलित है, उसे कमल तुच्छ करेगी किस बिरतेपर? किन्तु मनोरमा? जिस दुःशील अभागेके हाथ अपनेको वह विसर्जन करनेको तैयार

है, उसका सब कुछ जानते हुए भी सम्पूर्ण जाननेके बाहर कदम बढ़ाते हुए उसे डर नहीं मालूम होता। इस समय परिणामकी चिन्तासे पिता शंकित हैं, इष्ट मित्र दुःखित हैं,—किन्तु वह अकेली निःशंक है। आशु बाबू जानते हैं कि इस विवाहमें सम्मान नहीं है, यह शुभ भी नहीं है—वचनापर इसकी नींव है। यह स्वल्पकाल-व्यापी मोह जिस दिन दूर हो जायगा, उस दिन आजीवन लज्जा और दुःख रखनेको जगह न रहेगी। हो सकता है कि आशु बाबूकी यह चिन्ता सत्य हो, किन्तु यह बात आशु बाबूको कह कैसे समझाये कि सब कुछ खोनेके बाद भी इस प्रवंचित लड़कीके पास जो वस्तु बाकी बचेगी वह पिताके शान्ति सुखमय दीर्घ-स्थायी दाम्पत्य जीवनकी अपेक्षा बड़ी है। परिणाम ही जिसकी क्षणिक मूल्य निर्णयका एकमात्र मान दण्ड है, उसके साथ तर्क कैसे चल सकता है? कमलके मनमें एक बार आया कि कहे, आशु बाबू, मोह भी मिथ्या नहीं है। हो सकता है कि कन्याके चित्ताकाशमें क्षण भरके लिए भी चमक जानेवाली बिजलीकी रेखा नीतिकी तुलनामें आपके हृदयमें प्रतिष्ठित अनिर्वापित दीप शिखाको भी लाँघ जाय। पर उससे यह कहते नहीं बना और वह चुप बैठी रही।

पिताके कर्तव्यके सम्बन्धमें अपना अत्यन्त स्पष्ट अभिमत प्रकट करके आशु बाबू उत्तरकी प्रतीक्षामें अधीर हो रहे थे, परन्तु कमलको वैसे ही निरुत्तर और सिर झुकाये बैठे देख उनकी समझमें आ गया कि वह वाद विवाद नहीं करना चाहती। इसलिए नहीं कि उसके पास शब्द नहीं, बल्कि इसलिए कि अब इसकी जरूरत नहीं। पर इस तरह एकके चुप हो जानेसे तो दूसरेके मनमें शान्ति नहीं आती। वास्तवमें इस प्रौढ़ आदमीके गहरे अन्तःकरणमें सत्यके प्रति एक वास्तविक निष्ठा है। एकमात्र सन्तानके भावी दुःख दिनोंकी आशंकासे लज्जित और उद्भ्रान्त चित्त वे मुँहसे चाहे कुछ भी क्यों न कहें, पर मनमें बल-प्रयोगको वे घृणाकी दृष्टिसे ही देखते हैं। कमलको उन्होंने जितना देखा है, उतना ही उनका आश्चर्य और श्रद्धा बढ़ती गई है। लोकदृष्टिमें वह हेय है, निन्दित है शिष्ट-समाज द्वारा परित्यक्ता है, समाजोंमें शरीक होनेका उसे निमंत्रण नहीं मिलता, फिर भी इस लड़कीकी नीरव अवज्ञाका उन्हें सबसे ज्यादा डर है, उसीके सामने उनका संकोच नहीं मिटता।

आशु बाबूने कहा, "कमल, तुम्हारे पिता यूरोपियन थे फिर भी तुम उस देशमें नहीं गई हो। मगर मैंने उन लोगोंमें बहुत दिन बिताये हैं,

बहुत कुछ देखा है। बहुत-से प्रेमके विवाहोत्सवोंमें भी जब कभी निमन्त्रण मिला है, आनन्दके साथ शामिल हुआ हूँ, और जब वह सम्बन्ध अनादर और अनाचारसे टूटा है, तब भी मैंने आँसू पोंछे हैं। वहाँ जाती तो तुम भी ऐसा ही देखतीं।"

कमलने उनकी तरफ मुँह उठाकर कहा, "बगैर गये भी देखा करती हूँ आशु बाबू! सम्बन्ध विच्छेदकी नजीर उस देशमें प्रतिदिन पुञ्जीभूत हुआ करती है—और होनेकी बात भी है,—मगर जैसे यह सच है, वैसे ही उन नजीरोंके द्वारा वहाँके समाजके स्वरूपको समझनेकी कोशिश भी भूल है। विचारकी यह पद्धति ही नहीं आशु बाबू।"

आशु बाबू अपनी गलतीको समझकर जरा अप्रतिभ हुए। इस तरह इसके साथ तक नहीं चल सकता, बोले, "उसे जाने दो, पर हमारे अपने देशकी तरफ भी जरा गौरसे आँख पसारकर एक बार देखो। जो प्रथा चिरकालसे चली आ रही है, उसके सृष्टिकर्ताओंकी दूरदर्शिताको भी जरा देखो। यहाँ वर-कन्यापर दायित्व नहीं होता, दायित्व होता है माँ बाप और गुरुजनोंपर। इसी कारण विचार-बुद्धि यहाँ आकुल-असमयसे भ्रष्ट नहीं हो जाती, बड़े बूढ़ोंकी एक शान्त और अविचलित मंगल भावना जीवन भर सदा उनके साथ बनी रहती है।"

कमलने कहा, "मगर मणि तो मंगलका हिसाब लगाने नहीं बैठी आशु बाबू, उसने चाहा है प्रेम, एकका हिसाब बुजुर्गोंकी सुयुक्तियोंसे मिल जाता है, पर दूसरेका हिसाब हृदयके देवताके सिवा और कोई नहीं जानता। लेकिन मैं बहस करके व्यर्थमें आपको परेशान कर रही हूँ।—जिसके घरमें पश्चिमकी खिड़कीके सिवा और सब खिड़कियाँ बन्द हैं, वह प्रभातमें सूर्यका आविर्भाव नहीं देख पाता, देख पाता है सिर्फ सन्ध्याका अवसान। परन्तु सन्ध्याके उस चेहरे और रंगका सादृश्य मिलाकर अगर वह प्रभातपर तर्क करता रहे तो सिर्फ बात ही बढ़ेगी, मीमांसा नहीं हो सकती। मुझे लेकिन रात हुई जा रही है, अब जाती हूँ।"

नीलिमा अबतक चुप थी। इतनी देरतक इतनी बातें हुईं, पर किसी मामलेमें उसने योग नहीं दिया अब बोली, "मैं भी सब बातें तुम्हारी साफ साफ नहीं समझ पाई कमल, पर इतना महसूस कर रही हूँ कि घरकी और खिड़कियाँ भी खोल देना चाहिए। पर यह तो आँखोंका दोष नहीं,—

दोष है बन्द खिड़कियोंका। नहीं तो, जिधर खुला है उधर मृत्युकालपर्यन्त खड़े खड़े देखते रहनेपर भी, जो दिखाई दे रहा है, उसको छोड़कर कभी कोई चीज दिखाई नहीं देगी।"

कमल उठने खड़ी हो गई तो आशु बाबू व्याकुल कण्ठसे कह उठे, "जाओ मत कमल, और जरा बैठो। मुँहमें अन्न नहीं जाता, आँखोंमें नींद नहीं,—लगातार छातीके भीतर ऐसा कुछ हो रहा है कि तुम्हें मैं समझा नहीं सकता। तो भी, और एक बार कोशिश कर देखूँ, तुम्हारी बातें अगर सचमुच ही समझ सकूँ। तुम क्या यथार्थ ही कह रही हो कि मैं चुप रहूँ, और यह भद्दी घटना हो जाने दी जाय?"

कमलने कहा, "मनोरमा यदि वास्तवमें उनसे प्रेम करती है तो मैं उसे भद्दा नहीं कह सकती।"

"मगर यही तो मैं तुम्हें सौ-सौ बार समझाना चाहता हूँ कमल, कि यह मोह है, यह प्रेम नहीं,—यह गलती उसकी दूर होगी ही होगी।"

कमलने कहा, "सिर्फ गलती ही—सिर्फ मोह ही दूर होता है सो नहीं आशु बाबू, सचमुच प्रेम भी संसारमें नष्ट हो जाया करता है। इसीसे अधिकांश प्रेमके विवाह क्षणस्थायी हो जाते हैं। इसलिए उस देशकी इतनी बदनामी है और इतने विवाह विच्छेदके मामले वहाँ चला करते हैं।"

सुनकर आशु बाबूको सहसा मानो एक प्रकाश दिखाई दिया, उच्छ्वसित आग्रहके साथ वे कह उठे, "यही कहो, यही कहो। यह तो मैं अपनी आँखोंसे देख आया हूँ।"

नीलिमा अवाक् होकर उनकी तरफ देखती रही।

आशु बाबूने कहा, "मगर हमारे देशकी विवाह प्रथा? उसे तुम क्या कहोगी? यह तो सारी जिन्दगी नहीं टूटता?"

कमलने कहा, "टूटनेकी वजह भी नहीं आशु बाबू। वह तो अनभिज्ञ यौवनका पागलपन नहीं, बहुदर्शी बड़े बूढ़ोंका हिसाबसे किया गया कारोबार है। स्वप्नका मूल्यधन नहीं,—आँखों-देखी पक्के आदमीकी जाँच-पड़ताल की हुई खालिस चीज है। गणित करनेमें कोई सांघातिक गलती जबतक न हो गई हो तबतक उसमें दरार नहीं पड़ती। क्या इस देशमें और क्या उस देशमें, सभी जगह वह बड़ी मजबूत चीज होती है,—जिन्दगी भर वज्रकी तरह

रहती है।"

आशु बाबू एक उसाँस लेकर स्थिर हो रहे, कोई उत्तर उनकी जबानपर न आया।

नीलिमा चुपचाप देख रही थी अब उसने धीरेसे पूछा, "कमल, तुम्हारी बात ही अगर सच हो, सचमुचका प्रेम भी अगर भूलके प्रेमके समान ही टूट जाता हो, तो मनुष्य खड़ा काहेपर होगा? उसके पास आशा करनेके लिए फिर बाकी क्या रह जायगा?"

कमलने कहा, "जिस स्वर्गवासकी मियाद निबट चुकी है, रह जायगी उसीकी एकान्त मधुर स्मृति और रह जायगा उसीके बगलमें व्यथाका समुद्र। आशु बाबूके सुख और शान्तिकी सीमा नहीं थी, लेकिन उससे अधिक उनकी और पूँजी नहीं है। भाग्यने जिन्हें इतनी-सी पूँजी देकर विदा कर दिया है, उनके लिए हम सिवा क्षमा करनेके और कर ही क्या सकती हैं जीजी?"

फिर जरा ठहरकर बोली, "लोग बाहरसे सहसा ऐसा समझ लेते हैं कि गया, अब सब गया और इष्ट मित्रोंके डरका ठिकाना नहीं रहता। फिर तो वे दोनों हाथोंसे उसका रास्ता रोकना चाहते हैं और निश्चित समझ लेते हैं कि उनके हिसाबके बाहर सिवा शून्यके और कुछ है ही नहीं। पर शून्य नहीं होता जीजी। सब चला जानेपर भी जो बच जाता है, वह मणि माणिक्यकी तरह मुट्ठीमें ही आ जाता है। मगर हाँ, दर्शकोंका दल जब देखता है कि चीजोंकी भरमारसे रास्ता भरके जुलूस तो निकाला नहीं जा सकता, तब वे उसे धिक्कारते हुए अपने अपने घर लौट जाते हैं और कहते हैं, यही तो सर्वनाश है।"

नीलिमाने कहा, "कहनेका कारण है कमल, असलमें मणि माणिक्य सबके नहीं होता, और न वह सर्व साधारणके लिए है। पाँवसे लेकर चोटीतक सोने चाँदीके गहने मिले बिना जिनका मन ही नहीं भरता, वे तुम्हारे उस मुट्ठीभर मणि माणिक्यकी कदर नहीं समझेंगी। जिन्हें बहुत चाहिए वे गाँठपर बहुत सी गाँठ लगाकर निश्चिन्त हो सकते हैं। उनके लिए बहुत-सा बोझ, बहुत-सा आयोजन, बहुत-सी जगह घिरनी चाहिए, तब कहीं वे चीजकी कीमतका अन्दाज लगा सकते हैं। पश्चिमका दरवाजा खोलकर सूर्योदय दिखानेकी कोशिश व्यर्थ होगी कमल, बन्द करो यह चर्चा।"

आशु बाबूके मुँहसे फिर एक दीर्घ निःश्वास निकल पड़ी, धीरे धीरे बोले,

"तब क्या होगी नीलिमा, सब नहीं होगी। अच्छी बात है,—न हो तो मैं चुप ही रहूँगा।"

नीलिमाने कहा, "नहीं, सो आप मत कीजिएगा। सत्य क्या सिर्फ कमलके विचारोंमें ही है, और पिताकी शुभ बुद्धिमें नहीं है? ऐसा हो ही नहीं सकता। कमलके लिए जो सत्य है, मणिके लिए वह सत्य नहीं भी हो सकता है। स्त्रीके दुश्चरित्र पतिको त्याग देनेमें चाहे जितना भी सत्य हो, यह मैं जोरके साथ कह सकता हूँ कि बलात्के पति-परित्यागमें रत्ती भर भी सत्य नहीं। सत्य न तो पतिके त्यागनेमें है, और न पतिकी दासी-वृत्ति करनेमें,—ये दोनों ही सिर्फ दायें-बायेंके रास्ते हैं, गन्तव्य स्थान तो अपने आप ढूँढ लेना पड़ता है, तर्क करके उसका पता नहीं लगाया जा सकता।"

कमल चुपचाप उसकी ओर देखती रही।

नीलिमा कहने लगी, "सूर्यका उदय होना ही उसका सब कुछ नहीं है, उसका अस्त होना भी उतना ही महत्त्व रखता है। रूप और यौवनका आकर्षण ही अगर प्रेमका सर्वस्व होता, तो लटकार समपथमें आपकी दुश्चिन्ताकी कोई जरूरत ही न थी,—मगर ऐसा नहीं है। मैंने किताबें नहीं पढ़ीं, ज्ञान बुद्धि भी कम है, इससे मैं कुछ समझा नहीं सकती लेकिन मुझे मालूम होता है कि असल चीजका पता तुम्हें अभीतक मिला ही नहीं। श्रद्धा, भक्ति, स्नेह, विश्वास,—इन्हें पढ़ाई करके नहीं पाया जा सकता, बड़े दुःखसे और बहुत देरमें ये दिखाई देते हैं। मगर जब दिखाई देते हैं कमल, तब रूप यौवनका प्रेम न जाने कहाँ मुँह छिपाकर खिसक जाता है, कुछ पता ही नहीं पड़ता।"

तीक्ष्ण-बुद्धि कमल एक क्षणमें यह समझ गई कि उपस्थित आलोचनामें उसका यह कथन अग्राह्य है। यह न तो प्रतिवाद ही है और न समर्थन ही, ये सब नीलिमाकी अपनी बातें हैं। उसने देखा कि उज्ज्वल दीपालोकमें नीलिमाके बिखरे हुए घने काले बालोंकी श्यामल छायाने उसके चेहरेपर एक अकल्पित सुन्दरता ला दी है और उसकी प्रशान्त आँखोंकी सजल दृष्टि करुण स्निग्धतासे ऊपरतक लबालब भर उठी है। कमलने मन ही मन कहा, यह पूछना व्यर्थ है कि यह नवीन सूर्योदय है या थके हुए सूर्यका अस्त-गमन, रक्तिम आभासे आकाशकी जो दिशा आज रंगीन हो उठी है,—पूर्व-पश्चिम दिशाका निर्णय किये बिना ही उसके लिए मेरा श्रद्धाके साथ नमस्कार है।

दो-तीन मिनट बाद आशु बाबू सहसा चौंककर बोले, "कमल, तुम्हारी बातें मैं फिर एक दफे अच्छी तरह विचार कर देखूँगा, पर हमारी बातोंकी भी तुम इस तरह अवज्ञा मत करो। अनेकानेक मानवोंने इसे सत्य मानकर स्वीकार किया है, असत्यके द्वारा कभी इतने आदमियोंको नहीं बहकाया जा सकता।"

कमलने अन्यमनस्ककी भाँति जरा हँसकर सिर हिला दिया, लेकिन जवाब दिया उसने नीलिमाको। बोली, "जिस चीजसे एक बच्चेको बहकाया जा सकता है, उसीसे लाख बच्चोंको भी बहकाया जा सकता है। संख्याका बढ़ जाना ही बुद्धि बढ़नेका प्रमाण नहीं, जीजी। एक दिन जिन लोगोंने कहा था, कि नर नारीके प्रेमका इतिहास ही मानव सभ्यताका सबसे सत्य इतिहास है, उन्होंने सबसे बढ़कर सत्यका पता पाया था, किन्तु जिन लोगोंने यह घोषणा की कि पुत्रके लिए भार्याकी आवश्यकता है, वे स्त्रियोंका सिर्फ अपमान ही करके शान्त नहीं हुए, बल्कि अपने बड़े होनेका रास्ता भी वे चिरकालके लिए बंद कर गये। और चूँकि उस असत्यपर ही उन्होंने सारी भीत उठाई थी इसलिए आज तक भी उनकी सन्तानको दुःखका कोई किनारा नहीं मिला।"

"पर यह बात मुझे क्यों कह रही हो कमल?"

"क्योंकि, आज मुझे आपको ही जतानेकी सबसे ज्यादा जरूरत है। इन चाटु वाक्योंमें नाना अलंकार पहनाकर जिन लोगोंने यह प्रचार किया था कि मातृत्वमें नारीकी चरम सार्थकता है, उन लोगोंने समस्त नारी जातिको धोखा दिया था। जीवनमें किसी भी अवस्थामें क्यों न पड़ना पड़े, जीजी, पर इस मिथ्या नीतिको हरगिज न मानना। यही मेरा अन्तिम अनुरोध है।—पर अब चली, मैं जाती हूँ।"

आशु बाबूने थके हुए स्वरमें कहा, "अच्छा जाओ। नीचे तुम्हारे लिए गाड़ी खड़ी है, पहुँचा आयेगी।"

कमलने यथार्थ साथ कहा, "आप मुझसे स्नेह करते हैं,—पर हम दोनोंमें कहीं भी तो मेल नहीं।"

नीलिमाने कहा, "है क्यों नहीं जरूर। पर वह मालिककी फरमाइशके माफिक काँट-छाँट कर बनाया हुआ मेल नहीं, विधाताकी सृष्टिका मेल है। चेहरा अलग अलग है, पर खून एक ही है,—आँखोंकी ओझल नसोंमें बहा

करता है वह। इसीसे तो बाहरका अनैक्य चाहे कितनी गड़बड़ी क्यों न पैदा करे, भीतरका प्रचण्ड आकर्षण हर्गिज नहीं छूटता।"

कमलने पास आकर आशु बाबूके कन्धेपर हाथ रखके धीरे धीरे कहा, "लड़कीके बदले आप मेरे ऊपर गुस्सा न हों तो कहूँगी, मैं कहे देती हूँ।" आशु बाबू कुछ बोले नहीं, सिर्फ स्तब्ध होकर बैठे रहे।

कमलने कहा, "अँग्रेजीमें एक शब्द है, 'इमेंसिपेशन' (=मुक्ति दान)। आप तो जानते हैं, प्राचीन कालमें पिताकी कठोर अधीनतासे सन्तानको मुक्त किया जाना भी उसका एक बड़ा अंग था। उस जमानेके लड़के लड़कियोंने मिलकर इस शब्दका आविष्कार नहीं किया था, आविष्कार किया था जो आप जैसे महान् पिता थे उन्होंने—अपनी बन्धनकी रस्सी ढीली करके जिन्होंने अपनी कन्याओंको मुक्ति दी थी, उन्होंने। आज भी इमेन्सिपेशनके लिए चाहे कितनी ही स्त्रियाँ मिलकर झगड़ा क्यों न करती रहें, देनेवाले असल मालिक पुरुष ही हैं, हम स्त्रियाँ नहीं। जगत्-व्यवस्थाके इस सत्यको मैं एक दिनके लिए भी नहीं भूलती। मेरे पिता अक्सर कहा करते थे कि उधरके नीग्रो दासोंको उनके मालिकोंने ही एक दिन स्वाधीनता दी थी, और उस दिन उनकी तरफसे लड़े भी थे वे ही जो उनके मालिकोंकी जातिके थे—दासोंने युद्धके बलपर या युक्तियोंके बलपर स्वाधीनता नहीं पाई। ऐसा ही होता है। विश्वका नियम ही यह है, शक्तिमान ही शक्तिके बन्धनसे दुर्बलोंका परित्राण देते हैं। उसी तरह नारियोंको भी पुरुष ही मुक्ति दे सकते हैं। दायित्व तो उन्हींका है। मनोरमाको मुक्ति देनेका भार आपके हाथमें है। मणि विद्रोह कर सकती है, पर पिताके अभिशापमें तो सन्तानकी मुक्ति नहीं रहती, उसकी मुक्ति तो उनके आशीर्वादमें ही निहित है।"

आशु बाबू भी कुछ न बोल सके। इस उच्छृंखल प्रकृतिकी लड़कीने संसार-में असम्मान और अमर्यादाके बीचमें ही जन्म-लाभ किया है, किन्तु उसकी उस लज्जाजनक दुर्गतिको हृदयसे सम्पूर्ण विलुप्त करके अपने लोकान्तरित पिताके प्रति उसने जो भक्ति और स्नेहका भाव संचित कर रखा है उसकी सीमा नहीं है।

कमलके पिताको उन्होंने देखा नहीं, और अपने संस्कार और प्रकृतिके अनुसार उस आदमीपर श्रद्धा करना भी कठिन है, फिर भी उस व्यक्तिके लिए उनकी आँखोंमें पानी भर आया। अपनी लड़कीका विच्छेद और विद्रोहाचरण

उनके हृदयमें शूलकी तरह चुभा हुआ है, मगर फिर भी, इस पराई लड़कीके मुँहकी तरफ देखकर मानो उन्हें इस बातका आभास-सा मिला कि सब बन्धन तोड़कर भी आदमीको कैसे हमेशाके लिए बाँधके रखा जा सकता है, और वे अपने कम्बलके अन्दर उसका हाथ खींचकर क्षण भर चुपचाप बैठे रहे।

कमलने कहा, "अब मैं जाऊँ?"

आशु बाबूने हाथ छोड़ दिया, कहा, "जाओ।"

इससे ज्यादा उनके मुँहसे और कुछ निकला ही नहीं।

२५

जाड़ेका सूर्य अस्त हो गया है। सन्ध्याकी छायाने घरके भीतरका हिस्सा धुँधला-सा कर दिया है। सिलाईका एक जरूरी काम थोड़ा-सा बचा है, जिसे कमल दिया जलानेसे पहले ही पूरा कर देना चाहती है। पास ही कुरसीपर अजित बैठा है। उसकी भाव-भंगीसे मालूम होता है कि कोई बात कहते कहते अचानक रुक गया है और व्याकुल आग्रहके साथ उत्तरकी प्रतीक्षा कर रहा है।

मनोरमा और शिवनाथका मामला सबको मालूम हो चुका है। आजका प्रसंग उसी विषयको लेकर शुरू हुआ है। अजितने शुरू-शुरूमें कहा था कि उसने आगरेमें आते ही सन्देह किया था कि अन्तमें जाकर ऐसी ही बात होगी।

पर सन्देहके कारणके सम्बन्धमें कमलने कोई उत्सुकता नहीं दिखाई।

उसके बाद अजित अनर्गल बकते-बकते अन्तमें ऐसी जगह आकर रुका जहाँ दूसरी तरफसे उत्तर पाये बिना नहीं बढ़ा जा सकता।

कमल अत्यन्त तल्लीनताके साथ सिलाई करनेमें ही लगी रही, मानो उसे सिर उठानेकी भी फुरसत नहीं।

दो तीन मिनट सन्नाटेमें बीते। आगे न जाने और कितनी देर लगे, इसलिए अजितको फिर कोशिश करनी पड़ी, बोला, "आश्चर्य तो यह है कि शिवनाथका आचरण तुम्हारी निगाहमें पकड़ाई नहीं दिया।"

कमलने मुँह नहीं उठाया, किन्तु सिर हिलाकर कहा, "नहीं।"

"तुम ऐसी भोली भाली हो कि तुम्हें कुछ सन्देह नहीं हुआ, इसपर क्या कोई विश्वास कर सकता है?"

"और कोई कर सकता है या नहीं, मुझे नहीं मालूम। पर क्या आप भी

नहीं कर सकते ?"

अजितने कहा, "शायद कर सकता हूँ, लेकिन तुम्हारे मुँहकी ओर देखकर —ऐसे ही नहीं।"

अबकी बार कमलने मुँह ऊपर किया और हँसकर कहा, "तो देखिए, और कहिए, कर सकते हैं या नहीं ?"

अजितकी आँख चमक उठी, बोला, "तुम्हारी बात सच है। उसपर अविश्वास नहीं किया, उसीका यह नतीजा हुआ।"

"हुआ है सो मैं मानती हूँ, पर यह भी तो खुलासा कर बताइए कि आपने अपने सन्देहका अच्छा नतीजा किस परिमाणमें पाया ?" कहकर वह फिर जरा हँसी और काममें लग गई।

इसके बाद अजित सम्बद्ध और असम्बद्ध बहुत-सी बात दस-पन्द्रह मिनटतक लगातार कहता रहा। अन्तमें थककर बोला, "कभी हाँ, कभी ना,—पहेली बुझानेके सिवा क्या तुम सीधी बात करना जानती ही नहीं ?"

कमलने सिलाईका काम सीधा करते हुए कहा, "स्त्रियाँ पहेली बुझाना ही पसन्द करती हैं,—उनका यह स्वभाव है।"

"तो उस स्वभावकी मैं तारीफ नहीं कर सकता। साफ करना भी जरा सीखो, उसके बिना संसारमें काम नहीं चलता।"

"आप भी पहेली समझना जरा सीखिए, अन्यथा, दूसरे पक्षको भी ऐसी ही असुविधा होती है।" कमलने हाथकी चीज तह करके टोकरीमें रखते हुए कहा, "हर कहनेका लाभ जिन्हें बहुत ज्यादा होता है, वे अगर वक्ता हुए तो अपनी बातमें वक्तृता उगलते हैं, लेखक हुए तो अपने ग्रन्थकी भूमिका लिखते हैं, और अगर नाट्यकार हुए तो खुद ही अपने नाटकके नायक बनकर अभिनय करते हैं।—सोचते हैं, शब्दोंसे जो व्यक्त नहीं हो सका उसे हाथ-पैर हिलाकर व्यक्त कर देना चाहिए।—पर सिर्फ यही मैं नहीं जानती कि अगर वे प्रेम करते हैं तो क्या करते हैं ? लेकिन जरा बैठिए आप, मैं बत्ती जला लाऊँ।" कहकर वह उठके जल्दीसे दूसरे कमरेमें चली गई।

पाँच-छः मिनट बाद वह लौट आई और टेबिलपर बत्ती रखकर जमीनपर बैठ गई।

अजितने कहा, "वक्ता, लेखक या नाटककार, इनमेंसे मैं कोई भी नहीं,

लिहाजा, उनकी तरफसे मैं कैफियत नहीं दे सकता, लेकिन अगर वे प्रेम करते हैं तो क्या करते हैं, सो मैं जानता हूँ। वे शौक विवाहका कूट कौशल नहीं रचते, बल्कि साफ और जानी हुई राहपर कदम रखकर चलते हैं। वे इस बातका खयाल रखते हैं कि उनके पीछे कहीं घरवालोंको खाने पहननेकी तकलीफ न उठानी पड़े, आश्रयके लिए किसी मालिक मकानका मुँह न ताकना पड़े, अस म्मानकी चोट—"

कमल बीचहीमें रोककर बोल उठी, "बस बस, हो गया।" और फिर हँसते हुए कहा, "यानी वे प्रेमको आखिरतक इमारतको ऐसे भयंकर रूपसे ठोस और मजबूत बना देते हैं कि कब्रके मुरदेके सिवा उसमें जिन्दा आदमीके लिए दम लेनेकी भी संधि नहीं रहती। वे साधु पुरुष हैं—"

सहसा दरवाजेके बाहरसे अनुरोध आया, "हम लोग भीतर आ सकते हैं?" हरेन्द्रकी आवाज थी। पर 'हम लोग' कौन?

"आइए, आइए।" कहती हुई कमल अभ्यर्थनाके लिए दरवाजेके पास जा खड़ी हुई।

हरेन्द्र था और साथमें एक और युवक। हरेन्द्रने कहा, "सतीशको हमारे आश्रममें तुमने सिर्फ एक दिन देखा था, फिर भी आशा है कि भूली न होगी।"

कमलने मुसकराते हुए जवाब दिया, "नहीं। पर सिर्फ इतना है कि उस दिन कपड़े सफेद थे, आज हैं पीले।"

हरेन्द्रने कहा, "यह तो उच्चतर भूमिपर आरोहणकी बाह्य घोषणा मात्र है और कुछ नहीं। काशीधामसे सद्य प्रत्यागत हुए हैं—दो घण्टेसे ज्यादा नहीं हुए। एक तो थके हुए हैं, और दूसरे तुम्हारे प्रति प्रसन्न नहीं, फिर भी मुझे यहाँको आता देख आयेगका कारण न कर सके। यह हम ब्रह्मचारी लोगोंके मतका औदार्य है और कुछ नहीं।" कहते हुए उसने भीतरकी तरफ झाँका, और कहने लगा, "अरे आप हैं! यहाँ तो और भी एक नैष्ठिक ब्रह्मचारी पूर्वाह्नमें ही समुपस्थित हैं। खैर, अब कोई आशंकाका कारण नहीं। मेरा आश्रम तो टूट रहा है, लेकिन दूसरा नया पैदा हुआ ही समझो।" यह कहकर वह भीतर घुसा, दूसरी कुरसी सतीशको दिखाता हुआ बोला, "बैठो" और आप खाटपर जा डटा। यह देखकर कि कमल खड़ी है, और तीसरा आसन है नहीं, सतीश बैठनेमें दुविधा कर रहा था, हरेन्द्र इस बातको न समझा हो सो बात नहीं, फिर

भी वह हँसकर बोला, "बैठो जी सतीश, जाति न जायगा। काशी हो आनेके कारण तुम चाहे जितने भी ऊँचे चढ़ गये हो, पर इस बातको न भूलो कि संसारमें उससे भी ऊँची कोई जगह है।"

"नहीं नहीं, इसलिए नहीं!" कहकर सतीश अप्रतिभ-सा होकर बैठ गया।

उसका मुँह देखकर कमल हँसी, उसने कहा, "किसीपर व्यंग्य करना आपके मुँहसे शोभा नहीं देता हरेन्द्र बाबू। आश्रमके प्रतिष्ठाता भी आप हैं और महन्त महाराज भी आप ही हैं। ये लोग उमरमें भी छोटे हैं और पण्डागिरीमें भी पीछे हैं। इनका काम तो सिर्फ आपके उपदेश और आदेशके अनुसार चलना है। इसलिए—"

हरेन्द्रने कहा, "आपका यह 'इसलिए' तो बिलकुल ही अनावश्यक है। आश्रमका प्रतिष्ठाता शायद मैं ही हूँ, पर महन्त और महाराज हैं ये ही दोनों मित्र सतीश और राजेन्द्र। एकका काम है मुझे उपदेश देना और दूसरेका काम था यथासाध्य मेरी न मानकर चलना। एकका तो पता ही नहीं और दूसरे लौटे हैं बहुत ज्यादा तप-सञ्चय करके। मुझे डर है कि इनके साथ कदमसे कदम मिलाकर शायद ही मैं चल सकूँगा। अब सिर्फ उन अभागे लड़कोंकी चिन्ता है जिन्हें काशी काञ्ची भ्रमण कराकर ये वापस ले आये हैं। मैंने उनकी तरफ देखते ही समझ लिया कि इस बीचमें उनकी आचार निष्ठामें रत्ती मात्र भी त्रुटि नहीं हुई। क्षोभ सिर्फ इतना ही है कि और जरा जोरसे तपस्या करा दी जाती तो वापस आनेका रेल किराया मेरा नहीं लगता।"

कमलने हार्दिक-वेदनाके साथ पूछा, "लड़के बहुत दुबले हो गये होंगे?"

हरेन्द्रने कहा, "दुबले?—आश्रमकी परिभाषामें शायद उसके लिए एक अच्छा-सा शब्द है,—सतीशको मालूम होगा,—आधुनिक कालमें अंकित किया हुआ 'गुरुाचार्यके तपोवनमें कचका चित्र' क्या तुमने देखा है?—नहीं देखा?—तो तुम मेरी बात नहीं समझ सकोगी।—मैंने आज ऊपरके बरामदेसे देखा तो मालूम हुआ कि कङ्कालोंका एक झुण्ड सहसा परिवार स्वर्गसे उतरकर आश्रममें प्रवेश कर रहा है। मुझे आशा बँध गई कि आश्रम जब टूट जायगा तब, खाना-पीना न मिलनेपर भी वे न मरेंगे, देशके किसी भी चित्रकारके स्कूलमें जाकर चित्रके लिए माडेलका काम दे सकेंगे।"

कमलने कहा, "लोग कहते हैं कि आप आश्रम उठा दे रहे हैं। यह क्या

सच है ?"

"सच है। तुम्हारे वाक्य-बाण मुझसे सहे नहीं जाते। सतीशके यहाँ आनेका यह भी एक कारण है। इसकी धारणा है कि तुम असलमें भारतीय रमणी नहीं हो, इसलिए भारतकी निगूढ़ सत्य वस्तुको तुम पहचान ही नहीं सकती। तुम्हें यह यही बात समझा देना चाहता है। समझोगी या नहीं सो तो तुम्हीं जानो, पर इसे मैंने आश्वासन दे दिया है कि मैं कुछ भी क्यों न करूँ, उन लोगोंके लिए डरकी कोई बात नहीं। कारण, मालूम नहीं, चतुर्विध आश्रमोंमसे अजित कुमार स्वयं कौन-सा आश्रम ग्रहण करेंगे, पर फिर भी, परम्परासे इतनी खबर मुझे मिल गई है कि ये बहुत सा अर्थ व्यय करके ऐसे और भी दस बीस आश्रम जगह जगह खोल देना चाहते हैं। उनके पास अर्थ भी है और देनेका सामर्थ्य भी। सो उनमेंसे एकका नायकत्व तो सतीशको मिल ही जायगा।"

कमल भीतर ही भीतर मुसकराती हुई बोली, "दानशीलता जैसी दुष्कृतिको ढँकनेके लिए इससे अच्छा आच्छादन और नहीं हो सकता। पर भारतकी सत्य वस्तुको मुझे समझानेसे सतीश बाबूको क्या फायदा होगा ? हरेंद्र बाबूसे मैंने आश्रम उठा देनेके लिए भी नहीं कहा, और रुपयोंके बल्पर भारत भरमें आश्रम खोलनेके लिए भी अजित बाबूको मैं मना नहीं करूँगी। मेरी आपत्ति तो सिर्फ उसीको सत्य मान लेनेमें है। उसमें किसीका क्या नुकसान !"

सतीश विनीत स्वरमें बोला, "नुकसानका परिणाम बाहरसे नहीं दिखाई देता।—बहसके लिए नहीं बल्कि शिक्षार्थीके तौरपर मैं आपसे अगर कुछ प्रश्न करूँ तो क्या आप उनका उत्तर देंगी ?"

"मगर आज तो मैं बहुत थकी हुई हूँ सतीश बाबू।"

सतीशने उसकी बातपर कुछ ध्यान ही नहीं दिया, बोला, "हरेंद्र भइयाने अभी अभी हँसीके तौरपर कहा था कि मैं काशी जाकर चाहे जितना भी ऊँचा चला गया होऊँ, संसारमें उससे भी ऊँचा और स्थान है सो, यह यहां घर है। मैं जानता हूँ कि आपके प्रति इनकी श्रद्धा असीम है। आश्रम टूट जानेसे हानि नहीं, किन्तु आपकी बातोंसे इनका अगर मन टूट गया, तो नुकसानकी पूर्ति होना कठिन है।"

कमल चुप रही। सतीश कहने लगा, "राजेंद्रको आप अच्छी तरह जानती होंगी, वह मेरा मित्र है। मूल विषयपर मतका मेल न होता तो हम दोनोंकी

मिलता होती ही नहीं। उसीके समान मैं भी चाहता हूँ कि भारतकी सर्वांगीण मुक्तिमेंसे स्वजातिका परम कल्याण हो। उसी आशासे हम लड़कोंको मन्त्रबद्ध करके गढ़ना चाहते हैं। हमें मृत्युके बाद कल्पकालतक वैकुण्ठवास करनेका लोभ नहीं, लेकिन नियमके कठोर बन्धनके बिना सच्ची सृष्टि हरगिज नहीं हो सकती। और सिर्फ लड़कोंके लिए ही नहीं, उस बन्धनको हम लोगोंने स्वयं अपने ऊपर भी लागू किया है। श्रम यहाँ जरूर है,—और रहेगा ही, क्योंकि बहुत 'श्रम' करके महान् वस्तुको प्राप्त करनेके स्थानको ही तो 'आश्रम' कहते हैं। इसमें उपहासकी तो कोई बात नहीं।"

कोई जवाब न पाकर सतीश फिर कहने लगा, "हरेन्द्र भैयाका आश्रम चाहे जैसा भी हो, उसके विषयमें मैं आलोचना नहीं करूँगा, कारण, तब उसके व्यक्तिगत हो जानेका डर है। परन्तु इसे तो अस्वीकार नहीं किया जा सकता कि भारतीय आश्रमोंमें भारतके अतीतके प्रति निष्ठा और परम श्रद्धा निहित होनी चाहिए। त्याग, ब्रह्मचर्य, संयम,—ये सब शक्तिहीन असमर्थोंके धर्म नहीं हैं। जाति-गठनके प्राण और उपादान उस समय इन्हींमें निहित थे, और आज इस युगमें भी वे उपेक्षाकी सामग्री नहीं। मरणोन्मुख भारतको सिर्फ एक इसी मार्गसे पुनर्जीवित किया जा सकता है। आश्रमके आचार और अनुष्ठानके द्वारा हम अपने इसी विश्वास और इसी श्रद्धाको जगाये रखना चाहते हैं। एक दिन इस मन्त्र मुखरित, होमाग्नि प्रज्वलित, तपस्या कठोर भारतमें जो आश्रमोंकी प्रतिष्ठा हुई थी वह जाति-जीवनके एक मौलिक कल्याणको सफल करनेके उद्देश्यसे ही हुई थी, और इस सत्यको कौन ऐसा मूर्ख होगा जो स्वीकार नहीं करेगा कि वह प्रयोजन आज भी मिटा नहीं है?"

सतीशकी वक्तृतामें हार्दिकताका जोर था। उसकी बातें अच्छी थीं और निरन्तर कहते रहनेके कारण कण्ठस्थ हो गई थीं। आखिरमें उसका मुलायम स्वर तेज हो गया और मारे उत्तेजनाके काला चेहरा बैंगनी हो उठा। उसीकी तरफ चुपचाप और निष्पलक दृष्टिसे देखते रहनेके कारण एक प्रकारके धार्मिक जोशसे अजितका आपाद मस्तक रोमाञ्चित हो उठा, और साथ ही हरेन्द्र भी, यद्यपि इससे पहले वह अपने आश्रमके विरुद्ध कितना ही मौखिक आस्फालन कर चुका है, आश्रमके निगूढ़ गौरवके सम्बन्धमें विश्वास और अविश्वासके बीच आँधीके वेगसे झूलने लगा। उसीके मुँहकी तरफ तीक्ष्ण दृष्टि रखकर सतीश

कहने लगा, "हरेंद्र भैया, हम भले ही मर जायँ, पर इस सत्यको कि इस तरहके आश्रमोंमें ही हमारे नरकुल-मङ्गलका निशान है, आप भूले जा रहे हैं, किस युक्तिपर? आप तोडना चाहते हैं, पर तोडना ही क्या बडी बात है? आप ही बताइए कि बनाना क्या उससे बहुत बडी बात नहीं है?"

फिर कमलके मुँहकी तरफ देखकर, उसने पूछा, "जीवनमें कितने आश्रम आपने अपनी आँखों देखे हैं? और कितनोंके साथ आपका यथार्थ गूढ़ परिचय हुआ है?"

कठिन प्रश्न है। कमलने कहा, "वास्तवमें एक भी नहीं देखा और आप लोगोंके आश्रमके सिवा और किसीके साथ मेरा कोई परिचय भी नहीं हुआ।"

"तब बताइए!"

कमलने हँसते चेहरेसे कहा, "आँखोंसे क्या सभी कुछ देखा जा सकता है? आप लोगोंने आश्रमका 'श्रम' ही आँखोंसे देख आई थी, मगर उससे किसी महान् वस्तुके प्राप्त करनेकी बात तो आडकी ओटमें ही रह गई।"

सतीशने कहा, "आप फिर हँसी उड़ा रही हैं।"

उसका क्रुद्ध चेहरा देखकर हरेंद्र स्निग्ध स्वरमें बोल उठा, "नहीं नहीं सतीश, हँसी नहीं उड़ा रहीं, यों ही सिर्फ विनोद कर रही हैं। यह तो इनका स्वभाव है।"

सतीश बोला, "स्वभाव है? पर स्वभाव कहनेसे ही कैफियत नहीं हो जाती हरेंद्र भैया। यह तो भारतके अतीत कालका जो भी कुछ नित्य पूजनीय और नित्य आचरणीय तत्त्व है, उसीका अपमान—उसीके प्रति अश्रद्धा दिखाना है। उसकी तो उपेक्षा नहीं की जा सकती।"

हरेंद्रने कमलकी तरफ इशारा करके कहा, "इस बातपर इनसे बहुत दफे बहस हो चुकी है। इनका कहना है कि अतीतका इसमें कोई महत्त्व नहीं। वस्तु अतीत होती है कालके धर्मसे, मगर अच्छी होती है अपने गुणसे। सिर्फ प्राचीन होनेसे ही वह पूज्य नहीं हो जाती। जो बर्बर जाति किसी जमानेमें अपने बूढ़े माँ-बापको जिन्दा गाड देती थी, वह आज भी अगर उस प्राचीन अनुष्ठानकी दुहाई देकर मनुष्यके कर्तव्यका निर्देश करना चाहे, तो उसे भी तो रोका नहीं जा सकता सतीश।"

सतीश क्रोधमें आकर ऊँचे स्वरमें कह उठा, "प्राचीन भारतके साथ बर्बरों

की तुलना नहीं हो सकती हरेंद्र दादा।"

हरेंद्रने कहा, "सो मैं जानता हूँ। पर यह तो युक्ति नहीं सतीश, यह तो गलेके जोरकी बात है।"

सतीश और भी उत्तेजित हो उठा, बोला, "यह हम लोगोंने स्वप्नमें भी न सोचा था हरेंद्र दादा, कि आपको भी एक दिन इस नास्तिकताके नरकमें रहना पड़ेगा।"

हरेंद्रने कहा, "तुम जानते हो कि मैं नास्तिक नहीं हूँ। लेकिन यह गाली देकर सिर्फ अपमान ही किया जा सकता है सतीश, सत्यकी प्रतिष्ठा नहीं की जा सकती। कठोर बात ही दुनियामें सबसे ज्यादा कमजोर होती है।"

सतीश शर्मिन्दा हो गया। उसने झुककर हरेंद्रके पाँव छू लिये और कहा, "अपमान मैंने नहीं किया हरेंद्र भइया। आप तो जानते हैं, हम लोग आपकी कितनी भक्ति करते हैं। मगर हमें दुख होता है जब सुनते हैं कि भारतकी शाश्वत तपस्यापर भी आप अविश्वास करने लगे हैं। एक दिन जिन उपादानों और जिस साधनासे उन तपस्वियोंने भारतकी इस विशाल जाति और विराट् सभ्यताका निर्माण किया था, वह सत्य कभी निःशेष नहीं हुआ। मुनहले अक्षरोंमें लिखा हुआ मैं स्पष्ट देख रहा हूँ कि वही भारतका सनातन धर्म है, वही हमारी अपनी चीज है। इस मृतप्राय विराट् जातिको फिर उन्हीं उपादानोंसे जिलाया जा सकता है हरेंद्र भइया, और कोई मार्ग नहीं।"

हरेंद्रने कहा, "न भी जिलाया जा सके, सतीश। यह तुम्हारा विश्वास है,—और इसकी कीमत सिर्फ तुम्हारे तक सीमित है। एक दिन ठीक इसी ढंगकी बातके जवाबमें कमलने कहा था, 'जगत्‌के आदिम युगमें एक दिन विराट् अस्थि, विराट् क्षुधावाले एक विराट् जीवकी सृष्टि हुई थी उसी देह और क्षुधासे वह संसारका जय करता फिरता था, और उस दिन वे थे उसके सत्य उपादान। किन्तु फिर एक दिन ऐसा आया कि उसी देह और उसी क्षुधाने उसको मृत्यु ला दी। एक दिनके सत्यके उपादानोंने दूसरे दिनके मिथ्या उपादान बनकर उसे संसारसे निःशेष कर दिया,—जरा भी दुविधा नहीं की। उसकी अस्थि आज पत्थरमें परिणत हो गई है, और अब वह सिर्फ प्रत्नतत्त्व (पुरातत्त्व) विद्वानोंकी गवेषणाकी चीज रह गई है।"

सतीशको सहसा जवाब ढूँढे न मिला, और वह कहने लगा,

हमारे पूर्व पुरुषोंका आदर्श भ्रान्त था ? उनके तत्त्व निरूपणमें सत्य नहीं था ?"

हरेंद्रने कहा, "हो सकता है कि उस दिन उसमें सत्य रहा हो, पर आज उस सत्यके न रहनेमें कोई बाधा नहीं। उस दिन जो पथ स्वर्गका पथ था अगर आज वही हमें यमराजके दक्षिण द्वारपर पहुँचा दे, तो मुँह फुलानेका मैं तो कोई कारण नहीं देखता, सतीश।"

सतीश अपने गूढ़ क्षोभको जी जानसे दबाकर बोला, "हरेंद्र भइया, यह सब सिर्फ आप लोगोंकी आधुनिक शिक्षाका फल है और कुछ नहीं।"

हरेंद्रने कहा, "असम्भव नहीं। किन्तु आधुनिक शिक्षा अगर आधुनिक कालमें हम कल्याणका मार्ग दिखा सके तो मैं उसमें लज्जाकी कोई बात नहीं देखता सतीश।"

सतीश बहुत देरतक निर्वाक् होकर स्तब्ध बैठा रहा, फिर धीरे धीरे बोला, "मगर मैं तो लज्जाका बल्कि महा लज्जाका कारण देखता हूँ, हरेंद्र भइया। भारतका ज्ञान और भारतका प्राचीन तत्त्व इस भारतका ही वैशिष्ट्य और प्राण है। उस तत्त्वको तिलाजलि देकर अगर देशको स्वाधीनता प्राप्त करना हो, तो वह स्वाधीनता भारतकी जय न होगी, बल्कि उससे तो सिर्फ पाश्चात्य नीति और पाश्चात्य सभ्यताकी ही जय होगी। वह तो पराजयका ही नामान्तर है। उससे तो मृत्यु अच्छी।"

सतीशकी वेदना हार्दिक है। उस अवस्थाका परिणाम अनुभव करके हरेंद्र मौन हो रहा, और अबकी बार जवाब दिया कमलने। उसके मुँहपर सुपरिचित परिहासका चिह्नतक न था, और कण्ठस्वर संयत, शांत और मृदु था। उसने कहा, "सतीश बाबू, आपने अपने जीवनमें जैसे अपने आपको समर्पित कर दिया है, अपने संस्कारोंको भी वैसे ही अगर समर्पित कर सकते, तो आज यह बात भी अनुभव करनेमें आपको कठिनाई न होती कि किसी विशेष भावके लिए या किसी वैशिष्ट्यके लिए आदमी नहीं है, बल्कि आदमीके लिए ही उस वैशिष्ट्यका आदर है, मूल्य है। पर मानव ही अगर नष्ट हो जाय, तो उस तत्त्वकी महिमाको प्रचेष्टासे लाभ ही क्या होगा ? भारतके मतकी जय न भी हो तो क्या हुआ, मनुष्यकी जय तो होगी। तब मुक्ति पाकर इतने नर नारी धन्य हो जायँगे। जरा नवीन तुर्कीकी तरफ तो देखिए। जबतक वह अपनी प्राचीन रीति नीति, आचार विचार और परम्परागत पुराने अनुष्ठान मार्गको

सन्त जानकर पकड़ रहा, तबतक उसकी बार-बार पराजय ही होती रही। आज उसने भ्रान्तिमें सत्यको पाया है—उसका सारा का सारा, बूढ़ा बरगद बह गया है,—किसकी ताकत है कि आज उसका उपहास करे! और मजा यह कि किसी दिन उसने प्राचीन मत और मार्गने ही उसे विजय दी थी, ऐश्वर्य दिया था, कल्याण दिया था, मनुष्यत्व दिया था। पहले उसने सोचा था कि यही शायद चिरन्तन सत्य है। सोचा था कि उसीको जीजानसे पकड़े रहनेसे विगत गौरवको आज भी वापस पाया जा सकता है। उसे इस बातका ख्याल भी न था कि उसका भी चिरतन है। आज उसका यह मोह तो मर गया, पर आदमी जी उठा। ऐसे दृष्टान्त और भी हैं, और भी होंगे। सतीश बाबू, आत्म विश्वास और आत्म अहंकार दोनों एक चीज नहीं हैं।"

सतीशने कहा, "जानता हूँ। मगर ऐसा भी तो हो सकता है कि पश्चिमके लोगोंने मनुष्यके प्रश्नका जो उत्तर दिया है वह ठीक उत्तर न हो? ऐसा भी तो हो सकता है कि उनकी सभ्यताका भी किसी दिन ध्वंस हो जाय?"

कमलने सिर हिलाकर कहा, "हाँ, हो सकता है। और मेरी धारणा है कि ध्वंस होगा भी।"

"तब फिर?"

कमलने कहा, "उसमें धिक्कारकी कोई बात नहीं होगी सतीश बाबू। बुरा तो अच्छेका दुश्मन नहीं हुआ करता, अच्छेका दुश्मन तो वह है जो उससे और भी अच्छा है। वह 'और भी अच्छा' जिस दिन अच्छेके सामने उपस्थित होकर प्रश्नका जवाब चाहता है उस दिन उसके हाथमें राजदण्ड सौंपकर उसे अलग हो जाना पड़ता है। एक दिन शक, हूण और तातारोंने आकर भारतको सारी रिक्त जलकर जीत लिया, मगर यहाँकी सभ्यताको वे नहीं बाँध सके, वे खुद ही बँध गये। जानते हैं इसका कारण क्या था? असल कारण यह था कि वे खुद ही छोटे थे। पर मुगल पठानोंकी पारी आधी ही रह गई, क्योंकि इसी बीच फरासीसी और अँग्रेज आ धमके। लेकिन उनकी मियाद आज भी खतम नहीं हुई है। भारतको इसका जवाब उन्हें एक दिन देना ही होगा। खैर, उस प्रश्नको जाने दीजिए,—लेकिन पश्चिमके ज्ञान विज्ञान और सभ्यताके सामने भारतवर्षको आज अगर नीचा देखना पड़े तो उससे उसके दम्भको चोट जरूर पहुँचेगी, किन्तु यह मैं निश्चयसे कह सकती हूँ कि उससे उसके कल्याणको चोट

न पहुँचेगी।"

सतीशने जोरसे सिर हिलाते हुए कहा, "नहीं, नहीं, नहीं। जिनमें आस्था नहीं, श्रद्धा नहीं, विश्वासकी नींव जिनकी बालूपर है, उनके सामने यह कहना तो सर्वनाशको निमन्त्रण देना होगा।" कहकर उसने कनखियोंसे हरेन्द्रको देखा और कहा, "ठीक इसी तरह एक दिन बंगालमें,—अभी ज्यादा दिन नहीं हुए—विदेशके विचार, विदेशके दर्शन और विदेशकी सभ्यताको बड़ा मानकर कुछ सत्यभ्रष्ट और आदर्शभ्रष्ट लोगोंने अपनी अधूरी शिक्षाके निराधार दम्भसे स्वदेशका जो कुछ अपना था उसीको तुच्छ करके देशके मनको विभ्रान्त और कदाचारी बना डाला था। मगर इतना बड़ा अकल्याण विधातासे सहा न गया, उसकी प्रतिक्रिया हुई और विवेक लौट आया। भूल दिखाई दे गई। उन विषम दिनोंमें जो मनकी अपनी जातिके केन्द्र विमुख उद्भ्रान्त चित्तको अपने घरकी ओर फिरसे वापस ले आये थे, वे सिर्फ बंगालके ही नहीं, समग्र भारतके वन्दनीय हैं।" यह कहते हुए उसने दोनों हाथ जोड़कर माथेसे लगा लिये।

बात सच थी और सभी जानते थे। लिहाजा हरेन्द्र और अजित दोनोंने जो उसका अनुसरण करके वन्दनीयोंके लिए नमस्कार किया, उसमें आश्चर्यकी कोई बात नहीं थी। अजितने मृदु स्वरमें कहा, "नहीं तो शायद बहुतसे लोग उस समय ईसाई हो जाते। सिर्फ उन्हींके कारण ऐसा न हो सका।" बात कहनेके बाद ही उसने कमलके मुँहकी तरफ देखा,—उसकी आँखोंमें इसका अनुमोदन नहीं था, सिर्फ तिरस्कारका भाव ही दिखाई दिया। फिर भी वह चुप ही रही। शायद, जवाब देनेकी इच्छा भी नहीं थी। अजितको वह जानती थी,—पर हरेन्द्रने इसीकी अस्फुट प्रतिध्वनि-सी की, तब, उसकी कुछ देर पहले कही हुई बातोंके साथ यह असंकोच जड़ता ऐसी भद्दी दीख पड़ी कि वह चुप न रह सकी। बोली, "हरेन्द्र बाबू, कुछ ऐसे आदमी होते हैं जो भूत तो नहीं मानते, पर भूतसे डरते जरूर हैं। आप उन्हींमेंसे एक हैं और इसीका नाम है मनके घर चोरी। इतना अनुचित और कुछ हो ही नहीं सकता। इस देशमें आश्रम जैसी संस्थाओंके लिए न कभी रुपयोंकी कमी होगी और न लड़कोंका अकाल पड़ेगा, इसलिए, आपके बिना भी सतीश बाबूका काम चल जायगा मगर इस त्याग देनेका मिथ्याचार आपको हमेशा खलता रहेगा।"

फिर जरा ठहरकर बोली, "मेरे पिता ईसाई थे, पर मैं कौन हूँ, इस बातकी

खोज न तो कभी उठानेकी ओर न मैंने ही। उन्हें इसकी कोई जरूरत नहीं थी, और मुझे कुछ याद न था। मैं तो यही कामना करती हूँ कि उनको आमरण इसी तरह भूली रह सकूँ। परन्तु अभी अभी उच्छृंखल और अनाचारी कहकर आपने जिनका तिरस्कार किया और गन्दगीका कहकर जिन्हें नमस्कार किया, उनमेंसे उन्होंने सबनाशमें निरुपा दान मारी है, इस प्रश्नका उत्तर लोग किसी न किसी दिन अवश्य चाहेंगे।"

मतीउनको देहपर मानो किसीने कसके चाबुक मार दिया। तीव्र वेदनासे वह अकस्मात् उठकर खड़ा हो गया और बोला, "आप जानती हैं उनके नाम? कभी सुने हैं किसीके मुँहसे?"

कमलने सिर हिलाकर कहा, "नहीं।"

"तो, पहले जान लीजिए।"

कमलने हँसते हुए कहा, "अच्छा। पर नामका मोह मुझे नहीं है। नाम जाननेको ही मैं जाननेका छोर नहीं मान सकती।"

प्रत्युत्तरमें सतीश अपनी ऑंखोंमें सिर्फ अवज्ञा और घृणा बरसाता हुआ तेज कदमोंसे बाहर चला गया।

वह गुस्सेमें चला गया है, इसमें कोई सन्देह नहीं रहा। इस अप्रीतिकर घटनाको कुछ हलका करनेके खयालसे कुछ देर बाद हरेन्द्रने हँसनेकी कोशिश करते हुए कहा, "कमलकी आकृति तो प्राच्यकी है पर प्रकृति बिल्कुल प्रतीच्यकी। एक तो दिखाई देती है और दूसरी बिल्कुल ऑंखोंके ओझल रह जाती है। यहीं आदमीको गलतफहमी होती है। इनकी परोसी हुई चीज खाई तो जा सकती है, पर हजम करते वक्त पेटकी बत्तीसों नाड़ियोंमें मानो मरोड़ा उठने लगता है। हमारी किसी भी प्राचीन चीजपर न तो इन्हें विश्वास है और न सहानुभूति। बेकाम कहकर रद कर देनेमें इन्हें जैसे कुछ दर्द ही नहीं मालूम होता। लेकिन, हम बातको ये समझ ही नहीं सकतीं कि सूक्ष्म भोंगा हाथ आ जानेसे ही सूक्ष्म वजन करना नहीं आ जाता।"

कमलने कहा, "समझ सकती हूँ, लेकिन सिर्फ दाम देते वक्त उसके बदले दूसरी चीज नहीं ले सकती। मेरी आपत्ति यहा है।"

हरेन्द्रने कहा, "मैंने तय कर लिया है कि आश्रम जरूर उठा दूँगा। मुझे सन्देह हो गया है कि उस शिक्षासे लड़के आदमी बनकर देशकी मुक्ति और परम

कल्याणको पुन प्राप्त कर सकेंगे या नहीं। लेकिन समझमें नहीं आता कि दीन हीन घरोंके जिन लड़कोंको सतीश घर छुड़ाकर ले आया है उनका क्या करूँ? सतीशके हाथ सौंप देना भी मुझसे नहीं हो सकता।"

कमलने कहा, "सौंपनेकी कोई जरूरत नहीं। जरूरत सिर्फ इस बातकी है कि उनके द्वारा कोई असाधारण या अलौकिक बात करवा डालने की ख्वाहिश न रखी जाय। दीन दुःखी घरोंके लड़के सभी देशोंमें हैं, वहाँवाले जैसे उन्हें बड़ा करते हैं वैसे ही आप भी इन्हें आदमी बनानेकी कोशिश करते रहें।"

हरेन्द्रने कहा, "इस विषयमें भी अभीतक मैं निःसंशय नहीं हो सका हूँ कमल। शिक्षा देकर मैं उन्हें पढ़ा लिखा सकता हूँ, पर इसका मुझे भय है कि जिस संयम और त्यागकी शिक्षा उन्हें दी जा रही थी, उससे दूर करके भी उन्हें आदमी बनाया जा सकता है या नहीं।"

कमलने कहा, "हरेन्द्र बाबू, सभी बातोंको आप लोग इस तरह एकान्त रूपसे सोचा करते हैं, इसीसे किसी प्रश्नका सीधा उत्तर आप लोगोंको नहीं मिल सकता। आपका ख्याल है कि लड़के या तो देवता बनेंगे, या फिर बिलकुल ही उच्छृंखल पशु बन जायँगे। जगत्का सहज सरल स्वाभाविक सौन्दर्य आपकी दृष्टिके सामने आता ही नहीं। आप लोग दूसरोंके हाथके मनगढ़न्त अन्यायकी अनुभूतिसे अपने सम्पूर्ण चित्तको शंकासे त्रस्त और मलिन रखा करते हैं। उस दिन मैं आश्रममें जो कुछ देख आई हूँ यह क्या संयम और त्यागकी शिक्षा है? उन लोगोंको मिला ही क्या है? सिर्फ दूसरोंका दिया हुआ दुःखका बोझ ही तो मिला है, अनधिकार मिला है, और मिली है प्रवंचितकी क्षुधा। चीन देशमें लड़कियोंके पाँव जन्मसे छोटे बनाये जाते हैं। मेरे लिए यह सह्य है कि पुरुषवर्ग उन्हें सुन्दर बताये, पर वहाँकी स्त्रियाँ ही जब अपने उन पंगु और विकृत पैरोंकी सुन्दरतापर खुद मोहित हो जाती हैं, तब फिर सुधारकी कोई आशा शेष नहीं रह जाती। इस समय आप लोग अपने कृतित्वपर खुद ही मुग्ध हो रहे हैं। मैंने उन लोगोंसे पूछा, 'बच्चो, कैसे रहते हो तुम लोग, बताओ?' लड़कोंने एक साथ जवाब दिया, 'बहुत अच्छी तरह।' उन्होंने एक बार भी नहीं सोचा कि 'अच्छी तरह' किसे कहते हैं। सोचने विचारनेकी शक्ति भी उनकी जाती रही है,—ऐसा जबर्दस्त शासन है उनपर। नीलिमा जीजीने मेरी तरफ देखकर शायद इसका उत्तर चाहा था, पर छाती पीटकर रोनेके सिवा मुझे इस बातका कोई जवाब

ही ढूँढे न मिला। मन ही मन सोचने लगी, ये ही लोग क्या भविष्यमें देशकी स्वाधीनता प्राप्त करेंगे?"

हरेन्द्रने कहा, "लड़कोंकी बात जाने दो, लेकिन राजेन्द्र सतीश वगैरह तो सुनते हैं? ये भी तो सर्वत्यागी हैं?"

कमलने कहा, "राजेन्द्रको आप लोग पहचानते नहीं, लिहाजा उसकी चर्चा छोड़िए। बात असल यह है कि वैराग्य यौवनके सरपर ही ज्यादा सवार होता है। वह जहाँ शक्ति बनकर बैठा हुआ है वहाँ विरुद्ध शक्तिके बिना उसे दूर कौन करेगा?"

हरेन्द्रने कहा, "गुस्सा मत होना कमल,—तुम्हारे मनमें तो वैराग्य है ही नहीं। तुम्हारे पिता यूरोपियन थे, और उन्हींके हाथमें तुम्हारा शिशु जीवन गढ़ा गया है। माँ इस देशकी थीं पर उनका जिक्र न करना ही अच्छा है। इसीसे, पश्चिमकी शिक्षासे तुमने भोगको ही जीवनकी सबसे बड़ी चीज समझ लिया है।"

कमलने कहा, "गुस्सा मैं नहीं करती, हरेन्द्र बाबू। पर ऐसी बात आप न कहें। सिर्फ भोगको ही जीवनकी सबसे बड़ी चीज समझकर संसारमें कोई भी जाति बड़ी नहीं हो सकती। मुसलमानोंने जिस दिन ऐसी गलती की, उस दिन उनका त्याग भी गया और भोग भी छूट गया। ऐसी ही गलती यदि पश्चिमवालोंने की, तो वे भी मरेंगे। पश्चिम भी तो कोई दुनियासे अलग नहीं है। अगर वे इस विधानकी उपेक्षा करके चलेंगे तो उनके भी जीनेका फिर कोई रास्ता नहीं रह जायगा।"

थोड़ी देर मौन रहकर फिर कहने लगी, "लेकिन तब मन ही मन मुसकरा कर आप लोग कहेंगे, 'क्या, कहा था न! हम तो पहलेसे ही जानते थे कि यह ठाट दो दिनकी उछल-कूद है इनकी, सो किसी न किसी दिन खतम हो जायगी। लेकिन, इधर देखो, हम लोग शुरूसे आखिरतक वैसे ही टिके हुए हैं।'" और कहते कहते सुनिर्मल हँसीसे उसका सारेका सारा चेहरा खिलखिल हो उठा।

हरेन्द्र बोला, "ऐसा ही हो, वही दिन आये।"

कमलने कहा, "ऐसी बात नहीं कहना चाहिए हरेन्द्र बाबू। इतना बड़ी जाति अगर नीचे गिर जाय, तो उसकी धूलसे ही संसारके बहुत-से प्रकाश

स्तम्भ म्लान हो जायँगे। मनुष्य जातिके लिए वे बहुत ही बुरे दिन साबित होंगे।"

हरेंद्र उठ खड़ा हुआ। बोला, "उसे अभी देर है पर उसके बुरे दिनोंका आभास मैं अभीसे हो पा रहा हूँ। बहुत से प्रकाश स्तम्भ बुझते दिखाई दे रहे हैं। अपने पिताके तुमने उन्हें बुझानेका ही कौशल सीखा है कमल जलानेकी विद्या नहीं सीखी। अच्छा, अब चल दिया। अजित बाबूको अभी देर होगी शायद?"

अजित उठनेके लिए जरा हिला डुला, पर उठा नहीं।

कमलने कहा, "हरेंद्र बाबू, प्रकाश स्तम्भका प्रकाश रास्तेपर न पड़कर अगर आँखोंपर पड़े, तो ठोकर खाकर नालीमें गिरना पड़ता है। उस प्रकाशको जो बुझा देता है उसे हितैषी मित्र ही समझिएगा।"

हरेंद्रने एक गहरी साँस ली, और कहा, "बहुत बार खयाल आता है कि तुम्हारे साथ बुरे क्षणमें परिचय हुआ था। विश्वासका इतना जोर तो मुझमें नहीं है जितना कि तुममें है, फिर भी मैं कह सकता हूँ कि वे विद्या, बुद्धि, ज्ञान और पौरुषकी चाहे जितनी चकाचौंध दिखलायें, भारतके सामने वह कुछ भी नहीं,—सब अकिञ्चित्कर है।"

कमलने कहा, "यह तो ऐसी बात हुई जैसे क्लासमें प्रमोशन न पानेवाले विद्यार्थीका एम० ए० पास करनेवालेको धिक्कार देना। हरेंद्र बाबू, 'आत्म सम्मान ज्ञान' जैसे एक शब्द है, वैसे ही 'नकार करना' भी एक शब्द है।"

हरेंद्रको क्रोध आ गया, कहने लगा, "शब्द तो बहुत हैं। लेकिन यह भारत ही एक दिन सारे जगत्का गुरु था। बहुतोंके पुरखे तो तब शायद पेड़ोंकी डालियोंपर उछला करते थे। और, फिर एक दिन ऐसा आयगा जब भारतवर्ष ही जगत्के शिक्षकका आसन ग्रहण करेगा।—करेगा, अवश्य ही करेगा।"

कमलको गुस्सा नहीं आया, वह हँस दी। बोली, "आज तो वे लोग डालियोंपरसे नीचे उतर आये हैं। पर यदि इसी आलोचनाका आनन्द उठाना हो कि कौन से महा अतीत कालमें किसके पूर्वपुरुष जगत्के गुरु थे और कौन-से महा भविष्य कालमें उनके वंशधर फिर पैतृक पेशा अख्तियार कर लेंगे,

तो अजित बाबूको जाकर पकड़िए। मुझे बहुत काम करना है।"

हरेन्द्रने कहा, "अच्छा, नमस्कार।"

और वह विषण्ण गम्भीर चेहरा लिये घरसे निकल गया।

२६

आठ दिन बाद कमल आशु बाबूके घर मिलने गई। जिन लोगोंको लेकर यह कहानी है, उनके जीवनमें इधर कई दिनोंमें एक उलट फेर हो गया है। किन्तु उसे न तो आकस्मिक कहा जा सकता है और न अप्रत्याशित ही। इधर कुछ दिनोंसे जो आकाशमें इधर उधरसे हवामें उड़ते हुए बादलोंके टुकड़े जमा हो रहे थे, उनके परिणामके सम्बन्धमें विशेष संशय न था,—और हुआ भी वही।

फाटकपर दरबान हाजिर नहीं है। नीचेके बरामदेमें साधारणतः कोई बैठता न था, फिर भी, वहाँ कुछ मेजें और कुर्सियाँ पड़ी रहती थीं, दीवारपर बड़े आदमियोंकी कई एक तसवीरें भी थीं,—किन्तु आज वे सब नदारद हैं। सिर्फ उससे एक काली-कलूटी लालटेन लटक रही है। जगह-जगह कूड़ा-करकट जमा हो रहा है, उसे साफ करनेकी अब शायद आवश्यकता नहीं रह गई है। न जाने कैसा एक श्रीहीन वातावरण है, जिसे देखकर सहज ही अनुमान किया जा सकता है कि मकान मालिक अब यहाँसे पलायन कर रहे हैं।

कमल ऊपर जाकर आशु बाबूकी बैठकमें पहुँची। दिन ढल रहा था। आशु बाबू आराम कुर्सीपर पैर फैलाये पड़े थे। कमरेमें और कोई न था। परदा हटनेके शब्दसे उन्होंने आँखें खोलीं और वे उठकर बैठ गये। कमलके आनेकी शायद उन्होंने आशा नहीं की थी इससे कुछ ज्यादा खुश होकर उन्होंने अभ्यर्थना की, बोले, "कमल हो! आओ बेटा, आओ।"

उनके चेहरेकी तरफ देखकर कमलके हृदयमें चोट पहुँची। उसने कहा, "यह क्या? आप तो बूढ़े-से दिखाई देने लगे हैं, चाचाजी!"

आशु बाबू हँस दिये, बोले, "बूढ़ा? यह तो भगवान्‌का आशीर्वाद है कमल। भीतर ही भीतर जब कि उमर बढ़ती है तब मनुष्यके लिए इससे बढ़कर दुर्भाग्य और नहीं हो सकता कि बाहरसे बूढ़ा न दिखाई दे। यह अवस्था बचपनमें ही गंजे हो जाने जैसी करुण है।"

"लेकिन तबीयत भी तो अच्छी नहीं दीख रही है ?"

"नहीं।"

परन्तु, इसके बाद, फिर उन्होंने आगे प्रश्न करनेका मौका नहीं दिया, बोले, "तुम कैसी हो, सो तो बताओ ?"

"अच्छी हूँ। मैं तो कभी बीमार पड़ती नहीं, चाचाजी।"

"सो तो मालूम है। न देह और न मन, तुम्हारे दोनों ही बीमार नहीं होते। कारण इसका यह है कि तुम्हें लोभ नहीं। तुम कुछ भी चाहती नहीं, इसीसे भगवानने तुम्हें दोनों हाथोंसे सब कुछ उँडेल कर दे दिया है।"

"मुझे ? क्या देते देखा आपने, बताइए तो ?"

आशु बाबूने कहा, "यह डिप्टी साहबकी अदालत नहीं जो धमकी देकर मामला जीत जाओगी। खैर, कुछ भी हो, पर मैं मानता हूँ कि दुनियाके विचारसे मैंने खुद भी कुछ कम नहीं पाया। यहाँ तो मैं आज सवेरेसे थैली झाड़कर और फर्द मिला मिलाकर देख रहा था। देखा कि रुपयेने अकाने ही इतने दिनोंसे तहसील फुला रही थी,—अन्त सारहीन थैलीने भारी भरकम आकारने आदमियोंकी आँखोंको महज धोखा ही दिया,—भीतर कोई चीज उसमें थी ही नहीं। लोग सिर्फ गलतीसे ही धोखा करते हैं बेटी, कि गणित शास्त्रके अनुसार शून्योंकी भी कीमत है। मैंने तो देखा कि उनकी कोई भी कीमत नहीं। एकके अंककी दाहिनी तरफ वे अगर पक्तिबार खड़े हो जायँ तो उस एकको ही एक करोड़ बना देते हैं, पर अगर सिर्फ शून्य ही अपनी संख्याके जोरसे चाहें कि करोड़ हो जायँ तो नहीं हो सकते। जहाँ आदि और अंक नहीं, वहाँ तो ये सिर्फ माया ही हैं। मेरा पाना भी ठीक उन शून्योंका पाने जैसा है।"

कमलने बहस नहीं की, वह उनके पास कुरसी खींचकर बैठ गई। आशु बाबूने अपना दाहिना हाथ कमलके हाथपर रखते हुए कहा, "बेटी, अबकी बार तो सचमुच ही मेरे जानेकी बारी आ गई, कल परसोंतक चला जाऊँगा। बूढ़ा हो गया,—न जाने अब फिर कब भेट होगी। पर इतना तुम भरोसा दो कि मुझे कभी भूलोगी नहीं।"

कमलने कहा, "नहीं, भूलूँगी नहीं। और भेंट भी होगी फिर कभी। आपको अपनी थैली सूनी मालूम पड़ रही है, पर मैंने अपनी थैली शून्योंसे नहीं भर रखी है चाचाजी, उसमें सचमुचकी चीज है,—माया नहीं।"

आशु बाबूने इस बातका कुछ जवाब नहीं दिया, पर मनमें समझ लिया कि लड़कीने रत्तीमात्र भी झूठ नहीं कहा।

कमलने कहा, "मैं घरमें घुसते ही समझ गई कि आप यहाँ हैं जरूर, पर आपका मन यहाँसे विदा हो गया है। इसलिए अब आपको पकड़कर नहीं रखा जा सकता। कहाँ जायँगे?—कलकत्ते?"

आशु बाबू धीरेसे सिर हिलाते हुए बोले, "नहीं, वहाँ नहीं। अबकी बार जरा दूर जानेकी सोची है। पुराने मित्रोंको वचन दिया था कि अगर जिन्दा रहा तो फिर एक बार मिल जाऊँगा। यहाँ तुम्हें तो कोई काम नहीं कमल, चलोगी बिटिया, मेरे साथ विलायत? अगर वहाँसे मैं न लौट सका, तो तुम्हारे मुँहसे कोई खबर तो सुन ही लेगा।"

इस अनुद्दिष्ट सम्बोधनका उद्दिष्ट कौन है, सो कमलको समझनेमें देर न लगी, परन्तु इस असम्पूर्णताको सुस्पष्ट कर देना भी उसने अनावश्यक समझा।

आशु बाबू कहने लगे, "इसकी कोई बात नहीं बेटी, इस बूढ़ेकी तुम्हें सेवा न करनी होगी। इस अकर्मण्य देहकी कीमत ही क्या है?—इसे ढोते रहनेके लिए मैं अपने ऊपर किसीका ऋण नहीं बढ़ाना चाहता। पर कौन जानता था कमल, कि इस मांस-पिण्डको लेकर भी प्रश्न जटिल हो सकता है? ऐसा लगता है कि मारे लज्जाके जमीनमें गड़ा जा रहा हूँ। इस दुनियामें इतनी बड़ी आश्चर्यकी बात भी होती है, सो भला कब कौन सोच सकता है, बताओ?"

कमल सन्देहसे चौंक पड़ी, बोली, "नीलिमा जीजीको नहीं देख रही हूँ चाचाजी, वे कहाँ हैं?"

आशु बाबूने कहा, "शायद अपने कमरेमें होंगी,—कल सबेरेसे ही नहीं दिखाई दे रही हैं। सुना है कि हरेन्द्र आकर उन्हें अपने घर ले जायगा।"

"अपने आश्रममें?"

"आश्रम अब नहीं रहा। सतीश चला गया है, कुछ लड़कोंको भी अपने साथ ले गया है। सिर्फ चार-पाँच लड़कोंको हरेन्द्रने नहीं जाने दिया है, वे यहीं हैं। उनके माँ-बाप, नाते रिश्तेदार कोई भी नहीं हैं, वह चाहता है कि उन्हें वह अपने आइडियाके अनुसार नवीन ढंगसे तैयार करे। तुमने सुना नहीं शायद?"

—सुनती भी किससे?"

जरा ठहरकर फिर कहने लगे, "परसों शामको लोगोंके चले जानेपर अधूरा

चिट्ठी पूरी करके नीलिमाको सुनाने लगा। कई दिनासे वह बराबर कुछ अन्य मनस्क सी रहती थी, इधर उसे देख भी कम पाता था। चिट्ठी थी कलकत्तेके अपने कर्मचारीके नाम, मेरे विलायत जानेका सारा आयोजन जल्दी पूरा करनेके लिए। एक नये वसीयतनामेका मसविदा भी भेजा था,—शायद यही मेरा आखिरी वसीयतनामा,—अटर्नीको दिखाकर पक्का करके दस्तखतके लिए वापस भेजनेको लिखा था। और भी बहुत-सी आज्ञाएँ थीं। नीलिमा कुछ सी रही थी। उसकी तरफसे भला बुरा कुछ भी उत्तर न पाकर मैं मुँह उठाकर उसकी तरफ देखने लगा तो देखा, उसके हाथका सिलाईका कपड़ा जमीनपर पड़ा है, सिर चौकीके एक किनारे झुक गया है, आँखें मिचीं हैं और चेहरा बिल्कुल सफेद पड़ गया है। मेरी कुछ समझहीमें न आया कि अचानक क्या हो गया, झटपट उठकर जमीनपर लिटाया, गिलासमें पानी था उसके मुँह और आँखोंपर छींटे मारे। पंखा था नहीं, तो अखबार उठाकर उससे हवा करने लगा,—नौकरको पुकारना चाहा, पर मुँहसे आवाज ही न निकली। शायद दो-तीन मिनट ही यह अवस्था रही, ज्यादा नहीं, इसके बाद उसने आँखें खोलीं और झिझकके साथ उठकर बैठ गई। एक बार सारा शरीर काँप उठा और फिर वह औंधी होकर मेरी गोदमें मुँह छिपाकर जोरसे रोने लगा! ऐसी रोई कि कुछ पूछो मत। मालूम हुआ कि जैसे उसकी छाती ही फट जायगी। बहुत देर बाद मैंने उठाकर बिठाया,—कितने दिनोंकी कितनी ही बात और कितनी ही घटनाएँ याद आ गईं, फिर मुझे समझनेमें कुछ भी बाकी न रह गया।"

कमल चुपचाप उनके मुँहकी तरफ देखती रही।

आशु बाबूने क्षण भर अपनेको सँभालनेमें लगाया और फिर कहा, "मैं समझता हूँ, इस तरह दो-तीन मिनट बीते होंगे। मेरे यह सोचनेके पहले ही कि ऐसी हालतमें मुझे क्या कहना चाहिए, वह तीरकी तरह उठ खड़ी हुई,—मेरी ओर एक बार देखातक नहीं,—और कमरेसे बाहर निकल गई। न तो उसने कोई बात कही और न मैं ही कुछ बोल सका। उसके बाद फिर मुलाकात नहीं हुई।"

कमलने कहा, "यह क्या आप पहले समझ नहीं पाये थे?"

आशु बाबूने कहा, "नहीं। कभी स्वप्नमें भी न सोचा था। और कोई होता तो सन्देह करता कि महज छल है, स्वाँग है। पर उसके विषयमें ऐसी बात

सोचना भी अपराध है।—यह स्त्रियोंका मन कितनी आश्चर्यजनक चीज है! इससे बढ़कर संसारमें और क्या आश्चर्यकी बात होगी कि यह रोगातुर शरीर, यह अक्षम और अवसन्न मन, जीवनकी यह सन्ध्या बेला जिसमें जीवनकी कानीकौड़ी भी कीमत नहीं,—इसपर भी किसी सुन्दरी युवतीका मन आकृष्ट हो? फिर भी, यह सच है, जरा भी झूठ नहीं।"

इतना कहकर वह सदाचारी प्रौढ़ आदमी क्षोभ, वेदना और निष्फल लज्जासे एक साँस लेकर चुप हो रहा। आशु बाबू कुछ देर इसी तरह रहकर फिर कहने लगे, "मगर मैं यह निश्चित जानता हूँ कि यह बुद्धिमती नारी मुझसे कुछ भी प्रत्याशा नहीं करती। वह सिर्फ चाहती है मेरी सेवा करना, और वह भी इसलिए कि सेवाके अभावमें मेरे जीवनके बाकी दिन कहीं दुःखमें न बीतें। केवल दया और अहर्निश करुणा, बस।"

कमलको चुप देख वे कहने लगे, "बेलाने विवाह विच्छेदका जब मामला चलाया था तब मैंने उसमें अपनी सम्मति दी थी। बातों ही बातोंमें उस दिन जब प्रसंग उठ पड़ा, तो नीलिमा बहुत नाराज हुई और उसके बादसे तो बेला उसके लिए असह्य हो गई। अपने पतिको इस तरह जनसाधारणके सामने लज्जित और बेइज्जत करनेकी प्रतिहिंसाको नीलिमा हृदयसे पसन्द न कर सकी। उसने कहा कि 'पतिको त्याग देना कोई बड़ी बात नहीं, उसे फिरसे पानेकी साधना ही स्त्रीके लिए परम सार्थकता है। अपमानका बदला लेनेमें ही स्त्रीकी वास्तविक मर्यादा नष्ट होती है, अन्यथा वह तो कसौटी है जिसपर जाँचकर प्रेमकी कीमत आँकी जाती है। और फिर यह कैसा आत्म-सम्मानका भाव कि जिसे असम्मानके साथ अलग कर दिया, उसीसे अपने खाने पहननेका खर्च हाथ पसारकर लिया जाय? क्या गलेमें फाँसी डालनेके लिए रस्सी भी नहीं जुटी?' सुनकर मैंने सोचा था कि नीलिमाका यह बात बना है,—ज्यादती है। पर आज सोचता हूँ कि प्रेम क्या नहीं कर सकता। रूप, यौवन, सम्मान, सम्पदा,—यह सब कुछ नहीं कमल, क्षमा ही उसकी वास्तविक आत्मा है। जहाँ क्षमा नहीं वहाँ प्रेम सिर्फ विडम्बना है,—वहींपर रूप यौवनका विचार वितर्क उठता है और वहींपर आता है आत्मसम्मान ज्ञानका 'टग ऑफ़-वार'।"

कमल उनके मुँहकी तरफ देखती हुई चुप हो रही।

आशु बाबू कहने लगे, "कमल, तुम ही उसकी आदर्श हो,—पर, चाँदकी

चिट्ठी पूरी करके नीलिमाको सुनाने लगा। कई दिनोंसे वह बराबर कुछ अन्य मनस्क-सी रहती थी, इधर उसे देख भी कम पाता था। चिट्ठी थी कलकत्तेके अपने कर्मचारीके नाम, मेरे विलायत जानेका सारा आयोजन जल्दी पूरा करनेके लिए। एक नये वसीयतनामेका मसविदा भी भेजा था,—शायद यही मेरा आखिरी वसीयतनामा,—अटर्नीको दिखाकर पक्का करके दस्तखतके लिए वापस भेजनेको लिखा था। और भी बहुत सी आज्ञाएँ थीं। नीलिमा कुछ सी रही थी। उसकी तरफसे भला-बुरा कुछ भी उत्तर न पाकर मैं मुँह उठाकर उसकी तरफ देखने लगा तो देखा, उसके हाथका सिलाईका कपड़ा जमीनपर पड़ा है, सिर चौकीके एक किनारे लुढ़क गया है, आँखें मिची हैं और चेहरा बिल्कुल सफेद पड़ गया है। मेरी कुछ समझहीमें न आया कि अचानक क्या हो गया, झटपट उठकर जमीनपर लिटाया, गिलासमें पानी था उसके मुँह और आँखोंपर छींटे मारे। पंखा था नहीं, सो अखबार उठाकर उससे हवा करने लगा,—नौकरको पुकारना चाहा, पर मुँहसे अवाज ही न निकली। शायद दो-तीन मिनट ही यह अवस्था रही, ज्यादा नहीं, इसके बाद उसने आँखें खोलीं और झिझकके साथ उठकर बैठ गई। एक बार सारा शरीर काँप उठा और फिर वह औंधी होकर मेरी गोदमें मुँह छिपाकर जोरसे रोने लगी। ऐसी रोई कि कुछ पूछो मत। मालूम हुआ कि जैसे उसकी छाती ही फट जायगी। बहुत देर बाद मैंने उठाकर बिठाया, —कितने दिनोंकी कितनी ही बात और कितनी ही घटनाएँ याद आ गईं, फिर मुझे समझनेमें कुछ भी बाकी न रह गया।"

कमल चुपचाप उनके मुँहकी तरफ देखती रही।

आशु बाबूने क्षण भर अपनेको सँभालनेमें लगाया और फिर कहा, "मैं समझता हूँ, इस तरह दो-तीन मिनट बीते होंगे। मेरे यह सोचनेके पहले ही कि ऐसी हालतमें मुझे क्या कहना चाहिए, वह तीरकी तरह उठ खड़ी हुई,—मेरी ओर एक बार देखातक नहीं,—और कमरेसे बाहर निकल गई। न तो उसने कोई बात कही और न मैं ही कुछ बोल सका। उसके बाद फिर मुलाकात नहीं हुई।"

कमलने कहा, "यह क्या आप पहले समझ नहीं पाये थे?"

आशु बाबूने कहा, "नहीं। कभी स्वप्नमें भी न सोचा था। और कोई होता तो सन्देह करता कि महज छल है, स्वार्थ है। पर उसके विषयमें ऐसी बात

सोचना भी अपराध है।—यह स्त्रियोंका मन कितनी आश्चर्यजनक चीज है! इससे बढ़कर हास्यास्पद और क्या आश्चर्यकी बात होगी कि यह रोगातुर शरीर, ऐसा अशुभ और अवसन्न मन, जीवनकी यह सन्ध्या बेला जिसमें जीवनकी कानी-कौड़ी भी कीमत नहीं,—इसपर भी किसी सुन्दरी युवतीका मन आकृष्ट हो? फिर भी, यह सत्य है, जरा भी झूठ नहीं।"

इतना कहकर वह सदाचारी प्रौढ़ आदमी मौन, वेदना और निष्कपट लज्जासे एक साँस लेकर चुप हो रहा। आशु बाबू कुछ देर इसी तरह रहकर फिर कहने लगे, "मगर मैं यह निश्चित जानता हूँ कि वह बुद्धिमती नारी मुझसे कुछ भी प्रत्याशा नहीं करती। वह सिर्फ चाहती है मेरी सेवा करना, और वह भी इसलिए कि संसार अभावमें मेरे जीवनके बाकी दिन कहीं दुःखमें न बीतें। केवल दया और अकृत्रिम करुणा, बस।"

कमलको चुप देख वे कहने लगे, "बेलाके विवाह-विच्छेदका जब मामला चलाया था तब मैंने उसमें अपनी सम्मति दी थी। बातों ही बातोंमें उस दिन जब प्रसंग उठ पड़ा, तो नीलिमा बहुत नाराज हुई और उसके बादसे तो बेला उसके लिए असह्य हो गई। अपने पतिको इस तरह सर्वसाधारणके सामने लज्जित और बेइज्जत करनेकी प्रतिहिंसाकी कालिमा हृदयसे पसन्द न कर सकी। उसने कहा कि 'पतिको त्याग देना कोई बड़ी बात नहीं, उसे फिरसे पानेकी साधना ही नारीके लिए परम सार्थकता है। अपमानका बदला लेनेमें ही स्त्रीकी वास्तविक मर्यादा नष्ट होती है, अन्यथा, वह तो कसौटी है जिसपर जाँचकर प्रेमकी कीमत आँकी जाती है। और फिर यह कैसा आत्म-सम्मानका भाव कि जिस अपमानके साथ अलग कर दिया, उसीसे अपने खाने पहननेका खर्च हाथ पसारकर लिया जाय? क्या गलेमें फाँसी डालकर लटक रहना भी नहीं सूझी?' सुनकर मैंने सोचा था कि नीलिमाकी यह बात बना है,—ज्यादती है। पर आज सोचता हूँ कि प्रेम क्या नहीं कर सकता। रूप, यौवन, सम्मान, सम्पदा,—यह सब कुछ नहीं कमल, क्षमा ही उसकी वास्तविक आत्मा है। जहाँ क्षमा नहीं वहाँ प्रेम सिर्फ निरा स्वांग है,—वहींपर रूप-यौवनका विचार सिर उठाता है और वहींपर आती है आत्मसम्मानका 'ला ऑर्डर'।"

कमल उनके मुँहकी तरफ देखती हुई चुप हो रही।

आशु बाबू कहने लगे, "कमल, तुम तो उसकी आदर्श हो,—पर, चाँदकी

चाँदनी मानो सूर्य किरणोंमें भी नष्ट गई है। तुमसे जो कुछ उसने पाया है, अपने हृदयके रसमें भिगोकर स्निग्ध माधुर्यके साथ उसने उसे न जाने कितनी तरह बिखेर दिया है। मैं इन दो दिनोंमें जो गौरवकी चिन्ता था है, कमल। स्त्रीका प्रेम मैंने पाया था, उसका स्वाद मैं पहचानता हूँ, स्वरूप जानता हूँ परन्तु इस तरहके तत्त्व, कि नारीके प्रेमका यह सिर एक ही पहलू था, इसने आज मुझे आश्चर्य कर दिया है। इसमें न जाने कितनी बाधा है, न जाने कितनी व्यथा है, अपनेको छिपा रखनेकी न जाने कितनी कितनी तैयारियाँ हैं। यद्यपि मैं उसे हाथ पसारकर ले नहीं सका, पर क्या कहकर उसे नमस्कार करूँ यह भी मेरी समझमें नहीं आ रहा है कमल।"

कमल समझ गई कि पत्नीके प्रेमकी सुदीर्घ छायाने इतने दिन जिन दिशाओंको अँधेरा कर रखा था, आज वे ही दिशाएँ धीरे धीरे उज्ज्वल होती जा रही हैं।

आशु बाबूने कहा, "ठीक है, मणिको मैंने क्षमा कर दिया है। उसके अभिमानको मैं अब उसके आगे खड़ा और न करने दूँगा। मैं जानता हूँ कि वह दुःख पायेगी, जगत्का विधिबद्ध शासन उसे छुटकारा नहीं देगा। अनुमति तो नहीं दे सकूँगा, पर जाते समय यह आशीर्वाद छोड़ जाऊँगा कि दुःखमें वह फिर अपनेको किसी दिन खोज कर पा ले। उसकी भूल भ्रान्ति और प्रेम,—भगवान् उन लोगोंका सुविचार करें।" कहते कहते उनका गला भारी हो आया।

इसी तरह नीरवतामें बहुत क्षण कट गये। उनके मोटे हाथपर कमल धीरे धीरे हाथ फेर रही थी, बहुत देर बाद उसने मृदु कण्ठसे कहा, "चाचाजी, नीलिमा जीजीके विषयमें आपने क्या निर्णय किया?"

आशु बाबू अकस्मात् सीधे होकर बैठे गये,—जैसे किसीने उन्हें ठेलकर उठा दिया हो, "ऐसा बेटी, तुम्हें मैं पहले भी नहीं समझा सका हूँ और अब भी न समझा सकूँगा और शायद अब सामर्थ्य भी नहीं है। पर, ऐसा संशय मेरे मनमें कभी नहीं आया कि एकनिष्ठ प्रेमका आदर्श मनुष्यका सच्चा आदर्श नहीं। नीलिमाके प्रेमपर मैं सन्देह नहीं करता पर जैसे वह सत्य है वैसे ही उसे अस्वीकार करना भी मेरे लिए वैसा ही सत्य है। किसी तरह भी मैं इसे निष्फल आत्म-वंचना नहीं कह सकता। तर्कसे इसका मेल नहीं खायेगा, पर यह सच है कि निष्फलतामें से होकर मनुष्य आगे बढ़ेगा। मैं नहीं मानता कि कहाँ

आएगा, पर आयेगा ज़रूर। यद्यपि वह मेरी कल्पनासे अतीत है, पर मैं यह निश्चयसे जानता हूँ कि इतनी बड़ी व्यथाका प्रतिफल मनुष्य किसी न किसी दिन पायेगा अवश्य। नहीं तो संसार असत्य, सृष्टि असत्य हो जायगी।"

वे कहने लगे, "इसी नीलिमाको ही ले लो, किसी भी आदमीके लिए जो नारी अमूल्य सम्पदा हो सकती है,—उसके लिए कहीं भी पड़े होनेकी जगह नहीं। उसकी व्यथा मेरे मनकी दीवारोंमें शूलकी तरह चुभती रहेगी। इसीसे सोचता हूँ, अगर वह और किसीसे प्रेम करता। यह उसकी कैसी भूल है!"

कमलने कहा, "भूल सुधारनेके दिन तो अभी उसके खतम नहीं हो गये चाचाजी!"

"कैसे? तुम समझती हो, अब क्या वह फिर किसीसे प्रेम कर सकता है?"

"इससे कम, असम्भव तो नहीं है। इसे भी क्या आपने कभी सम्भव समझा था कि आपके अपने जीवनमें कभी ऐसी घटना हो सकती है?"

"लेकिन नीलिमा? उसके जैसी स्त्री?"

कमलने कहा, "सो नहीं जानती। पर उसके लिए क्या आप यही प्रार्थना करेंगे कि जिसे उसने पाया नहीं, और पा सकती नहीं, उसीकी याद में सारा जीवन व्यर्थ निराशामें काट दे?"

आशु बाबूके चेहरेकी दीप्ति बहुत कुछ मलिन हो गई। बोले, "नहीं, ऐसी प्रार्थना नहीं करूँगा।" फिर क्षण भर चुप रहकर कहने लगे, "मगर मेरी बात भी तुम नहीं समझोगी, कमल। मैं जो कर सकता हूँ, वह तुम नहीं कर सकती। सत्यका मूलगत संस्कार तुम्हारे और मेरे जीवनका एक नहीं है,—बिल्कुल भिन्न है। इस जीवनको ही जिन्होंने सर्वोत्तम मानकर आत्माने परम प्राप्ति समझा है, उनके लिए प्रतीक्षा करना मुश्किल है, वे तो आजन्म मांगकी अंतिम बूँदतक इसी जीवनमें पी लेना चाहेंगे, परन्तु हम जन्मान्तर मानते हैं, प्रतीक्षा करना सहज हमारे लिए आसान है,—उसमें आधे होकर पाना जरूरी नहीं पड़ता।"

कमलने शान्त कण्ठसे कहा, "यह बात मैं आपकी मानती हूँ चाचाजी। लेकिन, सिर्फ इसी कारण तो आपके संस्कारको मुक्तिके रूपमें स्वीकार नहीं किया जा सकता, और क्षमताकी तुच्छताको आगामी दिनोंके स्वरूपसे दाम्पत्य जन्मान्तर-पर्यन्त प्रतीक्षा करते रहना कैद भले ही हो, मुक्ति नहीं है। जिस आनन्द

सबने तीन गहन बुद्धिसे पाया है, वही मेरे लिए सत्य है, वही महान् है। फूल-फल और शोभा-सम्पदासे भरा यह जीवन भर उठे, परलोकके विशाल लाभकी आशामें इस जीवनकी उपेक्षा, अवज्ञा और अपमान न करूँ,—इतना ही मैं ठीक समझती हूँ। चाचाजी, इसी तरह आप लोग आनन्दसे और सौभाग्यसे स्वच्छापूर्वक जीवित रहा करते हैं। आप लोग इहलोकको तुच्छ समझते हैं, इसीसे इहलोकने भी आप लोगोंको सारे जगत्के सामने तुच्छ बना रखा है। नीलिमा जीजीसे भेंट होगी या नहीं, सो नहीं मालूम, अगर होगी तो मैं उनसे यही बात कह जाऊँगी।"

कमल उठकर खड़ी हो गई। आशु बाबूने सहसा जोरसे उसका हाथ पकड़ लिया, बोले, "जा रही हो बेटी? यह सोचते ही कि 'तुम जा रही हो' मेरी छातीके भीतर हाहाकार-सा मच जाता है।"

कमल बैठ गई, बोली, "पर आपको तो मैं किसी भी तरहसे तसल्ली दे नहीं पाती चाचाजी, देह और मनसे जब कि आप अत्यन्त अस्वस्थ हैं और सान्त्वना देना ही जब कि सबसे जरूरी वस्तु है, तब मैं सब तरफसे मानो आपको चोट ही पहुँचाया करती हूँ। फिर भी, यह सच है कि मैं आपको किसीसे भी कम प्यार नहीं करती चाचाजी।"

आशु बाबूने इसे मन ही मन स्वीकार करते हुए कहा, "इसके सिवा नीलिमा,—यह भी क्या साधारण आश्चर्य है? पर जानती हो इसका कारण क्या है कमल?"

कमलने मुसकराते हुए कहा, "शायद आपके अन्दर दलदल नहीं है,—इसीसे दलदल अपने शरीरका भी बोझ नहीं ढो सकता—पाँवके नीचेसे अपनेको हटाकर अपने आपको डुबा देता है। लेकिन ठोस मिट्टी लोहे और पत्थरका भी बोझ झेल लेती है,—इमारत उसीपर बनाई जा सकती है। नीलिमा जीजीको सब स्त्रियाँ नहीं समझ सकतीं, हाँ जिनके अपनेको लेकर खेल खेलनेके दिन बीत चुके हैं और सिरका बोझ उतार कर जो सहज निःश्वास लेती हुई जीना चाहती हैं, वे उन्हें समझ सकेंगी।"

"हाँ।" कहकर आशु बाबूने एक गहरी साँस ली, और कहा, "और शिवनाथ?"

कमलने कहा, "जिस दिनसे मैंने उन्हें सचमुच समझा है, उस दिनसे

क्षोभ और अभिमान मेरे मनसे बिल्कुल धुल पुँछ गया है,—ज्वाला बुझ गई है। शिवनाथ गुणी आदमी हैं, कलाकार हैं,—कवि हैं। चिरस्थायी प्रेम कलाकारोंके मार्गका विघ्न है, उनकी सृष्टिके लिए अन्तराय है, उनके स्वभावका परम विरोधी है। यही बात उस दिन ताऊजीके सामने खड़ा होकर मैं कहना चाहती थी। स्त्रियाँ तो एक उपलक्ष्य मात्र हैं,—नहीं तो, असलमें वे प्रेम करते हैं सिर्फ अपने आपसे। अपने मनको दो भागोंमें विभक्त करके उनकी दो दिनकी लीला चलती है,—उसके बाद वह खत्म हो जाती है। इसी लिए उनके गलेका स्वर ऐसा विचित्र होकर बजता है,—अन्यथा वह बजता नहीं, सुनकर जम जाता। मैं तो समझती हूँ, शिवनाथने उसे नहीं ठगा, मनोरमाने अपने आप ही भूल की है। सूर्यास्तके समय बादलोंपर जो रंग खिलने लगता है चाचाजी, वह न तो स्थायी होता है और न उसका वह स्वाभाविक रंग ही है। लेकिन फिर भी उसे झूठ कौन कह सकता है?"

आशु बाबूने कहा, "सो मालूम है, पर केवल रंगसे ही तो आदमीके दिन नहीं कटते बेटी, और न उपमासे उसकी व्यथा ही मिटती है। बताओ बेटी, इसका क्या उपाय है?"

कमलका चेहरा क्लान्तिसे मलिन हो गया, उसने कहा, "इसमें घूम फिरकर एक ही प्रश्न बार-बार सामने आ जाया करता है चाचाजी, वह जैसे शेष ही नहीं होता। बल्कि यही ठीक है कि जाते समय आप अपना यही आशीर्वाद छोड़ जाएँ कि मणि दुःखके निर्मोकमें अपने आपको ढूँढ निकाले, जो झड़नेवाला है उसके झड़ जानेके बाद वह बिना किसी संशयके अपनेको पहचान सके। और आपसे भी मैं कहूँगी कि संसारमें होनेवाली अनेक घटनाओंमेंसे विवाह भी एक घटना है, उससे ज्यादा कुछ नहीं। उसीको जिस दिनसे नारीका सर्वस्व मान लिया गया है उसी दिनसे स्त्रियोंके जीवनकी सबसे बड़ी ट्रेजडी शुरू हो गई है। विदेश जानेके पहले अपने मनकी असत्यकी जंजीरसे अपनी लड़कीको मुक्त कर जाइए, चाचाजी, यही आपसे मेरी अन्तिम प्रार्थना है।"

सहसा दरवाजेके पास किसीके पैरोंकी आहट सुनकर दोनों उधर देखने लगे। हरेन्द्रने भीतर आकर कहा, "भाभाजीको मैं लिवाने आया हूँ, आशु बाबू, ये भी तैयार हैं,—ताँगा लानेके लिए आदमी भेज दिया है।"

आशु बाबूका चेहरा फक पड़ गया, बोले, "अभी? लेकिन दिन तो अब

आशु बाबूने कहा, "सो मैंने सुना है। यही तो बैठा सोचा करता हूँ।"

* * * *

उस दिन कमलको घर लौटनेमें काफी देर हो गई। आते समय आशु बाबूने कहा, "डरनेकी कोई बात नहीं बेटी, जो आजतक कभी मुझे छोड़कर नहीं रही, आज भी वह मुझे छोड़कर न जायगी। निरुपायका उपाय वही करेगी।" कहते हुए उन्होंने हाथ उठाकर सामनेकी दीवारपर टँगी हुई अपनी स्वर्गीया धर्म-पत्नीकी तसवीर दिखा दी और चुप हो रहे।

* * * *

कमलने घर पहुँचकर देखा कि ऊपर जानेका रास्ता ही बन्द है, बक्सोंका ढेर सीढ़ीके सामने अड़ा पड़ा है। एकाएक उसकी छातीके भीतर धौंक-सा लग गया। किसी तरह रास्ता निकालकर वह ऊपर पहुँची। रसोईघरमें शोरगुल सुनकर उसने झाँककर देखा कि अजितने नौकरानीकी मददसे 'स्टोव' जलाकर चायके लिए पानी चढ़ा दिया है, और चाय-चीनी आदिकी तलाशमें घर भरकी तमाम चीजें उथल पुथल कर डाली हैं।

"यह क्या कर रक्खा है?"

अजित चौंककर कमलकी ओर देखने लगा, बोला, "चाय-चीनी वगैरह क्या तुम लोहेकी तिजोरीमें बन्द रक्खा करती हो? पानी कबसे खौलकर मिट्टी हुआ जा रहा है।"

"लेकिन मेरे घरकी चीज आपको मिलेगी कैसे, सो तो बताइए? चलिए, इधर आइए, मैं तैयार किये देती हूँ।"

अजित हटकर अलग खड़ा हो गया।

कमलने कहा, "पर आज बात क्या है? बक्स ट्रंक, गठरी पोटली,—यह सब किसका सामान है?"

"मेरा। हरेन्द्र बाबूने नोटिस दे दिया है।"

"नोटिस दिया है तो वहाँसे चले जानेका दिया होगा। पर यहाँ आनेकी बुद्धि किसने दी?"

"वह मेरी अपनी है। इतने दिनोंसे पराई बुद्धिपर ही चलता आ रहा हूँ,—अब मैंने अपनी बुद्धि ढूँढ़ निकाली है।"

कमलने कहा, "अच्छा किया है। पर चीज-वस्त क्या सब नीचे ही पड़ी

रहेगी? कोई चुरा नहीं ले जायगा वहाँसे?"

सुनते ही अजित चंचल हो उठा, बोला, "चुरा तो नहीं ले गया कोई कुछ? एक चमड़ेके सूट-केसमें बहुत-से रुपये रक्खे हैं।"

कमलने सिर हिलाकर कहा, "बहुत अच्छा किया है! एक खास जातिके आदमी होते हैं जो अस्सी वर्षकी उमरतक भी बालिग नहीं हुआ करते, उनके ऊपर एक-न-एक अभिभावक होना ही चाहिए। पर इसकी व्यवस्था भगवान् स्वयं कृपा करके कर देते हैं। चाय रहने दीजिए, चलिए, नीचे चलिए पहले,—किसी तरह पकड़ थामकर सामान ऊपर लानेकी कोशिश की जाय।"

२७

मकानवाला अभी अभी पूरे महीनेका किराया लेकर गया है। इधर उधर बिखरे हुए सामानके बीच, विशृंखल कमरेके एक किनारे, केन्वासकी आराम कुर्सीपर अजित आँखें मीचे पड़ा है। मुँह सूखा हुआ है, देखते ही पता चल जाता है कि उसके चिन्ताग्रस्त मनमें सुखका लेश भी नहीं है। कमल किन्हीं चार बँधी खुली चीजोंको पहलेसे मिलाकर एक कागजपर लिख रही है। स्थान छोड़नेका समय सन्निकट है, इस कारण उसके काममें किसी तरहकी चञ्चलता नहीं आई है।—ऐसा लगता है मानो यह उसका रोजमर्राका काम हो। सिर्फ नीरवता कुछ अधिक है।

इतनेमें हरेन्द्रके यहाँसे शामके भोजनका निमन्त्रण आया। किसी आदमीके मारफत नहीं,—डाकसे। अजितने चिट्ठी खोलके पढ़ी। आशु बाबूकी विदाके उपलक्ष्यमें यह आयोजन है। बहुत-से परिचित लोगोंको आमन्त्रित किया गया है। नीचेके एक कोनेमें छोटे हरफमें लिखा है, 'कमल, जरूर आना बहन।—नीलिमा।'

अजितने उसे दिखाते हुए पूछा, "जाओगी क्या?"

"जाऊँगी क्यों नहीं। मेरी कदर इतनी बढ़ नहीं गई है कि निमन्त्रण जैसी चीजकी उपेक्षा कर सकूँ। मगर तुम?"

अजितने दुविधाके स्वरमें कहा, "यही सोच रहा हूँ। आज तबीयत कुछ—"

"तो जरूरत नहीं जानेकी।"

अजितकी निगाह बराबर चिट्ठीपर ही थी। नहीं तो वह कमलके ओठोंपर आई हुई कौतुकपूर्ण मुसकराहट जरूर देख लेता।

कमलने हरेन्द्रसे हँसते हुए कहा, "अब बताइए ? दीजिए इसका जवाब !"
हरेन्द्र तथा औरोंने भी मुँह फेरकर अपनी अपनी हँसी छिपानेकी कोशिश की। अभयने नीरस-कण्ठसे पूछा, "क्यो कमल, मुझे पहचाना कि नहा ?"

आशु बाबू मन ही मन असन्तुष्ट हुए, बोले, "तुम पहचान लो इतना ही काफी है। तुमने तो पहचान लिया न ?"

कमलने कहा, "यह प्रश्न आपका बेजा है आशु बाबू। आदमी पहचानना तो इनका खास पेशा है। इसमें भी सन्देह करना इनके पेशेपर चोट पहुँचाना है।"

बात उसने इस ढंगसे कही कि अबकी बार किसीसे हँसी दबाये नहीं दबी मगर साथ ही इस डरसे कि यह दु शासन आदमी कहीं कुछ कुत्सित बात न कह बैठे, सब शान्त हो उठे। आजके दिन अक्षयको बुलानेकी हरेन्द्रकी इच्छा नहीं थी, पर यही सोचकर निमन्त्रण दे दिया गया था कि वह बहुत दिन बाद घरसे आया है, न देनेसे बहुत ही भद्दा दीखेगा। हरेन्द्रने डरते हुए और विनय के साथ कहा, "हमारे इस शहरसे—अथवा या कहिए कि इस देशसे ही आशु बाबू चले जा रहे हैं। इनके साथ परिचित होना किसी भी आदमीके लिए सौभाग्यकी बात है और वह सौभाग्य हम लोगोंको प्राप्त हुआ है। आज आपकी तबीयत ठीक नहीं है, मन भी अवसन्न है, इसलिए हम आशा करनी चाहिए कि आज हम आपको सहज-सौजन्यके साथ विदा कर सकेंगे।"

बात साधारण-सी थीं पर उस शान्त सहृदय प्रौढ व्यक्तिके चेहरेकी तरफ देखते ही वे सबके हृदयमें पैठ गई।

आशु बाबूको सकोच मालूम हुआ। इस आशकासे कि बातचीतका सिलसिला कहीं उन्हींके विषयमें न चल पड़े, उन्होंने चटसे दूसरी बात छेड दी, बोले, "अभय, शायद तुम्हें मालूम हो गया होगा कि हरेन्द्रका ब्रह्मचर्याश्रम अब नहीं रहा। राजेन्द्र तो पहलेसे ही लापता है और सतीश भी उस दिन चलता बना। जो कुछ दो चार लडके रह गये हैं, हरेन्द्रकी इच्छा है कि उन्हें ससारके सीधे रास्तेसे ही आदमी बनाया जाय। तुम सब लोग बहुत दिनोतक बहुत सी बातें करते रहे, पर नतीजा कुछ नहीं हुआ। अब तुम लोगोंका कर्तव्य है कि कमलको धन्यवाद दो।"

अक्षय भीतरसे जल गया और सूखी हँसी हँसता हुआ बोला, "अन्तमें फल

पता शायद इन्हीं बातोंसे ? लेकिन कुछ भी कहिये आशु बाबू, मुझे जरा भी आश्चर्य नहीं हुआ। यह अनुमान तो मैंने बहुत पहलेसे ही कर रखा था !"

हरेन्द्रने कहा, "वह तो करने ही, क्योंकि आदमी पहचानना आपका पेशा है !"

आशु बाबू बोले, "फिर भी, मैं समझता हूँ, तोड़नेकी कोई जरूरत नहीं थी। सभी धर्म या मत मूलतः एक ही हैं,—सिद्धि प्राप्त करनेके अर्थ वे सिर्फ कुछ प्राचीन आचार अनुष्ठान ही तो हैं ? जो उन्हें मानते नहीं या पालते नहीं, वे न मानें या न पालें, पर जिनमें मानने या पालनेका अध्यवसाय है उन्हें निरुत्साह करनेसे क्या लाभ ? क्या कहते हो अजय ?"

अजयने कहा, "जरूर।"

आशु बाबूने कमलकी तरफ देखा। उसने देखते ही यह जोरसे सिर हिलाकर बोल उठी, "आपका यह हरे विश्वास तो नहीं हुआ आशु बाबू, बल्कि यह तो अविश्वास उठनेकी बात हुई। इस तरह सोच सकती तो मैं आश्रमके विरुद्ध एक शब्द भी न कहती। मगर बात ऐसी नहीं है। यह कहना कि आचार अनुष्ठान मनुष्यके लिए धर्मसे भी बड़ी वस्तु हैं वैसा ही है जैसा कि राजासे बढ़कर राजाके कर्मचारियोंको बड़ा बताना।"

आशु बाबूने हँसते हुए कहा, "माना कि यह ठीक है, पर इससे क्या तुम्हारी उपमाको ही युक्ति मान लूँ ?"

यह बात कमलके चेहरेसे ही जाहिर थी कि उसने परिहास नहीं किया। उसने कहा, "क्या सिर्फ उपमा ही है आशु बाबू, उससे ज्यादा कुछ नहीं ? इसे मैं मानती हूँ कि सभी धर्म असलमें एक हैं, सब कालों और सब देशोंमें वे उसी एक अक्षय वस्तुकी असाध्य साधना हैं। उसे मुट्ठीके अन्दर तो पाया जा नहीं सकता। प्रकाश और हवाको लेकर मनुष्यका विवाद नहीं होता, विवाद होता है अपने बँटवारेके लिए,—जिसे कि अपने अधिकारमें लिया जा सकता है या दखल करके अपने व्यवहारके लिए इकट्ठा किया जा सकता है। इसीसे तो जीवनकी आवश्यकताओंमें वह इतना बड़ा सत्य हो रहा है। यह तो सभी जानते हैं कि विवाहका मूल उद्देश्य सभी देशोंमें एक ही है, पर इससे क्या सब उसे मान सकते हैं ? आप ही बताइए न अजय बाबू, ठीक है कि नहीं ?"

यह कहा और उसने हँसकर मुँह फेर लिया।

सकता। आलोचना करके हम मन अनुभव कर सकते हैं, पर पुस्तकसे मिला मिलाकर समान नहीं गढ़ सकते। श्रीरामचन्द्रके युगको भी नहीं, युधिष्ठिरके युगको भी नहीं। 'रामायण' और 'महाभारत'में चाहे जितनी ही बातें लिखी हों पर उनके श्लोकोंको टटोलनेसे उस जमानेके साधारण मनुष्यके दर्शन नहीं मिल सकते, और माँकी बाग चाहे कितनी ही निरापद क्यों न हो, बड़े होनेपर उसमें वापस नहीं जाया जा सकता। संसारकी सम्पूर्ण मानव जातिको मिलाकर ही तो मनुष्यका अस्तित्व है, यह तो आपने चारों तरफ है। कम्बल ओढ़कर क्या इनाम दरवाजे रोका जा सकता है?"

बेला और मालिनी चुपचाप बैठी सुन रही थीं। इस स्त्रीके सम्बन्धमें बहुत सी बातें उन लोगोंने सुन रखी थीं, पर आज आमने-सामने बैठकर इस परित्यक्ता और निराश्रया महिलाके वाक्योंकी निःसंशय निर्भयता देखकर उनके आश्चर्यका ठिकाना न रहा।

दूसरे ही क्षण वहाँ भाव आशु बाबूके मुँहसे प्रकट हुआ। उन्होंने कहा, "बहसमें हम चाहे जो भी कहा करें कमल, पर तुम्हारी बहुत-सी बात हम मानते हैं। जिसे हम नहीं कर सकते, हृदयसे उसकी अवज्ञा भी नहीं करते। इसी घरमें किसी दिन स्त्रियोंका दरवाजा बन्द था और सुना है, एक दिन तुम्हारे आ जानेसे सतीशने इस जगहको कलुषित समझ लिया था। मगर, आज हम सभी यहाँ आमन्त्रित होकर आये हैं, *किसीके आनेसे रोक टोक नहीं*—"

इतनेमें एक लड़का दरवाजेके पास आकर खड़ा हो गया। साफ सुथरी पोशाक पहने था, चेहरेपर आनन्द और सन्तोषका भाव झलक रहा था, बोला, "बहनजीने कहा है, रसोई तैयार है, आसन बिछाये जायें?"

अजयने कहा, "हाँ हाँ, बिछाये जायँ। कहो जाकर, रात भी तो हो रही है।"

लड़का चला गया। हरेन्द्रने कहा, "जबसे भाभीजी आई हैं, खाने पीनेकी चिन्ता किसीको नहीं करनी पड़ती। उनके लिए तो कहीं जगह न रह गई थी,—पर सतीश गुस्सा होकर चला गया।"

आशु बाबूका चेहरा क्षण भरके लिए म्लान हो उठा।

हरेन्द्र कहने लगा, "और मजा यह कि सतीशके लिए भी और कोई उपाय नहीं था। वह त्यागी ब्रह्मचारी आदमी ठहरा,—उसकी साधनामें यह सम्पर्क

लिए था। पर मुश्किल तो यह है कि मेरी कुछ समझहीमें नहीं आ रहा कि तालमें कौन-सा काम ठीक हुआ।"

कमलने तुरंत निःसंकोच स्वरमें कहा, "यही काम हरेन्द्र बाबू, यही काम गैर हुआ है। संयम जब सहज स्वाभाविक न रहकर दूसरेपर आघात करने लगता है, तब वह दुःसह हो उठता है।" कहते-कहते उसने क्षणभरके लिए आशु बाबूकी तरफ देखा,—शायद कोई एक गुप्त इशारा था,—पर फिर उसने हरेन्द्रसे ही कहा, "भगवान्‌के रूपमें वे अपने आपको ही बनाकर देखते हैं, अपने आपको ही खींच-खाँचकर वे अपने भगवान्‌की सृष्टि करते हैं। इसीसे उनकी भगवान्‌की पूजा, बार-बार स्वर घुमाकर, अपनी ही पूजापर उतर आती है। इसके सिवा उनके लिए और कोई रास्ता भी नहीं। मनुष्य न तो सिर्फ पुरुष ही है और न सिर्फ स्त्री ही, दोनों मिलकर ही एक होते हैं। आधेको बाद देकर शेष आधा जब सिर्फ अपनेको ही विराट रूपमें पाना चाहता है, तब वह अपने को भी नहीं पाता और भगवान्‌को भी खो बैठता है। सतीश बाबूके लिए दुश्चिन्ता मत कीजिए हरेन्द्र बाबू, उनकी सिद्धि स्वयं भगवान्‌ने जिम्मे है।"

सतीशको लगभग कोई भी देख न पाता था, इसीसे अंतिम बातपर सबके सब हँस पड़े। आशु बाबू भी हँसे, परन्तु बोले, "हमारे हिन्दू शास्त्रोंमें जो सबसे बड़ी बात है कमल, वह है आत्म-दर्शन। अर्थात्, अपनेको गम्भीरताके साथ जान लेना। ऋषियोंका कहना है कि इसकी खोजमें ही विश्वकी सम्पूर्ण जानकारी,—सम्पूर्ण ज्ञान भरा पड़ा है। भगवानको पानेका यही एक मार्ग है और इसीके लिए ध्यानका उपदेश है। तुम इसको नहीं मानतीं,—पर जो मानते हैं, विश्वास करते हैं, उन्हें चाहते हैं,—वे अगर इसके कारण अनेक विषयोंसे अपने को वंचित न करें तो एकाग्रचित्त होकर ध्यानमें संलग्न नहीं हो सकते। सतीशकी बात मैं नहीं कहता,—पर कमल, यह तो हिन्दुओंका अविच्छिन्न परम्परासे प्राप्त संस्कार है, और यही तो योग है। समुद्रसे लेकर हिमालयतक सम्पूर्ण भारत असीम श्रद्धासे इसी के ऊपर विश्वास करता है।"

भक्ति, विश्वास और भावके आवेगसे उनकी दोनों आँखें छलछला आईं। इस तरहके बाहरी छाटी-डाटके बाद उनका जो स्वनिष्ठ विचार-परायण हिन्दू चित्त निर्वात दीप-शिखाकी तरह जल रहा था, कमलने क्षण भरके लिए उसका अनुभव किया। वह कुछ कहना चाहती थी, पर संकोचके मारे कह न

इहलोक परलोकका देवता समझती है, बीमार होनेपर दवा नहीं खाना चाहती, कहती है, 'पतिके पादोदकसे ही सब बीमारियाँ अच्छी हो जाती हैं। अगर न अच्छी हों तो समझना चाहिए कि स्त्रीकी आयु खतम हो चुकी।'"

कमलको इसका थोड़ा बहुत आभास हरेन्द्रसे मिल चुका था, उसने कहा—"तब तो आप भाग्यवान् हैं,—कमसे कम स्त्रीके भाग्यसे। इतना जबरदस्त विश्वास इस युगमें दुर्लभ है।"

अभयने कहा, "शायद ऐसा ही हो, ठीक नहीं जानता। सम्भव है, इसीको सौभाग्य कहते हों। पर कभी ऐसा मालूम होता है कि संसारमें मेरा कोई नहीं, मैं अकेला हूँ,—बिल्कुल नितान्त अकेला!—अच्छा नमस्कार।"

कमलने हाथ उठाकर प्रति-नमस्कार किया।

अभय एक कदम जाकर फिर मुड़ पड़ा, बोला, "एक अनुरोध करूँ?"

"कहिए।"

"अगर कभी समय मिले, और मेरी याद रहे, तो एक पत्र लिखिएगा? आप खुद कैसी हैं, अजित बाबू कैसे हैं,—यही सब आप लोगोंकी बात मैं अक्सर सोचा करूँगा। अच्छा अब जाता हूँ, नमस्कार।" इतना कहकर अभय जल्दीसे चला गया और कमल वहीं स्तब्ध होकर खड़ी रही। भले बुरेका विचार करने नहीं, उसे सिर्फ इसी बातका खयाल हुआ कि यह वही अभय है! और मनुष्यकी जानकारीके बाहर इस भाग्यवान्का दाम्पत्य जीवन निर्विघ्न शान्तिके साथ इस तरह बहा चला जा रहा है। एक चिट्ठीके लिए उसे इतना कुतूहल, ऐसी विनीत और सच्ची प्रार्थना!

ऊपर जाकर देखा कि नीलिमाके सिवा और सब यथास्थान बैठे हैं। यह नीलिमाका स्वभाव है,—इसपर कोई कुछ खयाल भी नहीं करता। आशु बाबूने कहा, "हरेन्द्रने एक मजेकी बात कही थी कमल, सुननेसे पहले तो सहसा नई एक पहेली-सी मालूम होती है, पर बात असलमें सच है। वह कहते थे, लोग इतना भी नहीं समझ सकते कि समाजके प्रचलित विधि विधानोंके उल्लंघन करनेका दुःख सिर्फ चरित्र-बल और विवेक बुद्धिके बलपर ही सहन किया जा सकता है। मनुष्य बाहरके अन्यायको ही देखता है, अन्तःकरणकी प्रेरणाकी कुछ खबर ही नहीं रखता। और यहींपर समस्त द्वन्द्व और विरोधोंकी सृष्टि होती है।"

कमलने समझा कि इसका लक्ष्य वह खुद और अजित है, इसलिए वह चुप

रही। उसने यह बात नहीं कही कि उच्छृङ्खलताके जोरसे भी समाजके विधि विधानोंका उल्लंघन किया जा सकता है। दुर्बुद्धि और विवेक-बुद्धि दोनों एक चीज नहीं है।

बेला और मालिनी उठ खड़ी हुई, उनके जानेका समय हो गया। कमलकी बिल्कुल उपेक्षा करके उन्होंने हरेन्द्र और आशु बाबूको नमस्कार किया। इस औरतके सामने उन्होंने हमेशा अपनेको छोटा समझा है, इसलिए अन्तमें उसका बदला चुकाया उपेक्षा दिखाकर। उनके जानेपर आशु बाबूने स्नेहके साथ कहा, "कुछ खयाल मत करना बेटी, इसके सिवा उनके पास और कुछ है ही नहीं। मैं भी तो उसी दलका आदमी हूँ। सब जानता हूँ।"

आशु बाबूने हरेन्द्रके सामने आज पहली बार उसे 'बेटी' कहके पुकारा। कहा, "दैवयोगसे ये पदस्थ व्यक्तियोंकी स्त्रियाँ हैं, हाई सर्किलकी महिलाएँ ठहरीं। अँग्रेजी बातचीतमें, चाल-चलन और पहनावे उढ़ावेमें अप-टू-डेट हैं। यह भूल जायें तो उनकी मूल पूँजीपर चोट पड़ती है, कमल। उनपर गुस्सा होना भी अन्याय है।"

कमलने हँसते हुए कहा, "गुस्सा तो मैं नहीं हुई।"

आशु बाबूने कहा, "सो मैं जानता हूँ। गुस्सा मुझे भी नहीं आया, सिर्फ हँसी आई। पर, घर कैसे जाओगी बेटी, मैं उतारता जाऊँ तुम्हें?"

"वाह, नहीं तो मैं जाऊँगी कैसे?"

कहीं लोगोंकी निगाह न पड़ जाय, इस डरसे उसने अपनी मोटर लौटा दी थी।

"अच्छी बात है। पर, अब देर करना भी शायद ठीक न हो,—क्यों ठीक है न?"

सबको खयाल हो आया कि अभी वे सम्पूर्ण नीरोग नहीं हुए हैं।

इतनेमें जीनेमें जूतेकी आवाज सुनाई दी, और दूसरे क्षण सबने अत्यन्त आश्चर्यके साथ देखा कि दरवाजेके बाहर अजित आ खड़ा हुआ है।

हरेन्द्रने मीठे स्वरसे स्वागत किया, "हैल्लो! बटर लेट दैन नेवर। (=सर्वथा नहींसे देर भली।) अकल्पनीयका कैसा सौभाग्य है!"

अजित अप्रतिभ होकर बोला, "लेने आया हूँ।" और पलक मारते ही एक अनचीती दुःसाहसिकताने उसके भीतरकी बातको जोरसे दबा देकर—

निकाल दिया, बोला, "नहीं तो फिर मुलाकात न होती। हम लोग तड़के ही चले जा रहे हैं।"

"तड़के ही? आजकी रात बीते?"

"हाँ। सब तैयारियाँ हो चुकी हैं। यहाँसे हम लोगोंकी यात्रा शुरू होगी।"

बात किसीसे छिपी हुई नहीं थी, फिर भी सबके सब मानो लज्जासे म्लान हो उठे।

इतनेमें दबे पाँव चुपकेसे नीलिमा आ पहुँची और एक तरफ बैठ गई। सकोच दूर करके आशु बाबूने आँख उठाकर देखा। जो बात वे कहना चाहते थे वह एक बार उनके गलेमें अटकी, फिर धीरे धीरे वे बोले, "हो सकता है कि हम लोगोंकी अब फिर कभी भेंट न हो, तुम दोनों मेरे स्नेहके पात्र हो, अगर तुम लोगोंका ब्याह हो जाता तो मैं देख जाता।"

अजितको सहसा मानो किनारा नजर आ गया, वह व्यग्र कण्ठसे बोल उठा, "यह चीज मैं नहीं चाहता आशु बाबू, यह तो मेरे लिए कल्पनाके बाहरकी बात है। विवाहके लिए मैंने बार बार कहा है, और बार-बार सिर हिलाकर कमलने अस्वीकार कर दिया है। अपनी सारी सम्पत्ति,—जो कुछ मेरे पास है सब,—उसके नाम लिखकर मैं मजबूतीसे पकड़ाई देनेको तैयार था, पर कमल राजी नहीं हुई। आज इन सबके सामने मैं फिर प्रार्थना करता हूँ कमल, तुम राजी हो जाओ। मैं अपना सर्वस्व तुम्हें देकर जी जाऊँ। धनके कलंकसे छुटकारा पा जाऊँ!"

नीलिमा अवाक् होकर देखती रह गई। अजित स्वभावतः झेंपू प्रकृतिका आदमी था,—सबके सामने उसकी ऐसी असीम व्याकुलता देख सबके सब मारे आश्चर्यके दंग रह गये। आज वह अपनेको बिल्कुल निःस्व कर देना चाहता है। अपनी कहनेको कोई चीज अपने हाथमें रखनेकी आज उसे कोई आवश्यकता ही नहीं मालूम हो रही है।

कमलने उसके मुँहकी तरफ देखकर कहा, "क्यों, तुम्हें इतना डर किस बातका हो रहा है?"

"डर आज न सही, पर—"

"'पर'का दिन पहले आये तो सही।"

"आनेपर तो फिर तुम हर्गिज कुछ लोगी नहीं, मैं जानता हूँ।"

कमलने हँसते हुए कहा, "जानते हो ! तो यही होगा तुम्हारे लिए सबसे सख्त और मजबूत बन्धन।"

जरा ठहरकर फिर कहने लगी, "तुम्हें याद नहीं, मैंने एक दिन कहा था कि बहुत ज्यादा मजबूत बनानेके लोभसे बिल्कुल ठोस और निश्छिद्र मकान बनानेकी कोशिश मत करो। उससे मुरदेकी कब्र भले ही बन जाय, पर जीवित मनुष्यका शयनागार नहीं बन सकता।"

अजितने कहा, "कहा था, मुझे याद है। जानता हूँ, तुम मुझे बाँधना नहीं चाहती—पर मैं जो बँधना चाहता हूँ। नहीं तो फिर मैं तुम्हें किस चीजसे बाँध रखूँगा कमल ! मुझमें कहाँ है इतना जोर ?"

कमलने कहा, "जोरकी जरूरत नहीं। बल्कि तुम अपनी कमजोरीसे ही मुझे बाँध रखना। मैं इतनी निष्ठुर नहीं कि तुम जैसे आदमीको दुनियामें यों ही बहाकर चली जाऊँ।" फिर एकाएक आशु बाबूकी तरफ देखकर बोली, "भगवान्को तो मैं नहीं मानती, नहीं तो उनसे प्रार्थना करती कि तुम्हें संसारके समस्त आघातोंकी ओटमें रखकर ही मैं एक दिन मर सकूँ।"

नीलिमाकी आँखोंमें आँसू भर आये। आशु बाबूने भी अपनी आँसुओंसे व्याकुल आँखोंको पोंछते हुए रुँधे हुए कण्ठसे कहा, "तुम्हें भगवान माननेकी भी जरूरत नहीं कमल। सब एक ही बात है बेटी। यह आत्म-समर्पण ही तुम्हें एक दिन गौरवके साथ उनके पास पहुँचा देगा।"

कमल हँस दी, बोली, "यह तो मेरे ऊपर शास्ति होगी। इसकी प्राप्तिमें भी उतनी ज्यादा इज्जत है।"

"सो ठीक है, बेटी। पर यह जान रखना कि मेरा आशीर्वाद निष्फल नहीं होनेका।"

हरेन्द्रने कहा, "अजित, खाके तो आये नहीं होगे, चलो खाने।"

आशु बाबू हँसते हुए बोले, "तुम्हारी तरफ भी खूब है। ऐसा भी कभी हो सकता है कि अजित बिना खाये-पीये ही चला आवे और कमल यहाँ खा-पीकर निश्चिन्त हो जाये।"

अजितने लज्जाके साथ स्वीकार किया कि बात दर असल ऐसी ही है। वह बिना खाये चला आया।

इस बातका स्मरण आते ही कि यही शेष रात्रि है, नीलिमा जो नहीं

चाहता था कि सभा भग हो, परन्तु आशु बाबूने स्वास्थ्यका ख्याल करके आखिर उठनेकी तैयारी करनी पड़ी। हरेन्द्रने कमलके पास आकर धीमे स्वरमें कहा, "इतने दिनों बाद अब असल चीज पाई कमल, मेरा अभिनन्दन ग्रहण करो।"

कमलने उसी तरह चुपकेसे जवाब दिया, "पाई है? कमसे कम यही आशीर्वाद दीजिए।"

हरेन्द्रने आगे और कुछ न कहा। परन्तु कमलके कण्ठसे जैसा चाहिए वैसा दुविधाहीन परम निःसशय स्वर झकृत नहीं हुआ और यह बात उनके कानोंको खटकी। मगर फिर भी ऐसा ही हुआ करता है। विश्वका विधान ही ऐसा है।

कमलको दरवाजेकी ओटमें बुलाकर नीलिमाने अपनी आँखें पोंछते हुए कहा, "कमल, मुझे भूल न जाना कहीं।" इससे ज्यादा उससे कहते नहीं बना।

कमलने उसे छूकर नमस्कार किया और कहा, "जीजी, मैं फिर आऊँगी, पर जानेके पहले मैं आपके पास एक प्रार्थना रख जाऊँगी कि जीवनमें कल्याणको कभी अस्वीकार न करना। उसका सत्य रूप आनन्दका रूप है। उसी रूपमें वह दिखाई देता है—वह और किसी भी तरह पहचाना नहीं जा सकता। तुम और चाहे जो भी करो जीजी पर अविनाश बाबूके घरकी बेगार करनेको अब राजी न होना।"

नीलिमाने कहा, "ऐसा ही होगा कमल।"

आशु बाबू गाड़ीमें जाकर बैठे तो कमलने हिन्दू रीतिसे उनके पाँव छूकर प्रणाम किया। आशु बाबूने उसके माथेपर हाथ रखकर आशीर्वाद दिया। कहा, "तुमसे मुझे एक वास्तविक तत्वका पता लगा कमल। अनुकरणसे मुक्ति नहीं मिलती, मुक्ति मिलती है ज्ञानसे। इससे डर लगता है कि तुमने जिसको मुक्ति दिला दी है, कहीं अजितको वही असम्मानमें न डुबा दे। उससे इसकी रक्षा करना बेटी। आजसे इसका भार तुम्हींपर है।"

कमलने इशारा समझ लिया।

आशु बाबू फिर कहने लगे, "तुम्हारी ही बात मैं तुम्हें याद दिलाये देता हूँ कमल! उस दिनसे मैंने इस बातपर बार बार विचार किया है कि प्रेमकी पवित्रताका इतिहास ही मनुष्यकी सभ्यताका इतिहास है—उसका जीवन है। यही उसके महान् होनेका धारावाहिक वर्णन है। फिर भी शुचिताकी सत्ता या

व्याख्याको लेकर मैं चलते रथ तक नहीं करूँगा। अपने क्षोभके निःश्वाससे तुम लोगोंकी विदाकी घड़ियोंको मैं मलिन नहीं करना चाहता। मगर इस बूढ़ेकी इतनी सी बात याद रखना कमल, कि आदर्श या आइडिया सिर्फ दो-चार आदमियोंके लिए ही है—इसीसे उसकी कीमत है। उसे साधारणके बीच खींच लानेसे फिर वह पागलपन हो जाता है, उसका शुभ मिट जाता है और बोझ दुःसह हो उठता है। बौद्ध युगसे लेकर वैष्णव युगतक इसकी बहुत-सी दुःखद नजीरें संसारमें फैली पड़ी हैं। क्या तुम फिरसे वही दुःखका विप्लव संसारमें खींच लाना चाहती हो बेटी?"

कमलने मृदु कण्ठसे उत्तर दिया, "यह तो मेरा धर्म है चाचाजी!"

"धर्म? तुम्हारा यह धर्म है?"

कमलने कहा, "हाँ। जिस दुःखसे आप डर रहे हैं चाचाजी, उसीमेंसे फिर उससे भी बड़ा आदर्श पैदा होगा। और उसका भी काम जिस दिन खतम हो जायगा, उस दिन उसके मृत शरीरके खादसे उससे भी महान् आदर्शकी सृष्टि होगी। इसी तरह संसारमें आजका शुभ कलके शुभतरके चरणोंमें आत्म-विसर्जन करके अपना ऋण चुकाता रहता है। यही तो मनुष्यकी मुक्तिका मार्ग है। देखते नहीं चाचाजी, सती-दाहका बाहरी चेहरा राजशासनसे बदल गया है, पर उसके भीतरकी आग आज भी ज्योंकी त्यों धधक रही है और उसी तरह भस्म किये जा रही है। यह बुझेगी किस चीजसे?"

आशु बाबूसे कुछ बोला न गया, वे एक गहरी साँस लेकर रह गये। परन्तु दूसरे ही क्षण बोल उठे, "कमल, मणिकी माँका बन्धन मैं आजतक नहीं तोड़ सका, सो इसे तुम कहा करती हो कि मोह है, कमजोरी है,—मालूम नहीं यह क्या है, पर यह मोह जिस दिन जाता रहेगा उस दिन उसके साथ-साथ मनुष्यका बहुत-कुछ चला जायगा, बेटी। मनुष्यकी यह बहुत तपस्याकी पूँजी है कमल!—अच्छा, अब जायँ। चलो घासुदन!"

इतनेमें टेलिग्राफ पियून सामने आकर साइकिलसे उतरा। अर्जेण्ट तार है।

हरेन्द्रने गाड़ीकी बत्तीके सामने जाकर तार खोलकर पढ़ा। लम्बा टेलिग्राम है, मथुरा जिलेके एक छोटे सरकारी अस्पतालके डाक्टरने भेजा है। उसमें लिखा है,

"गाँवके एक मन्दिरमें आग लग गयी थी। बहुत लोगोंकी बहुजनपूजित

प्रतिमा नष्ट होनेको थी। रक्षाका कोई भी उपाय न रह गया था कि इतनेमें उस जलते हुए मंदिरके अंदर राजेन्द्र घुस पड़ा और मूर्तिको बाहर ले आया। देवताकी रक्षा हो गई, पर उनके रक्षाकर्ताकी रक्षा न हो सकी। दो दिन चुप चाप असह्य यातना सहता हुआ आज सवेरे वह वैकुण्ठ चला गया। दस हजार जनताने मिलकर कीर्तन भजनादिके साथ जुलूस निकाल कर यमुना-तटपर उसकी अन्त्येष्टि क्रिया सम्पन्न की है। मरते समय राजेन्द्र आपको समाचार देनेके लिए कह गया है।"

स्वच्छ नील आकाशसे वज्र गिरा।

रुलाईसे हरेन्द्रका गला रुक गया, और स्वच्छ चाँदनी रात मुहूर्त भरमें अन्ध कारमें एकाकार हो गई।

आशु बाबू रो पड़े, बोले, "दो दिन,—अड़तालीस घण्टे,—इतने नजदीक, फिर भी जरा खबरतक नहीं दी!"

हरेन्द्र आँखें पोंछता हुआ बोला, "जरूरत नहीं समझी। कुछ किया तो जा नहीं सकता था, इसीसे शायद उसने किसीको दुःख देना नहीं चाहा।"

आशु बाबूने अपने दोनों हाथ माथेसे लगाकर कहा, "इसके मानी यह है कि सिवा देशके, किसी आदमीको उसने अपना आत्मीय नहीं माना। सिर्फ देश,—समग्र भारतवर्ष। फिर भी, भगवान्, तुम अपने चरणोंमें उसे स्थान देना। तुम और चाहे जो भी करो, पर इस राजेन्द्रकी जातिको संसारसे न मिटाना।—वासुदेव, चलो।"

इस शोककी मार्मिक चोट कमलसे बढ़कर शायद और किसीको न पहुँची होगी, पर तु वेदनाकी भापसे उसने अपने कण्ठको रुँधने नहीं दिया। उसकी आँखोंसे चिनगारियाँ-सी निकलने लगीं, बोली, "दुःख किस बातका? वह वैकुण्ठ गया है।" फिर हरेन्द्रसे बोली, "रोइए मत हरेन्द्र बाबू, अज्ञानकी बलि हमेशा इसी तरह अदा होती है।

कमलने स्वच्छ कठोर स्वरने पैने छुरेकी तरह सबके कलेजेको छेद दिया।

आशु बाबू चले गये।

और, उस शोकाच्छन्न स्तब्ध नीरवताके बीच कमल अजितके साथ गाड़ीमें जा बैठी। बोली, "रामदीन—चलो।"

समाप्त